

सन्निपात ज्वर चिकित्सा

विद्यालयोंके छात्र एवं चिकित्स   लिये पथ प्रदर्शक
एवं सहायक आयुर्वेदिक चिकित्सा-ग्रन्थ ।

—:लेखक:—

श्री वि० स० मारवाड़ी अस्पताल कलकत्ता के प्रधान चिकित्सक,
श्री राणीसती आयुर्वेद भवन लि० कलकत्ता,
एवं राजस्थान सिनेटोरियम झूंझन के
संस्थापक

कविराज

श्री चक्रपाणि शर्म्मा आयुर्वेदाचार्य

प्रकाशक:—

श्री राणी सती आयुर्वेद भवन लि०
५२ नं० बड़तल्ला स्ट्रीट,

प्रथम संस्करण

सं० २००७]   [मू० सजिल्द [illegible]) रु०

प्रकाशक—
कविराज सतीशचन्द्र शर्म्मा एम० ए० एम० एस,
श्री राणीसती आयुर्वेद भवन लि०
५२ नं० बड़तल्ला स्ट्रीट,
कलकत्ता।

पुस्तक प्राप्ति स्थान—
वैद्य चक्रपाणि शर्म्मा
श्री वि० स० मारवाड़ी अस्पताल
११८ नं० एमहर्स्ट स्ट्रीट,
कलकत्ता।

मुद्रक :—
पन्नालाल गोयनका
श्री भारती प्रेस
२८, बाँसतल्ला लेन, कलकत्ता।



ग्रन्थकर्ता के पूज्यपाद पिता विद्यारत्न प॰ व्रजलालजी शास्त्री

चिड़ावा

समर्पणम्

"पाणिनीयात पत्रेण—पवित्रं यस्य तन्मुखम्
तत् पितुश्चरणौ वन्दे—ग्रन्थार्पण प्रसङ्गतः ॥

तत् सौष्ठव व्यसनि वैद्यकला शरीरम्
नो जात्व वद्य मय मामय मभ्युपैति ।
शक्त्यादयो दधति साम्थगतिं त्रयोऽपि
ते यत्र धातव इवाऽविकृत प्रतिष्ठाः ॥ १ ॥

भैषज्य रत्न मुपधातु मिवोपनीय
शक्त्या निसर्ग विकृतोद् गमयाऽर्पितंते ॥
भूयात् पितुश्चरणयोः किल वर्धमान
व्युत्पत्तिशाण फलकार्पण "नैपुणेन"
नाना प्रयोग निवहैः (चयैः) खलु स्वानुभूतै
रादाय चेतसि दधत् परितोष मुद्राम् ।
"भैषज्य पुस्तक मथाऽर्पयतिस्म भक्त्या"
तच्चक्रपाणि रधुना जनकाय नूनम् ॥

अशेष भिषगग्रगण्याः शरण्याः शास्त्रपद्धतेः
गुरवो वन्दनीया मे यादव ज्यौतिर्मयाऽभिधाः

—ग्रन्थकर्ता

सम्मतियाँ

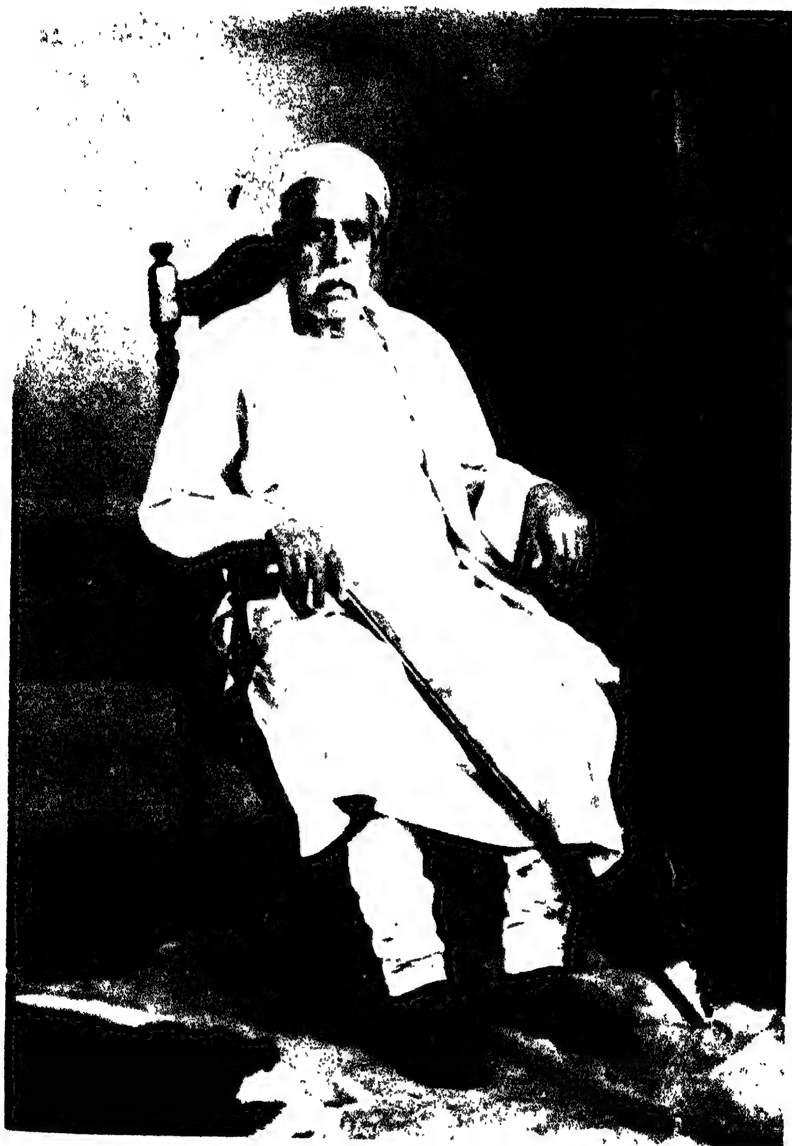
विशुद्धानन्द सरस्वती मारवाड़ी अस्पताल, कलकत्ताके आयुर्वेदीय विभागके प्रधान चिकित्सक श्री पण्डित चक्रपाणि शर्मा जी की लिखी हुई "सन्निपात ज्वर चिकित्सा" का मैने परिदर्शन किया। इस पुस्तकमें सुयोग्य लेखकने विविधसन्निपात ज्वरोंकी परीक्षा और चिकित्साका आयुर्वेदीय तथा आधुनिक चिकित्सा पद्धतिसे विधिवत् वर्णन किया है। इसका लेखन मुख्यतः आतुरालयमें रखे हुए रोगियों पर किये गये प्रयोगोंके आधारपर किया गया है, अतएव यदि कहा जाय कि एक सुचिकित्सकने अपना चिरसंचित प्रयोग सिद्ध अनुभव वैद्यों और आयुर्वेदके नवीन स्नातकोंके उपकारार्थ पुस्तकाकारमें संकलन कर रख दिया है तो यह अतिशयोक्ति न होगी। मेरे विचारमे यह पुस्तक उपादेय है। इसलिए मैं सुहृद्वर पण्डित चक्रपाणिजीका इसके लेखनके निमित्त विशेष अभिनन्दन करता हूं और आशा करता हूं कि आपका यह प्रयास अन्य सुयोग्य वैद्य विद्वानोके लिये अनुकरणीय होगा।

दुर्गादत्त शास्त्री

११—१०—५० प्रधान चिकित्सक मारवाड़ी अस्पताल, बनारस

भूतपूर्व सभापति

निखिल भारतवर्षीय आयुर्वेद विद्यापीठ



वि० स० मारवाड़ी अस्पताल के संस्थापक स्व० श्री रायबहादुर रामजीदासजी बाजोरिया

आपही की प्रेरणासे यह ग्रन्थ लिखा गया है।

कतिपय सम्मतयः

रामाश्रम हरिद्वार
२३-६-१६५०

श्री विशुद्धानन्द सरस्वती मारवाड़ी अस्पताल के वैद्यराज पं० चक्रपाणि जी द्वारा निर्मित "सन्निपात ज्वर चिकित्सा" पुस्तक पढ़कर अत्यधिक सन्तोष हुआ। इस ग्रन्थके संकलनमें आयुर्वेदिक चिकित्साके साथ २ तुलनात्मक पाश्चात्य चिकित्सा भी संकलित होने के कारण यह ग्रन्थ समयोपयोगी हुआ है। विशेषतः पंडित जी की स्वानुभूत चिकित्सा अत्यधिक उपादेय एवं ज्ञानप्रद है। मेरा विश्वास है कि इससे छात्र मण्डली तथा नवीन वैद्य बहुत लाभ उठा सकते हैं।

मैं आशा करता हूँ कि पंडित जी अन्य रोगोंपर भी ग्रन्थ लिखकर आयुर्वेदके प्रचारमें सहायक होंगे।

कविराज ज्ञानेन्द्रनाथ सेन
बी० ए० कविरत्न
भू० पू० प्रिंसिपल ऋषिकुल आयुर्वेदिक कालेज
हरिद्वार।

कविराज श्री पं० चक्रपाणिजी जोशी आयुर्वेदाचार्य द्वारा लिखित "सन्निपात ज्वर चिकित्सा" का अवलोकन कर अत्यन्त प्रसन्नता हुई। सन्निपात ज्वरकी चिकित्सा करना साधारण कार्य नहीं है, उसमें अशेषशास्त्र निष्णात अनुभवी चिकित्सक भी भ्रान्त हो जाते हैं। वस्तुतः "मृत्युना सह योद्धव्यं सन्निपातं चिकित्सता" यह वाक्य अतिशयोक्ति पूर्ण नहीं है। अतः उक्त पुस्तक लिखकर वैद्यराज जोशीजीने आयुर्वेद विद्यार्थियों और नवचिकित्सकों का बहुत उपकार किया है। सन्निपात ज्वरके विभिन्न रोगियों पर जोशीजी द्वारा अनुभूत चिकित्साका उल्लेख पुस्तककी विशेषता है। पुस्तककी भाषा अत्यन्त सरल तथा सुबोध है। आशा है वैद्यसमाज पुस्तकको अपना कर लेखक का उत्साहवर्धन करेंगे।

मुकुन्दीलाल द्विवेदी शास्त्री
ता० २५-६-५०
D. I. M. S., आयुर्वेदाचार्य,
प्रोफेसर, ऋषिकुल आयुर्वेदिक कालेज
हरिद्वार।

I have read सन्निपात ज्वर चिकित्सा by Sree Chakrapaniji Rajvaidya. It is an excellent book as far as the information on the subject is concerned. It contains all possible scientific informations regarding Allopathy, Homeopathy and Ayurveda with reference to typhoid fever and other allied fevers. It is practically a small encyclopaedia of similar fevers on the subject named in the book. So to an erudite scholar it is the best possible book but it will prove to be a puzzle to an Ayurvedic practitioner of the day. There are so many conflicting views as regards the diagnosis and treatment of different systems that one is sure to be puzzled if he tries to arrive at a synthetical out-look. So a physician to whatever group he may belong would do well to reap its full value if he becomes conversant on his own background first from his own love and looks for supplementary information from other systems comparatively when he is in dillema. It is crystal clear that the author is a Versatile Scholar and deserves high approbation from scholars of his type.

Vijoyakali Bhattacharya
Ex-General Secretary,
(All India Ayurveda Congress)
Editor, the Ayurvedajagat.

Calcutta
30th September, 1950.

नेत्रपथ मानीय परमानन्द सन्दोह :—समजनि चक्रपाणि जोशी विरचित सन्निपात ज्वर-चिकित्साख्यं ग्रन्थम्। तत्र च युक्तिपूर्णां प्रत्ययोत्पादिनीमसाधारणी विषय स्थापनशैली प्रकृष्टां प्रौढ़िं विस्मयोत्पादिकां ग्रन्थचमत्कृतिं समीक्ष्य परमसन्तोष मलम्भि।

विषय प्रतिपादने स्वाभाविक विकाश दृष्टया न कश्चित् दोषो विरोधश्च प्रतिभाति, प्रत्युत भवत्यपूर्वाऽनुभूतिरध्ययन वेलायाम्।

अयंह्युतरकालिकः प्रतिभाप्रभावस्तनश्रीमत. किन्तु सर्वतः प्रथममेव यदद्भुतंप्रातिभं काय मुद भावितं श्रीमता तेनहिनूनं विस्मयेरन् विवेकिनोप्यायुर्वेदविदा विद्वांसः।

श्रीमतः कृतिकल्पलतिकाप्रतिपत्रं समुद् गमयति नानाविध विज्ञान निचयम्। ददाति सद्वैद्यकर्मफलानि, अपनयति अज्ञानानि प्रयच्छति नव्यप्राच्य विषयम्, अनुकूलयति तर्जयति च नव शिक्षादीक्षितान्डाक्टर पदाभिधेयान् पण्डित प्रवरान्।

न केवल मन्तेवासिनामुपकाराय प्रत्युत ज्ञानसंवर्द्धनाय शास्त्रपारदृश्वनां विदुषामपि। आयुर्वेद जगतिनव्यांचमत्कृतिं विधास्यतीति।

वैद्य मणिराम शर्मा
सभापति—
नि० भा० आयुर्वेद विद्यापीठ, देहली
तथा प्रिंसपल
श्रीहनुमान आयुर्वेद विद्यालय,
रतनगढ़ (बीकानेर)

ता० २०-६-५०

॥ श्री ॥

कलकत्ता
ता० १५-६-५०

सन्निपात ज्वर जैसे कठिन विषयको प्रस्तुत पुस्तकमें भारतीय आयुर्विज्ञान एवं पाश्चात्य चिकित्सा पद्धतिमें निरूपित निदान और चिकित्सा का समन्वय करके आयुष्मान् कविराज चक्रपाणि शर्माने बहुत सुन्दर ढंगसे सरल करने का प्रयत्न किया है। यह सत्प्रयत्न लेखकके कठिन परिश्रम, आलोचनात्मक अध्ययन एवं सूक्ष्म विवेचनका फल है। ग्रन्थमें तुलनात्मक ढंगसे आयुर्वेदीय एवं पाश्चात्य ज्वर चिकित्साओं की युक्तियुक्त एवं व्यवस्थित व्याख्या करने की चेष्टा की गई है। ऐसी ही व्याख्याओंसे एलोपैथिक तथा अन्य पद्धतियोंके चिकित्सक और जन साधारण सुप्राचीन आयुर्वेदीय पद्धतिकी वास्तविक महत्ताको समझ सकेंगे। कुछ क्षेत्रोंमें आयुर्वेदके विरुद्ध फैली हुई निर्मूल धारणाओंको दूर करनेके लिए ऐसे सभी प्रयत्न श्लाघ्य हैं। यह अनुभव पूर्ण ग्रन्थ सभीके लिए उपयोगी सिद्ध होगा।

कृष्णदत्त वैद्य
पाटन निवासी
प्र० चिकित्सक
कृष्ण आरोग्य मन्दिर,
कलकत्ता।

॥ श्रीः ॥

श्री कविराज चक्रपाणि जी जोशीकृत "सन्निपात ज्वर चिकित्सा" की एडवान्स कापीका मैने आद्योपान्त निरीक्षण किया। पुस्तक वैद्य और आयुर्वेद विद्यार्थियोंके लिये उपादेय है।

मैं आशा करता हूं कि वैद्य समाज इस पुस्तकका समादर कर लेखक का प्रोत्साहन बढ़ावेंगे।

कविराज प्रतापसिंह
डाइरेक्टर आयुर्वेद विभाग,
राजस्थान।

ता० २०-६-५०

दादू महाविद्यालय
जयपुर

पिछले चार पांच वर्षोंमें आयुर्वेदसम्बन्धी नवनिर्माण व प्रकाशनका कार्य पर्याप्त प्रगति पर है। इस समयमें स्वास्थ्य व चिकित्साके क्षेत्रमें उपयोगी ग्रन्थोंका निर्माण व प्रकाशन हुआ है। प्रस्तुत पुस्तक "सन्निपात ज्वर चिकित्सा" भी उनमेंसे एक है। पुस्तक के लेखक विद्वान व योग्य चिकित्सक वैद्य श्रीचक्रपाणि आयुर्वेदाचार्य हैं। इस समय आप विशुद्धानन्द सरस्वती मारवाड़ी अस्पतालमें आयुर्वेद विभागके अध्यक्ष हैं।

कहनेकी आवश्यकता नहीं कि आपको यहां अपने "आयुर्वेद-विभाग" के आतुरालयमें बराबर सन्निपातके अनेक रोगियोंकी चिकित्सा करनेका अवसर आता है। आगमप्राप्त ज्ञानको जांचने तथा परिणाम देखनेका यही अवसर था। आयुर्वेद सिद्धान्तसे सांनिपात जन्य रोगकी चिकित्सा अत्यन्त कठिन है। क्योंकि विरुद्ध गुणवाले दोषत्रयके साथ समानगुणधर्मा दूष्य तथा स्थानानुबन्धनके कारण रोगमें जटिलता आना स्वाभाविक है।

सन्निपात जन्य रोगोंकी चिकित्सामें वही वैद्य सफलता प्राप्त कर सकता है जो सैद्धान्तिक ज्ञान कर्माभ्यासमें निपुण हो। 'सन्निपात ज्वर चिकित्सा'' के लेखक ऐसे ही निपुण चिकित्सक हैं। आपने आगम व अपना अनुभव दोनोंके आधर पर इस ग्रन्थकी रचना की है। रोग परीक्षामें आधुनिक उपकरणोंके उपयोगका भी सविस्तर वर्णन दिया है। रोगोंकी अवस्था तथा उनकी चिकित्साके निरूपणमें भी आधुनिक प्रणाली के उचित उपयोगका समावेश किया गया है। इससे पुस्तककी उपादेयता और भी बढ़ गई है
प्रणेता इस प्रकारकी पुस्तकके संकलनके कारण हम सभीके धन्यवादार्ह हैं आशा है, पुस्तककी उपादेयताके विचारसे इसका पूरा पूरा प्रचार होगा। पुस्तक प्रत्येक चिकित्सकके लिये संग्रहणीय है।

ता० २८-६-५० मंगलदास स्वामी, जयपुर,

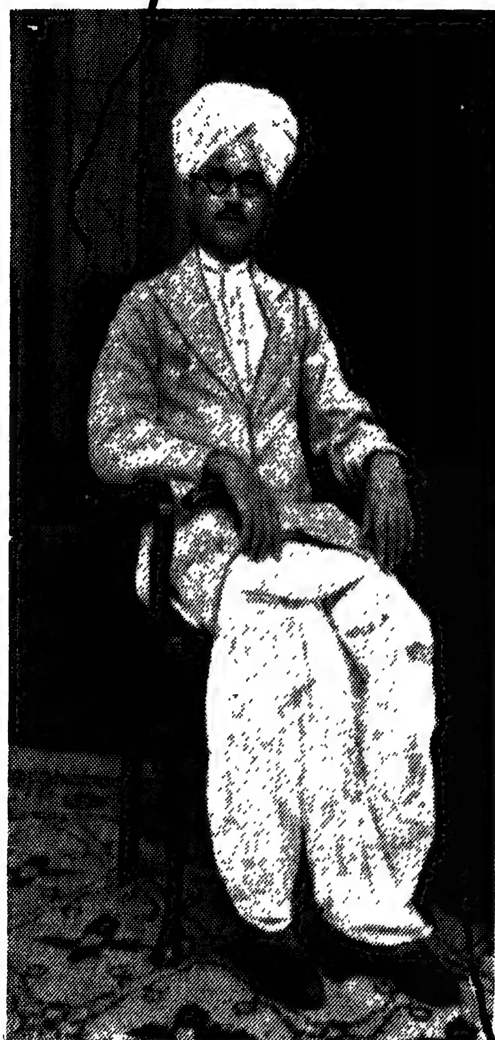
निवेदन

योगेन चित्तस्य पदेन वाचां
मलं शरीरस्य तु वैद्यकेन।
योऽपाकरोत्तं प्रवरं मुनीनां
पतञ्जलिं प्राञ्जलिरानतोऽस्मि ॥

बहुत दिनों से अन्तराश्रित अभिलाषा थी कि स्वकीयानुभवों के साथ आर्षग्रन्थों में इधर उधर बिखरे हुए रोगराट "सन्निपात" के प्रकरण को एकत्रित कर एक पुस्तक "सन्निपात ज्वर चिकित्सा" लिखूँ। महापुण्य पर्व श्रावणी के शुभावसर पर यह संकल्प पूर्ण हो सका यह प्रसन्नता का विषय है।

इस ग्रन्थमें त्रयोदश सान्निपातिक ज्वरोंका विवेचन प्राच्य एवं प्रतीच्य दोनों ही मतानुसार किया गया है, और वस्तुतः इसयुग में इसकी आवश्यकता भी थी। पाश्चात्य विज्ञान के आधारभूत प्रकरणों का सामञ्जस्य किस प्रकार अपने आर्ष सिद्धान्तों से होता है उसका समीकरणात्मक विश्लेषण वाञ्छनीय था। वैद्य समाज अपने सिद्धान्तों के इतर भी अन्य-विज्ञान के सिद्धान्तों से अपने को परिचित कर सकें यही मेरा अभिप्राय था और इसी आशय से मैंने इस पुस्तक को लिखा है। स्थान-स्थान पर जहाँ आवश्यकता प्रतीत हुई है होमियोपैथिक तथा यूनानी प्रकरणों का भी उल्लेख किया गया है। चिकित्सकों केलिये अन्यान्य विज्ञान का ज्ञान परमावश्यक है। आज के विद्यार्थी एवं कल के होनेवाले वैद्यों को भी इस पुस्तक से बहुत कुछ सहायता प्राप्त हो सकेगी ऐसा मेरा विश्वास है।

सन्निपात की चिकित्सा में ही वैद्य की वास्तविक योग्यता का परिचय मिलता है। मुझे कलकत्ते के प्रख्यात चिकित्सक स्व० ज्योतिर्मय सेन



ग्रन्थकर्त्ता

कविराज चक्रपाणि शर्म्मा, आयुर्वेदाचार्य

प्र० चिकित्सक मारवाड़ी अस्पताल

कवि चिन्तामणि के साथ कार्य करते हुए सान्निपातिक ज्वरों के असाध्य रोगियों की चिकित्सा करने का अवसर प्राप्त हुआ था। कविराज जी की चिकित्सा प्रणाली सान्निपातिक ज्वरों में शतशः सफल हुई। इसी प्रणालीके अनुसार चिकित्सा व्यवस्थाका विवरण इस पुस्तकमें दिया गया है। तथा स्व० महामहोपाध्याय कविराज गणनाथ सेन महोदय के सुपुत्र कलकत्ते के वर्तमान प्रख्यात चिकित्सक प्राणाचार्य कविराज सुशील-कुमार जी सेन M.Sc. महोदय ने समय २ पर अपने अनुभवों से भी मुझे परिचित किया। उसका भी समावेश चिकित्सा प्रकरणों में किया है। २५ वर्षके चिकित्सा कालमें जो कुछ भी मैं अनुभव प्राप्त कर सका हूं सभी का समावेश मैंने इस पुस्तक में कर दिया है।

आधुनिक आयुर्वेदिक शिक्षा पद्धति में प्राच्य प्रतीच्य मतानुसार ही शिक्षा की व्यवस्था है। ऐसे सभी विद्यालयों के कोर्समें यह पुस्तक सहायक होगी ऐसी मेरी धारणा है।

विशिष्ट योग स्व० कविराज ज्योतिर्मय जी सेन एवं पूज्यगुरु आयुर्वेद मार्तण्ड यादव जी त्रिक्रम जी आचार्य की कृपा से प्राप्त हुए हैं। अतः मैं आपका चिरऋणी हूं।

इस ग्रन्थ को लिखने की सर्व प्रथम प्रेरणा मुझे श्री० वि० स० मा० अस्पताल के संस्थापक स्व० रा० ब० रामजीदास जी बाजोरिया द्वारा प्राप्त हुई अतः उन्हींको प्रेरणास्वरुप यह ग्रन्थ प्रकाशित हो सका है।

ग्रन्थ लिखते समय मेरे अनुज भ्राता वैद्य बिश्वनाथ शर्मा एम० ए० एम० एस आयुर्वेद शास्त्री ने पाश्चात्य मतानुसार मूत्रादि परिक्षा विधि के लिखने में सहायता प्रदान की। एतदर्थ वह धन्यवाद का पात्र है।

जिन २ ग्रन्थों से मैंने इस पुस्तक को लिखने में सहायता ली है उन ग्रन्थकारों के प्रति मैं अपनी हार्दिक कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ।

ग्रन्थ तैयार होनेपर भी ग्रन्थ के संशोधन एवं प्रूफ संशोधन की आवश्यकता होती है इस कार्य में मुझे मेरे मित्र कविराज प्यारेलाल

शर्म्मा D. I. M. S. आयुर्वेदाचार्य से पूर्ण सहायता प्राप्त हुई हैं। इस प्रकार संशोधन में कविराज सतोश चन्द्र शास्त्री व्याकरणायुवदाचार्य, दर्शन रत्न से भी पर्य्याप्त सहायता मिली हैं।

इस प्रकार ग्रन्थके संशोधनादिक कार्योंके निष्पत्यन्तर भूमिका लिखने के लिये मैंने प्राणाचार्य कविराज सुशील कुमारजी सेन M. Sc. प्रधानाध्यक्ष कल्पत आयुर्वेद भवनसे प्रार्थनाकी; आपने सप्रेम स्वीकार किया, और अपना अमूल्य समय देकर भूमिका लिखनेकी कृपाकी है। अतः मै आपका हार्दिक आभार मानता हूं।

प्रेस की अनवधानतावश कई भूलें रह गयी हैं एतदर्थ शुद्धिपत्र देकर ठीक करने का प्रयास किया है फिर भी भूल रह सकती है। अतः विज्ञ पाठक स्वतः शुद्ध करने को कृपा करेंगे और मुझे उससे सूचित करेंगे जिससे द्वितीयावृत्ति में भूल सुधार हो सके।

यह मेरा प्रथम प्रयास है अतः इसमें भूल रहना स्वाभाविक है। विज्ञ पाठकों से सानुरोध निवेदन है कि मुझे उन त्रुटियों से अवगत करेंगे। यदि वैद्य समाज एवं विद्यार्थी वर्ग ने इस पुस्तक को सप्रेम ग्रहण किया तो मैं अपने प्रयास को सफल समझूंगा और शीघ्र ही आयुर्वेद सेवियों की सेवा में—"उदर रोग चिकित्सा" नामक द्वितीय पुष्प भो समर्पित करूँगा।

गच्छतः स्खलनं क्वापि भवत्येव प्रमादतः
हसन्ति दुर्जनास्तत्र समादधति सज्जनाः ॥

आयुर्वेद विदुषांविधेयः—

श्रावणी, सम्वत २००७

चक्रपाणि

भूमिका



प्रत्येक स्वतन्त्र देशकी उन्नति उस देशके विज्ञान चिकित्सा शास्त्र कला कौशल एवं व्यवसाय पर निर्भर करती है। विज्ञानमें पिछड़ा हुआ देश कभी भी अपने देशकी औद्योगिक समाजिक एवं आर्थिक उन्नति नहीं कर सकता। अतः प्रत्येक स्वतन्त्र देशके लिये तद्देशीय चिकित्सा शास्त्रको उन्नति एवं विकासकी परमावश्यकता है। प्रसन्नताका विषय है कि हमारा देश चिराभिलषित जन्म सिद्ध अधिकार—अनेकानेक वर्षोंसे जकड़ी हुइ गुलामीकी शृंखलाको तोड़ कर प्राप्त करनेमें समर्थ हो सका है। कठोर त्यागसे प्राप्त हुई इस स्वतन्त्रताका अब हमें सदुपयोग करना है। अपने देशके वैज्ञानिक चिकित्सा शास्त्रको उन्नतिकी चरम सीमापर पहुंचाना है। उन सभी उपायोंको जिससे कि अपने चिकित्सा शास्त्रकी उन्नति सम्भव है हमको अपनाना होगा और उसका समर्थन करना होगा।

अनेकानेक वर्षोंके घात प्रत्याघातोंको सहनेके बाद भी आज हमारा चिकित्सा शास्त्र जिस रूपमें हमको उपलब्ध है यह भी कुछ कम गौरवकी बात नहीं। यह उस शास्त्रकी व्यापकता एवं शाश्वतता का ज्वलन्त प्रमाण है। परन्तु समय एवं परिस्थितिको देखते हुये यह अनिवार्य है कि उस शास्त्रको आजके समयानुकूल बनाया जाय। आयुर्वेदके प्राचीन इतिहासको देखनेसे प्रतीत होता है कि समय एवं परिस्थितिओंने अपनी आवश्यकताकी पूर्ति अपने समयानुसार की है। सर्व प्रथम आर्ष संहिता कालका समय आता है। इसमें चरक, सुश्रुत, हारीत, काश्यप आदि संहिताओंका निर्माण हुआ। यह संहिताएं समयानुसार केवल मूलपाठ युक्त ही थी। कई संहिताओंका निर्माण इस कालमें हुआ। इसके बादका काल संग्रह काल आता है। इसमें वाग्भट्ट, शार्ङ्गधर, भावप्रकाश, आदि ग्रन्थ आर्ष संहिताओंसे चयन कर केवल मूलपाठ युक्त ही निकाले गये। उस समय केवल इतने ही से पूर्ति हो गई; परन्तु बादके समयने संहिताओं पर टीकाकी आवश्यकता समझी और उस समयके प्रकाण्ड विद्वानों

ने उन संहिता ग्रन्थोंकी सुसंस्कृत टीका उस समयकी मातृभाषा देव वाणीमें की। इस टीका कालमें चक्रपाणि डल्हण इन्दु आदि विद्वानोंके नाम उल्लेखनीय है। यह काल बहुत समय तक चला परन्तु समय फिर बदला। आवश्यकता हुई कि इन ग्रन्थोंकी भाषा टीका की जाय और यही वह समय है जिसमें हमलोग चल रहे हैं। परन्तु केवल भाषा टीकासे ही तथा आर्ष ग्रन्थोंमें बिखरे हुए इधर उधर एक बिषयक प्रकरणोंको एकत्रित करनेसे कार्य्य चलने वाला नहीं। इस समय आवश्यकता है पाश्चात्य विज्ञानसे जो कि इस कालमें आधिभौतिक वादको लेकर अपनी चरमोन्नति सीमा पर पहुंच चुका है, पूर्ण सामञ्जस्य करनेकी, आवश्यकता है। विवादा-स्थलोंपर निश्चयात्मक निर्णय करनेकी एवं आवश्यकता है स्वकीय चिकित्सा शास्त्रमें प्राप्त अनुभवोंको जन साधारण तक पहुं-चाने की। यह समयकी आवश्यकता है और इसीके अनुसार हमें चलना है और इसीकी पूर्ति भी हमें करनी है। मुझे प्रसन्नता है कि मेरे सहयोगी श्री विशुद्धानन्द सरस्वती मारवाड़ी अस्पतालके आयुर्वेद विभागके प्रधान चिकित्सक राजवैद्य पं० चक्रपाणि जोशीने इस पुस्तक "सन्निपात ज्वर चिकित्सा" को लिखकर न केवल समयानुकूल कार्य्य किया है अपितु एक बहुत बड़े अभावकी पूर्तिको है। अतः वे मेरी ओरसे धन्यवादके पात्र हैं।

जिस उद्देश्यको लेकर लेखकने रचना प्रस्तुतकी है उसका विवरण स्वकीय "नम्र निवेदन" शीर्षकमें प्रगट कर दिया है अतः उसके पुनः प्रतिपादनकी आवश्यकता नहीं। "सर्व रोगाग्रजोबली" ज्वर ओर उसमें भी ज्वरराट् सन्निपात उसकी चिकित्साका विवेचन करना कोई सहज कार्य्य नहीं। इसके अतिरिक्त अनेकानेक विवादस्थ-लोंके रहते हुए भी पाश्चात्य चिकित्सा शास्त्रसे सामञ्जस्य करना कितना गहन कार्य्य है इसका अनुभव चिकित्सा निष्णात् वैद्यबन्धु ही कर सकते हैं। जिन स्थलोंमें आयुर्वेदसे पाश्चात्य प्रकरणोंका मेल नहीं खाता लेखकने स्वतन्त्र रूपसे उसका विवरण दिया है वास्तवमें "रोग विज्ञानोपाय" में यदि पाश्चात्य तरीके अपनाये जाय जो अपने यहां नहीं है (यथा ऐक्सरे अणुवीक्षण यन्त्र द्वारा परीक्षादि) तो वैद्य बन्धुओंको विशेष लाभ ही रहेगा। इससे रोगके निश्चयात्मक

निदानमें अत्यधिक सहायता मिलेगी और चिकित्सा कार्य्य सहज हो जायगा। लेखकने "रोग परीक्षा, मूत्र परीक्षा, रक्त परीक्षा, मल परीक्षा, थूक परीक्षा आदि प्रकरण इसी उद्देश्यसे लिखे हैं। समयानुसार इसकी अत्यधिक आवश्यकता है और उसकी पूर्ति इस पुस्तक द्वारा हुई है यह निस्संकोच व्यक्त किया जा सकता है।

सन्निपात ज्वरकी चिकित्सामें परस्पर विरुद्ध गुणवाले दोष त्रय एकत्व रूप होनेसे दोष दूष्योंमें पारस्परिक विरोध होनेसे अत्यधिक कठिनताका अनुभव होता है। अतः इसकी चिकित्साका वास्तविक ज्ञान प्रत्यक्ष अनुभव द्वारा ही होता है। लेखकको यह सौभाग्य स्वतन्त्र चिकित्सा तथा अस्पतालमें कार्य्यकरनेसे प्राप्त हुआ है और यही कारण है स्वानुभूत चिकित्सा प्रकरणमें क्लिष्टसे क्लिष्ट सन्निपात के असाध्य रोगियोंको किस प्रकार रोग मुक्त किया है यह ग्रहण करने योग्य है। सन्निपात प्रकरणमें निर्दिष्ट क्रिया क्रममें,

"वर्धनेनैक दोषस्य क्षपणेनोच्छ्रितस्य वा।
कफस्थानानुपूर्व्या वा सन्निपातं ज्वरं जयेत्॥

के अनुसार तथा

सन्निपात ज्वरे पूर्वं कुर्यादामकफापहम्।
पश्चाद् श्लेष्मणि संक्षीणे शमयेत्पित्त मारुतौ॥

के आधार पर अथवा "वातस्यानुजयेत्पित्तं पित्तस्यानु जयेत् कफम्" आदि क्रमोंके आधारपर अनेक स्थल स्वानुभूत चिकित्सा स्थलमें मिलेंगे जिससे स्पष्ट होता है कि किस अवस्थामें किस प्रकारका क्रिया क्रम करना अभीष्ट है। कहीं २ पर सुश्रुतोक्त

शमयेत्पित्तमेवादौ ज्वरेषु समवायिषु।
दुर्निरवार तरं वृद्धं ज्वरार्तेषु विशेषतः"।

का अनुकरण भी दृष्टिगत होगा। त्रयोदश सन्निपातके प्रकरणमें निर्दिष्ट शास्त्रोक्त चिकित्सा क्रमका प्रत्यक्षानुभव स्वकीयानुभवके प्रकरणमें विशिष्ट रूपसे प्राप्त होगा। यही पुस्तककी विशेषता है। पाश्चात्य

विज्ञानके साथ सामञ्जस्य करते हुये और जहां न हो सका वहां उनके सिद्धान्तोंका स्वतन्त्र निरूपण करते हुये आर्ष सिद्धान्तोंके प्रकरणोंका जिस प्रकार समीकरणात्मक विश्लेषण कर जो निर्दोष संगम इस पुस्तकमें दिखाया गया है वह प्रसंशनीय है।

मौक्तिकज्वरके विभिन्न उपद्रवोंमें उक्त रोगियोंके उदाहरणों सहित चिकित्साका निर्देश किया है। किस प्रकारकी अवस्थामें किस प्रकार योगोंका प्रयोग कर सम्यक् लाभ प्राप्त किया गया है यह चिकित्सकोंके ग्रहण करने योग्य है। मस्तिष्कावरण शोथ (Meningitis) में अपनी चिकित्सा कितनी सद्यः फलदायक है इसकी स्पष्टता उदाहरणोंसे स्पष्ट होती है। इसी प्रकार अन्यान्य उदाहरणोंसे सभी विषय स्पष्ट हो जाते हैं।

स्वकीय चिकित्सामें प्रयुक्त योगोंके निर्माणको देखनेके लिये दूसरी इतर पुस्तककी आवश्यकता न पड़े एतदर्थ उसी प्रकरणान्तर्गत निर्दिष्ट योगोंकी निर्माण विधिका वर्णन किया गया है। अतः अनुभवार्थ यदि किसी योगका प्रयोग करना हो तो निर्माण विधि अन्यत्र देखनेकी आवश्यकता नहीं। उसी स्थलमें योग निर्माणका प्रकरण भी मिलेगा। तात्पर्य्य यह है कि इस पुस्तकको रखने वाले के लिये प्रत्येक वस्तु जहां तक सम्भव है उसे इस पुस्तकमें मिले यही सराहनीय प्रयास लेखकने किया है। यह लेखका वैशिष्ट्य है।

परिशिष्ट रूपमें अन्य प्रधान औपसर्गिक ज्वरोंका भी विवरण दिया है और उसमें भी वही परिपाटी अपनाई गई है जो सम्पूर्ण पुस्तकमें है। इस प्रकार लेखकने इस पुस्तकको सर्वाङ्गीण बनानेके लिये अथक परिश्रम किया है और अनुभूत अनुभवोंका ही आश्रय लेते हुये तदविषयक प्रकरणोंमें उनका निर्देश किया है। अतः यह लिखते हुये मुझे हार्दिक प्रसन्नता होती है कि समयानुकूल यह एक महत् कार्य्य हुआ है।

संहिता वादी विशिष्ट विद्वानों को भी इस पुस्तकको अपनाना चाहिये क्यों कि इस पुस्तक द्वारा स्थान २ पर अयुर्वेद वैशिष्ट्यक

दिग्दर्शन मिलता है। यह पुस्तक संस्कृतमें नहीं है हिन्दीमें है अतः ऐसा विचार कर अपनेका पुस्तकसे पृथक रखना कोई भी व्यक्ति उचित कार्य्य नहीं कहेगा। अतः समयके अनुसार बदलनाही बुद्धिमत्ता है। समयानुकूल प्रत्येक वस्तुका सदुपयोग करना वाञ्छनीय है।

भाषा बहुत ही सरल है। आयुर्वेदके विद्यार्थियों तथा ऐसे व्यक्तियों के लिये जो आयुर्वेदज्ञ नहीं है परन्तु आयुर्वेदके ग्रन्थोंका पठन पाठन रखना चाहते हैं यह पुस्तक बहुत ही सहायक है। आयुर्वेदके विद्यालयोंमें जहाँ प्राच्य प्रतीच्य मतानुसार शिक्षण क्रम है यह पुस्तक विशिष्ट उपादेय है।

यह लेखकका प्रथम ही प्रयास है तथा उसपर भी इतना मजा हुआ ग्रन्थ प्रस्तुत किया है यह विशिष्ट योग्यताका द्योतक है। लेखकने निवेदनमें व्यक्त किया हैं कि यदि "वैद्य वन्धुओं तथा विद्यार्थी वर्गने पुस्तकको सप्रेम ग्रहण किया तो शीघ्र ही "उदर चिकित्सा" नामक द्वितीय पुष्प समर्पित करूंगा" अतः लेखकके इस परिश्रमके लिये हार्दिक धन्यवाद देता हुआ सर्व साधारणसे सानुरोध निवेदन करता हूं कि इस पुस्तकको अपनाकर द्वितीय पुष्पको भी प्रस्फुटित होने का अवसर दे जिससे "उदर रोग" पर भी लेखकके अनुभव जनसाधारणको व्यक्त हो सके।

आयुर्वेद सम्बन्धी पुस्तकोंके प्रकाशनको अपनाकर उसको प्रोत्साहन देना स्वकीय शास्त्रकी उन्नति करना है जो हम सभीका भारतके स्वतन्त्र नागरिककी हैसियतसे प्रधान कर्त्तव्य है। आशा है हम अपने कर्त्तव्यसे विमुख नहीं होंगे और आयुर्वेदोन्नतिमें सहायक होंगे।

सुशील कुमार सेन शर्म्मा प्राणाचार्य M.Sc.

प्रधानाध्यक्ष—

विश्वनाथ आयुर्वेद महाविद्यालय आरोग्यशाला—

कल्पतरु आयुर्वेद भवन, विजिटिङ्ग फिजीसियन

कलकत्ता श्री विशुद्धानन्द सरस्वती मारवाड़ी अस्पताल,

३०-६-५० सभापति—

निखिल भारतीय आयुर्वेद संस्कृति परिषद

* विषयानुक्रमणिका *



—:परिशिष्ट:—

संहिता एवं पुस्तकोंकी तालिका जिनसे इस पुस्तकमें सहायता ली है ।

(List of Reference Books)

आयुर्वेदिक

(१) चरक संहिता
(२) सुश्रुत संहिता
(३) वाग्भट्ट
(४) शार्ङ्गधर संहिता
(५) भावप्रकाश संहिता
(६) माधव निदान
(७) रसयोग सागर
(८) भैषज्य रत्नावलि
(९) सिद्ध भैषज्य मणिमाला
(१०) सिं० भैषज्य मंजूषा
(११) सिद्धान्त निदान
(१२) जीवाणु विज्ञान
(१३) मानव शरीर रहस्य
(१४) सिद्धयोग संग्रह
(१५) चिकित्सातत्त्व प्रदीप

ऐलोपैथिक

(2) Medicine by taylor
(2) Medicine by sewill
(3) Medicine by osler
(4) Clinical methods
(5) Green pathology
(6) Bacterio logy
(7) Helliburton physio'ogy
(8) Test book of physiology

होम्योपैथिक

१) मैटीरिया मैडिका
(२) होम्योपथस् गाईड

युनानी

(१) तिब्बे अकबर
(२) इलाजुलगुरबा



श्रीगणेशाय नमः ।

सन्निपात ज्वर चिकित्सा



मंगलाचरणम्

गुण त्रय विभेदन मूर्तित्रय मुपेयुषे ।
त्रयीभुवे त्रिनेत्राय त्रिलोकी पतयेनमः ॥
सरस्वत्यै नमो यस्याः प्रसादात् पुण्यकर्मभिः ।
बुद्धिदर्पण संक्रान्तं जगदध्यक्षमीक्ष्यते ॥
ब्रह्मदक्षा श्विदेवेश भरद्वाज पुनर्व्वसु ।
हुताशवेश चरक प्रभृतिभ्यो नमोनमः ॥
लिख्यतेऽति विशदा चिकित्सा सन्निपातकी ।
अनुभूय क्रियाः सर्वाः ग्रन्थेऽस्मिन्सम्प्रदर्शिताः ॥
यत् सन्निपात विवृतिं विरचय्य यत्नात् ।
ग्रन्थे व्यधापि निखिल मनुभूतयोगैः ॥
हेत्वास्तु व स्तदपि यत्न मकार्य मस्यां । (मस्यां)
दीपां विलांध्यन हरणात्तरणे समः किम् ॥
गुरु चरण समीपे शास्त्रतो यद्धि लब्धम् ।
अनुभव पथि किंचित्सूक्ष्म दृष्टयाऽवाप्तम् ।
निखिल मिह विविच्य लिख्यते शास्त्रवादैः
भवतु कृति मनोज्ञा बालकानां सुखाय ॥

॥ श्रीः ॥

रोग परीक्षा

चिकित्सा-विज्ञानमें सर्वप्रथम रोग परीक्षा प्रधान है। जब तक रोगका निदान अच्छी तरहसे नहीं किया जाता, तब तक चिकित्सामें सफलता नहीं मिलती। अतः चिकित्सकको चाहिये कि प्रथम रोगकी परीक्षा करे। शास्त्रमें लिखा है कि—

दर्शन, स्पर्शनः, प्रश्नैः परीक्षेताथ रोगिणम्।
रोगन्निदान प्राग्रूप लक्षणोपशयाप्तिभिः ॥

आयुर्वेद शास्त्रमें रोग परीक्षाकी कई विधियां प्रचलित हैं। दो प्रकार की, छः प्रकारकी, आठ प्रकारकी। प्रथम जो दो प्रकारकी बतलाई है, उसमें एक प्रत्यक्ष दूसरी अनुमानजन्य। इसीमें आप्तोपदेशको और मिला दिया जाय तो तीन प्रकारकी हो जाती है। जैसे चरक संहितामें लिखा है। त्रिविध खलु रोग विशेष विज्ञानं भवति आप्तोपदेशः प्रत्यक्ष मनुमानं चेति। जो परीक्षा पाँचों ज्ञानेन्द्रियों द्वारा रोगोकी सहायता लेकर की जाती है, उसको छः प्रकारकी गणनामें गिनी जाती है। यदि इसमें मल, मूत्र, नाड़ी परीक्षाको और मिला दिया जाय तो ८ प्रकारकी परीक्षा हो जाती है। इसी तरह पाश्चात्य चिकित्सा के अनुसार कई प्रकारसे रोग परीक्षा की जाती हैं।

अतः यदि तुलनात्मक दृष्टिसे रोग परीक्षा की जाय तो रोग निराकरणमें पर्याप्त सहायता मिलती है ऐसा मेरा विश्वास है। अतः वैद्योंको पाश्चात्य चिकित्सा पद्धतिका भी परिज्ञान आवश्यक है, जिससे वे निर्भय होकर निश्चयात्मक निदान निरुपण कर सके। इसी लक्ष्यको लेकर पाश्चात्य रोगविज्ञान विषयक स्थलका समावेश इस पुस्तकमें किया जा रहा है। आशा है वैद्य बन्धुओंको एवं आयुर्वेद सेवी छात्रों

को इससे अवश्य लाभ प्राप्त होगा। स्वकीय विज्ञानके इतर अन्य परकीय विज्ञानोंका ज्ञान करना एवं उनमेंसे अपने योग्य अंशों एवं स्थलोंको ग्रहण कर लेनेमें कोई आपत्ति नहीं है। आधुनिक शल्य-चिकित्सामें विशिष्ट स्थान रखनेवाली चिकित्सा (Plastic Surgery) है, जिसका ग्रहण पाश्चात्य चिकित्सा विशारदोंने आयुर्वेदसे किया है और निःसंकोच यह उन्होंने व्यक्त भी किया है। लिखनेका तात्पर्य यही है कि विज्ञान किसी एकको बपौती नहीं है! वह मानवमात्रके कल्याणके लिये है। प्रत्येक व्यक्ति ही इसका प्रयोग एवं उपभोग कर सकता है।

चिकित्सा क्षेत्रमें कई बार मुझे यह अनुभव हुआ कि पाश्चात्य चिकित्सा विज्ञानकी जानकारी न होनेके कारण वैद्य बन्धुओंको या तो परमुखापेक्षी होना पड़ा है अथवा पाश्चात्य चिकित्सकोंके समक्ष नीचा देखना पड़ा है।

अतः पाश्चात्य विज्ञानके ग्रहण योग्य स्थलोंका समावेश इस पुस्तक में किया जा रहा है। इसका ज्ञान हो जानेसे न तो हमारे वैद्य बन्धुओं को परमुखापेक्षी होना पड़ेगा और न पाश्चात्य चिकित्सकके समक्ष नीचा देखना पड़ेगा। इसके ज्ञानसे उनमें वैशिष्ट्यकी वृद्धि होगी और वे एक योग्य चिकित्सक बन सकेंगे। अतः रोग ज्ञानका तुलनात्मक वर्णन अब किया जा रहा है।

दर्शन परीक्षा तथा प्रकृति परीक्षा

कितनी ही बातें रोगीके दर्शन करनेसे ही जानी जाती हैं। जैसे— आँखोंमें पीलापन पित्तवृद्धि जन्य रोगोंको बतलाता है। रोगीकी जिह्वा द्वारा मलमूत्र आदि रोगोंका निर्णय हो जाता है। आयुर्वेद शास्त्र में वात, पित्त, कफके ऊपर ही विशेष ध्यान दिया जाता है। इसलिये

नाड़ी परीक्षामें इस बातका निर्णय किया जाता है कि इस रोगमें इस समय वात नाड़ी है, पित्त नाड़ी है, कफ नाड़ी है या मिश्रित है, यह प्रकृतिके ऊपर निर्भर करता है। दोनोंकी समानावस्था का नाम प्रकृति है। जिस मनुष्यमें जो दोष प्रधान रहते हैं, उसकी प्रकृति उसीके अनुसार समझी जाती है। यही कारण है कि एक वस्तु एक प्रकृतिवालेको अनुकूल पड़ती है, परन्तु दूसरी प्रकृतिवालेको अनुकूल नहीं पड़ती। पित्त प्रकृतिवालेको गरम वस्तुमें अनुकूल नहीं आती और कफवालेको ठण्डी वस्तुमें ; यह सब विवरण आयुर्वेदज्ञ ही जान सकता है, डाक्टर नहीं। उनके यहाँ प्रकृति कोई वस्तु ही नहीं है। पित्त-ज्वरमें भी कुनाईन दिया जाता है और कफ-ज्वरमें भी। यह खानेवाला ही जानता है कि पित्त प्रकृतिवाले रोगीको पित्त-ज्वरमें पित्तवर्धक कुनाईन कैसा लाभ पहुंचाती है। इसीसे प्रत्येक चिकित्सकको प्रकृतिका ज्ञान रखना अत्यन्त आवश्यक है। रोग परीक्षा उसकी चिकित्सा तथा पथ्यापथ्यका निर्णय प्रकृतिका ज्ञान प्राप्त करके करनेमें सुगमता रहती है। रोग और प्रकृतिका परस्परमें सम्बन्ध है या नहीं यह एक आवश्यक प्रश्न है। प्रायः प्रकृतिमें जो-जो दोष प्रधान होता है, प्रायः रोग भी तदनुसार ही होता है। जैसे वात प्रधान प्रकृतिवाले पुरुषको ज्वरादिक रोग होते हैं तो उसमें वायुका सम्बन्ध मानना उत्तम है। परन्तु यह भी ख्याल रखना चाहिये कि दोष हमेशा मूल प्रकृतिके साथ ही आता है, ऐसा भी कोई नियम नहीं है। कहीं-कहीं पर ऐसा भी देखा गया है कि प्रकृति पित्तकी है परन्तु रोग वायुसे हुआ है। कहीं पर प्रकृति वायुकी और रोग पित्तसे हुआ है। इसलिए केवल प्रकृतिके आधार पर ही रोग नहीं होते। तथापि रोगोंकी परीक्षा और उपचारके लिये प्रकृतिका ज्ञान भी आवश्यक है। सर्व प्रथम परीक्षा करते समय दर्शन-परीक्षाके द्वारा रोग निर्णयमें अच्छी सहायता मिलती है। जैसे वात व्याधि ग्रसित रोगी तेजोहीन

श्याम वर्ण हो जाता है। पित्त जन्य व्याधि मिश्रित रोगीकी देह निर्बल, पीली और शुष्क होती है तथा आँख लाल-पीली हो जाती हैं और इसको पसीना बहुत आता है। कफ जन्य व्याधिमें शरीर चिकना शीतल रहता है। रक्तकी कमीसे नेत्र, मुख, नख सफेद हो जाते हैं। पाण्डु कामला रोगमें चेहरा कान्तिहीन, पीलापन युक्त नेत्र और पेशाब पीला उतरता है। धातुक्षीणतासे चेहरा तेजहीन रहता है। श्वाससंस्थानके रोगोंमें चेहरे पर व्याकुलता आ जाती है। शारीरिक वेदना होनेपर चेहरेका रंग बदल जाता है। पुराने अजीर्ण रोगमें मुंह शोथयुक्त दिखता है। उपदंश पीड़ित रोगीका नासासेतु बैठ जाता है। न्युमोनिया रोगमें श्वासोछ्वास क्रियाके समय नथुनें फूलने लगते हैं। मनेञ्जाइटिस (Meningecis) रोगमें सिर बढ़ा हुआ-सा प्रतीत होता है। सिर-दर्द अधिक होनेपर ललाट और भवें ऊपर खिच जाती हैं। न्युमोनिया (Pneumonia) की अन्तिम अवस्थामें देहका रंग नीला पड़ जाता है। वात-रक्त (विकार) व्याधिमें तथा रक्ताभिसरण क्रिया मन्द होनेपर नखोंपर लम्बी रेखाएँ पड़ जाती हैं। श्वेत प्रदर, पित्तज-मेहमें हथेलीमें पसीना ज्यादा आता है। जलोदरमें पेट समान, पार्श्व भाग फूले हुये रहते हैं। केवल वातोदरमें पार्श्व भाग नहीं फूलते उदर फूला रहता है। मेहजनित उदरमें पेटकी त्वचा मोटी पड़ जाती है। नाभि टलने पर स्तनोंके समानान्तरमें विषमता आ जाती है। गर्भ धारण करनेपर उदरके नीचे दोनों तरफ रेखाओंकी प्रतीति होती है। प्रसन्नता, धैर्य, शोक, चिन्ता, क्रोध, द्वेष लज्जादिके भाव मुखकी आकृति देख कर ही पहिचानें जाते हैं। तथा बोलनेसे भी उपरोक्त बातोंका पता लग जाता है। उदरशूल, कटिशूलमें, रोगी उदरको दबाकर या कमर पर हाथ रखकर चलता है। कमर और पैरके सन्धि स्थानोंमें मांसाल्पता होनेपर मनुष्य हाथीकी तरह झूमता हुआ चलता है। मस्तिष्क विकारका रोगी आँख मीचकर खड़ा नहीं रह सकता है।

मन्यास्तम्भमें ग्रीवा सीधी लकड़ीके समान तनी हुई रहती है। बच्चों के शीर्षाम्बुवृद्धि होनेपर सिर बड़ा हो जाता है। इस तरह दर्शन परीक्षा द्वारा बहुतसे रोग बहुत आसानीसे पहिचाने जा सकते हैं। दर्शन परीक्षामें जिह्वा, नेत्र रूप, त्वचा, मूत्र, और मल इनका समावेश है।

जिह्वा परीक्षा—जीभ द्वारा आमाशय, आँत कंठमें होनेवाले दोषोंका पता लगता है; क्योंकि जीभकी ऊपरी पड़त कोमल श्लेष्म कला या कोष्ठोंसे निर्मित है जिसके निरीक्षणसे ज्ञान हो जाता है। इसकी रचना प्रायः आमाशय और आँतोंकी श्लेष्म कलासे मिलती है। अतः आमाशयिक विकारोंकी गन्ध श्वासनालिका या अन्य रास्तेसे मुँहमें पहुंचकर दांत ओर जीभपर मल रूपसे जम जाती हैं इस मल द्वारा ही जीभको परीक्षा की जाती है। स्वस्थावस्थामें जीभ गीली लाल रंगकी रहती है। तथा इसका अग्र भाग अधिक लाल रहता है। रंग और जीभके ऊपर जमे हुये मैलके द्वारा रोगों का निर्णय हो जाता है।

गीली जीभ—स्वस्थावस्थामें जीभ कफ द्वारा गीली रहती है। ज्वरसे जीभ सूखने लगती है। यद्यपि जल पीनेसे जीभ गीली हो जाती है, परन्तु ज्वरादिक रोगोंमें जलसे गीली जीभ तुरन्त ही सूख जाती हैं। •या कई रोगोंमें रसके कम बननेसे भी जीभ सूख जाती है। धतूरा खानेसे भी जीभ गला ओठ सब सूख जाते हैं। सूखी जीभका स्पर्श करनेसे कठिन प्रतीत होती है। प्लेग, शीतला, ज्वरादिक संक्रामक/रोगोंमें भीतरी उष्णताके कारण जीभ अधिक सूखने लगती है। अत्यन्त सूखी कठोर जीभ भयानकताका चिह्न है।

लाल कांटेदार जीभ— जीभका अग्र भाग तथा पार्श्व भाग स्वभावसे लाल रहता है। परन्तु अग्निमान्द्य, अन्त्रक्षत, क्षय, शरावादि कारणोंसे तथा संखिया आदि विषोंके सेवन करनेसे जिह्वा लाल रंगकी

काँटा युक्त हो जाती है तथा अग्र भागमें और पार्श्वमें गहरी लाल हो जाती है।

मैली जिह्वा—जीभ पर सफेदीपन और पीलापन आनेका नाम हीं मैलापन है। कोष्ठवद्धता, तीव्रज्वर, सन्धिवात, यकृत विकार, मस्तिष्क रोग, आमाशय शोथ, क्षय, आमवात मूर्च्छा, मसूरिका, शिरो वेदना, यकृत् विद्रधि, वातरक्त, मधुमेह आदि रोगोंमें जिह्वा मैली हो जाती है। रोग घटने पर जिह्वा साफ होने लगती है। यदि जीभ का पिछला भाग साफ होने लगे तो समझना चाहिये कि रोग धीरे २ कम होता जा रहा है। यदि जीभका मैलापन एक साथ घट जाय तो और जोभका रंग चमकता लाल निकल आवे और दरार पड़े हों तो समझना चाहिये कि कहीं आतोंमें व्रण हो गया है। यह सहसा परिवर्तन अशुभ सूचक है। तीव्र अजोर्ण, आमाशयिकशोथ, अग्निमान्द्य, गलग्रन्थिशोथ; मानसिक रोगादिकोंमें भी जीभ पर मैलापन आ जाता है। दाँतुन न करनेवालेके तथा अधिक पान तम्बाखू खानेवालों के तथा मधुर पदार्थ सेवियोंके जीभ पर भी मैल जम जाता है। मलका रंग सफेद हो किंवा लाल हो तो आमाशयिक संस्थानकी श्लेषमल त्वचा में विकृति समझनी चाहिये। यदि जिह्वाका रंग पीला है तो यकृत सम्बन्धी बीमारी समझना चाहिये। कफजन्य रोगोंमें रंग सफेद होता है। शरीरसे अधिक मात्रामें रक्त निकलने पर तथा जीर्ण ज्वर, कालाजार रोगमें अथवा अन्य कारणोंसे रक्तकी कमी होनेपर जीभ का स्वाभाविक रंग फीका पड़ जाता है। तथा आँखोंमें और चेहरे पर फिकाई दिखाई देती है। अधिकांश रोगोंमें जीभका रंग काला जामुन जैसा हो जाता है। जैसे श्वास, फेफड़ा सम्बन्धी रोगोंमें जब रक्त अच्छी तरहसे साफ नहीं होता है उस समय जीभ काली पड़ जाती है। या आसमानी रंगको हो जाती है। जीभका काला रंग होना अशुभसूचक है।

जिह्वा कम्पः—तीव्र ज्वर, अन्त्रक्षत, सन्निपात, कम्पवात, सर्वाङ्गवात, अत्यधिक मद्य सेवनसे एवं अन्य कठिन बीमारियोंमें जीभ कांपने लगती है, तथा मनुष्यके वशमें नहीं रहती है। और बोलते समय लड़खड़ाने या रुकने लगती है। वह क्रिया अतिकाय निर्बलता द्योतक है।

जिह्वा संकोच—जब जिह्वाकी वातवाही नाड़ियोंमें विकार लकवा, अतिरिक्त श्राव, कण्ठ रोहिणी, हृतपिण्ड विकृति आदि रोग हो जाते हैं तब जिह्वा संकोच हो जाता है। मस्तिष्क व्रण प्रदाह होनेपर जिह्वा पतली नोकीली हो जाती है।

जिह्वाक्षत या पाक—यह रोग प्रायः पित्तकी अधिकतासे उत्पन्न अम्लपित्तादि रोगोंके कारण अथवा मयादात्य मधुमेह जीर्ण-प्रवाहिका, संग्रहणी, उपदंश आदिके होनेसे या क्षारादि, तीव्र पदार्थोंके सेवनसे, आमाशयिकरस-विकृति से उत्पन्न हो जाता है। यह बहुत ही कष्ट प्रद रोग है। इसमें पीड़ित मनुष्यका खान-पान छूट जाता है। शरीरमें सुस्ती आ जाती है। क्षय, यकृत, प्लीहा आदि रोगोंकी अन्तिम अवस्थामें भी मुख पाक होकर जीभमें घाव हो जाते हैं। अग्निमान्द्य रोगोंके दांतोंमें पूय होनेसे भी यह रोग हो जाता है परन्तु वहांपर ये फटेंदरारकी तरह या गोलाकार खड्ढेकी तरह किनारों पर हो जाते हैं; कृमि विकार, रक्त विकारके कारण किसी-किसीको जीभपर छोटी-छोटी गाँठ हो जाती हैं।

सामान्य परीक्षा

दर्शन परीक्षामें जीभपरीक्षा, रोग परीक्षामें बहुत ही सहायता करती है याने दर्पणकासा काम करती है। जैसे जीभके ऊपर सफेदी का जमाव पाचन क्रियाकी विकृतिको बतलाता है।

मोटी और शोथ युक्त तथा दाँतों से दबकर कटी हुई जीभ मज्जा तन्तुओं के विकारको तथा आमाशयके विकारको बतलाती है। जीभका पीला रंग पित्त विकारकी सूचना देता है जिससे जीभ लाल और मोटी हो जाती है, मुंहका स्वाद कड़वा हो जाता है। किसी समय अधिक पित्तावरोध होनेपर छाले भी हो जाते हैं। वायुके कारण जीभ नीले रंगकी कांटायुक्त खरदरी हो जाती है।

कफ दोषसे जिह्वा स्थूल, सफेद, गीली, कफसे लिपी हुई-सी, मृदु, सफेद मल युक्त हो जाती है। सूखी, मैले पृष्ठवाली, कालिमा युक्त कम्पन करनेवाली २१ दिनके मियादी ज्वरकी निशानी है। जिस रोगीकी जीभ बाहर निकालते समय बहुत धीरे २ निकले और अन्दर भी जल्दी न जा सके तो रोगीको अत्यंत कमजोर मरणोन्मुखी समझना चाहिये। जिस रोगीकी जीभ जोरसे कांपने लगे तो समझना चाहिये कि अवस्था खतरनाक है। रक्तविकार ज्वरमें पीप होने पर जीभ पर काला भूरा लेपसा आ जाता है। मन्थर ज्वरमें जिह्वाका अग्र भाग तथा पार्श्व भाग लाल हो जाता है। जीर्ण ज्वर पीड़ित रोगीकी तथा प्लीहा रक्तश्रावके रोगीकी जीभ सफेद हो जाती है। त्रिदोष रोगमें जीभ कांटेवाली शुष्क तथा काले जामुन जैसे रंगवाली हो जाती है।

विसूचिका, मूर्च्छा, श्वासावरोधमें जिह्वा स्पर्शमें शीतल हो जाती है। संग्रहणीके रोगीकी जीभ अंकुर रहित, कोमल, चिकनी, क्षतयुक्त हो जाती है; अरुचि और अतिसार रोगीकी जीभ सफेद रंग की होती है। आमातिसार, रक्तातिसारमें जीभका रंग काला होना भयप्रद माना है। प्रमेह रोगीकी जीभ मैले रंगकी रहती है। उदर रोग, सोमल विष, मुखपाक और शीतलामें जिह्वा काली हो जाती है, तो वह अवस्था खतरनाक मानी जाती है। मधुमेहमें मुंहसे मीठी गन्ध निकलती है। असाध्य पाण्डु रोगमें जिह्वाका रंग फीका पड़ जाता है तथा शिथिल सी प्रतीत होती है। आमाशयमें दाह और आंतों में शोथ होनेपर जीभ

गहरी लाल हो जाती है। जिस मनुष्यकी जीभ खरदरी झागदार लकड़ी जैसी कठोर गतिरहित हो जाती है उसका मृत्युकाल नजदीक आ गया समझो। इस तरहसे हरेक प्रकारकी बीमारीकी परीक्षा जिह्वा द्वारा आसानीसे की जा सकती है।

नेत्र परीक्षा

रोगीकी आँखको देखकर जो परीक्षा की जाती है, उसको नेत्र परीक्षा कहते हैं। नेत्र परीक्षा द्वारा भी अनेक व्याधियोंके निदानमें सहायता मिलती है। आँखें बाह्य लक्षणों के अतिरिक्त भीतरी मानसिक व्यथाओं को भी प्रदर्शित करती हैं। अन्य भी मारक रोगों में भावी विपत्तिकी सूचना दे देती हैं। धत्तूरा, अहिफेनादि विषजन्य बीमारियों को भी स्पष्टदर्शा देती है।

शास्त्रविधिसे दृष्टि परीक्षा

रूक्षा धूम्रा तथा रौद्रा चला चान्तर्ज्वलत्यपि।
दृष्टिर्यदा तदा वात रोगं रोग विदोजगुः॥
द्वीप द्वेषी च संतप्तं पीतं पित्तेन लोचनम्।
जलार्द्र ज्योतिषा हीनं स्निग्धं मन्दं कफेनतत्॥
द्वन्द्वदोषे भवेन्मिश्रं तूर्णं तूर्णं विलोचनम्।
श्यामवर्णं च निर्भुग्नं तंद्रामोह समन्वितम्॥
रौद्रं च रक्तवर्णं च भवेच्चक्षुस्त्रिदोषतः।
एकं चक्षुर्यदा भीमं द्वितीयं मीलितं भवेत्॥
त्रिभिर्दिनै स्तदा रोगी सयाति यम मन्दिरम्।
ज्योतिर्विहीनं सहसा रोगिणो यस्य लोचनम्॥
ईषत्कृष्णं सनियतं प्रयाति यम शासनम्।
सुरक्तं कृष्णवर्ण च रौद्रं च प्रेक्षते यदा॥

इति लिङ्गैर्विजानीयान्मृत्युरेबन संशयः ।
एक दृष्टिरचैतन्यो भ्रमन्स्फुरित तारकः ॥
एक रात्रेण नियतं परलोक पथं व्रजेत् ।

भावार्थ—वायु दोषसे आंखें भीतर धसी हुई, निस्तेज, धूम्रवर्णवाली चंचल होती हैं। पित्तके दोषसे आंखें पीली जलनयुक्त दीपककी रोशनीको भी सहन करनेमें असमर्थ रहती हैं। कफके दोषसे आंखें गीली, सफेद, मन्द और तेज रहित होती हैं। सन्निपातमें आंखें काली, लालरंग युक्त बैठी हुई सी, तन्द्राछन्न प्रतीत होती हैं तथा भयानक, डरावनी हो जाती हैं।

एक आंख भयानक हो जाय और दूसरी मिच जावे तो ३ दिनके भीतर ही रोगी मर जाता है।

जिस रोगीकी आंखें एक साथ ज्योतिहीन हो जाये तथा आंखका रंग कुछ काला हो जावे तो वह रोगी मर जाता है। जिस रोगीका आंखों का रंग काला अथवा लाल वर्णका हो जाय और भयंकर दृष्टिसे देखे, वह रोगी अवश्य ही मर जाता है।

अन्य लक्षण—मस्तिष्कमें रक्त संचय होनेसे तथा अन्य मस्तिष्क रोग होनेपर तीव्र ज्वरमें, नशा सेवीकी, क्रोधीकी तथा औपसर्गिक मेहयुक्त पुरुषकी आखें लाल रंगकी हो जाती हैं। न्युमोनियाकी खराब अवस्थामें आंखें लाल और खुली रहती हैं। पुतलियां ऊपरको चढ़ जाती हैं। श्वास आवाज युक्त वेगसे चलता है।

कामलामें आंखों का रंग पीला हो जाता है।

हैज़े के रोगीकी आंखें भीतर धसी हुई सी तथा कुछ लाल रहती हैं। मृगीजन्य मूर्छामें नेत्रकी पुतली ऊपरको चढ़ जाती है। उन्माद रोगीकी आंखों में चंचलता रहती है। अफीमके विषसे पुतली संकुचित हो जाती है। सन्यासरोगमें कनीनिका थोड़ी संकुचित होती है। धतूर-

विषमें पुतलियां फैल जाती हैं। जीर्णवृक्कशोथ रोगीकी आंखों पर नींदसे सुबह उठनेके बाद पलकों पर शोथ प्रतीत होता है। मगजकी कमजोरीसे तथा वीर्यकी कमीके कारण दूर दृष्टि मन्द हो जाती है। मरणासन्न अवस्थामें आंखें भीतर धसी हुई-सी, पलकें खुली हुई सी, चेहरा भयानक दिखलाई पड़ता है। यह उपरोक्त परीक्षा विधि आयुर्वेदीय ग्रन्थों के सिवाय ऐलोपैथिक पुस्तकों में नहीं पाई जाती है।

रूप परीक्षा

जैसे अन्य इन्द्रियों के द्वारा देखनेसे रोगका निदान आसानीसे हो जाता है, उसी तरह रोगीका चेहरा देखकर भी रोगोंकी परीक्षा की जा सकती है। प्रातःकाल हरएक रोगीका चेहरा स्वस्थ व्यक्तिके मुखकासा हो जाता है। अगर उस समय भी चेहरा निस्तेज, विकृत, झांईयुक्त दिखलाई दे तो वात-जनित दोषका संदेह करना चाहिए।

पित्त दोषवाले रोगीका मुख पीला, कान्तिहीन, सूजा हुआसा रहता है।

कफ दोषसे मुंहपर चिकनापन, सुस्ती दिखलाई देती है। पेशाबके दोषसे चेहरेका रंग बदला हुआ-सा प्रतीत होता है। पाण्डु रोगवाले का चेहरा पीला तथा रक्तकी कमीका द्योतक होता है। मट्टी खानेवाले बच्चोंके चेहरेपर तथा आंखों पर शोथ प्रतीत होता है।

स्वस्थावस्थामें मनुष्यका चेहरा शान्त और हँसमुख होता है।

चिन्तायुक्त मनुष्यके चेहरेमें घबराहट, बेचैनी, अस्वस्थता दिखलाई देती है।

फीकापन युक्त चेहरा जीर्णज्वरसे, अतिरक्तश्रावसे प्लीहाके कारण, अधिक चिन्ता, अधिक दुर्बलतासे हो जाता है।

रक्तवर्ण चेहरा, तीक्ष्णज्वर, मस्तिष्क पीड़ा, तेज गरम लू लगनेसे हो जाता है; तथा रक्तका चाप बढ़नेसे भी हो जाता है। पीला चेहरा जलो-

दर, जीर्णज्वर, अधिक कमजोरी आदि बीमारियोंसे हो जाता है। इस रोगमें आंखोंकी पलकें नशेबाजकी तरह उन्मत्त तथा गाल पिचके हुए, चेहरा सूजा हुआ-सा दिखलाई देता है। यह उपरोक्त लक्षण हृदय रोग से तथा वृक्क रोगसे पीड़ित रोगीको भी हो जाते हैं।

अरिष्ट लक्षण सूचित चेहरा—हैज़ा, प्लेग आदि भयंकर बीमारियों की अन्तिम अवस्थामें चेहरेमें निम्नलिखित परिवर्तन हो जाते हैं। जैसे—आंखोंके डोले (अक्षिकूट) अन्दर घुसे हुए-से दिखने लगते हैं। नाक नोकीली हो जाती है। कनपटीके पास गड्ढा पड़ जाता है। गाल चिपक जाते हैं। चेहरेका रंग काला पड़ जाता है। ऐसे लक्षण होनेपर रोगीकी मृत्यु सन्निकट ही समझनी चाहिए।

त्वचा द्वारा परीक्षा

पित्त रोगी भवेदुष्णो वात रोगी च शीतलः।
श्लेष्मलश्च भवेदार्द्रः स्पर्शतश्चैव लक्षयेत् ॥

वात रोगीकी त्वचा स्पर्श करते समय ठण्डी मालूम होती है। पित्त रोगीकी त्वचा स्पर्शमें गरम प्रतीत होती है। कफ रोगीकी त्वचा कुछ गीलापन लिये ठण्डी प्रतीत होती है। इसी तरह त्वचापर निकले हुए दानोंको देखकर भी रोगकी परीक्षा की जाती है। जैसे—शीतला, खसरा, शीतपित्त, मन्थर ज्वर आदि रोगोंमें ज्वरके साथ दाने निकलते हैं। यह दाने या त्वचाका रंग ही इनमें अलग-अलग रोगोंका परिचय कराता है। शरीरमें लाल रंगका शोथ पित्तकी सूचना देता है। सफेद रंगका शोथ कफजनित समझा जाता है। जिस रोगीकी त्वचा फटी हुई-सी शोथयुक्त हो जाय तो रक्तका दोष समझा जाता है। यदि त्वचा तक रक्त नहीं पहुंचता है तो त्वचा शीत या गरम-सुन्न हो जाती है। जिस रोगीकी त्वचाका रंग ताम्बे-जैसा हो जाय और ऊपर काले धब्बे पड़ जाय तो उसको कुष्ट हो गया समझना

चाहिए। उपदंशके कारण रोगीके शरीरमें विस्फोट हो जाते हैं। हैजा के रोगीके हाथ-पैरके नाखून काले पड़ जाते हैं। इस तरह त्वचाके द्वारा भी रोगके निदानमें बहुत सहायता मिलती है। इस तरह त्वचा के स्पर्श द्वारा शरीरकी गर्मी, ठण्ड और पसीनोंकी परीक्षा होती है। वात रोगीकी त्वचा ठंडी तथा रुक्ष होती है। पित्त प्रकृति मनुष्यकी त्वचा उष्ण तथा लाल रंगकी होती है। कफ प्रकृतिके मनुष्यकी त्वचा स्निग्ध होती है। ज्वरमें त्वचा गरम रहती है। लेकिन अन्तर्वेग ज्वर में उष्णता शरीरमें भीतर रहती है। बहिर्वेगमें ज्वरकी उष्णता बाहर रहती है। कई रोगोंमें जैसे—ज्वर उतरनेमें, हैजामें, प्राचीन रोगोंमें त्वचा ठण्डी रहती है। संन्निपातकी बीमारीमें त्वचाका ठण्डा होना भयप्रद माना गया है।

त्वचाकी रुक्षता तथा स्निग्धतामें हेतु—

रोम छिद्रों द्वारा पसीना हर समय निकलता रहता है। इससे त्वचा स्निग्ध रहती है। पसीना रुकनेसे रुक्षता आ जाती है। सन्धिवात रोगमें त्वचा गरम, परन्तु आद्र रहती है। हैजेमें त्वचा ठण्ढी और आर्द्र रहती है। शीताद्र पन दौर्बल्यताका लक्षण है। रात्रिको पसीना आना, त्वचाका गीलापन रहना और दिन पर दिन कमजोरीका बढ़ना क्षयकी सूचनाकी घण्टी समझनी चाहिये। आयुर्वेदमें उष्णता मापनेका कोई यन्त्र नहीं है। नवीन शास्त्रवेत्ताओंकी विज्ञान कलामें उष्णता मापक यन्त्र (थर्म्मामीटर) नामका यन्त्र निकला है जिसका उपयोग सर्व साधारण सरलतापूर्वक कर सकते हैं। इस यन्त्रमें स्वाभाविक गर्मी ९८॥ डिग्री तक रक्खी गयी है।

परन्तु प्रकृति, देह बल, देश कालादिक देखकर परीक्षा करनी चाहिये। किसी-किसी दुर्बल मनुष्यमें ९६॥-९७ डिग्री गर्म्मी रहती है, उसके ९८-९८॥ होनेपर ज्वर माना जाता है। प्रस्वेदादिक कारणोंसे टेम्प्रेचर

कमवेशी भी हो जाता है। जैसे धूपमें घूमनेसे, अग्निके पास बैठनेसे, भोजनके बाद, उष्ण स्थानमें रहनेसे गर्म्मी बढ़ जाती है। इसके अलावा दोपहरमें परिश्रम करनेवालों की भी गर्मी बढ़ जाती है। शीत प्रदेशमें रहनेवालों को तथा निद्रा और शान्तिके समय गर्मी घट जाती है। ज्वर के समय गर्मी बढ़ जाती है। साधारण ज्वरमें थर्मामीटरका टेम्प्रेचर १००-१०२ डिग्री तक चढ़ता है, पर तीव्र ज्वरमें १०४ तक पहुंच जाता है। अतिशय तीक्ष्ण ज्वरमें १०५ से १०७डिग्री तक ताप बढ़ जाता है। यदि ज्वर १०८ तक चढ़ जावे तो रोगीका बचना मुश्किल हो जाता है। यदि टेम्प्रेचर स्वाभाविक ही कम हो जाय, तो भी भयानक अवस्था उत्पन्न हो जातो ह। विसूचिकामें जब शरीर एकदम ठण्ढा पड़ जाता है तब शारीरिक उष्णता घटकर ९५ तक आ जाती है और तब रोगीके स्वस्थ होनेकी आशा छुट जाती है।१०४ तक घबरानेकी आवश्यकता नहीं। ऊपर बढ़ने पर घबड़ानेकी बात हो जाती है। १ डिग्री ज्वरमें नाड़ीका स्पन्दन १० बार अधिक बढ़ जाता है। बगल गीली रहने पर तापमान ठीक नहीं आता। बगलको कपड़ेसे पोंछकर थर्म्मामीटर लगाना चाहिये। मुंहकी बजाय बगलमें थर्म्मामीटर दुगुनी देर तक रखना चाहिये। और थर्म्मामीटर भी अच्छी कालिटोका ही रखना चाहिए।

सामान्यतया शारीरिक गर्म्मी निम्नानुसार रहती है।

शीतावस्था (कोलंप्स) (Colaps) ९४ से ९६ डिग्री

सामान्य (नार्मल) (Normal) ९७ में से ९८॥ "

मन्द ज्वर (स्लाइट फीवर) (Slight fever) ९९ से १०० डिग्री

मध्यम ज्वर (मोडरेट फीवर) (Moderatefever)१०० से १०२ तक

तीक्ष्ण ज्वर (High fever) १०५ से १०७ डिग्री तक

थर्म्मामीटर व्यवहार करनेकी विधि

इसे यन्त्रको जलसे धोकर, कपड़ेसे पोंछ, हाथके द्वारा हल्का झटका देकर पारेको नीचे उतार कर पश्चात मुंहमें जीभके नीचे, अथवा बगल

में या गुदामें या सन्धिस्थानमें १ से ५ मिनट तक रखना चाहिये। जिस पर आधा मिनट लिखा हो उसको ३ मिनट तक रक्खे। अधिक समय तक रखने पर भी मर्य्यादासे अधिक थर्म्मामी-रका टेम्प्रेचर चढ़ेगा नहीं। कम समय रखनेसे पूरा मान नहीं आता है। निम्नलिखित रोगोंमें टेम्प्रेचर कम रहता है।

क्षयकी प्रथमावस्था, बलक्षय, आन्त्रिक रक्तस्राव, मोतीझरामें प्रातः, आमशयिकशोथ, अत्यधिकलंघन, हैजा वृक्करोग, जीर्णमानस रोग, हृद्रोग, कामला, मूत्रविषवृद्धि; फास्फोरस, अट्रोपीन, मार्फिया, कार्बोलिक एसिड् इत्यादि दाहक विषोंके उदरमें जानेसे भी टम्प्रेचर घट जाता है। साधारण रोगोंमें टम्प्रेचर प्रातः सायं ही लेना चाहिये। बढ़े हुए सन्निपातादि रोगोंमें २-२ घन्टेसे नापना चाहिये।

सूचना—उष्ण प्रदेशमें थर्म्मामीटरको उतारनेके लिये ठन्ढे जलमे डुबो कर उतारना चाहिये।

स्टेथस्कोप (श्रवण यन्त्र-ध्वनिवाहक यन्त्र)

आज कलके लोग वैद्योंके पास उपरोक्त यन्त्रको देखकर दिल्लगी उड़ाते हैं, लेकिन उन्हें यह मालूम नहीं कि चिकित्सा शास्त्रका जब आविर्भाव हुआ था तभी से यह यन्त्र वैद्योंके द्वारा उपयोगमें चला आ रहा है। इस यन्त्रको आयुर्वेदमें नाड़ी यन्त्रोंके वर्णनमें लिखा है। जैसे :—नाड़ी यन्त्राण्यनेक प्रकाराण्यनेक प्रयोजनानि एकतो मुखान्यु-भयतो मुखानि च, तानि स्रोतोगतशल्योद्धरणार्थम् रोग दर्शनार्थम् क्रिया सौकर्य्यार्थमाचूषणार्थञ्चेति।

इस प्रमाणसे सिद्ध होता है कि हमारे भारतवर्षमें भी यह यन्त्र था। उस समय इसका आजकल जैसा रूप नहीं था। और विशेष उप-योग भी नहीं होता था। आजकल डाक्टरोंने जैसे इसको आभूषण बना रखा है वैसा नहीं रखते थे। उस समय नाड़ी परीक्षाकी ही

प्रधानता थी, प्राचीन वैद्यगण तपस्वी थे इसलिये आभ्यन्तरिक ज्ञान द्वारा ही भीतरी रोगोंकी परोक्षा कर लेते थे। समय के प्रभावसे वे आचरण नहीं रहे, तब यन्त्रोंकी सहायता की आवश्यकता पड़ गयी। एलोपैथोमें इस यन्त्रकी महत्ता बहुत अधिक दर्शायी गयी है। कहते हैं कि इसकी पढ़ाईमे ही दो साल लग जाते हैं यह कथन बिल्कुल असत्य है। सिर्फ अभ्यासकी आवश्यकता है; अभ्यास होनेपर इस यन्त्रकी सहायतासे श्वास-प्रश्वासको क्रिया और रक्त संचारकी स्थिति तथा फेफड़े एवं हृदयकी गति आसानोसे समझी जा सकती है। उपरोक्त रोगोंके सिवाय इस यन्त्रको डाक्टर लोग हरएक बीमारीमें जैसे—सिर दर्द, पेट दर्द आदिमें भी प्रयोग करते हैं। यह एक झूठा लोकदिखावा है। नाड़ी परीक्षामें जैसी कठिनता है, वैसी कठिनता इसके उपयोग सीखनेमें नहीं है। फिर भी अभ्यासकी जरूरत अवश्य है। उपरोक्त रोगोंकी परोक्षामें इसके द्वारा बहुत ही अच्छी सहायता मिलती है। अतः हरएक चिकित्सक का कर्तव्य है कि इसके द्वारा परीक्षण क्रिया जरूर सीखे।

श्रवणेन्द्रिय विवरण—शब्दको सुनकर पहिचाननेका काम कानोंका है। कानमें तीन भाग हैं। अन्तः भाग, मध्य भाग, बाह्य भाग। बाह्य भाग उसीका कहते हैं जिसमें आभूषणादिक धारण किये जाते हैं। असली कान मस्तिष्कके भीतर रहता है। जिसका छेद बाहरसे दिखाई देता है। यही उसका शब्द श्रवणका मार्ग है। इसमें एक छोटी पतली जगह है। मध्य कानके बाह्य पार्श्वमें कानका पर्दा है। मध्य कानमें एक नली रहती है, जिसका एक मुख मध्य कानमें है और दूसरा भाग गलेमें रहता है। इसके द्वारा ही मुखमेंसे वायु कानमें आती है। कानका पर्दा मध्य कान और अंतः कानके बीचमें रहता है। यह पर्दा अर्द्ध पार दर्शक है। मध्य कानमें तीन छोटी-छोटी अस्थियां तथा स्नायु भी हैं। भीतरी कानका हिस्सा तीन अर्द्ध चन्द्राकार नलियों

द्वारा बना है। इनमें एक प्रकारका द्रव रहता है। जिस समय किसी प्रकारका ऊँचा शब्द कानमें पहुंचता है, उस समय उसकी तीव्रता इसी द्रवके द्वारा कम हो जाती है। इसी तरकीबसे यह अन्त भाग श्रवणतन्तुओंकी रक्षा करता है। मस्तिष्क स्थित बारह तन्तुओंमें से ही एक श्रवण तन्तु है। वही इस अन्तःभीतमें आकर समाप्त होता है। इसके अतिरिक्त अन्तः कानमें एक भाग और भी है। जिसका आकार शंखनाभ्याकृति-जैसा है। इसके भीतरमें शब्दके घुसनेसे उसकी कठोरता घट जाती है। यह सब परमात्माका रचा हुआ खेल है। इसीके द्वारा श्रवणेन्द्रिय ज्ञान होता है। श्रवण परीक्षा करते समय रोगीको खड़ा रखे, या कुर्सी पर बैठावे, या बिछौने पर सीधा लेटावे। आवश्यकतानुसार पार्श्वके बल पर भी लेटाकर परीक्षा करे। परीक्षाके समय रोगीके छातो परसे वस्त्रोंको हटवा देवे। अगर स्त्री हो तो एकदम महीन वस्त्रसे छातीको ढाँक देवें। फिर रोगीकी दीघ श्वासोच्छ्वास क्रिया द्वारा परीक्षा करे। परीक्षा करते समय रोगी यदि जल्दी-जल्दी श्वास लेता हो या मुंहसे श्वास लेता हो तो प्रथम श्वास क्रिया ठीक रखनेके लिये समझा देना चाहिये। परीक्षा करते समय स्टेथिस्कोपके मुखको छातीपर सम्हालकर स्थिरतापूर्वक रखना चाहिये, जिससे कि बाहरी शब्द यन्त्रके मुखमें प्रवेश न कर सके। यदि हृदयादिक प्रदेशों पर बालोंकी अधिकतासे अच्छी तरहसे शब्द सुनाई न देता हो, तो बालोंको उस्तरेसे कटवा देना चाहिये या छाती पर बालोंको किसी स्निग्ध वस्तुके द्वारा चिपका देना चाहिये। बादमें फेफड़े, हृदय, फुफ्फुस शिखर, अक्षकास्थि आदि स्थानोंकी तथा इनके सन्निकटवर्ती अवयवोंकी, जैसे—पार्श्व भाग, पशु कास्थियोंके बीचका भाग, स्वर यन्त्र, श्वासनलिका आदि स्थानोंकी अच्छी तरहसे दत्तचित होकर परीक्षा करे। जब फेफड़ोंकी परीक्षा करे, उस समय एकबार एक तरफ प्रश्वास को सुने और निःश्वासके समय तुरन्त दूसरे फेफड़ेके समान स्थान पर

यन्त्र लगाकर श्रवण करे। फिर दोनों तरफकी आवाजका तारतम्य करे। अंशफलकको परीक्षाके समय रोगीके हाथको दूसरे कन्धे पर रखवाकर कोहनी का ऊँचा उठवाना चाहिये जिससे उस भागका आच्छादन दूर हो जाय। शरीरमें होनेवाली शब्द क्रियाको वेदोपवेदों में नाद संज्ञा दी हैं। ये नाद फुफ्फुस, धमनी, हृदयादि प्रदेशों में नाना प्रकारके होते हैं, जो अनुभव द्वारा ही पहिचाने जा सकते हैं।

इस परीक्षामें ४ बातें विशेष ज्ञातव्य हैं।

नैसर्गिक श्वास शब्दध्वनि, आगन्तुक शब्दध्वनि, मर्मरध्वनि आर हृदयगतिध्वनि।

श्वासध्वनिमें भी स्थान भेदसे २ विभाग हो जाते हैं :—

१—वायुकोषीय। २—नालीय।

'वायुकोषीय नाद' Vesicular Sound यह नाद भी बहुत तरहका होता है। जैसे—रूक्ष, कर्कश, तीव्र, क्षीण, दीर्घ, त्रुटित, कम्पित, लोप।

रूक्ष—स्वस्थावस्थामें जो ध्वनि आती है, वह फेफड़े निर्बल हों तो तीव्र तथा सबल हों तो मन्द ध्वनि होती है।

कर्कश—शास्त्र नियमानुसार दाहिने फेफड़ेके अग्र भाग पर कुछ कर्कश ध्वनिकी आवाज आती है। यदि थोड़ी खराबी हो जाय तो अन्य स्थानों में भी कर्कश ध्वनि सुनाई देती है।

तीव्र ध्वनि—फेफड़ों में कठोरता आनेपर प्रश्वास और निःश्वास दोनों तीव्र हो जाते हैं। सामान्यावस्थासे निःश्वास कुछ लम्बा भी हो जाता है। यह कठोरता न्युमोनिया, राजयक्ष्माका प्रारम्भ काल, फुफ्फुस संकोच और कैन्सरादि रोगों में, कहीं पर खांसीमें फुफ्फुस जितने अंशमें कठिनभूत होता है, उतने ही प्रमाणमें ध्वनि तीव्र हो जाती है।

क्षीण—स्वस्थावस्थामें बहुधा शान्तिसे श्वास लेनेपर ध्वनि क्षीण हो जाती है। किन्तु फुफ्फुसावरणमें वायु संचय, द्रव संचय, शोथ

आनेपर तथा श्वासनलिकामें वायुके आगमनकी रुकावटसे दीर्घ श्वास लेनेपर भी ध्वनि क्षीण सुनायी देती है।

दीर्घ—वायुकोष विस्तृत हो जाने पर और तमक श्वास रोगमें निःश्वास दीर्घ हो जाता है।

त्रुटित—किसी-किसी समय स्वस्थावस्थामें भी श्वास टूट जाता है। परन्तु राजयक्ष्माकी प्रथमावस्थामें भी दीर्घ श्वास लेनेपर भी ध्वनि टूटी हुई-सी छोटी-बड़ी सुनाई देती है।

कम्पित—शीत लगने पर, कफके फटने पर और वातवहा नाड़ियों में विक्षोभ होनेपर भी ध्वनि कम्पनयुक्त हो जाती है।

लोपध्वनि—प्लूरिसीमें तरल बढ़नेपर ध्वनिका लोप हो जाता है। अत्यधिक तरल बढ़ने पर वंशीवत् आवाज आने लगती है। यदि तरलके ऊपरी हिस्सेमें दाह और श्राव हो जाता है तो ध्वनि अजाशब्दवत् सुनाई देती है।

नालीय ध्वनि

नालीय ध्वनि :—(Bronchialrespiation) वृहत् श्वासनलिका और स्वर यन्त्र पर यन्त्र द्वारा सुननेमें आती है। यह वायुकोषीय आवाजकी अपेक्षा तीव्र कठोर होती है। निःश्वास कालके समय वायुकोषीय ध्वनिकी अपेक्षा कठोरता इसमें अधिक होती है। स्वस्थकी बजाय रुग्णावस्थामें जब ध्वनिमें भेद हो जाता है, तब पृथक्-पृथक् रोगोंमें भिन्न-भिन्न ध्वनि सुननेमें आती हैं। इनमेंसे मुख्य ३ तरहकी हैं।

वंशीवत् ध्वनि :—(Tubular) न्युमोनिया या यक्ष्माकी कष्ट साध्यावस्थामें अस्वस्थ फुफ्फुसीय खण्ड का सम्बन्ध सूक्ष्म श्वासनलिकासे हो जानेपर वंशीमें निकलनेवाले शब्दकी तरह आवाज आती है। यह शब्द श्वासनलिकाके और उरोस्थिके ऊपरके भागमें या इसके सामानान्तर पृष्ठ भागमें सुननेमें आता है। प्लूरिसीमें भी तरल अधिक बढ़ जानेपर यह ध्वनि सुननेमें आती है।

विवर ध्वनि :—(Caverhous) राजयक्ष्माकी तृतीयावस्थामें फुफ्फुस-खण्डमें छोटे विवर होनेपर उनका सम्बन्ध संकुचित बृ० श्वासनलिकासे हो जाता है, तब उस स्थानसे वंशीनादकी जगह कठोर आवाज निकलती है। यह आवाज श्वास और निःश्वासके समय अनुभवमें आती है। इसी प्रकार फुफ्फुस पर शोथ आनेसे तथा उसका सम्बन्ध वृहत् श्वास-नलिकासे हो जाने से उस स्थानमें भी विवर ध्वनि सुनाई देती है।

कौप्यक ध्वनि :—(Amphoric) राजयक्ष्माकी असाध्यावस्थामें फेफड़ोंमें बड़ा खात (Cavity) हो जाता है और उसका सम्बन्ध कण्ठस्थ श्वासनलिकाके साथ होनेसे या फुफ्फुसावरणमें वायुका प्रवेश होनेसे एक प्रकारकी वेणुकूजनशब्दवत् ध्वनि निकलने लगती है जो श्वासोच्छ्वासके समय सुननेमें आती है।

शब्द ध्वनि

यह ध्वनि रोगीके मुखसे १-२-३ कहलाते समय फेफड़ों पर यन्त्र लगाकर सुनी जाती है। स्वस्थावस्थामें बायें फेफड़ेकी अपेक्षा दाहिने फेफड़ेमें अधिक स्पष्ट सुनाई देती है। आगेके ओरकी ध्वनि पीठकी तरफसे स्पष्टतया सुननेमें आती है। स्कन्धास्थिमें इसका बहुत कम ज्ञान होता है। छातीके समस्थानों पर ध्वनि समरूप से सुनाई देती है। व्याधि भेदसे, मन्द-तीव्रादि अनेक भेद हो जाते हैं। जिनमें यह ४ मुख्य हैं। जैसे—फुफ्फुसावरण जन्य शोथ या स्थूलतामें मन्द ध्वनि सुनाई देती है अथवा फुफ्फुसावरण द्रवका अल्प संचय होने पर ध्वनि सानुनासिक हो जाती है। या फुफ्फुसावरणमें तरल अधिक होने पर ध्वनिका अभाव हो जाता है तथा श्वासनलिकामें कफयुक्त शोथ होनेके कारण वायुका अवरोध होनसे भी ध्वनि सुनाई नहीं देती है। इसलिये इसकी अभाव संज्ञा दी है। फुफ्फुसावरणमें वायु भर जानेपर प्रतिध्वनितसम सुनाई देता है। फेफड़ों में कठोरता आनेपर शब्द जन्य ध्वनि मोटी हो जाती है। इसलिये श्वसनक ज्वरमें और राजयक्ष्माके

अन्तिम समयमें खात (Cavity) बढ़ जानेपर ध्वनि तीव्र हो जाती हैं, अथवा फुफ्फुसावरणमें अत्यधिक द्रव वृद्धि हो जाय तब भी अति तीव्र ध्वनि सुनाई देती है। इसी तरह बक्षस्थलसिका-ग्रन्थियों के वृद्धिगत होनेपर पृष्टवंशको ४-५-६ कसेरुकाओं पर और बालकों को पहिली, दूसरी, तीसरी कसेरुकाओं पर धीमेंसे उच्चारण किया हुआ शब्द भी साफ सुनाई देता है।

आगन्तुक ध्वनि

किसी समय आगन्तुकध्वनि स्वाभाविक ध्वनिके साथ फेफड़ोंमेंसे आने लगती है। आवरण कलाओं के घर्षणसे, या वायुकोषोंमें एवं श्वासनलिकाकी शाखाओंमें तरलको उत्पत्तिसे, श्वासनलिका मार्गके संकोच होनेसे तथा फुफ्फुसावरण द्रवोत्पत्ति होनेके कारण घर्षण ध्वनि द्रव ध्वनि, कूजन ध्वनि, वस्ति ध्वनि, सीत्कार युक्त ध्वनि आदिकी उत्पत्ति हो जाती है।

घर्षण ध्वनि फुफ्फुसावरण कलाओंके घर्षणसे या हृदयावरण कलाओंके द्वारा घर्षण होनेसे उत्पन्न होती है। इस ध्वनिमें शुष्क और स्निग्ध दो प्रकारके भेद माने हैं।

आवरण-द्रव उत्पत्तिसे पहिले स्निग्ध ध्वनिकला शुष्क हो जाने पर शुष्क ध्वनि हो जाती है। यह ध्वनि श्वासोच्छ्वास दोनों के समय सुननेमें आती है। किन्तु बीच २ में टूटती भी रहती है। किसी-किसी समय मिश्र घर्षण ध्वनिमें और मन्द द्रव ध्वनिमें संशय हो जाता है। इसलिये इनकी पहिचान निम्न लक्षणों से स्पष्टतया हो जाती है। जैसे घर्षण ध्वनि श्वासोच्छ्वास क्रियाके समय टूटती हुई सुननेमें आती है और यन्त्रको दबाने पर आवाज साफ सुनाई देती है। तथा खांसते समय कफ निकलने पर आवाज समान रहती है। और दीर्घ श्वास लेनेसे तथा श्वासको रोकनेसे घर्षण लुप्त हो जाता है। अन्य पहिचान

भी यह है कि घर्षण ध्वनि, श्वास लेते समय और छोड़ते समय दोनों समय में सुनाई देती है। मंद द्रव ध्वनि केवल श्वास लेते समय अन्तमें सुनाई देती है। यन्त्र दबाकर रखनेसे ध्वनि मन्द पड़ जाती है। खांसते समय ध्वनि बदल जाती है। तथा हृदयावरणमें घर्षण होनेसे तो वहाँपर दीर्घ श्वास लेनेपर अथवा श्वासावरोध करने पर भी आवाज फुफ्फुसावरणके घर्षण की तरह बन्द नहीं होगी परन्तु बराबर होती ही रहेगी। कूजन ध्वनि श्वास छोड़ते समय एक ही बार सुनी जाती है। इसी प्रकार वायुकोषों में या श्वासनलिकामें द्रव पैदा होनेसे वहाँपर बुद-बुदवत् ध्वनि सुनाई देती है जो श्वास निःश्वासके समय हो श्रवणगोचर होती है और इसके भी पाँच भेद होते हैं। मन्दतरल ध्वनि, मंदतर तरल ध्वनि, मध्यम तरल ध्वनि, वृहत् तरल ध्वनि, मिश्रित तरल ध्वनि। इंगलिशमें इस ध्वनिका नाम (Crapitation) हैं।

मन्दतरल ध्वनि—यहध्वनि न्युमोनियां और यक्ष्माकी प्रारम्भावस्था में मृदुरूपमें सुनाई देती है। यह आवाज केश मर्दनवत होती है इंगलिशमें इसको (Crepitantrabe) कहते हैं। कफ संभृत वायुकोषोंकी दीवार जब पृथक होती है तब श्वास लेते समय अन्तमें इसको आवाज दीर्घ श्वास लेने पर ही सुनाई देती है।

मन्दतर तरल ध्वनि—अत्यन्त सूक्ष्म श्वासवाहनियों में कफके चिप जानेपर श्वास लेने और छोड़नेके समय अति कोमल आवाज निकलती है इससे इसको मंदतर कहते हैं। इंग्लिशमें (Subcrepitantrale) कहते हैं।

मध्यमतरल ध्वनि :—यह उस समय होती है जब यक्ष्मा रोग बढ़ने लगे अथवा न्युमोनियांका निवृत्ति काल होता है तब ही तरलापूरित क्षय—विवर या श्वासनलियों में वायुके आवागमनके समय मंद तरलसे बढ़ी हुई तथा मंदतर तरलसे न्यून और श्वास

ग्रहणके अन्तमें तथा श्वास त्यागके पूर्व सुनाई देती है । इंग्लिशमें (Crepitusredux) कहते हैं ।

वृहत्तरल ध्वनि—यह ध्वनि राजयक्ष्माको अन्तिम अवस्थामें कफलिप्त बड़े खातसे निकलती है, और उस समय इसका वृहत रूप होता है । कांस्यपात्रहत: स्वर वत रोगी हो जाता है तथा यह ध्वनि न्युमोनिया ज्वरके पश्चात् फफड़ोंके द्रवीभूत होने पर भी सुनाई देती है तथा वृद्धावस्थामें फफड़ोंके बैठ जानेसे, या श्वासवाहिनियोमें तरल भरने पर श्वासोच्छ्वासके समय वृहत् तरल ध्वनि सुनाई देती है । इस ध्वनिको इंगलिशमें (Gurglingrale) कहते हैं । जब ये सब ध्वनि परस्परमें मिल जाती है, तब इसको मिश्रित तरल ध्वनि कहते हैं ।

इसके अलावा और भी कितनीही ध्वनियां निकलती हैं । जैसे श्वासवाहिनी नलिका का मार्ग संकुचित हो जाता है, तब श्वासोच्छ्वास के समय कूजनवत् ध्वनि निकलती है, जिसको कूजन ध्वनिके नामसे पुकारा जाता है । इंगलिशमें (Rhonehus) कहते हैं, यह भी सूक्ष्म स्थूल भेदसे २ प्रकार की है ।

सूक्ष्म कूजन ध्वनि उस समय होती है, जब सूक्ष्मवाहिनियोंमें न्युमोनियां, तमक श्वास एवं तीव्र कासके कारण शोथ आ जाता है या उनकी भित्तियों पर कफ चिपक जाता है, तब मार्गके संकुचित होनेपर नि:श्वासके अन्तिम समयमें सूक्ष्म कूजन शब्द सुनाई देता है ।

स्थूल कूजन ध्वनि भी उपरोक्त रोगोंके कारण ही श्वासनलिकाओंमें शोथ आजानेसे नि:श्वास कालके समय आदिसे अन्त तक स्थूल कपोत कूजनवत् सुनाई देती है, जो दूरसे ही सूचना देनेवाली होती है । जो ध्वनि फुफ्फुसावरण प्रदाह रोगमें तरल और वायुके मिल जानेसे जल-पूरित मसकमें जैसे थल थल आवाज आती है, उसकी तरह आवाज-युक्त रोगीकी परीक्षा रोगीको हिलाकर करनी चाहिये ।

सीत्कारयुक्त शब्द उस रोगीके मुखसे सुननेमें आता है, जिसके

फेफड़ोंमें राजयक्ष्मा रोगके कारण बड़े बड़े खात (Cavity) हो जाते हैं। यह शब्द भी रोगीको कफ थूकनेके बाद वापिस श्वास लेते समय ही प्रतीत होता है।

हार्दिक ध्वनि

हृदयका स्वरूप—पुण्डरीकेण सदृशं हृदयं स्यादधोमुखम्।
जाग्रतस्तद्विकशति स्वपतश्च निमीलति ॥

हृदयका आकार कमल पुष्पके समान है, और इसका मुख नीचे को रहता है। जब तक मनुष्य जागता रहता है, तब तक हृत्कमल खुला रहता है। जब सो जाता है तब बन्द हो जाता है। इसकी उत्पत्ति रक्त और कफके सार भागसे होती है। जैसे सुश्रुतम लिखा है :—"शोणित कफ प्रसादजं हृदयं यदाश्रयाहि धमन्यः प्राणवहा।" इसलिये हृदय ही के आश्रयसे मनुष्य जीवित रहता है। यही चेतनाका स्थान है। जैसे लिखा भी है कि "हृदयं विशेषेण चेतना स्थानम।"

उपरोक्त गुणोंवाला हृदय जब तमोगुणसे ढक जाता है, तब सम्पूर्ण प्राणी सो जाते हैं। यह हृदय वक्षस्थानके भीतर बायें फेफड़ेमें अधिक रूपसे, दाहिने फेफड़ेमें कुछ कम रूपसे रहता है। यह प्रथम बाल्यावस्था में १० वर्षकी आयु तक चौथी पर्शुकान्तरमें रहता है। फिर शनैः शनैः नीचेकी तरफ उतरता जाता ह। याने युवावस्थामें पांचवीं पर्शुका और वृद्धावस्थामें छठी पर्शुका तक उतर जाता है। हृदयकी स्पन्दन क्रिया पांचवीं पर्शुकान्तरमें १ इञ्च जितने स्थानमें हृदयकोण पर होती है। जब हृदयके अलग-अलग अङ्गोंकी ध्वनि सुननी हो तब हृदयकोण उरःफलक, पर्शुकान्तर, उप पर्शुकान्तरमें। उरोस्थिसन्धि स्थानों पर यन्त्रको रख कर सुननी चाहिये। हृदय परीक्षामें दो बातें मुख्य हैं। एक आकुंचन क्रिया, दूसरी प्रसारण क्रिया। अंग्रेजोंमें इन क्रियाओंको

लुब और डुब लिखा है। इस तरह उपरोक्त क्रियाओंका हृदयमें व्यापार अहर्निश चलता रहता है। यदि मानसिक क्रोध ईर्षादिक कारणोंसे हृदय उत्तेजित हो जाय तो प्रसारण काल कम अथवा लुप्त हो जाता है या कितने ही रोगोंमें हृदय कपाटोंमें विकृति, रक्तमें पतलापन या हृदयमें कमजोरी हो जाती है, तब हृद्गति अनियमित हो जाती है। तब आकुंचन प्रसारणके समय मर्मर ध्वनि होने लगती है। इसके अलावा हृदयावरण कलाओंमें घर्षण होने पर दोनों समय घर्षण शब्द सुनाई देता है।

हार्दिक कपाट संकोचसे संकोच-तरंग उत्पन्न होती है। इसका प्रारम्भ दक्षिण अलिन्दसे होता है, जहां उत्तरा महाशिरा और हार्दिक मूलशिरा मिलती हैं। उस स्थानको अलिन्दशिरा ग्रन्थि (Sinoauricular Node) कहते हैं। फिर यह संकोच-तरङ्ग दोनो अलिन्दोंके बीचमें रही हुई दीवारमें अलिन्द निलय ग्रन्थि तक गति करती है। पीछे दोनों निलयोंके बीचकी दीवारमें जाता है। संकोच तरंगकी यह गति अलिन्द निलय सेतु द्वारा एकसे दूसरे भागमें होती हैं। अधिक गति अलिन्द सिरा ग्रन्थि पर मन्दगति हृदयके किनारे पर होती है। स्वस्थावस्थामें ही इस तरह नियमित क्रिया होती है। रोगी होने पर अलिन्द सिरा ग्रन्थिके समस्त तरंग निलय खण्डोंमें नहीं पहुंचते। इसीसे अलिन्दकी गति द्विगुण या इससे भी अधिक बढ़ जाती है। और निलय खण्डकी सामान्य गतिसे कम हो जाती। किसी-किसीको तो निलय गति अलिन्द गतिसे आधी तक हो जाती है। यदि हृदयसे बाहर रक्तवाहिनियोंमें ध्वनि सुनाई दे तो वह स्वाभाविक है या अस्वाभाविक? यदि अस्वाभाविक है तो स्थानीय है या हृदयसे सम्बन्ध वाली—इस बातका अच्छी प्रकार निर्णय करना चाहिये। इस हार्दिक ध्वनिमें निम्नलिखित कारणोंसे भेद हो जाते हैं :—

हृत्सम्बन्धी मांसपेशियों में शिथिलता या शोथ आने पर आकुंचन लुब (Lub) शब्दकी ध्वनि लघु हो जाती है।

कहीं पर तीव्र ज्वरों में हृदन्तराय होने पर आकुंचन ध्वनिमें मृदुता आ जाती है। पूर्ण रूपसे अन्तराय होने पर लोप भी हो जाता है। हृदयका संकोच बलपूर्वक होनेसे लुब तीव्र हो जाता है। द्विपत्र कपाटका अवरोध होने पर प्रथम ध्वनि कर्कश और हृदयके अग्र भाग पर तीव्र तर मर्मर ध्वनि होती है। विकृति बढ़ने पर द्वितीय ध्वनि डब् सुननेमें नहीं आती, केवल मर्मर ध्वनि ही कर्णगोचर होती है। गलगण्ड, तीव्र ज्वर, अधिक परिश्रमके समय भी, लुब ध्वनि साधारण अवस्थासे बढ़ जाती है। रक्तचापके समय भी रक्त प्रसारमें रुकावट होनेके कारण अथवा महाधमनी कपाटिका का अवरोध होनेके कारण हृदयके संकोच कालके समय ध्वनि कर्कश हो जाती है। यह ध्वनि कण्ठस्थ महा-मातृका धमनीकी तरफसे सुननेमें आती है। इसका स्पर्शसे भी पता लग जाता है अथवा फेफड़ों द्वारा बाम अलिन्दमें जानेवाले रक्तके अवरोध हो जाने पर या इसमें विकृति होने पर भी फुफ्फुसाभिगा धमनी पर आवाज कर्कश सुनाई देती है।

मर्मर ध्वनि हृत्कपाटकी अपूर्णतासे रक्तका पुनरागमन होता रहता है, जिससे सुनाई देती है।

द्विपत्र कपाटके आच्छादनमें त्रुटि रहने पर मृदु मर्मर ध्वनि कुक्षी तरफ गमन करने वाली हृदय संकोच कालमें होती है। इससे आकुंचन क्रियामें भी अन्तर पड़ जाता है।

द्विपत्रकपाट, त्रिपत्र कपाटोंके पृथक्-पृथक् समयमें बन्द होनेसें भी लुब-डुब ध्वनि द्विगुण हो जाती है।

हृदय गति तीव्र हो जानेसे प्रसारका समय कम हो जाता है। हृदयावरण कलाओंमें घर्षण होनेसे आकुंचन प्रसारणके समय घर्षण ध्वनि सुनाई देती है। अथवा फुफ्फुसावरण हृदयावरणका घर्षण होने

पर भी संकोच कालके समय घर्षण शब्द सुनाई देता है। आकुंचन प्रशारण याने लुब और डुबका समय सम हो जाय तो अवस्था भयप्रद मानी जाती है। वृहत् धमनीका विस्तार होने पर संकोच कालमें मर्मर ध्वनि होती है। न्युमोनिया रोगमें फुस्फुसाभिगा धमनी पर यदि द्वितीय ध्वनि डबकी आवाज तीव्र सुनाई दे तो वह शुभ लक्षण माना जाता है। पाण्डु, अग्निमान्द्य, चाय, तम्बाकू, भांग, गाजा, चरसके अत्यन्त सेवनसे; आमवात, गलगण्ड, संक्रामक ज्वर, रोमान्तिका, उपदंश आदि कारणोंसे हृद्गति बढ़ जाती है। याने १५० से २०० तक हो जाती है, इसको गतिवृद्धि कहते हैं।

मंद गति उस समय हो जाती है, जब रोगीको कामला, मस्तिष्क रोग, मस्तिष्कार्बुद हो गया हो; अथवा जिसने डिजिटेलिसादिका ज्यादा प्रयोग कर लिया हो, अथवा जिसको ईड़ा पिङ्गला नाड़ियोंकी शक्तिका ह्रास हो गया हो। इङ्गलिशमें (Bradycardia) कहते हैं। गति भंग कपाटोंमें दोष, मानसिक चिन्ता, तमालपत्र सेवन, मस्तिष्कादि दोषोंके कारणसे होता है। किसी समय उपरोक्त व्याधि तीव्र ज्वरादिकोंके कारण अथवा दौड़नेसे ऊपरकी पर्वतीय चढ़ाईसे शिर पर भार वहन करनेसे भी गतिमें दोष हो जाता है। हृत्पन्दनमें निम्नोक्त, पाण्डुता, मानसिक विकार, अग्निमान्द्य, गर्भाशय दोष, अपतन्त्रक, मदात्यय, अतीश्रम, प्रमेहादि रोगोंके कारण गति बढ़ जाती है।

धमनियोंमें विस्तार—धमनीकी दीवारोंमें विकृति या रक्त भार बढ़नेसे हो जाती है।

सूचना—स्टेथस्कोप परीक्षाके समय बहुधा भ्रम होनेकी सम्भावना रहती है। अतः यन्त्रको कर्णविवरमें ठीकसे लगाना चाहिए तथा उसकी कमानी ज्यादा कठोर नहीं होनी चाहिये। यन्त्रकी रबड़नलिका मजबूत याने कटी हुई नहीं होनी चाहिये। अन्यथा कुछ भी दोष

लगाते समयमें यन्त्रमें रहेगा तो शब्दज्ञानमें बाधा पहुंचेगी। दुर्बल शरीरमें ध्वनि जैसी अच्छी तरह स्पष्ट सुनाई देती है, वैसी स्थूल शरीरमें नहीं देती। कासके समय भी भ्रम होनेकी सम्भावना रहती है।

ताड़न परीक्षा (पर्कसन) PERCUSSION

स्टेथस्कोप परीक्षाके पूर्व अंगुली ताड़न क्रिया द्वारा फेफड़ोंकी भीतरी परीक्षा की जाती है। अंगुलियों द्वारा ताड़न करने पर जो आवाज उत्पन्न होती है, उसके द्वारा फुस्फुसोंकी स्वस्थता अस्वस्थताका सामान्य ज्ञान हो जाता है। फिर स्टेथस्कोप द्वारा विशेष ज्ञान हो जाता है।

इस परीक्षाके समय रोगीको चित्त लेटाकर फिर वैद्य अपने बायें हाथकी मध्यमांगुलीको रोगीके फेफड़ों पर रखे तथा अपने दाहिने हाथ की अनामिका मध्यमांगुलीके अग्र भागसे ताड़न क्रिया करे। इस क्रियामें मृदु ताड़न, मध्यम ताड़न, तीक्ष्ण ताड़न करनेसे तीन प्रकारकी रिक्त, घन, सौपिर आवाज सुननेमें आती है।

इसलिए अक्षकास्थि और फुस्फुस शिखर पर मृदु ताड़न एवं यकृतके सामने मध्यम और नीचेकी तरफ मृदु ताड़न करना चाहिये। छाती पर आगे और पार्श्वों पर मध्यम ताड़न, पीठमें और दृढ़मांसपेसियों पर तीव्र ताड़न करना चाहिये। सौषिर ध्वनिमें स्थान भेदसे अन्तर हो जाता है। किसी स्थान पर मन्द, किसी स्थान पर घन सुनाई देती है। सौपिर ध्वनि अन्य भागोंकी अपेक्षा फुस्फुस शिखरों पर अधिक साफ सुनती है। वायुकोपोंका विस्तार हो जाने पर यह ध्वनि तेज हो जाती है। मांसपेशियों पर शोथ हो जानेसे ध्वनि घन हो जाती है। इस प्रकार यकृत और हृदय पर भी आघात करनेसे घन ध्वनि होती है। यदि फेफड़ोंकी मांसपेशियों पर दाह शोथ हो

जाता है, तो वहाँ पर भी कठोरताके कारण घन ध्वनि हो जाती है। द्रव संचित होने पर भी घन आवाज निकलती है। स्तन पीनेवाले बच्चोंके फेफड़ोंसे फूटे बर्तनकी-सी आवाज निरोगावस्थामें होती है। यदि फेफड़ोंमें नीचे घन भाग और ऊपर द्रव भाग अधिक हो तो सौषिर ध्वनि तीव्र हो जाती है। अङ्गरेजीमें इसको स्कोडा ध्वनि कहते हैं तथा टूटी हड्डी पर जो आवाज आती है उसे ओस्टिलरेजानेन्स कहते हैं। प्लूरिसी रोगमें द्रव भर जाने पर वहाँकी ध्वनि घन हो जाती है। खासोंमें कूजन ध्वनि। हृद्यावरण शोथ, फुप्फुसावरण शोथमें घर्षण का बोध ताड़न द्वारा ही प्रतीत हो जाता है।

फुफ्फुसों पर अंगुली रखकर आघात करने पर निरोग अवस्थामें जो आवाज आती है, वह विकार होने पर बदल जाती है। स्वस्थावस्था में सौषिर ध्वनि फुप्फुस शिखर जो अक्षकास्थिसे दो अँगुल ऊपर रहता है, वहाँसे लेकर ११ वीं पीठकी पशुका तक सुनाई देती है। बलपर्वक श्वास लेनेपर १ इञ्च नीचे तक भी सुनी जा सकती है। इसलिये इस परीक्षा का आरम्भ अक्षकास्थि (हंसली) से करना चाहिये। फिर नीचे दोनों पार्श्व भागमें करता हुआ, एक समय एक तरफ, एक समय दूसरी तरफके प्रदेशकी जांच करनी चाहिये। जिससे दोनोंके अन्तरका ज्ञान हो जाय। परीक्षाके समय आगेके भागको देखनेके लिये समान स्थान पर सीधा सुलाये। पार्श्वकी परीक्षाके लिए स्वस्थ हो तो बैठा कर परीक्षा करे और हाथ गले पर रखनेको कहे। पृष्ठ भागकी परीक्षा के समय हाथोंको परस्पर करके कन्धों पर रखे। अक्षकास्थि परीक्षा के समय ग्रीवाको सीधा रखनेको कहे, ग्रीवा टेढ़ा रखनेसे ध्वनिमें अन्तर आ जाता है।

आमाशय परीक्षा और विवरण

स्टमक Stomach

जो अन्न प्रणाली नामकी नलिका मुँहसे आरम्भ होकर गुदातक जाती है और आवश्यकतानुसार कहींपर चौड़ी कहींपर छोटी तथा आमाशयमें फैलकर चौड़ी हो गई है. इस भागका नाम आमाशय है अंग्रेजीमें इसीको **स्टमक** (Stomach) कहते हैं। मुंहसे खाया हुआ, पीया हुआ सर्व प्रकारका भोजन इसी स्थान पर पहुंचता है। इस आमाशयके दाहिनी तरफ यकृत और बाँई तरफ प्लीहाका स्थान है। मुँहसे खाया हुआ भोजन लाला ग्रन्थियोंकी लारसे मिलकर जब आमाशयमें पहुंचता है, तो कुछ समयके लिये यहाँ रुक जाता है। तब आमाशय अपनी दीवारोंमें रहनेवाले आमाशयिक रसको मिलाकर सुपच बना देता है। आमाशयका आकार जलपूरित चर्म निर्मित मसकके समान होता है, और इसकी दीवारें मांस तन्तुओंसे बनी होती हैं जो भोजनके मात्रानुसार फैलती रहती है। इसका ऊपरी हिस्सा चिकना और भीतरी हिस्सा खरदरा होता हैं। इसमें बहुतसे छिद्र होते हैं जिनमें ग्रन्थियां रहती हैं जो आमाशयिक रसको पैदा करती है। सर्व भोजन आमाशयके द्वारा ही नहीं पचता। घृत तैलादि चिकने पदार्थ आँतोंमें पचते हैं। प्रत्येक पदार्थ आमाशयमें ३ घण्टे तक रुकता है। इसके बाद आतो में चला जाता है। अंन्न प्रणालिकाकी लम्बाई ३० फुटकी है। इस रास्तेमें अन्य समीपवर्त्ति ग्रन्थियां भी अपना रस भेजती रहती हैं। भोजन पचनेमें इसी रसकी विशेष सहायता पहुंचती हैं। इसी रसके द्वारा छः रसोंवाला भोजन, अनेक रूप-रंग धारण करता हुआ शरीरका पोषण करता है। यह उपरोक्त नलिका गलेमें श्वास मार्गके पीछे रहती है और छाती और पेटमें होती हुई आमाशयमें पहुंचती है। भोजन श्वास मार्गमें न चला जाय इसलिए श्वास मार्गके मुखपर एक ढकन लगा रहता है जो निगलते समय श्वास मागको बन्द कर देता है।

परीक्षा

खाली आमाशयमें वायु रहती है। अङ्गुलियों द्वारा ताड़न परीक्षा करनेपर रिक्तवत् ध्वनि होती है। आमाशय बढ़ जानेपर आवाजकी प्रतीति सम्पूर्ण जगह होती है। लेकिन यकृत् प्लीहा अर्बुदादि रोगों के कारण आमाशय संकोच होनेसे रिक्त ध्वनिका स्थान छोटा हो जाता है। बांये फेफड़ेमें जल संचय अथवा अर्बुद हो जानेसे आमाशय नीचा हो जाता है। तथा जलोदर हो जानेसे या बाय फेफड़ेका संकोच हो जानेपर आमाशय ऊपरको चढ़ जाता है। ये सब अङ्गुली आघात से विदित हो जाता है। परीक्षाके लिये आमांशय पर बांये हाथकी मध्यमांगुलिको रखकर दाहिने हाथकी तर्जनो द्वारा ताड़न करना चाहिये। इसी विधिसे सारे उदरको परीक्षाकी जाती है। परीक्षामें प्रथम बीचसे आरम्भ करना चाहिये। इसी तरह आंतोंके खाली होने पर भी परीक्षा करते समय रिक्तवत ध्वनि निकलती है जहां रिक्त आवाज न आवे तो वहांपर मलादिकका दोष समझना चाहिये। जलोदर रोगमें करवट बदलने पर जल नीचेको आ जाता है तब स्थान खाली हो जाता है। वहांपर भी रिक्त ध्वनि ही आती है।

यकृत् परीक्षा और विवरण

मनुष्यके उरोदर पटलके नीचे दक्षिण तरफ जामुनके रंग जैसा सबसे बड़ा उदरकी आधी गुहाको रोककर रहनेवाला अवयव है उसीको यकृत कहते हैं। इसका वजन ऽ२ सेरके लगभग है। इसमें २ भाग होते हैं बड़ा दक्षिण खण्ड और छोटा बामखण्ड जो प्रायः आमाशयके ऊपर रहता है। पहिला दक्षिण खण्ड स्वस्थावस्थामें पसलियों तक रहता है, परन्तु रोगी होनेपर नीचेको खिसक आती है। इसकी लम्बाई १ फुट चौड़ाई ८ इंच होती है। इसके नीचे आंत, पीछेकी तरफ दक्षिण गुर्दा रहता है।

इसके ३ काम मुख्य हैं—प्रथम रक्तशुद्धि करना, दूसरा काम पाचन क्रियामें सहायता देना, तीसरा काम स्टोर कीपरी का है। स्टोर कीपरी की वस्तु शर्करा है। इसके अलावा यकृत पित्तको बनाकर क्लोममें संग्रहीत करता है जो पाचन क्रियामें सहायक है। पित्त द्वारा ही स्निग्ध भागका शीघ्र पाचन होता है। तथा कृमियोंसे रक्षा होती है और मलका रंग पीला होता है। पित्तकी कमीसे बहुतसे रोग हो जाते हैं। स्वस्थावस्थामें २४ घण्टेमें ऽ१।। पित्त बनता है। इसका निवास क्लोम (Calibladder) है। इसको यकृत् अपने नीचे भीतर छिपाकर रखता है। इसका स्वरूप गाजरकी तरहका है जो ऊपरसे देखनेमें प्रतीत नहीं होता है। यकृत् पित्त बनाबनाकर इस क्लोममें संचित करता रहता है। जब भोजन ग्रहणी नामक कलामें आता है तब पित्त भी उसमें आकर मिल जाता है। यदि किसी कारणसे पित्त प्रणालीका मुंह बन्द हो जाता है तो पित्त रक्तमें मिलने लग जाता है जिससे आंखोंमें पीलापन आ जाता है। पित्तके अभावसे टट्टीका रंग सफेद या भूरा हो जाता है।

स्वस्थावस्थामें यकृत परीक्षाके समय ६ वीं पर्शुकासे ८ पर्शुका तक घन आवाज निकलती है। रोग होनेपर ध्वनि बदल जाती है। लीवर बढ़ने पर ध्वनिकी वृद्धि हो जाती है। परीक्षाके समय दक्षिण उर:पंजरके ऊपर स्तन रेखा, कुक्षि मध्य रेखा, अंश फलक रेखाका आश्रय लेकर अंगुलीसे ताड़न परीक्षा करनी चाहिये। प्रथम प्रत्येक पांसुली पर पीछे पर्शुकाके मध्यप्रदेशकी आहिस्ते आहिस्ते परीक्षा करे। यकृतकी सीमा समझनेके लिये कटि प्रदेशसे ऊपरको चढ़ना चाहिये। यकृत पर ताड़न से घन ध्वनि निकलने लगती है। यकृतकी सीमा निर्धारण करके परीक्षा करनेसे स्थान भ्रष्टता, यकृत वृद्धि, संकोच, शोथ, विद्रधि अर्बुदादि रोगोंका आशानीसे ज्ञान हो जाता हैं। इसलिये यकृत परीक्षाके समय सीमा निर्णयमें बहुत फर्क पड़ जाता है। <u>प्लीहा</u>। आमाशयके बाएँ पार्श्वमें ९-१०-११ पर्शुकाके नीचे प्लीहाका स्थान है। रोग होनेपर

यह अधिक नीचे उतर आती है जिसका स्पर्श करनेसे पता लग जाता है। इसका स्वरूप काला और भूरे रंगका होता है। इसकी लम्बाई ५ इंच, चौड़ाई ३ इंच, वजन १० से १५ तोला तक होता है इसका मुख्य कार्य रक्तशोधनका है। रक्तके श्वेतकण इसके पास आकार लाल होते हैं। विषमज्वरादिकोंमें यह बहुत बढ़ जाती है। याने तमाम पेटको रोक लेती है। किसी समय घटकर १ तोला वजन रह जाता है।

उदर परीक्षा दो प्रकारसे की जाती है—एक ताड़न द्वारा, दूसरी स्पर्श द्वारा। ताड़न परीक्षासे घन रिक्त ध्वनिका बोध होता है। स्पर्श परीक्षासे यकृत, प्लीहा वृद्धि, शोथ, वेदना, आमाशय, पक्वाशय विकृति आन्त्रिक दोषका ज्ञान होता है। अतः दोनों परीक्षाओंके द्वारा रोगका निर्णय करना चाहिये। विशेष आवश्यकताके समय डाक्टर लोग एक्सरे द्वारा भी परीक्षा करते हैं। इस परीक्षामें प्रथम रोगीका एनेमा द्वारा पेट साफ कर देना चाहिये तथा खानेको बेरियम सल्फेड नामक दवा जो विलायती आती है उसको २ छटांक लेकर ठण्ढे पानी एक गिलासमें मिलाकर दिया जाता है। उसके बाद ही एक्सरे परीक्षा की जाती है। इसके लिये ४-५ प्लेट लेने पड़ते हैं, जिससे उदरके भीतरी दोषोंका पूरा पता लग जाता है। यह क्रिया एक्सरेसे डाक्टर द्वारा ही की जाती है। प्लेट लेनेके बाद डाक्टर ही रिपोर्ट लिखकर देता है। लेकिन किसी-किसी समय रिपोर्टमें भी फर्क आ जाता है। केवल रिपोर्ट पर ही निर्भर नहीं रहना चाहिये; साथमें अपना माथा भी लड़ाना चाहिये।

पाचनक्रिया विवरण

मुँहसे लेकर गुदा पर्यन्त सम्पूर्ण अवयव –पाचनक्रियाके सहायक अङ्ग कहलाते हैं। इन उपरोक्त अवयवों द्वारा खाद्य-पदार्थोंका रस

बनता है। फिर वही रस यकृत प्लीहामें पहुंचकर रक्त रूप बन जाता है। जैसे—सुश्रुतमें भी लिखा है :—

स खल्वाप्यो रसः भुक्तमार्गस्थैः श्रोतोभिराकृष्यमाणः।
यकृत्प्लीहानौ प्रात्य रागमुपैति रक्त संज्ञाश्चान्तरंलभते ॥

भवीत चात्र

रञ्जितास्तेजसात्वापः शरीरस्थेन देहिनाम्।
अव्यापन्ना प्रसन्नेन रक्तमित्यभिधीयते ॥

सकल धातु प्रीणनः सारः।

जो शरीरको जीवन देता है और शरीरका पोषण करता है। रस बनाते समय सर्व प्रथम कार्य मुंख, दांत, जीभका है। इसके अतिरिक्त कुछ और ग्रन्थियां जो जीभके नीचे, जवड़ोंके नीचे रहती है; जिनके द्वारा भोजन करते समय लाला थूक पैदा होते हैं। दांतोके द्वारा चर्वण करते समय ल ला थूक मिलनेपर जिह्वा भोजनको इधर-उधर पलटनेका काम करती है, जिससे कि भोजनका समस्त भाग रस रूप बन जाय। फिर वह रस-रूप भोजन अन्ननलिका द्वारा सीधा आमाशयमें पहुंचता है। वहां वह आमाशय रसके साथ मिल जाता है। जिससे इसमें अम्लता आजाती है। यहांपर इसका क्षारीय गुण नष्ट हो जाता है। केवल अम्ल गुण ही रह जाता है। फिर यह आमाशयिक पेशियों द्वारा और पतला हो जाता है, जिससे और अधिक सुपच हो जाता है। इस क्रियासे यह रस प्रति दिन १० से २० पौंड तक पैदा होता है।

यहांकी गतिके कारण वसा-स्निग्धताके कण अलग-अलग हो जाते हैं। बाकीका अंश आमाशयिक ग्रन्थियों द्वारा आकृष्ट होकर रसप्रणालियों द्वारा महा रसवाहिनी स्रोतमें पहुंच कर हृदयके वाम भागमें पहुंच जाता है। आमाशयमें ३ घण्टे तक भोज्य पदार्थ रहते हैं।

लेकिन रस क्रिया चालू होने पर यह रस सूक्ष्मान्त्रके प्रथमांश ग्रहणी नामक कलामें आता है। उस समय इसमें और भी रस आकर मिलते हैं। जैसे—क्लोम से पित्त और अग्न्याशयसे अग्न्याशय रस। इनके मिलनेसे भोजन फिर क्षारीय हो जाता है। इस उपरोक्त रसों के संमिश्रणसे फिर और भी सुपच बन जाता है। इस भोजनका रंग सफेद हो जाता है। ये दोनों, क्लोमसे पित्त और आग्न्याशयसे अग्न्याशय रस पाचन क्रिया आरम्भ होनेके साथ ही बनते हैं और समाप्ति होनेपर ये भी अपना कार्य बन्द कर देते हैं। इस उपरोक्त क्रियाके बाद भोजन सुक्ष्मांत्र में जाता है, जिसकी लम्बाई २७ फुटके लगभग है। यहाँ पर भोजन-रसमें क्षुद्रान्त्रों का क्षारीय रस फिर मिल जाता है, जिससे आहार और सुपच हो जाता है। पूरे भोजनका पाचन यहाँ ही आनेके बाद होता है। फिर इस सूक्ष्मांत्रके द्वारा पूर्णतया चूस लिया जाता है।

केवल मलीय अंश याने छूछ ही बाकी रह जाता है। भोज्य रस के चूसनेका काम अंत्रस्थित अंकुरों द्वारा होता है जो आंतोंकी दीवारोंमें छिपे हुये रहते हैं। वे अंकुर इस रसको खींचकर रस वाहिनियों को दे देते हैं। वसा या स्निग्ध पदार्थों का पाचन भी अच्छी तरहसे यहीं पर होता है। क्षुद्रान्त्रों से बचा भाग जब वृहदांत्रमें पहुंचता है, तब छूछमें रहा हुआ जलीय अंश यहां शोषित किया जाता है। जलका शोषण यहांके सिवाय कहीं पर भी नहीं होता, वह भी अन्तिम भागमें सबसे अधिक होता है। इस वृहदान्त्रके द्वारा छूछ याने मलीय अंशको छोड़कर तमाम भोज्य द्रव्यका पाचन हो जाता है। तथा इसीके द्वारा मलीय अंश गुदामार्गसे बाहर निकल जाता है। इसलिये मुंहसे अगर भोजन न पहुंचने सके तो गुदामार्गसे भी दूध वगैरहके देनेसे वृहदांत्र के द्वारा पाचन होकर शरीरका पोषण हो जाता है। निद्राके समय बेहोश अवस्थामें दिया हुआ भोजन अच्छी तरहसे नहीं पचता है।

"नाड़ी जिह्वास्य मूत्राणां परीक्षांयो न विन्दति।
मारयत्याशु जन्तून्नहि सवैद्यो न च शोभनः॥"

आयुर्वेदमें नाड़ी परीक्षाको अत्यधिक महत्व दिया गया है। शारीरिक बीमारियोंमें वात, पित्त, कफको आधार मानकर ही निदान किया जाता है। आयुर्वेदमें नाड़ी परीक्षा विधिका बहुत वर्णन किया है, तथापि इसके द्वारा रोगका निदान करना आसान नहीं है। जबतक वैद्यको हजारों रोगियोंकी नाड़ी देखनेका अवसर प्राप्त नहीं होगा, तब तक इस परीक्षामें पूरा अनुभव नहीं हो सकेगा। शास्त्रमें इसकी परीक्षाके बारेमें पक्षियोंकी चालका ही उदाहरण दिया है। जैसे— वातकी नाड़ी, सर्प या जौंककी गतिसे चलती है। पित्तके दोषसे कौवा और मेढ़ककी भाँति कूद कूदकर नाड़ी चलती है। कफकी नाड़ी हंस, मोर या कबूतरकी तरह गम्भीर, स्थूल, स्निग्ध गतिसे चलती है। इस तरह जो वर्णन किया है, उससे प्रत्येक मनुष्यको ज्ञान होना बहुत कठिन है। इन सब चालोंका ज्ञान अनुभव द्वारा ही प्राप्त हो सकता है। अनुभवके लिये किसी इन्डोर अस्पतालमें २-३ साल तक नवीन वैद्यको रहनेकी आवश्यकता पड़ती है। आतुरालयमें अभ्यास करनेके बाद ही वैद्यको नाड़ी ज्ञान हो सकता है। नाड़ी ज्ञानके अभावमें जहाँ चिकित्सा की जाती है, वहाँ सफलता नहीं मिलती और साथ-ही-साथ वैद्य समाजकी ओर भी लोगोंकी आस्था कम हो जाती है। इस प्रकार आयुर्वेदकी प्रतिष्ठा पर धक्का पहुंचता है।

आशा है, प्रत्येक वैद्य बन्धु इस नाड़ी परीक्षाके प्रकरणको क्रियात्मक रूपसे ग्रहण करनेका प्रयत्न करेंगे।

आयुर्वेद विधिसे नाड़ी परीक्षा

धन्वन्तरि मतानुसार नाभिसे उत्पन्न होनेवाली २४ धमनियाँ देहमें रहती हैं, जिनमें १० ऊर्ध्वगा, १० अधोगा, ४ तिर्यगा फिर इनमें

असंख्य शाखा उपशाखायें होती हैं। इनमें बहुतोंका कार्य रूप, रस, गन्ध, स्पर्श, श्वासोच्छ्वास क्रिया, हंसना, बोलना आदि हैं। कुछका काम, वात, पित्त, कफ, रक्त वहनादि क्रिया करनेका है। इन वातादि वहन करनेवाली धमनियोंको शाखा करमूलमें रहती है। उसको जीव साक्षिणी कहा है। आयुर्वेदमें इसको वहिः प्रकोष्ठी या धमनी कहते हैं। यह हाथमें मणिबंध और अंगुष्ठ मूलमें रहती है। उस पर अंगुली रखकर नाड़ीकी गति देखनेको नाड़ी परीक्षा कहते हैं। यद्यपि शरीरमें अनेक स्थानोंपर जैसे पैरोंके गुल्फ, नाक कण्ठादि स्थानों की धमनियों पर भी परीक्षाका कार्य हो सकता है, तथापि उपरोक्त स्थानोंमेंसे हाथकी नाड़ी को ही प्रधानता दी है। असाध्यावस्थामें हाथकी नाड़ी लुप्त हो जाती है, तब अन्य स्थानोंकी नाड़ियोंसे परीक्षा की जाती है। नाड़ी परीक्षा करते समय पुरुषकी दक्षिण और स्त्रियों के वाम हस्तकी नाड़ी देखी जाती है। क्योंकि स्त्री-पुरुषके भेदसे नाड़ी के आदि मूल विपरीत रहते हैं। परीक्षा करते समय चिकित्सक और रोगीको शान्त और अनुद्विग्न मनसे बैठना चाहिए। वैद्य अपने बायें हाथसे रोगीकी दक्षिण हाथकी कुहनीको सहारा देकर एवं कुछ संकुचित कर फिर मणिवंधके अंगुष्ठकी जड़से २ अंगुल नीचे तर्जनी, मध्यमा और अनामिका इन तीन अंगुलियोंको धमनीके ऊपर रक्खे। इस तरह तीन बार रख-रख कर छोड़े। यद्यपि नियम पुरुषके दक्षिण हाथकी तथा स्त्रियोंमें बाम हाथकी परीक्षा करनेका ही है तथापि भ्रम न हो जाय इसलिये दोनों-के-दोनों हाथोंमें परीक्षा करनी चाहिये। परीक्षाका सर्वोत्तम समय प्रातःकाल है।

अतः प्रातःकाल ही नाड़ी परीक्षा करना अभीष्ट है। निद्रितावस्था में, परिश्रम करनेके उपरान्त, व्यायाम, व्यवाय एवं भोजनोपरान्त, मार्ग-गमनोपरान्त, तैल मर्दनके बाद, सूर्याभिताप सेवनोपरान्त तथा क्षुधातुर एवं तृष्णातुर रोगियोंकी नाड़ी परीक्षा नहीं करनी चाहिये।

क्योंकि उपरोक्त कारणोंसे नाड़ी द्वारा वास्तविक रोग एवं शारीरिक शक्तिका ज्ञान यथार्थ रूपसे नहीं हो सकता।

अभी भी ऐसो गाथायें सुननेमें आती हैं कि अमुक वैद्यजी अथवा हकीमजो केवल रोगीकी नाड़ी देखकर ही सम्पूर्ण अवस्था बता देते थ। मुगलकालीन समयकी ऐसी बहुत-सी गाथायें आज भी सुननेम आती हैं कि मलिकाओं एवं शहजादियोंके रोगकी परीक्षा हकीम केवल नाड़ी द्वारा ही कर लिया करते थे। केवल मणिबन्ध तकका ही भाग हकीम देख सकते थे और रोगीका सम्पूर्ण अङ्ग पर्देमें रहता था। उस समयके युगमें हो सकता है कि यह सत्य घटनायें हों परन्तु आजकलके वैज्ञानिक युगमें कोई भी उनपर विश्वास नहीं कर सकता। आजका युग कसौटीका युग है। प्रत्येक वस्तु प्रत्यक्षके आधार पर अधिष्ठित है। लिखनेका तात्पर्य यही है कि रोग-विज्ञानोपायमें नाड़ी परीक्षा एक प्रधान अङ्ग है। बिना पूर्ण नाड़ी ज्ञान हुए रोग-ज्ञानमें कुछ कठिनाई अनुभव होती है। अतः नाड़ी ज्ञान सम्यक् रूपसे होना आवश्यक है।

प्रातः काल शौचादि क्रियाओंसे निवृत्त होकर थोड़ी देर विश्राम कर लेनेके बाद नाड़ी परीक्षा कराना उत्तम है। मध्याह्नमें नाड़ीका वेग हल्का पड़ जाता है, तथा सायंकाल पुनः बढ़ जाता है। अतः इन समयोंमें पूरा बोध नहीं होता है। केवल नाड़ी परीक्षा द्वारा ही सभी रोगोंका तथा उनके कारणोंका ज्ञान सुयोग्य वैद्य एवं हकीमों को सहज ही हो सकता है यह धारणा नितान्त भ्रामक है।

नाड़ी ज्ञानके लिये यह जानना आवश्यक है कि नाड़ीमें स्पन्दन किस प्रकार होता है तथा शरीरके किस भागसे उसका सम्बन्ध है। स्पन्दन का सम्बन्ध हृदयके उस कार्यसे है जिसके द्वारा वह समस्त शरीर को जीवयुक्त रक्त पहुंचाता है। हृदयमें संकोच होनेके कारण तद्गत रक्त, रक्त वाहिनी नलिकाओं (धमनियों) में फेंका जाता है। संकोचावस्थाके उपरान्त विकासावस्था होती है। इन दोनों अवस्थाओं

के कारण हृदयसे रक्त फेंके जानेपर एक प्रकार का स्पन्दन होता है और वही स्पन्दन धमनियोंमें ज्ञात होता है। इस स्पन्दन का सम्बन्ध हृत ध्वनि (Cardiac Sund) से हैं।

वही स्पन्दन अंगुष्ठ मूलके पास वहिप्रकोष्ठी या धमनीमें प्रतीत होता है। इसके द्वारा ही शरीरके किसी भी अंगमें रोग होनेसे उसका प्रभाव नाड़ीपर पड़ता है। जैसे पांवकी चोटसे भी नाड़ीकी गतिमें अन्तर आ जाता है। क्योंकि धमनी तीनों दोषोंको वहन करती है और ये दोष रक्तके साथ सम्पूर्ण शरीरमें फिरते रहते हैं।

अतः नाड़ी केवल वात, पित्त, कफ की प्रकृति विकृतिका ज्ञान कराती है, जिसके द्वारा आन्तरिक शक्ति कितनी बलवती है, कौन सा रोग है, रोगका बल कितना है—इन सब बातों का सामान्य रूपसे अनुमान हो सकता है। नाड़ीके स्पन्दन हृदय की ताकत, कमजोरी, संकोच और विकासके अनुरूप कम ज्यादा होते रहते हैं। स्वस्थ मनुष्य की नाड़ी सबला, स्थिर, और समान रूपसे चलती है। किन्तु रोग होनेपर वातादि धातुओंमें विकार होने पर क्रियामें विषमता आ जाती है जिससे नाड़ी अस्थिर, निर्बल, भारी, कठोर प्रतीत होती है। स्वस्थ और रुग्नावस्थामें नाड़ीके स्पन्दन का मिलान करनेसे स्वस्थ अस्वस्थका पूरा ज्ञान हो जाता है। अनियमित स्पन्दन अरिष्ट सूचक माना जाता है। रस रक्तादि दूष्योंमें विकृति, वात, पित्त, कफके दूषित होनेपर ही होती है पर किसी दोषसे कम एवं किसी दोषसे ज्यादा। जैसे वात, पित्तजन्य दोषोंमें विकृति विशेष हो जाती है तब नाड़ी टेढ़ी और कूदती प्रतीत होती है। वात और कफमें विकृति होनेसे टेढ़ी और मंद चाल प्रतीत होती है। पित्त और कफ विकृत होनेपर नाड़ी बारम्बार कूदती और मेंढ़क की चाल वाली मालूम देती है। तीनों दोषोंके विकृत होनेपर तीनों दोषोंयुक्त गति वाली नाड़ी चलती है। जब नाड़ी की गति क्षण क्षणमें स्थान

बदलती, कूदती, एवं अति वेगयुक्त अति वक्रगतिसे चलने लगे या अति मन्द, अति स्थूल, अति कठिन हो जाय तो रोग को असाध्य समझना चाहिये। यदि ३० स्पन्दन समान रूपसे चलकर विश्राम लेता हो तो समझना चाहिये कि जीवनीय शक्ति अपना कार्यकर रही है। १०-१२ स्पन्दनके बाद नाड़ीमें रुकावट प्रतीत हो तो रोगकी प्रबलताका द्योतक समझना चाहिये।

स्वाभाविक स्थितिसे नाड़ीकी गति कम होतो दुर्बलता या मस्तिष्क में रक्तकी अधिकता समझनी चाहिये।

ज्वरमें नाड़ी ऊष्ण स्पर्श और वेग युक्त चलती है। वात ज्वरमें नाड़ी भारी-कठिन वेग युक्त रहती है। पित्त ज्वरमें अत्यन्त वेग युक्त कठिन चलती है। कफज्वरमें मन्द चालसे चलती है। वात पित्तकी नाड़ी कभी सर्पके समान कभी मेंढ़कके समान चलती हुई तर्जनी और मध्यमा अंगुलीके नीचे विशेषतः प्रकट होती है। वात कफ की नाड़ी कभी सर्पगतिसे कभी हँस गतिसे चलती हुई तर्जनी अनामिकाके नीचे स्पन्दन विशेष रूपसे करती है। पित्त कफकी नाड़ी कभी कौआ या मेंढ़क, व हँसके समान चालमें मध्यमा-अनामिकाके नीचे प्रकट होती है। सन्निपात रोगमें काष्ठकूट या तीतर की गतिसे ३-४ बार स्पन्दन करके रुक जाती है और फिर चलने लगती है तथा फिर रुकती है, या २-३ बार स्पन्दन करके फिर ठहर जाती है, ऐसे अनेक लक्षण होते हैं। ज्वरमें नाड़ी गरम अधिक वेगयुक्त चलती है। काम ज्वरमें और क्रोध ज्वरमें नाड़ी तेज चलती है; रक्त दोषसे गरम तथा कठार चलती है। चिन्ता और भयसे नाड़ी मन्द; आम दोषमें भारी, गर्भिणी स्त्री की नाड़ी गम्भीर पुष्ट और हल्की चलती है। मन्दाग्नि, धातुक्षयमें मन्दतर चलती है। क्षुधा लगने पर चंचल, भोजनके बाद मन्द अतिसारमें उतावली, एवं दीप्ताग्नि वालोंकी नाड़ी हल्की और तेज युक्त चलती है। कास तथा यक्ष्मामें क्षीण मंद चलती है। पाण्डु और

कामलामें चंचल तीक्ष्ण रहती है। शूल रोगोंमें:—वातज शूलमें टेढ़ी, पित्तज शूलमें अत्युष्ण वेगवती, कफज शूलमें मंद और भारी, आमज शूल या कृमि जन्य शूलमें भारी, तेज झटका देती हुई चलती है। श्वास रोगमें वेगके समय नाड़ी तेज; दौरा शान्त होनेपर मंद एवं हिक्का रोगमें नाड़ी अस्थिर वेग पूर्वक चलती है। मदात्ययमें सूक्ष्म वेगवती, उष्ण कठिन जड़ युक्त होती है। इसी तरह त्रिदोषज असाध्य व्याधिमें कभी मन्द कभी तेज, कभी शिथिल, कभी रुककर और कभी बिल्कुल गायब हो जाती है। जिस रोगमें नाड़ी अपने स्थानसे कुछ स्खलित हो जाय वह रोगी ३ दिनमें मर जाता है। जिसका स्पन्दन अनामिकाके नीचे ही प्रतीत हो तो ४ प्रहरमें वह रोगी मर जाता है। जिसका स्पन्दन २ अंगुल दूर प्रतीत हो वह १॥ प्रहरमें मर जाता है। जिसका स्पन्दन २॥ अंगुल दूर प्रतीत होता है वह १ प्रहरमें ही मर जाता है। जिसका स्पन्दन तीनों अंगुलियोंके स्पर्शमें प्रतीत न होता हो वह आधे प्रहरमें ही मर जाता है।

यदि रोगीका शरीर विशेष उष्ण हो और नाड़ी अति कमजोर प्रतीत होती हो तो वह रोगी ३ दिनमें ही मर जाता है। अथवा जिसकी नाड़ी टूट-टूटकर चलती हो या बीच-बीचमें बन्द हो जाती है वह उसी दिन चला जाता है। इस नाड़ी परीक्षाके समय अन्य परीक्षाओं की सहायता जैसे—ज्ञानेन्द्रियाँ, हृदय, फुफ्फुस, उदर आदि अवयवों की भी परीक्षा करनी चाहिये। इस नाड़ी परीक्षाका प्रधान यन्त्र हाथ ही है। रोग परीक्षामें हाथ बहुत सहायता करता है। शारीरिक गर्म्मी, शीतलता, स्निग्धता एवं रूक्षताका ज्ञान भी इसीके द्वारा होता है। इसी तरह शरीरके भीतर अमुक अवयव नर्म है, अमुक अवयव कठिन है, या भीतर गांठ है, अथवा शोथ है, आदि सभी बीमारियों की परीक्षा भी हाथ ही के द्वारा होती है। अनुभवी वैद्य भी इसी हाथकी सहायतासे नाड़ी परीक्षा करके गरमीका ठीक नाप बता देते

हैं। जितना काम थर्म्मामिटर करता है उतना ही काम अनुभवी हाथ की ये अँगुलियाँ कर देती हैं। अनुभव बिना यह नाड़ी ज्ञान होना बहुत कठिन है अतः योग्य शिक्षककी देख-रेखमें इस कामको सीखना नवीन वैद्यके लिये अत्यन्त आवश्यक है। इस कामके बिना वैद्य अधूरा ही रह जाता है।

डाक्टरी मतसे नाड़ी परीक्षा

आयुर्वेदकी तरह पाश्चात्य विज्ञान वेत्ताओंने नाड़ी परीक्षामें दोषादिकों को नहीं माना है परन्तु उन्होंने भी दूसरा ढंग निकाल रक्खा है। वे लोग भी इसकी कितनी ही तरहसे परीक्षा करते हैं। स्पन्दन संख्या, सम-विषमगति, उतावली नाड़ी, धीमी नाड़ी, भरी हुई नाड़ी, छोटी नाड़ी, सख्त या कोमल नाड़ी, अनियमित नाड़ी, आन्तरीया नाड़ी आदि भेद माने हैं। स्पन्दन संख्या प्रकृति भेद, बल भेदसे न्यूनाधिक होती रहती है। स्वस्थावस्थामें नाड़ीके स्पन्दन १ मिनटमें निम्नलिखित कोष्ठके अनुसार होते हैं।

आयु	प्रति मिनट	स्पन्दन	आयु	प्रति मिनट	स्पन्दन
गर्भमें	"	१४०	२०	"	८५
सद्योजात	"	१३०	४०	"	७५
प्रथम वर्ष	"	१२०	६०	"	७०
द्वितीय वर्ष	"	११०			
तृतीय वर्ष	"	१००	वृद्धावस्थामें		७५ से ८०

सप्तम वर्षसे १४ वर्षकी आयु तक ८६ से ९० ।

पुरुषोंकी अपेक्षा स्त्रियोंकी नाड़ीकी गति ज्यादा होती है। याने १०-१५ तक। वृद्धावस्थामें निर्बलता बढ़ जानेसे नाड़ीकी गति अनियमित हो जाती है, तथा युवा पुरुषोंमें भी रोग विशेषके कारण दुर्बलता होनेपर नाड़ीकी गति बढ़ जाती है। किसी-किसी मनुष्यकी स्वस्था-

वस्थामें भी नाड़ी की गति बढ़ी हुई रहती है। याने १०० से १२० तक, प्रति मिनट हुआ करती है। समान्य रीतिसे हृदय जितना बलवान होता है, उतनी ही नाड़ीकी गति कम होती है। और जितना हृदय कमजोर होता है, उतनी ही नाड़ीकी गति बढ़ जाती है। इस अभिप्रायसे किसी भी रोगके कारण कमजोरी आनेपर गति तीव्रतर हो जाती है। सोनेकी बजाय जागने पर, सायंकी अपेक्षा प्रातः, चलनेकी अपेक्षा बैठे रहने पर गति बढ़ जाती है। काम, क्रोध, भयसे गति बढ़ती है। चिन्तासे कम हो जाती है। इसी तरह श्वासोच्छ्वास क्रियामें भी ऐसा ही नियम मानते हैं।

आयु	प्रतिमिनट श्वासगति
२ माससे २ वर्ष तकके	” ३५
२ वर्षसे ६ वर्ष तककी	” ३०
६ वर्षसे १२ वर्ष	” २०
१५ सालमें	” १८
युवावस्थामें	१६-१८

इस हिसाबसे श्वासोच्छ्वासमें नाड़ी की गति चौगुनी होती है। किन्तु न्युमोनिया, इतर फुफ्फुस जन्य बीमारियोंमें १॥ या २ दुगुनी भी हो जाती है।

स्त्रियोंमें श्वास अधिक रहता है।

इसी तरह नाड़ीकी गतिका सम्बन्ध शारीरिक उष्णताके साथ भी रहता है। सामान्यावस्थासे ८-१० बार स्पन्दन अधिक होने पर १० डिग्री गरमी बढ़ जाती है। इस नियमसे ज्वर जन्य उष्मामें ज्वरकी उष्णता ज्यों-ज्यों बढ़ती जाती है, त्यों-त्यों नाड़ीकी गति भी बढ़ जाती है।

ज्वरके बिना ही यदि नाड़ी की गति बढ़ जावेतो वहां हृदयकी दुर्बलता समझना चाहिये। प्रायः अपतन्त्रक, गलगण्ड, रक्ताल्पता, हृद्रोग आदि बीमारियोंमें ज्वरके बिना भी नाड़ीकी गति बढ़ जाती है। इसी तरह गर्दन तोड़, मोतीझरा, इनफ्लूएन्जा, प्लूरिसी, विषम

ज्वरादि रोगोंमें नाड़ीकी गति ज्वरोत्तापकी अपेक्षा कम हो जाती है। तथा निम्नरोगोंमें गति क्षीण हो जाती है। जैसे अपस्मार, कामला, उन्माद, मधुमेह, वृक्करोग, हैजा, धमनी काठिन्य, रोग जन्य दुर्बलता आदि। विषादिके अति सेवनसे हृदयका अवरोध होनेपर नाड़ीकी गति अति शिथिल हो जाती है याने ३० तक घट जाती है। ऐसे ही उपदंशजन्य रोगोंमें, विद्रधिमें, विषजनित रक्तविकार सन्यास, मूर्च्छा, सन्निपातादि रोगोंमें नाड़ीका स्पन्दन कम हो जाता है। पश्चात्य चिकित्सक इस परीक्षामें तीन बातोंका ध्यान विशेष रखते हैं :—

(१) नाड़ीकी गति द्रुत है या मन्द (शार्प-पल्स) (२) नाड़ीका आकार छोटा है या बड़ा, (३) नाड़ी कठोर है, या कोमल। कठोरता और संहति इसके दो पर्य्यायवाचक शब्द हैं। दो स्पन्दनोंके बीच विराम कालमें नाड़ीपर एक ओर से दूसरी ओर तक दबाव दिया जाय तब संहतिका ज्ञान होता है। बाल्यावस्थामें धमनीकी दीवार कोमल होती है फिर आयु वृद्धिके साथ २ कठोर होती जाती है। तब दृढ़-रज्जुवत प्रतीत होती है, इसको अंगुलीसे दबाने पर भी गतिका अवरोध नहीं होता। इस तरह कोमलावस्थामें अंगुलीसे दबाने पर दीवारका बोध नहीं होता, और गति रुक जाती है।

रक्तकी अधिकता वाले ताकतवर मनुष्यके ज्वर होनेपर, तथा मस्तिष्क शोथमें, यकृतके रोगम, सन्धिवातादि रोगोंमें नाड़ी तेजीसे अधिक कठोर चलती है, यह चाल भयप्रद मानी है। ज्वरावस्था में यदि उपरोक्त चालसे नाड़ी बहुत दिन चले तो रोगीकी आशा बचने की कमही रहती है। नाड़ीका उतावलापन घटनेपर अच्छे होनेकी आशा रहती है। इसको कम करनेके लिये सबसे अच्छा उपाय यही है कि सिरावेधके द्वारा अथवा जलौका पातन, या सींगी लगाकर रक्तके दबाव को कम कर देना चाहिये।

विरेचन देनेसे भी रक्तभार कम हो जाता है जिससे संहति

न्यून हो जाती है। दुर्बल मनुष्यको ज्वर होनेपर अथवा किसी भागमें शोथ होनेसे तीक्ष्ण और छोटी नाड़ी चलती है। आंतोंमें या उदर कलामें शोथ होनेपर भी उतावली कठोर और छोटी नाड़ी चलती है। यह छोटी होते हुये भी इतनी कठिन होती है कि स्पर्शमें बारीक लोहेके तारके समान कठिन लगती है। यह नाड़ी भी रक्तके दबावको बताती है। धमनी जितनी कोमल रहती है उतनी ही उसमें व्याधि नाशक शक्ति अधिक रहती है। कठोर नाड़ी होनेपर रोगसे लड़नेके लिये उसको अधिक परिश्रम करना पड़ता है। कठोर नाड़ी वालोंकी आयु भी कम ही होती है।

ज्वरकी साधारण अवस्थामें नाड़ी की गति अवश्य बढ़ती है। परन्तु उसके साथ श्वासगति भी बढ़ जाती है। जबतक दोनों का अनुपात एकसा रहे, तबतक रोगीके बिगड़ने का भय नहीं होता। नाड़ीकी पुष्टता-कृशता का कारण हृदयका स्पन्दन है। यदि हृदयके बाम निलयसे महाधमनीमें जाने वाले रक्त तथा रक्ताणुओंके परिमाणमें अधिकता होगी तो स्पन्दनमें पुष्टता रहेगी। यदि शरीरमें तरल द्रव उत्तपादिका परिमाण अधिक होगा तो कृशता रहेगी।

स्वस्थ और बलवान पुरुषकी नाड़ी सदा पूर्ण रहती है। किसी कारण विशेषसे रक्ताभिसरण वेगकी बृद्धि हो जाय तो नाड़ी स्थूल हो जाती है।' इसके विपरीत रक्तश्राव, अतिसार, वमन, विषूचिका, प्रभृति रोगोंके कारण द्रवके अधिक निकल जानेपर अथवा हृदय को दुर्बल करनेवाले रोगोंके कारण हृदयगति और रक्ताभिसरण क्रिया मन्द हो जाती है। ऐसे समयमें नाड़ी कृश हो जाती है। हृदयकी कमजोरी की अधिकताके कारण नाड़ी बहुत कमजोर बारीक तन्तुके समान दिखलाई देती है। नाड़ीके बलाबल या रक्तभारके अनुसार ही नाड़ी बलवान क्षीण, लुप्त होती है। रक्तभारके बढ़नेसे बलवती, रक्त भारकी कमीसे क्षीण नाड़ी, रक्तक्षय, हृद्दौर्बल्यादि कारणोंसे लुप्त

नाड़ी होती है। इस उपरोक्त बातोंका बोध अंगुलियोंसे नाड़ी देखने से भी हो सकता है। विशेष निर्णय रक्तभार मापक यन्त्रसे ही होता है। स्वस्थ मनुष्यके शरीरमें प्रति स्पन्दनके साथ वाम निलय खण्डसे १॥ छटांक रक्त महाधमनीमें प्रवेश करता है। इस हिसाबसे ८० बार स्पन्दन होनेसे छः पौण्ड रक्त महा धमनीमें फेंका जाता है। यदि उतने ही समयमें २० स्पन्दन बढ़ जावे तो १॥ पौण्ड रक्त १ मिनटमें महा धमनीमें ज्यादा चला जाता है जिससे नाड़ी पुष्ट हो जाती है, और रक्तभार बढ़ जाता है। रक्तभारमें अति वृद्धि अथवा अति न्यूनता का होना घातक चिन्ह समझा जाता है।

रक्तभार वृद्धिमें कारण :—

तीव्रसंक्रामक रोग, अति चिन्ता, अति क्रोध, कसरतकी कमी, जीर्ण रक्त विकार, पुराना वृक्करोग, मधुमेह, धनुर्वात, अति मद्यपान, विष्टब्धाजीर्ण, धमनीकोष–काठिन्य, अध्यशयन, गरिष्ठ भोजन, रजोवरोधादि कारणोंसे रक्तका चाप बढ़ जाता है यह चाप १५, से २५० तक या इससे भी ज्यादा भी मिलीमिटर तक बढ़ जाता है।

रक्तभार क्षयमें कारण :—

हृदय जनित व्याधियोंके कारण, मानसिक चिन्ताके कारण, अतिसार, मन्थर ज्वर, राजयक्ष्मा, रक्तपित्त, 'रक्तश्राव, अत्युग्र विष सेवन, अति लंघन, अति शारीरिक कृशताके कारण रक्तका दबाव घट जाता है। १०० से ८० मिलीमीटर या इससे भी कम हो जाता है।

स्वस्थ मनुष्यके विश्रामके समय रक्तका चाप ११७ से १३५ मिली मीटर तक रहता है। इस चापको जाननेके लिये आयुकी संख्यामें १०० और मिलानेपर जो संख्या होती है उतना ही स्वस्थ पुरुषके रक्तका दबाव रहना चाहिये। मांसाहारी और मद्यसेवीका चाप अधिक रहता है। इस यन्त्रका माप (स्फिग्मो मेनोमीटर) Sphygmeno-

meter मापक यन्त्र द्वारा किया जाता है। इस यन्त्रका निर्म्माण थर्म्मामीटरकी तरह पारदके द्वारा ही होता है। इसमें ५ इंच मोटे कपड़े की १ पट्टी होती है जो हाथपर बाँधनेके काम आती है। इसमें एक रबड़की नली लगी रहती है जिसका सम्बन्ध पारे वाली नलीके साथ एवं पट्टीके साथ रहता है। इसी नलीके अन्तमें एक रबड़का पम्प लगा रहता है, जिसके द्वारा हवा देनेसे हवा नलीके रास्ते होकर पट्टीके भीतरसे बांहकी धमनीपर दबाव डालती है, जिससे पारा नलीमें चढ़कर रक्तभार को बतलाता है। रक्तमापक यन्त्र द्वारा परीक्षाके समय रोगीको निश्चिन्तता पूर्वक बैठाकर या सुलाकर हाथपर पट्टी बाँधनी चाहिये। अगर बैठाकर परीक्षा करनी हो, तब तो हाथको मेजपर सीधा करके रक्खे और अगर सुलाकर परीक्षा करनी हो तो हाथको बिछौनेपर समस्थलपर रखकर यन्त्रको सीधाकर खड़ा कर दे। फिर बायां हाथ नाड़ी पर रक्खे और दाहिने हाथसे रबर निर्मित बल्बको बार-बार दबाकर हाथपर बंधी हुई पट्टीमें हवा भरता रहे। जब तक नाड़ीका स्पन्दन बन्द न हो। जब स्पन्दन बन्द हो जाय, तब हवा भरना बन्द कर दे। और मीटरमें लगे हुए निशानोंकी तरफ ध्यान पूर्वक देखता रहे। फिर हवा भरनेवाले बल्वके ढक्कनको आहिस्ते-आहिस्ते खोलता जावे। जिससे वायुका दबाव कम होने लगे। वायु के निकलते समय जब नाड़ीका चलना प्रारम्भ हो, उस समय जहांतक पारा चढ़ा हो, उस समय हृदयके आकुंचन कालमें रक्तका चाप (Blood pressure) माना जाता है। किन्तु इस परीक्षाके समय मीटरमें लिखे हुए अंक पढ़नेमें सावधानी रखनी चाहिये। अन्यथा थोड़ा-सा भी फर्क हो जानेसे ही परीक्षामें गड़बड़ी हो जाती है। याने १०-२० अङ्कोंकी कम-बेशी हो जाती है।

दूसरी परीक्षा स्टेथिस्कोपकी सहायतासे की जाती है। इस परीक्षाकी विधि यह है कि परीक्षाके समय हाथमें बंधी हुई पट्टीके नीचे

[illegible] धमनी पर स्टेथिस्कोप रखकर बल्ब द्वारा हवा भरे और कानोंमें आंकुचन एवं प्रसारण क्रियाको सुनता रहे। जब आवाज सुनना बन्द हो जाय, तब हवा भरना बन्द कर दे। और धीरे-धीरे बल्बके बटन खोलता जाय और आवाजको सुननेकी चेष्टा करता जावे। जब धमनीकी आवाज सूक्ष्म रूपसे सुननेमें आने लगे, तब पारेके चढ़ावको देख ले। यह आंकुचन कालका माप है।

फिर और वायु निकलते समय अनेक तरहकी आवाज होती रहती है। उनमेंसे मृदु आवाज जहाँ सुननेमें आवे, वहाँ ही प्रसारण कालका रक्तभार जान लें। दोनों परीक्षाके समय ही आंकुचन प्रसारण [illegible] का दबाव बराबर ही रहता है। लेकिन श्रवण परीक्षामें कुछ फरक अवश्य पड़ जाता है।

युवावस्थाकी स्वस्थावस्थामें आंकुचन कालका दबाव १०० से १४० तथा प्रसारण काल ६० से ९० मीलीमीटर तक रहता है। शिशुअवस्था में दबाव कम रहता है। २० वर्षकी आयुवाले पुरुषका रक्तका दबाव १२० तक गिनना चाहिये। फिर इसमें आयुका पंचमांश याने २० का पाँचवाँ हिस्सा ४ मिलाने पर जितना हो उतना ही प्राकृतिक दबाव याने सिस्टोलिक प्रेशर माना जाता है। इस हिसाबसे २० वर्षकी आयु में १२४। ३० वर्षकी आयुमें १२६। ५० वर्षकी आयुवालेका १३० स्वाभाविक होता है। इसी तरह हृदयके प्रसारण कालमें साधारणतया २० वर्षकी आयुमें प्रसारण कालका दबाव ८० मानना चाहिये। फिर ४-५ वर्षके हिसाबसे २-२ बढ़ाते जाय। जैसे—३० वर्षकी आयुमें ८०-२-८२। ४० वर्षकी उम्रमें ८०-४-८४। लेकिन ६० वर्षकी उम्रमें [illegible] बढ़ाना चाहिये। इस हिसाबसे ७० वर्षकी आयुवालेका ८०-८-८८ प्रसारण काल माना गया है। डाक्टरोंने [illegible] अलग-अलग उनके विभाग किये हैं। जैसे— [illegible] (Very High) स्वाभाविकसे अधिक (High)।

रक्तभाराधिक्य होनेपर मस्तिष्कमें या अन्यस्थानस्थित धमनीयोंके फटनेका भय रहता है। धमनीयोंके फटनेसे पक्षाघात हो जाता है एवं किसी समय मृत्यु भी हो जाती है।

सामान्यतः स्वस्थावस्थाम धमनीका प्रेसर निम्नानुसार रहता है।

आयु	आंकुचन चाप	प्रसारण चाप	मध्यान्तर
२	८१	४५	३६
५	९०	५३	३७
१०	१००	६२	३८
३०	१२४	८२	४२
४०	१२८	८४	४४
५०	१३२	८६	४६
६०	१३६	८८	४८
७०	१४५	९२	५३

अत्यन्त वृद्ध होनेपर दुर्बलताके कारण रक्त चाप, (प्रेसर) कम पड़ जाता है। प्रति रोधक शक्तिकी अधिकताके कारण ही नाड़ी बलवती मानी जाती है। इसका अभाव होनेसे नाड़ी क्षीण हो जाती है। कालेरामें द्रवके निकल जानेसे नाड़ीका स्पन्दन धीमा पड़ जाता है या लुप्त हो जाता है। सामान्यतया रक्त भार प्रेसरके आकुंचन प्रसारणके समय ३० से ६० तकका अन्तर रहता है। इसमें न्यूनाधिक हो जाय, तो भयकी आशंका समझनी चाहिये।

यह उपरोक्त सम्पूर्ण क्रियायें धमनी और हृदयका आश्रय लेकर ही होती हैं। इन दोनोंमें भी प्रधान आश्रय हृदय ही है। इसीके आकुंचन प्रसारणके द्वारा ही नाड़ीकी गति होती रहती है। हृदय जितना पुष्ट होगा, उतनी ही क्रिया शान्त चलती है। जिससे नाड़ीका स्पन्दन भी कम चलेगा। लेकिन जैसे-जैसे दुर्बलता आती जाती है, वैसे-

वैसे ही हृदयकी क्रिया शीघ्रता पूर्वक होने लगती है और इसीसे नाड़ीकी गति बढ़ जाती है। आजकल आधुनिक विज्ञानवेत्ताओंने इन दोनोंकी परीक्षाके लिये भी तरह-तरहके यन्त्र निकाले हैं, जिनके नाम यह हैं—

स्फिग्नोग्राफ पालिग्राफ कर्डियोग्राफ

इनकी विधि बहुत क्लिष्ट है और अनुभवी ही इसके द्वारा ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं।

Urine Examination

मूत्र परीक्षा

पाश्चात्य मतानुसार मूत्र परीक्षा तीन प्रकारसे की जाती है— दर्शन परीक्षा, रसायनिक परीक्षा (Chemical test) केमिकल टेस्ट) और (Microscopic Examination) माईक्रोस्कोपिक एक्जामिनेशन याने अणुवीक्षण यन्त्र द्वारा परीक्षा।

दर्शन परीक्षा :—

इस परीक्षामें निम्नांकित बात देखी जाती हैं—मूत्रका रंग, मूत्रकी मात्रा, Litmus Paper लिट्मस पेपर (मूत्र परीक्षाका एक कागज विशेष) पर रासायनिक क्रियामें कागजका किस तरहका रंग हो जाता है। (Specific gravity) स्पेसिफिक ग्रेवेटी (आपेक्षिक घनत्व) क्या है ? इन सब बातोंका पता लगाना पड़ता है। जिनका वर्णन पृथक् प्रकरणमें आयेगा।

मूत्रका रंग :—

साधारणतया जो मनुष्य स्वस्थ रहते हैं उनके मूत्रका रंग प्रायः Amber yellow (अम्बर यलो) अल्प पीत वर्ण युक्त होता है। फिर ज्यों-ज्यों मनुष्यके शरीरमें विकृत अवस्था मिलेगी, वैसे ही मूत्रका रंग

भिन्न-भिन्न रूपमें पाया जायगा। कभी पीत वर्णवाला, कभी गहरे पीत वर्णवाला या काले रंगका।

कुछ रंगों के अनुसार रोग निदान करनेकी सूची (Chart) हम नीचे लिखते हैं। जो वैद्य बन्धुओं के लिए रोग निदान करनेमें सहायक सिद्ध होगी।

Colour कलर या रंग	Cause of Colouration काज आफ कलरेशन (रंग का कारण
1. Amber Colour अम्बर कलर (अल्प पीत वर्ण)	1. Normal (नौरमल) स्वस्थ अवस्था
2 गहरे पीत वर्णवाला या भूरा	2. मूत्रमें Pigments पिगमेंट्स रंगवाले पदार्थ विशेष रूपसे जाते हों तब।
3. Milky (मिल्की) दुग्ध वर्णवाला	3. बसा युक्त मूत्र
4. नारंगी रंगका	4. औषधका रंग
5. लाल	5. रक्तांशवाला
पीत वर्ण वाला कुछ हरित झलक सहित।	कामला या Jaundice
अल्प अस्वच्छ हरित वर्ण वाला, नीली झलक वाला।	विसूचिका या Cholera कोलेरामें या Typhus याने सन्निपात ज्वरमें।

यह उपरोक्त विवरण हमने वैद्य बन्धुओंकी जानकारीके लिए कुछ सूक्ष्म रूपमें किया है। जहाँ पर अल्प पीत वर्णाकृति वाला मूत्र होगा हम पहले ही लिख चुके हैं कि ऐसा मूत्र स्वस्थ मनुष्यके होगा। अधिक पीला या भूरे रंगका मूत्र पित्त जनित व्याधिमें होगा जैसा ऊपरवाली

सूचीमें लिखा हुआ है। दुग्ध रंगका मूत्र उस बीमारीमें होगा जिसमें औपसर्गिकमेह हो, जिसके मूत्रमें पूय जाती हो या जो मनुष्य विशेष मोटे होते हैं, जिनके शरीरमें वसाका विशेष हिस्सा रहता हैं, उनके भी मूत्रमें वसाजब जातो है मूत्र दुग्ध वर्णका हो जाता है। नारंगी रंगका मूत्र औषधि विशेषसे जो मनुष्य खाता है और वो विशेष नारंगी रंगवाली होती हो उससे भी मूत्र नारंगो रंगका हो जाता है। क्योंकि वे औषधियां मूत्रमें होकर निकलती हैं। अधिक पीला कुछ हरित आभा वाला कामलाके रोगीको होता है। (जिसे पीलिया भी कहते हैं)

गंदे रंगका हरापन लिए हुए जब मूत्र आता है तो इसका अर्थ यह कि कोई त्रिदोषजन्य व्याधि है जैसे सन्निपातिक ज्वर या मोतीभरा।

मूत्र गंध या Odour (ओडर) -मूत्र गंध, रोग परीक्षाका मुख्य अंग है। स्वस्थ मनुष्यके मूत्रकी गन्ध कोई मुख्य गन्ध नहीं होती न तीव्र होती है परन्तु दुर्गन्ध द्योतक नहीं होती। पाश्चात्य विद्वान इसे Faint aromatic odour (फेन्ट अरोमेटिक ओडर) कहते हैं। जो अस्वस्थताका सूचक मूत्र होगा उसमें शोरेकी-सी गन्ध आयेगी। इसका तात्पर्य्य यह कि पाचन क्रिया ठीक नहीं है। दिमागको तीव्र दुर्गन्ध से चलायमान कर देने वाली गन्ध मेह वाले रोगीके मूत्रमें मिलेगी। कतिपय औषधियोकी गन्ध भी मनुष्यके मूत्रमें पायी जाती है जैसे गंदे बेरजेकी गन्ध यह तब ही मूत्रमें मिलती है जब कोई रुग्ण मनुष्य उपमेह, इत्यादि रोगोंसे पीड़ित होकर उपरोक्त औषथियोंका सेवन करता है।

Specific gravity :—(आपेक्षिक घनत्व) यह एक यन्त्र द्वारा जिसे यूरोनोमोटर (Uronommiter) कहते है मापी जाती है। स्वस्थ मनुष्यके मूत्रकी स्पेशिफिक ग्रेविटी Specificgravity 1015—1025 तक होती है और जो शराबी याने मद्यपान करनेवाले मनुष्यों में 1003 तक हो जाती है या अत्यधिक पसीना आनेसे 1040 तक पहुंच सकती है। इस परिमाणसे न्यून या अधिक रुग्ण पुरुषों में ही पाई जायेगी।

Reaction to Litmus Paper (री एकसन टू लिटूमस पेपर) लिटमस कागज द्वारा मूत्रकी रासायनिक क्रिया मालूम होती है। यह कागज दो प्रकारके होते हैं एक नील वर्ण वाला दूसरा रक्तवर्ण वाला। यदि रक्तवर्ण वाले कागजको मूत्रमें भिगोयेंगे और वह रक्तवर्णको त्याग कर नीले रंगका हो जाय तो इससे यह स्पष्ट होता है कि मूत्रमें क्षार युक्त (Alkaline) तत्व उपस्थित हैं। यदि नीले कागज को मूत्रमें डालकर देखा जाय और वह नीलेसे रक्त आभा वाला हो जाय इससे यह सिद्ध होता है कि मूत्रमें क्षारों की अपेक्षा अम्ल रस विशेषतया उपस्थित हैं। स्वस्थ मनुष्यका २४ घंटेका मूत्र यदि परीक्षा किया जाय तो Acidic एसिडिक (अम्लीय) वाला होगा। मनुष्यके खाद्य पदार्थों का मूत्र पर अत्यधिक प्रभाव होता है।

रासायनिक मूत्र परीक्षाके लिए मूत्र लेनेकी विधि :—

वैद्यको चाहिए कि विमारसे सुवह सोकर उठनेके बादका मूत्र परीक्षा के लिए लानेको कहे। सुबह उठते ही पहिले पहलका जो मूत्र आता है वह कुछ नीचे छोड़ दिया जाता है इसके बाद का मूत्र कांच की शीशीमें जो अच्छी तरह स्वच्छ की हुई होनी चाहिए इकट्ठा करना परम आवश्यक है। भोजन करनेके २-२॥—घंटाके पश्चात का मूत्र भी परीक्षा के लिए लिया जा सकता है।

मूत्र परीक्षाके उपकरण :—

Glass test Tube ग्लास टेस्ट ट्यूब (परीक्षा करने की कांचकी शीशी या नली) स्प्रोटकी चिमनी, यूरोनोमीटर (Uronometer) Litumus paper लिटूमस पेपर, Pippet पीपेट Chemical reagents केमिकलरी एजेन्ट्स (रसायनिक पदार्थ) इत्यादि मुख्य मुख्य यन्त्र मूत्र परीक्षाके लिए परमावश्यक है।

Chlorides :—क्लोराइड्स (क्षार) :—अल्प मात्रामें मूत्र परीक्षा

करनेकी कांचकी नली या Test Tube टेस्ट ट्यूबमें लीजिए उसमें २-४ बूँद Silver-nitrate सिलवर नाइट्रेट (चांदी+शोरे की तिजाब मिश्रित पदार्थ) डालिए इससे मूत्र फट जायेगा इसका तात्पर्य्य यह कि मूत्रमें Phosphate फोस्फेट्स जारहे हैं। फिर इसी फटे हुए द्रवमें यदि Nitric acid नाइट्रिक एसिड (सोरेका तेजाब) डालिए फटापन विलीन हो जायगा, जो अधिक रूपमें था और जो अल्परूपमें रहेगा वो Chlorides क्लोराइड्स हैं। एक स्वस्थ मनुष्य एक दिनमें 12·15 gms ग्राम्स क्षार मूत्र द्वारा बाहर निकलता है।

Phosphates फोस्फेट्स

(a) Alkaline एलकेलाइन Potassium पोटासियम और Sodium phosphat सोडियम फोस्फेट।

(b) Earthy अरदी (खनिज या जमीनमें पैदा होने वाले) Calcium केलसियम और Magnesium phosphates मेगनेसियम फोष्फेट यह दो प्रकारके होते हैं एक भूमिमें उत्पन्न होने वाले दोयं Alkaline एलके लाइन (क्षारीय) होते हैं।

परीक्षा :– एक परीक्षा करनेकी कांचकी नलीमें अल्प मात्रामें मूत्र लीजिए, उसमें Caustic soda solution कोस्टिक सोडा सोल्यूशन के बूंद डालिए और स्प्रीटको चिमनीपर गरम कीजिए। मूत्रमें फटा हुआ एक पदार्थ नजर आयेगा। यह ही Calcium केलशियम और Magnesium phosphate मेगनेसियम फोस्फेट हैं।

Urea यूरिया :—एक मनुष्यके नित्य प्रति बत्तीस ग्राम्स यूरिया मूत्र द्वारा वाहर निकला करता है। यूरिया भोजनमें जो Protein प्रोटेन नामक पदार्थ रहते हैं, उनसे बनता है। दोयं Uric Acid यूरिक एसिड्से बनता है।

Urea यूरिया परीक्षा :—एक भाग Baryta Mixture बरयाटा मिक्सचर लीजिए और उसमें तीन भाग मूत्र मिलाइए। इस मिश्रण

को अच्छी प्रकारसे हिलानेसे एक फटा हुआ पदार्थ दृष्टिगोचर होगा, उसे छान लीजिए, Filter paper फिल्टर पेपर (छाननेका कागज) से। छने हुए पदार्थको वाष्प क्रियाके लिये हवामें छोड़ दीजिए। जब तक कि पदार्थ घनत्वको प्राप्त नहीं हो जाय। तत्पश्चात इसी पदार्थमें ६५ प्रतिशत शक्तिवाली संजीवनी सुरा मिश्रित कीजिए, जो उष्ण होनी चाहिये और इसके पश्चात इसे छान लीजिये और छने हुए पदार्थको ठंडे स्थानपर छोड़ देना चाहिए। कुछ समयके पश्चात इस तरलमें क्षारके-से कण नजर आयेंगे जो सुईकी तरह नौकीले होंगे इन्हें अणु-विक्षण यंत्र द्वारा परीक्षा करने पर स्पष्ट हो जायगा कि यह ही Urea यूरिया नामक पदार्थ है।

या थोड़ेसे मूत्रम Conc. Nitric Acid कोनसेन्ट्रेड नाइट्रिक एसिड मिश्रित कीजिए। कुछ क्षण पश्चात Uria Nitrate यूरिया नाइट्रेट नामक पदार्थ दिखाई दे देगा।

इन कणोंसे पहले कणोंकी समानता करनेसे आपको विश्वास हो जायगा कि यह वही Urea पदार्थ है!

Uric Acid :—यूरिक एसिड—लगभग 100 C. C. (एक तरह का माप) क्यूबिक सेन्टी मीटर मूत्र लीजिए उसमं Conc. Hydrochloric Acid कोनसेन्ट्रेड हाईड्रोक्लोरिक एसिड (नमकका तेजाब) कुछ मिश्रित कीजिए और इस मिश्रणको चौबीस घंटा एक शीशेके बर्तनमें रख दीजिए। कुछ समय व्यतीत होनेके पश्चात पैंदेमें कुछ रंगोले कण दृष्टिगोचर होंगे यह ही Uric Acid यूरिक एसिड हैं।

Ammonia Salts एमोनिया साल्ट्स :—नित्यप्रति लगभग ·७५ ग्राम्स मात्रामें मूत्र द्वारा बाहर जाता है।

अल्प मात्रामें मूत्र लीजिए। परीक्षा करनेकी काँचकी नलीमें डालिए, इसमें Caustic Soda Solution कोस्टिक सोडा सोल्यूशन

मिश्रित कीजिए। नोसादार या नरसारकी गन्ध आने लगेगी। इसे ही अमोनिया साल्ट कहते हैं।

Carbonates (कारबोनेट्स) यह निम्न प्रकारके होते हैं। Sodium (सोडियम) Magnesium (मेगनेशियम) और Ammonium (एमोनियम) और Calcium केलसियम इत्यादि प्रकारके होते हैं।

भोजनमें जो ताजा हरी शब्जी या शाक व्यवहारमें लाये जाते हैं, उनसे उपरोक्त पदार्थ पैदा होते हैं। कुछ समय तक यदि मूत्र रखा जाय तो उसमें धुआं दिखाई देगा। यह उपरोक्त पदार्थों की सूचना है।

Glucose—ग्लूकोज या शर्कराकी परीक्षा – इस परीक्षामें मूत्रमें शर्करा जाती है या नहीं, इसकी परीक्षाके विषयमें वर्णन किया जायगा।

मधुमेह व्याधिमें इसी प्रक्रिया द्वारा मालूम किया जाता है, कि मूत्रमें किस मात्रा में शर्करा जाती है।

यहां पर हम कुछ मुख्य-मुख्य एवं सरल परीक्षावोंके विषयमें दिग्दर्शन करायेंगे।

Fehling's Test —इस परीक्षामें दो लवणोंका प्रयोग किया जाता है जिसको परीक्षा करते समय मिला लिया जाता है।

Fehlings solution No 1. :—(प्रथम लवण)

३४, ६४ ग्राम नीला थोथा (Copper sulphate) के अत्यन्त बारीक चूर्णको ३०० सी० सी० अर्ध ऊष्ण परिश्रुत जल (Distilled water) में घोलना चाहिये। ठन्डा होनेपर इतना परिश्रुत जल मिलाना चाहिये कि घोलकी पूर्ण मात्रा ५०० सी० सी हो जाये।

Fehlings solution No 2. (द्वतीय लवण)

१८० ग्राम एसिड पोटासियम टारटरेटको ३०० सी० सी० परिश्रुत जलमें घोलकर छान लेना चाहिये। छानकर ७० ग्राम स्वच्छ कास्टिक

सोडा डाल दे। शीतल होनेपर इतना परिश्रुत जल मिलाना चाहिये कि घोलकी पूर्ण मात्रा ५०० सी० सी० हो जाय।

परीक्षा :—प्रथम एवं द्वितीय लवणको समान मात्रामें एक कांचकी नलीमें लेकर उसमें चौगुना जल मिलाना चाहिये। तत्पश्चात् इसको गरम करना चाहिये। गरम करनेसे इसके वर्णमें किसी प्रकार का कोई परिवर्तन दृष्टिगोचर नहीं होगा। तदोपरान्त इस उष्ण तरलमें किंचित शर्करा मिश्रित जलका घोल डालकर पुनः इसको गरम करना चाहिये। गरम करनेसे कांचकी नलिकाके ऊपरी सतह पर पीतवर्ण या भूरे रंगका एक फटा पदाथ दिखाई देगा। यह परिवर्तन शर्करा की उपस्थितिके कारण हुआ। अतः जिस रोगीके मूत्रमें शर्कराकी परीक्षा करनी हो तो शर्करा युक्त घोलके स्थान पर उष्ण दोनों लवणोंके घोलमें किंचित मूत्र मिश्रण करना चाहिये और पुनः गरमकर उपरोक्त परिवर्तन देखना चाहिये। यदि मूत्रमें शर्करा होगी तो Test Tube के ऊपरी सतह पर पीले रंगका या भूरे रंगका फटा हुआ पदार्थ दृष्टिगोचर होगा अन्यथा नहीं...।

Moor's Test (मूर्स टेस्ट):—अल्प मात्रामें शर्करा घुले हुए जलको लीजिए आर उसमें Strong Caustic soda solution (कोष्टिक सोडा सोल्यूशन स्ट्रोंग) मिश्रित कर दीजिए यदि तरलको गरम करनेसे वह काले रंगमें परिणित हो जाय अथवा निरन्तर और गहरे काले या भूरे रंगमें बदलता जाय और जैसे शर्करामें जलनेसे गन्ध आती है ऐसी ऐसी गन्ध आने लगे तो शर्कराकी उपस्थिति समझना चाहिये। इसी तरह शर्कराके जलके बदलेमें यदि मूत्र मिश्रित किया जायगा और यदि शर्करा मूत्रमें जाती होगी तो, उपरोक्त लक्षण स्पष्ट प्रगट होंगे अन्यथा नहीं।

Benedict's Test (बेनेडिक्टस टेस्ट) 5 C C. या ५ सी० सी ब्रेनेडिक्टस तरल लीजिए आर इसे परीक्षा करने की कांचकी नलीमें

डालिये इस द्रवमें ७-८ बूंद शर्कराका जल मिश्रण कीजिए फिर इस तरल को २ मिनट तक गरम कीजिए तदनन्तर इस तरल को ठंडा होने दीजिए, इस क्रियासे हवामें तमाम पदार्थ पृथक पृथक हो जायेंगे तथा इसमें लाल, पीला, या हरे वर्णका फटापन दिखाई देगा। जितनी अधिक शर्करा मूत्रमें जाती होगी उतना ही गहरा रंग रहेगा। इसी तरह मूत्रको परीक्षा की जा सकती है।

अन्य विधि :—एक परीक्षा करने की कांचको नलीमें एक इन्च मूत्र लेकर उसमें ¼ इन्च Picric acid (पिकरिक एसिड) का सघन तरल मिश्रित कर Caustic Potash Solution (काष्टिक पोटास सोल्यूशन) मिश्रित कीजिये ततपश्चात् इस तरल को चिमनी पर गरम कीजिये, यदि लाल या गहरालाल रंग दिखाई दे तब निश्चय हो मूत्रमें शर्करा वर्तमान है।

यदि अत्यन्त कम मात्रामें मूत्रमें शर्करा जाती होगी, तब इस परीक्षासे पता लगाना कठिन है।

Estimation of Sugar (शर्कराकी मात्राकी परीक्षा)

मूत्रमें शर्कराकी उपस्थितिकी परीक्षा तो उपरोक्त प्रकारसे ज्ञात हो सकती है परन्तु कितने प्रतिशत मात्रामें शर्करा मूत्रमें आ रही इसकी परीक्षा भी अत्यावश्यक है। परीक्षा :—सह परीक्षा भी Fehling's Solution No. 1 & 2 की सहायतासे की जाती है। इस परीक्षा का मन्तव्य यह है कि जब नीला थोथा (Copper Sulbhate) का घोल Caustic Alkalines के साथ मिश्रित किया जाता है तो उससे एक पदार्थ तैयार होता है जिसको Cuprous Hydrate कहते है। यह पदार्थ भी परिवर्तनोपरान्त Copper Oxide में परिवर्तित हो जाता है। इस कापर Oxide को यदि शर्कराके साथ गरम किया जायगा तो Red Precipitate (रक्तावशिष्ट) में परिणित हो जायगा यही शर्करा की उपस्थिति का सूचक है।

उपयोग :—एक चिनी मिट्टीके पात्रमें ५ सी० सी० प्रत्येक द्रावण (Fehling's Solution No. 1 & 2) लेना चाहिये। इसमें ५० सी० सी० जल मिला देना चाहिये। तदोपरान्त Burette (द्रव मापक नलिका) में जो अच्छी प्रकार साफ कर लिया गया हो मूत्रसे युक्तकर Burette Stand पर लगा देना चाहिये। यदि मूत्रमें शर्करा का अधिक अनुमान हो तो मूत्रमें थोड़ा जल देकर हलका कर लेना चाहिये। इस Burette Stand (द्रव मापक नलिका सम्भारक) के नोचे तिपाई पर रखकर गरम करना चाहिये। जब द्रावण उबलने लगे तो Burette (द्रव मापक नलिका) से बूँद बूँद कर मूत्र डाले। द्रावण को काँचकी एक शलाकासे सावधानीसे हिलाते रहना चाहिये जिससे मूत्र इस घोलमें अच्छी तरह से मिल जाये। इस प्रकार मूत्र को बूँद २ कर उस समय तक मिलाते रहना चाहिये जबतक कि नीले द्रावण का वर्ण श्वेत न हो जाये। जब घोलका वर्ण बिल्कुल श्वेत हो जाय, बोच बीचमें तरल की बूँद Acetic acid & potassium Ferrocyanide में भिगोये हुए Litmus paper पर डालकर देखते रहना चाहिये यदि भूरा रंग हो तो समझना चाहिये कि अभी Copper परिष्कृत नहीं हुआ है और विशेष मूत्र डालकर पुनः क्रिया प्रारम्भ कर देनी चाहिये। जब घोलका वर्ण श्वेत हो जाय तो Burette Reading पढ़ लेना चाहिये इस द्रवमापक नलिका (Burette) में अंक सहित चिन्ह बने रहते हैं जिसमें यह ज्ञात हो जाता है कि इस परीक्षामें कितना मूत्र प्रयोगमें आया जिसके आधार पर ही प्रतिशत की गणनाकी जाती है।

• Calculation of percentage प्रतिशत गणना—

CALCULATION कलकुलेशन (गणना)

मान लीजिये मूत्रमें १० गुना जल मिलाया हुआ है, उसमेंसे ५ सी०सी० मूत्र, १० सो० सी० Fehling's solution (फेहलिंगसोल्यूशन) को हल करनेमें प्रयोगमें आया।

लेकिन १० सी० सी० Fehling's solution (फेहलिंग्स सोल्यूशन) .०५ शर्करा द्वारा reduce (रिड्यूश) कर दिया जाता है। परन्तु मूत्र १० गुणा जल मिश्रित किया हुआ है, इसलिये ५ सी० सी० मूल मूत्रमें .०५ शर्करा हुई ५ सी० सी० : १०० सी० सी० :: .०५ : इसलिये १०० सी० सी० में शर्कराकी मात्रा निम्न हुई।

$\frac{१००\times.०५}{५}$ = १० ग्राम या १० प्रतिशत शर्करा इस मात्राको ४.३.७५ से गुणा करनेसे हमें ग्राम्स प्रति औंसका पता लग जायेगा। यदि मूत्रमें Albumin भी विद्यमान रहे तब इसमें शर्कराकी मात्रा गणना करनेके पहले यदि Acetic acid (एसेटिक एसिड) डालकर गरम करना चाहिये, तब मात्राका उचित ज्ञान होगा, इसी तरहसे urea और uric acid (यूरिक एसिड) की मात्राका ज्ञान हो सकता हैं।

Albumin (एलब्यूमन)—

Buiret test (ब्यूरेट टेस्ट —२-३ सी० सी० अंडके अलब्यूमन सोल्यूशन (Egg Albumin Solution) बराबरकी मात्रामें Conc. Caustic Soda (कोनसेन्ट्रेटेड कास्टिक सोडा सोल्यूशन) मिश्रित कर परीक्षा करनेकी कांचकी नलीको हिलाते रहिये और तत्पश्चात् उसमें किंचित शक्ति वाला Dilute Copper Sulphate Solution (डाइल्यूट कोपर सलफेट सोल्यूशन नीले थोथेका जल) १-२ बूंद मात्रामें मिश्रित कीजिए। Purple violet (परपल वायोलेट) अर्थात् बेंगनी शब्ज रंगकी या Pinkish violet (पिन्किश वायोलेट) मोतिया शब्ज रंगकी झलक देता हुआ पदार्थ यदि दिखाई देवे तो समझना चाहिये कि एल्ब्यूमन वर्तमान है अन्यथा नहीं। यहां पर (Albumin Solution (एल्ब्यूमन सोल्यूशन) अंडेकी सफेदीमें जल मिलाया हुआ मिश्रण था।

Lieberman's Reaction (लीबरमैनस रिएक्शन)—यह अंडेके

Albumin (एलल्ब्यूमन) में जल बिना मिलाये ही किया जाता है। १० बूंद अंडेकी सफेदी एक परीक्षा करनेकी कांचको नलीमें लीजिए, उसमें ५ सी० सी० Hydrochloric Acid Conc, (हाईड्रोक्लोरिक एसिड कोनसेन्ट्रेटेड) मिश्रित कीजिये, कुछ समयके लिये स्प्रीट लैम्प पर गरम कीजिए Violet (वायोलेट) या बैंगनी रंग यदि दृष्टिगोचर पड़े तब यह जानना चाहिए कि यह ही एल्ब्यूमन है।

एल्ब्यूमन परीक्षाके लिए मूत्र लेनेके पहले इसे छान लेना चाहिए, यदि मूत्रमें Acid (एसिड) कम हो, तो थोड़ा मिश्रिण कर देना चाहिए।

अन्य परीक्षा :—

एक परीक्षा करनेकी कांचकी नलीमें ५ सी० सी० मूत्र लेकर उसमें ५-१० बूंद Acetic Acid (एसेटिक एसिड) मिश्रित कीजिए और इसके पश्चात् Pot Ferrocyanide (पोटासियम फेरोसिमनाइड) बूंद बूंद करके मिश्रित कीजिए, मूत्र फट जायगा—यह अत्यन्त सूक्ष्म परीक्षा है।

Boiling test :—(बोयलिङ्ग टेस्ट) एक परीक्षा करनेकी कांचकी नलीको ¾ तक मूत्रसे पूरित कीजिए, ऊपरसे द्रव हिस्सेको बहुत सूक्ष्म रूपसे गरम कीजिए नलीको पेंदेमें से पकड़ियेगा। एक Turbidity (टरबिडिटी) धुंधलापन दिखाई देगा, इसका तात्पर्य यह कि एल्ब्यूमन है या फोस्फेट्स है, इस तरलमें ५-७ बूंद Acid Acetic (एसिड एसेट्रिक) मिश्रित कीजिए, यदि Phosphates (फोस्फेट्स) हुए तो यह Turbidity (धुंधलापन) नष्ट हो जायेगा और गहरा पड़ जायगा। यदि (एल्ब्यूमन) होगा तो नष्ट नहीं होगा और गहरा पड़ जायेगा। यदि मूत्रमें Albumin (एल्ब्यूमन) हुआ तब मूत्र गरम करने पर ७५° पर फट जायेगा, यदि Phosphates (फोस्फेट्स) हुए तब

Boling Point (बोयलिङ्ग पोइन्ट) पर फटेगा। यदि फोस्फेट्स अधिक मात्रामें जाते हुए मालूम दें तब इसका यह तात्पर्य है कि कोई हड्डियोंकी बीमारी है—या शोष रोग है या ज्ञानेन्द्रियां नष्ट हो रही है या वृक्ककी बीमारीका सूचनार्थक हेतु हैं।

Bile test (बायल टेस्ट)—अल्प मात्रामें एक परीक्षा करनेकी कांच की नलीमें मूत्र लीजिए इसमें Tr. Iodine(टि० आयोडीन) एक बगल से डालिए यदि Emerald greenish Ring (इमेल्ड ग्रीनिश रिङ्ग) हरे पन्नेके रंगकी चक्राकार चक्री दिखाई पड़े तो मूत्रमें बाइल (Bile) है। यह समझना चाहिये, बायल जाता है।

Blood test '(रक्त परीक्षा)

ब्लड - एक परीक्षा करनेकी कांचकी नलीमें अल्प मात्रामें मूत्र लीजिए उसमें Strong Caustic soda solution (स्ट्रोङ्ग काष्टिक सोडा सोल्यूशन) या Potash (पोटाश) मिश्रित कीजिए यदि हरा बोतली रंग दिखाई दे इसका तात्पर्य्य यह कि मूत्रमें रक्त जा रहा है।

Pus (पूय) !—अल्प मात्रामें परीक्षा करनेकी कांचकी नलीमें मूत्र लीजिए इसमें Caustic Potash (काष्टिक पोटाश) की अल्प मात्रामें बूंदे मिश्रित कीजिए यदि आपको Ropy gelatanous precipitate रोपी जिलेटेन्सप्रीसिपिटेट (रस्सेके रंगका फटापन) दिखाई देगा इसमें Acetic Acid (एसेटिक एसिड) मिश्रित कीजिए यदि यह फटापन बिलीन नहीं हो तब समझना चाहिए मूत्रमें Pus (पस) या मवाद या पूय जाता है।

Fat (वसा) ! - यदि मूत्रमें बसाके जानेकी शंका हो तब मूत्रमें Ether (ईथर) मिश्रण कीजिए बसा विलीन हो जायेगी मूत्र थोड़ा गंदा सा मालूम देगा। ईथरको वाष्प क्रिया द्वारा उड़जाने दीजिए फिर मूत्रमें छिछडेसे दिखाई देंगे इसका तात्पर्य यह की बसा मूत्रमें जाती है।

Microscopic Examination (माइक्रोस्कोपिक एक्जामिनेशन) (अणु-

वीक्षण यन्त्र द्वारा परीक्षा । अणुवीक्षण यन्त्र द्वारा परीक्षा जाननेसे पहले हमें यह परम आवश्यक हैं कि प्रथम इस यन्त्रका ज्ञान कर लिया जाय। इस यन्त्रकी यह विशेषता है कि जो भी पदार्थ इसके द्वारा देखा जायगा सूक्ष्मसे सूक्ष्म मात्रा वाली बृहत आकारमें दिखाई देगा—यह यन्त्र लोहेका एवं कहीं-कहीं पर पीतल भी लगा हुआ होता है। ऊपरके हिस्सेमें एक दुरबीन लगी रहती है जिसमेंसे होकर परीक्षणीय द्रव्य देखा जाता है। एक तरफ एक Screw (एक तरहका पेच) लगा रहता है जिससे दुर्बीन ऊपर या नीचे घूमता है इसके नीचेके हिस्सेमें एक कुछ हल्की ताकतवाला, एक बृहत् ताकत वाला Lense लेन्स लगा रहता है। नीचेके हिस्सेमें एक ऐसी जगह बनी रहती है जिसमें एक आर-पार छेद होता है। इसके ऊपर परीक्षणीय पदार्थ एक कांचकी टुकढ़ी (Giass slide) ग्लास स्लाइड पर रखा जाता है।

इस छेदमेंसे रोशनी आर-पार होती रहती है जिससे देखनेमें वहुत सरलता रहती है।

कांचकी टुकड़ो पर पदार्थ रखकर Screw (स्क्रू) यानी पेचको नीचे ऊपर घुमाया जाता है तब तक कि पदार्थ साफ साफ दिखाई न देने लगे। साक्षात्‌में जब आप लोग इस यन्त्रको देखेंगे सरलतासे ध्यानमें आ जायगा और आप इससे परिचित हो जायेंगे।

इस यन्त्र द्वारा परीक्षा करनेके पहले मूत्र Centrifugalsing Machine (सेन्ट्रीफ्यूजेलाइजिंग मशीन) में केन्द्रित कर लिया जाता है जिसे Centrifugalised (सेन्ट्रीफ्यूजेलाइजड) कहते हैं। इसके पश्चात् ऊपरकी सतहका मूत्र फेंक दिया जाता है और तलीमें जो अवशेष रहता है उसमें से Pippet (पीपेट) द्वारा १-२ बूंद लेकर और इसकी परीक्षा की जाती है। उसको काचकी टुकड़ी पर रख कर जिस पर एक Cover glass कवर ग्लास (कांचका ढकना) से ढांक दिया जाता है। अनुवीक्षण यन्त्र द्वारा निम्नांकित परीक्षायें की जाती हैं।

Casts (कास्टस):—अणुवीक्षण यंत्र द्वारा देखनेसे इसकी परीक्षा की जाती है। यह आकारमें लम्बे २ दिखाई देते हैं। यह जब बृक्कमें मूत्रका वेग अत्याधिक होता है, तब बाहर आते हैं। इनका मूत्रमें आना बृक्ककी कोई बीमारीकी सूचना देना है। यदि इनके साथमें एल्ब्यूमन भी रहे तो बिमारीका प्रबल वेग है। ऐसा समझना चाहिये।

Hyaline casts (हेलाइन कास्टस):—जितनी भी प्रकारके बृकों के रोग होते हैं उन सबमें यह पाये जाते हैं।

Intestinal Nephrites (इनटेस टाइनल नेफ्राइटिस) में रोगके प्रारम्भ और अन्तमें भी पाये जायेंगे। इनकी रचना बहुत सुन्दर एवं समान होती है। इनका रङ्ग बहुत हल्का होता है। इनपर बहुतसे और पदार्थ एकत्र रहते हैं जैसे Fat Globules (फैट ग्लोब्यूलस) (बसाके कण) या Epithelial cells (एपीथेलियल सेलस) याने त्वचामें छोटे २ टुकड़े।

R.B.C (आर० वी० सी०):— रक्त जीवाणु :—इन्हें अणुवीक्षण यन्त्र द्वारा देखा जा सकता है, एवं इनकी बनावट देखकर सरलता से पहचाना जा सकता है।

विभिन्न कास्ट्स:— कई प्रकार के (Casts) कास्ट्स होते हैं जिनमें (Granular Casts) ग्रेन्यूलर कास्टस (Blood Casts) ब्लड कास्ट्स, (Fatty Casts) फैटी कास्ट्स, (Epethelial Casts) एपि थेलियल कास्ट्स, (Waxy Casts) वेक्षी कास्ट्स मुख्य-मुख्य हैं। इन कास्ट्स के द्वारा बृकों की बिमारी का पतालग सकता है।

कास्ट्स का पता लगाना मुख्य अभ्यास पर निर्भर करता है।

Epethelia:(एपीथेलिया) यह प्रायः स्वस्थ मनुष्य के मूत्रमें भी पाये जाते हैं। साधारण तया यदि मूत्रमें साधारण मात्रा में यह

जाते हैं तब कोई सोचनीय विषय नहीं है। यदि अधिक मात्रा में जाते हुए प्रतीत हों तब इसका यह तात्पर्य है कि मूत्र मार्ग की कोई झिल्ली छिली हुई है। अधिकतर (Small Round) स्माल राउन्ड (Spindle form) स्पेन्डल फोर्म, आकृतिके एपीथेलिया मूत्र में पाये जाते हैं।

Puscells (पूय कण) अणुवीक्षण यन्त्र द्वारा पूय या मवाद का मालूम करना मूत्र की रसायनिक क्रियाके ऊपर निर्भर रहता है। अम्ल मूत्र में यह गोलाकार बिना रङ्ग वाले दिखाई देते हैं। इनपर (Granular Protoplasm) ग्रेन्यूलर प्रोटोप्लाज्म एकत्रित रहता है। इन जीवाणुवोंमें एक या दो केन्द्र रहते हैं। यह स्पष्ट तया तब ही दिखाई देते हैं जब कि (Acetic Acid) एसेटिक एसिड या साधारण जल द्वारा इनपर रसायनिक क्रिया की जाती है।

Alkaline (एल कलाइन) मूत्र में Puscells (पूय कण) फूले हुए साफ साफ दिखाई देते हैं। यदि इनका नष्ट होना प्रारम्भ हो जाता है तब इनकी बाह्य परिक्रया नष्ट होकर इनके थप्पे के थप्पे दिखाई देगें।

यह (Puscells) पूय कण प्राय: मूत्र की व्याधियोंमें पाये जाते हैं जैसे :—

औपसर्गिक मेह (Gonorrhoea) गोनोरिया, श्वेत प्रदर (Leucorrhea) ल्यूकोरिया, या गुर्दके घावों (Kidney Abscess) में पाये जाते हैं।

Blood Corpuscles (ब्लड कारप सल्स) यह मूत्रकी अनेकानेक बीमारियों में पाये जाते हैं। यह (Biconcave) बाई कोन केव (अर्धनतोदर) अवस्था में मिलेंगे। यह रङ्ग रहित होते हैं। यह Heamorrhage of the kidney (वृक्कोंके रक्त श्रावमें) पाये जाते हैं।

(Spermatozoa) स्परमटोजुवा (शुक्राणु) यह गोलाकार अंडे की

शक्ल के होते हैं। इनके एक लम्बी पूंछ रहती है जो बहुत बारीक या पतली होती है। यह मूत्र या जनेन्द्रियों (Genital organs) की बीमारियों में पाये जाते हैं और मुख्यतया (Typhoid Fever) टाइ फाइड फीवर या सन्निपातिक ज्वरमें उपलब्ध होते है।

Micro-organisms (माइक्रो आरगनिज्म)—यह कुछ तो चलने वाले और कुछ नहीं चलने वालेहोते हैं। जिसे Motile और non-motile भी कहते हैं। यदि मधुमेह वाले रोगी का मूत्र हुआ तब इस में Yeasts (इस्ट्स) और Moulds (मोल्डस) भी मिलेंगे।

यह अधिकतया B.Coli (बी० कोलाई), Tubercule Baccili (ट्यूबरक्ल बेसीलाई), Gonococci (गोनो कोकाई), Typhoid (टाइ फोइड) इत्यादि बीमारियोंमें मिलेंगे।

Filaria (फाइ लेरिया) इत्यादि बिमारियों के कीटाणुवों के अंडे भी मूत्र में पाये जाते हैं।

Other Products (अन्य पदार्थ) दूसरे अन्यान्य पदार्थ जैसे रेशम के धागे के टुकड़े या बाल के टुकड़े या अन्न के (Particle) पारटिकल (छोटे कण) भो मूत्र में उपलब्ध हो सकते हैं, इसलिए अणुवीक्षण यन्त्र के द्वारा परीक्षा करने के पहले उपरोक्त चीजें तो नही है इसका मालुम करना परमा वश्यक है।

Calcium Oxalate (केलसियम ओक्जलेट) यह दो प्रकार के होते हैं। एक घंटी की शक्ल का दूसरा अठकोर्ण आकार के।

Octahedral Type वाले कण मूत्र में पाये जाते हैं। स्वस्थ मनुष्य के मूत्र में भी Calcium Oxalate पाया जाता है, परन्तु यदि अत्यधिक मात्रा में यदि इनकी संख्या मिले तब इसका तात्पर्य यह कि अजीर्ण का विशेष दोष है या फुफ्फुस (Lungs), मधुमेह का दोष है। यदि अत्याधिक मात्रा में Oxalates मूत्र में पाये जांय तब यह स्पष्ट समझना चाहिये कि पथरी का रोग है।

Urates (यूरेट्स) यदि पीतवर्ण वाले या रक्त वर्ण वाले कण या भूरे वर्ण वाले कांटे दार कणों से ढके हुए दिखाई देंगे तब यह समझना चाहिये कि Urates मूत्रमें जा रहे हैं।

Cystine or Cholesterol Hyppuric Acid (सिसटाइन या कोलेसट्रल हाइप्यूरिक एसिड) यदि यह मूत्रमें बहुत अल्प मात्रामें पाये जाते हैं तो समझना चाहिये कि Typhoid (सन्निपातिक ज्वर) Small Pox (मसूरिका) है और यकृत व्याधियोंमें पाले जाय तो समझना चाहिये कि रोगका अत्यन्त उग्र रूप है।

मल परीक्षा

मल परीक्षा द्वारा कई रोगोंकी जैसे प्रवाहिका, अतिसार, संग्रहणी आदि रोगोंकी पहिचान बहुत आसानीसे की जाती है। इतना ही नहीं, अनेक रोगोंके साध्य, कष्ट साध्य, अथवा असाध्यताका ज्ञान भी इस परिक्षासे हो जाता है। मल परीक्षामें प्रथम वातादि दोषोंका आश्रय लेकर परीक्षा करनी चाहिये। वात प्रकोपके कारण मल सूखा, झागदार, कालेरंगका होता है। पित्त दोषसे हरा, पीला, दुर्गन्ध युक्त, पतला गरम होता है। कफ दोषसे सफेद रंगका चिकना, गोला, बधा हुआ होता है। वात पित्त दोषसे पीला, काला, तथा गांठ मिला हुआ होता है। वात कफके दोषसे मल भीना काला, तथा छिछड़ो युक्त होता है। पित्त कफ दोषसे मल पीला, सफेद होता है। त्रि-दोषसे मल सफेद या काला, पीला, पतला गांठदार होता है। सन्निपात रोगीका मल अति दुर्गन्ध युक्त, मयूर चंद्रिका के समान रंग वाला हो;

तो रोगको आसध्य समझना चाहिये। वातज्वर रोगीका मल शुष्क काला रहता है। जलोदर के रोगीका मल अत्यन्त दुर्गन्ध युक्त, श्वेत होता है। असाध्य रोगीका मल भयंकर दुर्गन्ध युक्त, लाल, कुछ श्वेत, मांस जैसा मांस धोवनके समान हो जाता है। इस प्रकार भिन्न भिन्न रोगोंमें मल पतला, कठिन अनेक तरहके रंग वाला होता है।

पतला मल—अतिसार, संग्रहणी, आदि रोगोंमें मल पतला हो जाता है। उसमें खाद्य द्रव्योंके टुकड़े के टुकड़े यदि दिखलाई दं, तो समझना चाहिये कि पाचन क्रियाका दोष है। आंतोमें पित्त विकृतिसे मल नरम आता है। हैजेमें मल चावल धोया जलके समान सफेद रंग का जल जैसा पतला होता है तथा तीव्र प्रावाहिका और तीव्र आन्त्रिक दाहमें भी मल सफेद पतला हो जाता है।

आमातिसारमें आम सहित नाना रंग वाला, पीड़ा युक्त, बार-बार में थोड़ा करके मल उतरता है। संग्रणीमें मल कच्चा दुर्गन्ध युक्त जाता है, तथा फूला हुआ आहारकी अपेक्षा अधिक परिमाणमें होता है। पित्तावरोध जनित कामलामें, श्वेतदर्गन्ध युक्त, तिलपिष्टीके समान होता है।

गाढ़ा मल—स्वस्थ मनुष्यका मल बंधा हुआ, नर्म पीला होता है, तथा पाचन यन्त्रके ठीक रहनेपर गुद द्वार पर चिपका हुआ नहीं रहता। कोष्ठवद्धतामें मल बहुत प्रवाहण करनेसे उतरता है। बवासीरके रोगीका मल गाढ़ा होता है, इसलिये प्रवाहण क्रिया करनेसे रक्तश्राव प्रारम्भ होजाता है। वातोदरीका मल कठिन सख्त होता है।

मल परीक्षा विधि—शास्त्रमें ३ प्रकारकी बतलाई है। दर्शन परीक्षा, रसायनिक परीक्षा, यन्त्र परीक्षा। दर्शन परीक्षासे रङ्ग, घन, द्रव, मात्रा, गन्धका ज्ञान होता है। रसायनिक परीक्षा द्वारा पक्वापक्व

आहार, आम, कफ, पित्ताश्मरी, कृमी, रक्त, पूय, मांस, आंतो के टुकड़ों का ज्ञान होता है। अणुवीक्षण यन्त्र द्वारा शूक्ष्म कृमियों का निर्णय किया जाता है।

मल परीक्षाके लिये स्वच्छ वर्तन में किसी भी समयका मल मूत्रोत्सर्गके बादका लेना चाहिये और वह पतला होना चाहिये। यदि मल पतला नहीं होता हो तो रातको सोते समय रोगीको हल्का सा विरेचन दे देना चाहिये तथा परीक्षाके समय मलका सचिक्कण आमयुक्त चमकने वाला भागही काममें आता है। इसमें से १ शी० शी० भाग ही परीक्षाके समय पर्याप्त है। साधारणतया परीक्षाके मल लेनेकी विधि यह है कि स्टरलाइजडथ्रोट स्वेव (Sterliged Throat-Swab) विशुद्ध रूईके फोहे को मल में भिगोकर या मल में लपेटकर एक टेस्टट्यूब (Test Tube) में भर लीजिये या कांचके वर्तन में स्वच्छ चम्मच द्वारा रखदिया जाता है। (Bacillary dysentry) वे सलरी डिसेन्टरीके कीटाणुओंकी परीक्षाके लिये भी मल रेक्टल-स्वेव (Rectal Swab) द्वारा लिया जाता है। सीधा गुद द्वारसे लिया हुवा मल परीक्षामें उपयोगी होता है।

Culture (कलचर) सेवर्धन क्रियाके लिये पर्य्युषित यानं मलोत्सर्ग के ५ घन्टेके बादका मल काममें आता है। अतः संग्रहण्यादि बीमारियों कीटाणुओंके ज्ञानके लिये यही उपरोक्त विधिसे लिया हुवा मल उपयोगमें आता है। मल परीक्षा विधि :—उपरोक्त विधिसे लिये हुये मल में २ हिस्सा ३० . ' मल neutral Glycerol (न्यूट्रल ग्लिसरोल)

(Sodium chloride) सोडियम क्लोराइड या साधारण नमकका जल इसमें अच्छी तरहसे मिश्रित कर देना चाहिये। ग्लिसरीन मिलानेसे अन्य किटाणुओंसे ब्रेक्टीरिया कोलाई (Be colli) का बचाव हो जाता है। प्रयोगशालामें मलके फिल्मस (Films) iZiehl Neelsens (झील नेलशन) के कथनानुसार रङ्गे जा सकते है। इनमें जब यक्ष्माके कीटाणुओंका संदेह होता है तभी रंगा जाता

है। यदि इस परीक्षामें एसिड फास्ट बेसिलाई (Acid fastbaccili) के कीटाणु पाये जायं तो उन्हें सावधानी से देखना चाहिये क्योंकि बिना यक्ष्माके भी ये कीटाणु मल में पाये जाते हैं। यक्ष्माके कीटाणुओं का पता लगानेका सुगमसे सुगम उपाय यही है कि अन्यान्य कीटाणुओंको प्रथम रसायनिक प्रयोग के द्वारा नष्ट कर देना चाहिये, परन्तु इस क्रियासे यक्ष्माके कीटाणु नष्ट न हो जाय, इसका पूरा बचाव करना चाहिये।

यह उपरोक्त विधि वैद्य बन्धुओं की जानकारीके लिये जो प्रयोग शालामें की जाती है उसका सूक्ष्म रूपसे वर्णन लिख दिया है। इससे आगे कुछ और विधि भी लिखी जायंगी।

मुख्यतया पेटकी बीमारीयोंमें मलकी परीक्षा परमावश्यक है। परीक्षा द्वारा ही उदरस्थ बीमारीयोंका निदान अच्छी तरहसे होता है। कतिपय चिकित्सकोंका मत है कि परीक्षाके समय प्रथम मलके प्राकृतिक रूप, रंग, गन्ध, पतला है या गाढा, परिमाणमें कितना है, और इसकी रसायनिक क्रिया क्या है, इन सब बातोंका निर्णय करना चाहिए। मलमें अपक्व पदार्थ क्या क्या है; जैसे आंव (Gallstones) गाल स्टोन्स, किस प्रकारके कीटाणु हैं, और रक्त भी जाता है या नहीं ? इसके बाद अणुवीक्षण यन्त्र द्वारा परीक्षा करनी चाहिए। वैद्यको मलके रंग, रूपके विषयमें रोगीके कथनका विश्वास नहीं करना चाहिए। रोगीका मल मंगवाकर स्वयं अपने द्वारा ही परीक्षा करनी चाहिए। वर्तमान समयमें मल परीक्षा पर परियाप्त अन्वेषण किया गया है। जिनमें मुख्य वैज्ञानिक Haratar (हरटर) Schmidt (स्केमडिट) आदि प्रसिद्ध हैं।

प्रायः स्वस्थ मनुष्यके मलका रंग Dark Brown (डार्क ब्राउन,) या गहरा भूरा रंगका होता है। मलके रंगको देखकर ही पता लगता है कि पाचन क्रियाके लिये आंतोको पित उचित मात्रामें

मिलता है या नहीं। अतिसारकी प्रारम्भवस्थामें प्रायः मलका रंग काला होता है क्योंकि उस समय इसमें अधिक मात्रामें पित उपस्थित रहता है, तत्पश्चात् पतले टट्टी ज्यों ज्यों होते जाते हैं, तब रंग भी हल्का होता जाता है। काला रंग :—जब रोगी लौह निर्मित, या Bismuth (बिसमित युक्त) औषधिका सेवन करता है तब मलका रंग काला हो जाता है।

विसूचिका हैजा, Cholera (कोलेरा) वाले बीमारको Rice-water चावलोंके जलके रङ्गके समान टट्टी आती हैं। इस बीमारीमें Milky Stool (मिल्की स्टूल) दूधिया रंगकी टट्टी भी लग सकती हैं। ऐसे रंगका मल ग्रहणीमें भी पाया जाता है।

(आमाशयान्त्र शोथ) Entero-colitis (एनटेरो कोलायटिस) में भी ऐसे ही टट्टी लगते हैं, परन्तु रोगीकी अवस्था देखकर रोग भिन्नताका पता लग जाता है।

बच्चोंके दाँत आनेकी अवस्थामें पीतवर्णकी पतली टट्टी हुआ करती हैं। मोती झरा (Typhoid) टाइफोडमें मलका रंग (Pea Soup) पी सूप (मटरके झोलके सदृश) के सदृश होता है। सर्दी या जुकाम लगनेसे बच्चोंके हरे २ फटे-फटे रंगकी टट्टी लगा करती है।

साधारण तया स्वस्थ मनुष्य के बँधा हुआ मल आया करता है। यह गोल आँटे दार हुआ करता है। बँधा हुआ परिपक्व मल होनेके कारण इसके चारों तरफ परिपक्व आमके तन्तु दिखाई दिया करते हैं।

Odour (ओडर) मल गन्ध :—अजीर्ण वाले रोगीके मलमें खट्टी गंध आया करती है। जिस रोगीको कब्ज कोष्ठ होता है उसके मलमें दुर्गन्ध आया करती है। परिपक्व मलमें कोई दुर्गन्ध नहीं होती। श्योरेकी गंध मलमें बहुत अल्प मात्रामें पाई जाती है।

यदि पाई भी जावे तब इसका यह ही तात्पर्य है, कि मूत्रका उचित ढङ्गसे परिपाक नहीं होता।

आंव की सर्वोत्तम एवं अति सरल प्रक्रिया मल में जानने के लिए यह है कि मल में जल मिश्रित करना जरूरी है। जल मिश्रित करने से आंव की झिलियां जल की सतह के ऊपर के भाग में तैरती हुइ मिलेंगी। यह झिलिया प्रथक करके अणु वीक्षण यन्त्र द्वारा परीक्षा कर लेनी चाहिए। साधारण मात्रा मे आंव कोई मुख्य बीमारी की सूचना नहीं देती। यह प्राय कब्ज वाले मनुष्य के पेट में पैदा हो जाया करती है। यदि अत्यधिक मात्रा में पाई जायं तब इसका यही तात्पर्य है कि पेट काम नहीं करता और साथ ही साथ यकृत भी काम ठीक नहीं करता और दुर्बल हो गया है।

जब मल में रक्त पाया जाय तब इन कारणों का पता लगाना परम आवश्यक है कि कहीं रक्तार्श तो नहीं है। यदि अश में रक्त नहीं आता हो तो रक्त परीक्षा होनी चाहिए।

साधारणतया मल में जल डालने से यदि जल लाल वर्ण का होजाय तब विश्वास कीजिए मल में रक्त जाता है। मल में रक्त जाने का तात्पर्य्य यह ही है कि अन्त्रों में कहीं (बहिर्गुद द्वार) पर व्रण हो गए हैं। यह बाहिर गुदा द्वार में हो सकते है अथवा Colon कोलन (वृहत् आन्त्रीय भाग) में भी हो सकते हैं।

पूय (PUS) पसः—मलमें यदि पूय या मवाद जाती हो तब यह इस बातकी सूचना देती हैं कि बहिर्गुद द्वारमें या Colon (कोलन) (वृहत आन्त्रीय भाग) में व्रण हैं या (औप दंशिक दोष (Syphlitic शिफलिटिक के दोषसे पेटमें घाव हैं या यक्ष्माके दोष से भी पेटमें व्रण होने सम्भव है इस कारण मे भी मवाद पैदा हो सकती है।

मलमें प्रायः Worms (वोर्मस) या चुर्व जिसे क्रिमी कहते हैं पड

जाया करते हैं। इसकी परीक्षा करने की सरल विधि यह है कि मल में पुनः-पुनः जल डाले और इस जलको प्रथक करते रहना चाहिए जब तक कि मलका समस्त रंग नष्ट हो जाय। बर्तनके पैंदमें यह कृमि मिलेंगी।

आणु वीक्षण यन्त्र द्वारा मुख्यतया परोक्षा इन्ही कीटाणुवोंके लिए की जाती है। जब ग्रहणीके रोगीके मलकी परीक्षा की जाती है तब मुख्यतया Ova of the Parasites ओवा ओफ दी पैरा साइ-टस (कीटाणुओं के अण्डे) परीक्षा की जाती है। इसके लिए मल पतला होना परम आवश्यक है यदि पतला नहीं होवे तब इसमें Saline Solution normal सैलाइन सोल्यूशन नारमल (सधारण नमक का तरल) मिश्रित करके इसे द्रवित करलेना चाहिए। ग्रहणोमें गरम मलकी परीक्षा करने का आदेश हैं। अणुवीक्षण यन्त्रमें ग्रह-णीके मल में अपक्क अन्न या अन्यान्य खाये हुए पदार्थोंके कण दिखाई देंगे।

मुख्यतया Starch granules (स्टार्च ग्रेन्यूल्स, आटेके कण) दिखाई देंगे। बसाके (वसातन्तु) जीवाणुवोंके हिस्से Fat cel's (फैट सेल्स) Oxalate of lime ओकज लेट ओफ लाइम (चूनेके क्षार) के कण अणुवीक्षण यन्त्रमें दिखाई देंगे। कीटाणुवोंमें Bacillus coli communis (वेसिलस कोलाइ कोम्युनिश) और अन्यान्य प्रकारके कीटाणु Blood Corpuscles ब्लड कारपसल्स (रक्त कण) भी इस परीक्षामें दिखाई देंगे। Epethelial cells (एपि-थेलियल सेल्स) अल्प-अल्प मात्रामें पाये जायंगे।

Ameaba अमीबा !—यह एक प्रकार का विशेष कीटाणु होता है जो—

Ameabic Dysentry (अमीबिक अतिसार) में मलमें पाया जाता है। अणुवीक्षण यन्त्र द्वारा देखनेसे इसका पता लगता है।

यह प्रायः आंवके छिछड़ोंकी परीक्षा करने पर दिखाई दिया करते हैं। इनकी शक्ल अंडाकार Cells (सेल्स) जीवाणुवोंकी होती है। यह समान रूपमें अंडाकार नहीं होते यह Warm Slide (वार्म स्लाइड (गर्म कांचकी टुकड़ी पर) Ameaboid movcments (एमीबोइड मुभमेन्ट्स) दिखाता रहता है। मुख्य तया जल परीक्षा जो पहले हम लिख चुके हैं इनके Ova (ओवा) (अंडो) की एवं Entozoa (एनटोजुआ) जो भिन्न-भिन्न प्रकारके होते हैं इनकी जानकारी की जाती है।

जब अणुवीक्षण यन्त्र द्वारा परीक्षाकी जाती है अपचे हुए पदार्थोंके कण यदि अधिक मात्रामें मिलें तब इसका यह भी तात्पर्य्य है कि क्षुद्र आंतकी बीमारी है या (पक्वाशय) Pancreas (पेन्क्रीयाज) की बीमारी है।

यदि अधिक मात्रामें चर्बी मलमें जाती हुई मालूम दे तब इसका यह ही तात्पर्य्य है कि पाचन क्रियाके लिए अंत्रोंको पित्त उचित मात्रामें नहीं उपलब्ध होता और अन्यान्य कीटाणुओंके वतमान रहनेके कारण Typhoid (टाइफोइड) तथा (विसूचिका) (Cholera कोलेरा) इत्यादिके कीटाणुओंका मल परीक्षा द्वारा मालूम करना सरल नहीं है। B.Coli बी० कोलाई नामक कीटाणु अपने निवास स्थान Colon कोलन (बृहत् आंत्रीयभाग) में रहते हैं। वैद्य बन्धुओंको परिचित करनेके लिये उपरोक्त रीति लिखी गई है। जैसे जैसे अनुभव बढ़ेगा इससे विशेष परिचय उपलब्ध होना रहेगा।

———

Examination of Sputum

(थूक परीक्षा)

थूक परीक्षा करते समय सर्व प्रथम थूकके निम्नांकित प्राकृतिक स्वरुप देखना परमावश्यक हैं।

(१) थूक की मात्रा (२) पतला है या सपिच्छल है (३) एक समान है या इसकी सतह हैं (४) फूला हुआ है या गहरा अथवा सघन है (५) रङ्ग किस तरह का है (६) चमकीला है या नहीं (७) इसमें से प्रकाश आर पार होता कि नहीं (८) गन्ध किस तरहकी है।

यह उपरोक्त सब लक्षण प्रथम जिस थूक की परीक्षा करनी होती है देखना परमावश्यक है ।

थूक निम्नाकित प्रकारके होते हैं ।

(१) वह थूक जिसमें मवाद जाती है उसे Mucous Sputum (पूय युक्त कफ कहते हैं)।

(२) वह थूक जिसमें लार युक्त पदार्थ जाते हों उस थूकको Serous Sputum कहते हैं,

(३) वह थूक जिससे तन्तु जाते हों उस थूकको Fibrinous Sputum कहते हैं ।

(४) वह थूक जिसमें रक्त श्राव होता है उसे Blood Sputum कहते हैं।

(५) एक अन्य प्रकारका थूक जिसमें दुर्गन्ध होती है उसको Purulent Sputum कहते हैं।

Mucous Sputum:—प्रारम्भिक कासमें जो कफ आता है तब पूय युक्त आता है। इस कफमें पूयकी मात्रा अधिक नहीं होती।

यह कफ साफ और स्वच्छ होता है परन्तु सघन होता है, सच्चीकण होते हुए इसकी मात्रा अधिक नहीं होती। यदि कुछ समयके लिए कास रोग निरन्तर चलता रहेगा तब इसमें (Puscells) पूय कण या मवाद के जीवाणु मिलेंगे इस अवस्था में कफ सघन होगा एवं कम होगा और हरे और पीत वर्णका हो जायगा।

Serous Sputum :—यह कफ लार युक्त होता है और इसमें द्रव भाग विशेष रूपसे होता है। यह प्रायः रक्त रञ्जित रहता है और कोई कोई समय यह साबुन की तरह सच्ची कण भी होता है।

Muco Purolent Sputum:—यह प्रायः जब फुफ्फुसमें कोई मुख्य या घातक बिमारी होगी तब थूका जाता है। यक्ष्मामें जब खात (Cavity) बनजाती है तब यह फुफ्फुसोंमें पाया जाता है। यह बहुत सघन होता है क्योंकि यह हवा रहित रहता है। यह नीचे के सतह में जम जाता है इसकी बटनकी तरह शक्ल होती है। यह ही यक्ष्माका कफ है। यदि इसमें द्रवका हिस्सा अधिर हो तब इसमें तीन सतह बन जाती हैं। इसमें नीचे ही नीचे का Purulent Sputum बीच का हिस्सा Serous याने लार युक्त ऊपरका हिस्सा झागों वाले कफ का होता है उसमें Mucous (पूय) रहती है। पूय युक्त कफ भीतरमें खात बनजाने से जो व्रण होजाते हैं उनमें से आता है। या Inter lobar empyema (पूयोरस) होनेसे भी आता है। इसका आनेका यही तात्पर्य्य है कि अन्दर फुफ्फुसोंमें प्राण वायुके प्रवेश करनेसे कहीं-कही पर (repture) फटापन हो जाता है।

कतिपय बीमारियोंमें कफका रङ्ग विशेष रङ्ग वाला होता है। इसका तात्पर्य यह है कि भिन्न-भिन्न रोगोंमें कफ के भिन्न -भिन्न स्वरुप होते हैं। निमोनियामें कफ का रंग जैसे कोई पदार्थमें जंग (rusty रस्टी) लगजाता है इस तरह का होता है। जब कफका रंग चमकीले,

पीले या हरे रंग का होता है तब यह इस बातका द्योतक है कि यकृत में (Siver Abscess) यकृत विद्रधिमें होकर फुफ्फुसो में फट गया है और यह ही रंग कभी २ निमोनियाँ की अन्तिम परिपाकावस्था भी पाया जाता है।

कोयलेकी खानोंमें काम करने वाले मजदूरोंके काला कफ पाया जाता है यह स्वभाविक ही है परन्तु रक्त रञ्जित कफ यक्ष्माका द्योतक है।

रोगीका निदान करते समय यह बात जानना परम आवश्यक है कि कितनी मात्रामें कफ २४ घंटामें जाता है और ठहर-ठहरके आता है या निरन्तर आता रहता है। जब आता है तो अधिक मात्रामें आता या सूक्ष्म मात्रामें आता है।

मुख्यतया आधुनिक युगमें कफकी परीक्षा अणुवीक्षण यन्त्र द्वारा की जाती है।

उपरोक्त लक्षण जो हमने बतलाये हैं वो भी बहुत सहायक सिद्ध होंगे।

Odour cf sputum:—(कफकी गन्ध)

कफकी गन्ध प्रायः भिन्न-भिन्न हुआ करती है। साधारण तया इसमें Stale (स्टेल) की गन्ध रहती है। और अन्यथा दुर्गन्धयुक्त गन्ध भी आती है जो असह्य होती है। यक्ष्माके रोगीके कफमें मवाद की गन्ध आया करती है यह गन्ध जब रोगी कफ बाहर मुखसे थूकता है तब अनुभव करता है। अब अणुवीक्षण यन्त्र द्वारा परीक्षा किस प्रकार की जाती है इसका विवरण किया जायगा।

प्रथम प्रायः बिना किसी रसायनके मिश्रण किये ही कफ परीक्षा इसकी प्राकृतिक अवस्था एवं स्वरूपकी जानकारीके लिये की जाती है। इसके पश्चात कतिपय मुख्य मुख्य Bacteria (बेक्टी-

रिया (किटाणु) का पता लगानेके लिए और अन्यान्य प्रक्रियाकी जाती है।

सर्वप्रथम कफको एक काचके चौड़े मुख वाले बर्तनमें डाल दिया जाता है तत्पश्चात् इसमेंसे एक टुकड़ा परीक्षाके लिये लिया जाता है। यह टुकड़ा जैसे उचित समझा जाय सफेद या काले रंगकी सतह पर डाल दिया जाता है। इस तरह करनेसे कफमें कई एक प्रकारका बनावटें दिखाई दिया करती हैं जिनका आगे वर्णन करेंगे।

Cellular structure:—(सेलिय आकृति या बनावटे)

यह तीन प्रकारकी होती है (१) प्रथम आकृति पूय युक्त होती है और इन्हें Pus—cells (मवादके जीवाणु) कहते हैं। (२) दूसरी आकृति Epethelium (एपीथेलियम) युक्त होती हैं जोमुख द्वारसे भी आती हैं और फुफ्फुसमें जो प्राणवायु जानेका रास्ता है उसमेंसे भी आती हैं। (३) तीसरी Alveoli (एलवियोली) में से भी आती हैं यह कुछ विशेष रङ्गकी होती हैं। प्राण वायूसे मिश्रित होनेपर यह प्रायः लोहेके से रङ्गकी हो जाती है। यह बनावट कभी २ Heart disease (हृदय रोग) में भी पायी जाती हैं जबकी Pulomonary Congestion (फुफ्फुसीय रक्ताधिक्य) होता है।

Red Blood cells (रक्त कण)

यह जब सूक्ष्म रूपमें पाये जाते हैं तब कोई चिन्ताका विषय नहीं परन्तु अत्याधिक मात्रामें Hemoptysis (रक्तष्ठीवन) नामक व्याधिमें पाये जाते हैं।

Eosinophil cells यह भयंकर बातज कासमें एवं श्वास Asthama (ऐजमा) आदि रोगोंमें पाये जाते हैं। यह कम मात्रामें स्वस्थ मनुष्यके कफमें भी रहते हैं परन्तु जब इनकी संख्या बढ़ जाती है तो यह व्याधिके कारण बन जाते हैं।

Elastic Fibres कफमें इन तन्तुओंकी (घट बढ़ने वाले तन्तु) उपस्थिति इस बात की द्योतक है कि फुफ्फुसके तन्तु नष्ट होकर बाहर निकल रहे हैं। यह तन्तु यक्ष्मा होनेके कारण जब खात बन जाता है उस अवस्थामें भी नष्ट होकर कफसे संयुक्त हो बाहर निकलने लगते हैं।

फुफ्फुसमें Gangrene (कोथ) होनेसे या फुफ्फुसमें कोई Abscess (विद्रधि) होनेके कारण भी यह तन्तु बाहर निकल जाते हैं। यह कफके छोटे २ सघन टुकड़ोंमें पाये जाते हैं। इनका ठीक-ठीक ज्ञान बराबरकी मात्रामें १० ०/० प्रतिशत Caustic Soda Solution (कास्टिक सोडा सोल्यूशन, कास्टिक सोडेका तरल) मिश्रित करनेसे शीघ्रतया गरम करनेसे होता है। गरम करनेके पश्चात इसे ठण्डा होने दिया जाता है, तब एक चमकीला पदार्थ जम जाता है, तब इसमें जल मिला दिया जाता है और एक कांचकी प्यालीमें उस समय तक छोड़ दिया जाता है, जब तक कि यह तन्तु पृथक २ दिखाई देने लग जाते हैं। यह तन्तु पेंदेमें जम जाते है।

Fibrin casts:—यह पर्याप्त बड़े होते हैं। यह बिना किसी यन्त्रको सहायताके देखे जा सकते हैं। अणुवीक्षण यन्त्रमें देखनेसे और भी साफ दिखाई देते हैं।

Asbestosis Bodies :—यह उन बिमारोंके फेफड़ोंमें पाये जाते हैं जो एसबेसटोजके कारखानेमें काम करते हैं। इस कफमें पर्याप्त पीत वर्ण होता है। इस परीक्षामें जो पदार्थ दिखाई देते हैं वे स्वर्ण सदृश पीत वर्णके होते हैं। यह कभी छोटे और कभी बड़े होते हैं।

Examination of Blood

(रक्त परीक्षा)

रक्त निम्न चार प्रकारके पदार्थोंके मिश्रणसे बनता है। (1) W. B. C (श्वेत कण) (2) R. B. C. (रक्त कण) (3) Blood Plates (रक्त प्लेटस) (4) Blood Dust or Hemoconein यह सब एक द्रव विशेषमें जिसे Plasma (प्लाजमा) कहते हैं, तैरते रहते हैं। साधारण या स्वस्थ रक्त (लिटमस पेपर) Litmus Paper के द्वारा परीक्षा करने पर क्षारीय (Alkaline) होता है। इसमें एक क्षार रहता है जिसे Sodium Carbonate (सोडियम कारबोनेट) कहते हैं।

पुरुष तथा स्त्रियोंके रक्तकी Specific gravity (आपेक्षिक घनत्व) भिन्न-भिन्न होता है। पुरुषमें स्त्रीकी अपेक्षा अधिक होता है। यह १०४५–१०७५ के बीचमें पाया जाता है।

चार मुख्य Protein Bodies (प्रोटेन बोडीज) Plasma (प्लाजमा) द्रवमें रहते हैं। जो निम्न हैं (१) Fibrinoyen (केन्द्रद्रव्य-के समान द्रव्य) (२) Nucleo-Protein (न्यूक्लियो प्रोटेन) (३) Serum Globu'in (सीरम ग्लोब्यूलीन) (४) Serum Albumin है।

प्रोटिन्सके अतिरिक्त निम्नांकित पदार्थ भी रक्तमें पाये जाते हैं। (१) Glucose शर्करा o. 1 ./ (२) Urates यूरेट्स (३) Urea यूरिया (४) Fat बसा (५) Amino-acids अमीनो एसिड्स (६) Enzymes एन्जाइम्स (७) Lacithen लेसिथिन (८) Cretanine क्रटेनाइन (९) Carbamic Acid कारबेमिक अम्ल (१०) Cholesterols कोलेस्टरोल्स (११) Nucleo Protein न्यूक्लियो-प्रोटेन (१२) Acetone Bodies एसेटोन बोडीज (१३) Colo-

uring matter [कलरिङ्ग मेटर] रञ्जक पदार्थ (१४) Gases गेसूस (वायु) (१५) Inorganic Substances इनओरगनिक सबस्टानसेस (१६) Hormone होरमोन (१७) Phosphates (फोस्फेट्स) या Chlorides क्लोराइड्स (१८) Carbonates कर्बोनेट्स हैं ।

रक्त विदीर्ण होनेमें तीन मिनट लेता है। विदीर्ण होने पर पीत वर्णका एक द्रव इसमसे पृथक हो जाता है जिसे Serum सीरम (लसिकाद्रव्य) कहते हैं ।

मनुष्य के Serum (लसिका द्रव्य) का आपेक्षिक घनत्व १०२६-१०३२ तक होता है। रक्त में जो जो पदार्थ विलीन रहते हैं उनके विषयमें ऊपर लिखा जा चुका है अब आगे रक्त परीक्षा के विषय में लिखा जायगा।

रक्त परीक्षा अणुवीक्षण यंत्र. द्वारा की जातो है। इस परीक्षाकी सहायता से रोग निदान करने में आधुनिक युग में अत्यन्त सहायता मिलतो है। रक्त में दो प्रकारके जिवाणु होते हैं जिन्हें R. B. C, (रक्त-कण) और W. B. C. (श्वेत कण) कहते हैं।

स्वस्थ रक्त में पुरुषों के रक्त जीवाणु (Red Cels) ५,०००,००० और स्त्रियोंके ४५००००० संख्या पाये जाते हैं। स्वस्थ अवस्था में श्वेताणु ७,००० Per cmm. पर सी० एम० एम० (क्यूबिक सेन्टीमीटर) होते हैं। इनका घटना या बढ़ना अस्वस्थता की सूचना देता है। यह Cells [सेल्स] अणुवीक्षण यंत्र द्वारा अनेक प्रकार से देखे जाते हैं एवं इनकी गणना की जाती है। नव जात शिशुओं में रक्ताणुओं की संख्या निरन्तर ७,०००,००० से ८,०००,०००, तक पायी जाती है। मासिक धर्म होने से, प्रसव होने से, अधिक शराब का सेवन करने से इनकी मात्रा घट जातो है।

जब फुफ्फुसोंमें प्राण वायूका सुगम तया प्रवेश नहीं होता है तब इनकी मात्रा बढ़ जाती हैं।

अतिसार होने से, तथा खून गहरा पड़जाने से भी इनकी मात्रा अधिक बढ़ जाती है। बमन होने से तथा फुफ्फुसावरण की बीमारियों में (Pleural-Diseases) में इनकी संख्या अधिक बढ़जाती है। Congenital Heart diseses आदिबल प्रवृत हृद रोग में R. B. C. आर० बो० सो० (रक्तकण) को मात्रा 10,000,000 Per cmm (पर सी० एम०एम०) हो जाती है। यदि शरीर बहुत बुरी तरह से जल जाय तब भी इनको संख्या अधिक बढ़ जाती है। कामलामें अधिक श्रावसे इनको संख्या घट जाती है।

White Blood corpuscles:-स्वस्थ आदमी में इनको संख्या 7000 होती है Per cmm. परन्तु नवजात शिशुमें इनकी संख्या 17,000 Per cmm होती है और ७ वर्षके बच्चे तक 10,000 से 14,000 तक रहते हैं। व्यायाम करनेके बाद, गर्भावस्थामें इनकी संख्या बढ़ जाती है। कोई कोई बुखारमें Leucocytes की संख्या घट जाती है कोईमें वढ़ जाती है। जिस बुखारमें मबाद पैदा होगी उसमें यह बढ़ जायेंगे। यदि मवाद बाहर निकाल दी जाय तो इनकी संख्या घट जायेगो, ३६ घंटा में काफी घट जाते हैं।

निम्नांकित रोगोंमें निदान के समय Leucocytes की गणना बहुत जरूरी है। Abscess में फोड़ोंमें, Septicaemia (सेपटीसोमिया,) न्यूमोनिया, Scarlet fever, Tuberculous Meningitis Cancer इत्यादि।

इन सब परीक्षावों के लिये क्या किया जाता है कि एक पैनी नोकीली सुई जिसको पहले Alcohol में भिगो लिया जाता है। हाथ की किसी भी अंगुलके अग्र भागमें जोरसे चुभायी जाती है और कांचकी बत्ती Glass Slide पर ३-४ दाग इसके लेकर दूसरी

साफ Slide ये कुछ घिस के ढक दिया जाता है एक तरकीब खून परीक्षा अणुवीक्षण यन्त्र द्वारा करनेकी यह है।

दूसरी परिक्षा करने के लिये निम्नांकित चीजे परम जरूरी हैं। Tall-quist Heamoglobin Scale, a sharp needle, a bottle ofHayem's Solution, a bottle ofToison's solution, Leishman's Stain, a muslin for cleaning lense white filter Paper, a case for Ho'ding Slides, Slides and cover Slips, a pair of rubber below s for drying Pippets, a bulb and Stem for cleaning Pippetes.

Red cell s की गणनाके लिये normal Sa'aine Solution की दरकार पड़ती है sod. Chloride I grm; Sod. Sulphate 5 grms, Hydrarg Perchlor, O. 5 gms. Aqua Dist 200 C. C., white cells गणना के लिये O. 3% So'ution of Acetic Acid coloured by methy lene Blue या Toison's fluid methyl Violet O.O. 25 grms neutral glycerine 30·0 C. C. distilled water 80. O. C. C. इसमें. O grms Sodium chloride Solution मिलाया जाता है Sodium Sulphate 8.0 grms distilled water 80 C. C. सब मिलाया जाता है और छान लिया जाता है। औजार पहले पानी से साफ कर लेने चाहिये फिर Alcohol से साफ कर लेना चाहिये।

खून शरीरसे लेनेकी विधि— कई एक बातें खून लेते समय ध्यानमें रखनी चाहिए। कई एक मरतबा उसी अवस्थामें उसी बीमार की खूनकी परीक्षा होनी चाहिए और मुकाबला कर लेना चाहिए क्योंकि ठंडी से, खाना खानेकी वजह से, व्यायाम करने की वजहसे खूनमें हेर फेर होते रहते हैं।

पहले पहल अंगुलीके अग्र भागको तेज सूई से भेदन किया, जाता है। भेदन करनेके टाइममें अंगुलीमें Alcohol नहीं लगाना

चाहिए क्योंकि इससे खूनकी रसायन क्रिया बदलनेका डर रहता है। सूई को अच्छी तरह Alcohol से साफ रखना चाहिए अंगुलीमें गहरा सूई चुभोना चाहिए और फिर उसको दबाकर खून Slide पर या पिपेटमें नहीं लेना चाहिए क्योंकि दबा देने से Lymph आनेका डर रहता है। यदि Serum reaction के लिए परीक्षा करनी हो तो अंगुली को दबाकर खून ले सकते हैं।

Estimation of Haemoglobin खूनमें हीमोग्लोबिनकी तादाद का जानना परम जरूरी है। हीमोग्लोबिनका अंदाजा Tallquist-Scale से लगाया जा सकता है। इस मापमें कई तरहके रंग रहते हैं उनसे मिलान किया जाता है।

खूनकी एक बूंद blotting paper के टुकड़ेसे शोपली जाती है और इसका मिलान उपरोक्त Scale से किया जाता है। यह Scale रंगोंके अलावा यह भी बतलाता है कि कितना प्रतिशत हीमोग्लोबिन खूनमें है। यह सब खूब धूप निकली हुई हो तब किया जाता है।

हीमोग्लोबिन खूनमें घटना या बढ़ना बहुत महत्व रखता है। जैसे 87 यदि Scale पर मालूम देवें इसका मतलब साधारण अवस्थामें 100 के मुकाबलेमें यह 87 हैं। कामला या खूनकी कमीमें इनकी कमी होती है। इस तरीकेसे यह पता बहुत सुगमतोर से लग जाता है कि कामलाका रोगी कितना ठीक हो रहा है या नहीं। Pernicious Anæmia में लालजीबाणु Red Cells की कमी होनेसे घट जाते हैं। शहरमें रहने वालोंकी अपेक्षा गांवमें याने देहातोंमें रहने वालोंमें हीमोग्लोबिनकी संख्या अच्छी होती है। इसमें शहरवालोंमें 80 to 90%, गांव वालोंमें 100%।

इससे ज्ञात होता है कि रुग्णावस्थामें रक्ताणुओं की संख्या घटती एवं बढ़ती रहती है। इसी प्रकार रोग होने पर श्वेताणुओंकी संख्या भी घटती बढ़ती रहती है।

१०० Leucocytes [श्वेत कण] में निम्नांकित रूपमें निम्न-निम्न पदार्थ पाये जाते हैं।

(१) Polynuclear (पोलीन्यूक्लियर) ६० से ७० (२) Small-mononuclear (स्माल मोनोन्युक्लियर) (Lymphocytes) २० से ३० लाइम्फो साइट्स

(३) Large mononuclear Leucocytes (लार्ज मोनो न्यूक्लियर ल्यूको साइट्स) २ से ५

(४) Transitional forms (ट्रान्जिशनल फार्म) २ से ५

(५) Eosinophil cells (इसानो फोल सेल्स) १—३

(६) Mast cells (मास्ट्स सेल्स) ०. ५ से १

(७) Polyneuclear Neutrophil Leucocytes (पोलीन्यूक्लियर न्यूट्रोफील ल्यूकोसाइट्स) जो ६० या ७५ प्रतिशत Leucocytes (ल्यूकोसाइट्स) में रहते हैं बाकी के जिस मात्रा में हमने लिखे हैं इस अनुमान से Leucocytes (ल्यूकोसाइट्स) में पाये जाते हैं। जब रक्त में यह मालूम हो जाय कि leucocytes की क्या संख्या है तब (Differential Count) डिफरेन्शियल काउण्ट (सापेक्ष संख्या) करना परमावश्यक है। इसी सापेक्ष संख्या से रोग निदान किया जाता है। इस तरहसे कम से कम ५०० ल्यूकोसाइटस (श्वेत कण) की गणनां की जाती है। गणना करते समय एक एक प्रकार कागज पर लिख लिए जाते हैं और प्रत्येक का (Percentage) परसेन्टेज (प्रतिशत्) निकाला जाता है।

Leuceamia (ल्यूकोमिया) के अतिरिक्त Leucocytes (ल्यूकोसाइटस) १००००० संख्यासे अधिक नहीं पायेजाते स्वस्थ अवस्थामें ७००० प्रति क्यूबिक सेन्टी मीटर रहते हैं।

Polyneuclear Nutrophilcells (पोलीन्टन्यूक्लियर न्यूट्रोफिल सेल्स) श्वेताणुवोंमें अधिक संख्यामें पाये जाते हैं। इनकी संख्या

निमोनियामें, (Pneumonia) सेप्टी शीमियामें (Septicaemia) गरदन तोड़ बुखारमें, Cerebrospi-nal--meningitis पर्य्याप्त रूपसे अधिक पाई जाती है। Typhoid (सन्निपातिक ज्वर) में और Tubercular-meningitis (ट्यूबर क्यूलर मेनिन जाइटिश, गरदन तोड़ बुखार) में इनकी सापेक्ष संख्याकी गणनासे भेद मालूम किया जाता है।

Meningitis (गरदन ताड़ बुखारमें) Leucocytosis(ल्यूको-साइटोशिश, श्वेत कणोत्कर्ष) हो जाता है परन्तु झोती झरेमें यदि कोई व्रण नहीं हो तो नहीं होता। यदि Leucocytosis ल्यूको साईटोसिस (श्वेत कणोत्कर्ष) पायाभी जाय और प्रत्यक्षमें कोई सूजन इत्यादि दिखाई नहीं दे तो भी सूजन जानना चाहिए। इस तरह से आन्तरिक बीमारोके ज्ञानके लिए रक्त परीक्षा मुख्य स्थान रखती है। (Eosinophil) बहुतसी त्वचा की बीमारियोंमें यह बढ़ जाते हैं मुख्य तया (Psoriasis) परोमिस में। श्वांस (Asthama) में या बातज काममें यह २५ प्रतिशत या इससे अधिक मात्रामें बढ़ जाया करते हैं।

यह स्वस्थ अवस्थामें ।—३ प्रतिशत रक्तमे मिलने स्वभाविक है इस मात्रासे जब अधिक बढ़ना प्रारम्भ होता है तो वह बीमारी की सूचना देता है। इनकी वृद्धि हृद रोगमें हो जाती है यह Tu-ber cu'in injection (ट्यूबर कुलीन इन्जेक्शन) के देनेके पश्चात् भी बढ़े पाये जाते हैं।

Lymphocytosis (लाइम्पो साइटो शिश) (लसिका कणोत्कर्ष) या लाइम्पो साइटि शको वृद्धिः यह Whooping cough हूपीग कफ या कूकर खांसीमें यक्ष्मामें तथा उपदंश जनित व्याधिमें अधिकता को प्राप्त हो जाते हैं।

Large mononeuclear cells (लार्ज मोनोन्यू क्लियर सेल्स) यह विसूचिका और अतिसारमें भेद मालूम करनेमें मुख्य सिद्ध हुए हैं। बिसूचिका या हैजेमें इनकी संख्या बढ़ जाती है।

Parasites found in the blood (रक्तमें पाये जाने वाले कीटाणु :—रक्तमें भिन्न भिन्न प्रकारके कीटाणु पाये जाते हैं जो रोगका निदान करनेमें मुख्य सहायता पहुंचाते हैं। इनमें मुख्य मुख्य के विषयमें हम कुछ लिखेंगे।

Septicmicrobes सेप्टिक माइक्रोब्स: (छूतकी बीमारी फैलाने वाले कीड़े) यह उस बीमारीमें पाये जाते हैं जिससे छूत फैलती है।

Spilirillum of relapsing fever (पुनरावर्तक ज्वरके कीटाणु) यह छोड़ छोड़ कर जो बार २ मलेरिया ज्वर आता है उस अवस्थामें पाये जाने वाले कीटाणु है। इसी तरहसे सन्निपातिक ज्वरके तृणाणु एवं वातश्लेष्मिक ज्वरके तृणाणु रक्तमें पाये जाते हैं जिनका आगे वर्णन करेंगे। साथ साथ पूर्वोक्तके विषय में भी लिखा जायगा।

Parasites of Malarial Fever (मलेरिया बुखारके कीटाणु) इस कीटाणुको Protozoon प्रोटोजून कहते हैं इसका निवास स्थान रक्ताणु है। यह इसे नष्ट कर देता है परन्तु मांस पेशियों को नष्ट नहीं कर सकता। यह कीटाणु तीन प्रकार के होते हैं।

(१) Plasmodium Vivax यह तृतीयक ज्वर के कीटाणु है।

(२) Plasmodium Malaria चातुर्थिक ज्वर के कीटाणु है।

(३) Plasmodium Falciparum यह घातक विषम ज्वर के कीटाणु है।

यह मलेरियाके कीटाणु दो तरहसे अपना जीवन चक्र प्रारम्भ करते हैं।

(१) अमैथुनिक चक्र Asexual Cycle or Intracorpuselar Cycle मनुष्य के शरीरमें इस चक्र द्वारा प्रसारित होते हैं ।

(२) मैथुनिक चक्र (Sexual Cycle) यह. येनाफिलीज जातिके Mosquito में प्रारम्भ होता है ।

इस तरहसे यह मलेरियाके कीटाणु अपनी वृद्धि एवं मलेरियाका प्रसार प्रारम्भ करते हैं । जिस किसी मनुष्यको यह काटते हैं उसम इसके कीटाणु प्रवेश करके मलेरिया प्रारम्भ करते हैं । यह जोवन इतिहास सुक्ष्म रूपसे हैं ।

सूक्ष्म दर्शक यंत्र द्वारा इनकी परीक्षाके लिये एक कांचकी टुकड़ी (Galss slide ग्लास स्लाइड) लीजिए और उस पर पूर्वोक्त बिधि अनुसार १ २ बूंद बीमारके रक्त की लेकर Cover glass (कवर ग्लास, कांच का ढकण) लगा दीजिये इसके चारों तरफ मोमं लगा दीजिए जिससे वाश्प क्रिया द्वारा हवामें रक्तके पदार्थ उड़ नहीं सकें। बिना किसी रसायनिक पदार्थकी सहायताके यह सूक्ष्म दर्शक यंत्र द्वारा देखे जा सकते हैं । यह Leishmans method (लेसीमैन्स मेथड़) (लेसोमन की प्रक्रिया) से रंगे भी जा सकते हैं । यह कीटाणु भिन्न भिन्न रूपमें पाये जाते हैं ।

कुछ तो Crescent bodies (अर्ध चन्द्राकारी) के रूपमें कुछ Oval-bodies (ओवल बोडोज) के रूपमें अंडाकार) और कुछ flagellated body (तन्तुपिच्छी) के रूपमें पाये जाते हैं और इसी रूपमें इन्हें आप सूक्ष्म दर्शक यंत्रमें देख सकते हैं ।

Influenza Bacillus (इन्फ्लुएन्जा बेसिलश : —(वात कफ ज्वरका तृणाणु) यह प्रायः कफ परीक्षा द्वारा मालम किये जाते हैं परन्तु रक्त परीक्षासे भी इनका पता लग जाता है ।

Typhoid Bacillus (टाई फोइड बेसिलस, मोतीभरा या सन्निपातिक ज्वरके त्रिणाणु) यह सूक्ष्म दर्शक यंत्र द्वारा देखनेसे छोटे

गहरे और Mobile (मोबाइल गति शील) होते हैं। इनके चारों तरफ गोल गोल जीवाणु होते हैं यह ३-से ४ क्युबिक लम्बे और १ क्युबिक चौड़ और चारों तरफ फैले हुए होते हैं।

यह Bacillus coli communis (बेसिलस कोलाई कोम्यूनिश।) के सदृश होते हैं परन्तु Culture (कलचर, समर्धन) करनेसे इनकी भिन्नता मालूम हो जाती है। सन्निपातिक ज्वरका तृणाणु आंत्रिक ज्वरका कारण होता है। इसका निवास स्थान Spleen स्प्लीन, (प्लीहा रक्त, मूत्र और मल होता है। सूक्ष्म दृशक यंत्र से ही इनका पता नहीं चलता परन्तु Culture कलचर (संवधन) करनेसे मालूम हो जाता है।

Spirillum of Relapsing fever (स्पीरीलम ओफ रिलेपसिंग फीवर)ज्वरावस्था (Febrile stage) के समयमें वर्तमान रहते हैं। इसकी परीक्षाके लिए पर्याप्त रक्तकी आवश्यकता होती है।

Kala-Azar (काला आजार) इसके लिए रक्त Spleen स्प्लीन में से लिया जाता है। इस तरहसे रक्त परीक्षा सूक्ष्म रूपसे वैद्य बन्धुओंकी जानकारीके लिये हमने लिखी है हमे आशा है निदान करनेमें यह सहायक सिद्ध होगी।

Examination of Pathological fluids (द्रव्योंका प्रायोगिक परीक्षण) इस अध्यायमें हम सूक्ष्म रूप में Pathological fluids (पेथोलोजिकल फ्लूइडस, प्रायोगिक परीक्षणार्थ द्रव्यों के विषयमें बतलायेंगे कि रोग निदान करनेके लिए वह शरीरसे किस तरहसे और कौन कौन स्थानसे लिए जाते हैं और उनका क्या फल होता है ?

Fluids (फ्लूइडस) द्रव को शरीरमें से निकालनेकी प्रक्रिया: द्रवको बाहर निकालने लिए एक Hypodermic Needle हाइपोडरमिक निडल अधस्त्वचीय सूचीका) की आवश्यकता होतीहै जो चौड़े मुखवाली होनी चाहिए जिससे द्रव सरलता पूर्वक बाहर आ सके। इसी सूईसे वेधन या (Puncture) करके द्रव निकाला जाता है। सर्व प्रथम सूई जलमें गरम करके स्वच्छ करली जाती है।

जहां पर वेधन करना होता है उस जगहकी बाह्य त्वचा भी सावुन और जलसे साफ कर लेनी चाहिए या Ether (ईथर) से भी साफकी जा सकती है। Carbo'ic Lotion (कार्बोलिक लोशन) भी त्वचा को साफ करनेके काममें लाया जा सकता है। तत्पश्चात वेधन करनेके स्थानको शून्य करना परमावश्यक है जिससे रोगीको कोई तरहका कष्ट नहीं हो। शून्य या तो कोकेनका इन्जेक्शन लगा कर किया जाता है या Eucaine (यूकेन) से या Ethyl Chloride इथायल क्लोराइडसे किया जाता है।

फुफ्फुसावरणीय खातसे द्रव निकलनेकी प्रक्रिया

The nextraction of fluid from Pleural Cavity

इस स्थान से द्रव लेनेके लिये कक्षीय रेखाके पश्चिमी भागसे ठीक नवीं वक्षकास्थिमें (Ninth Space just behind the post auxilliary line) जहां पर दवी हुई जगह हो भेदन करना चाहिये।

यकृत वेधन कर द्रव निकालनेकी प्रक्रिया

(Extraction of fluid by liver Puncture)

यह वेधन (Pus) पस या पूय का मालूम करनेके लिए या Kala-Azar (काला आजार) के Leishman Donovan Body (लेशिमन डोनोवन बोडी) का मालूम करनेके लिए किया जाता है। जब Hydated cyst होता है तब इसका Infection [इन्फैक्शन] सब जगह फैलने के भय से उस समय वेधन नही किया जाता है। इस

वेधन में ३½ इञ्च की सूई ली जाती है। क्योंकि इतनी लम्बाई के बिना PortalVein (प्रतिहारणी शिरा) का वेधन नहीं हो सकता। वेधन करते समय सुई बिल्कुल सूखी होनी चाहिए। वेधन करते समय बीमार को श्वांस रोकनेका आदेश दिया जाता है तत्पश्चात् शीघ्रता पूर्वक पट्टी बांध दी जाती है।

प्लीहा वेधनकर द्रव निकालना (Spleen Puncture)

पहलेकी तरह यह वेधन भी घातक होताहै इसलिए आजकल प्राय: नहीं किया जाता या कम रूप में किया जाता है।

ग्रन्थीवेधन कर द्रव निकालना (Gland Puncture)

इस भेदनसे Plague Bacilli (प्लेग बेसीलाई, प्लेग का तृणाणु) का मालूम किया जाता है।

फुफ्फुस भेदन द्वारा द्रव निकालना (Lung Puncture)

आवश्यकतानुसार यह वेधन भी किया जाताहै परन्तु इसका अधिक प्रयोग नहीं होता कारण इसके द्वारा भी प्रसरण (infection) का भय रहता है।

कटिवेधन द्वारा द्रव निकालना (Lumber Puncture)

मस्तिष्कावरण शोथमें अधिक जल राशि वर्धन के कारण वर्धित राशिको ह्रास करने तथा रोगका निश्चयात्मक ज्ञान प्राप्त करनेके हेतु यह वेधन किया जाता है।

(जल राशि वर्धन)

द्रव निकालनेके लिये बच्चोंको बेहोश कर दिया जाता है। पुरुषों में उस जगह को शून्य करने से भी काम चल जाता है। इस में Antitoxin Needle (एन्टी टोक्सीन निडिल) ली जाती है। यह सूई Platinum या Iridium धातुकी बनी हुई होती है। पुरुषों में वेधनके लिये ३ इञ्च लम्बी सूई और बच्चोंके लिए २ इञ्च की

सूई ली जाती है । पुरुषोंमें (Adults) में वेधन करना हो तो उसे बैठाकर आगे सिर नीचा करके झुका दिया जाता है।

अब नितम्बास्थिके Iliac crests (ऊर्ध्व प्रकोष्ठ) के ऊँचेसे ऊंचे margin (मारजिन, भाग) की तरफ बीमार को पीठ में एक रेखा खींच ली जाती है। यह रेखा Vertebral column (पृष्ट वंश) को 4 Lumber Vertebra (४ लम्बर वरटी ब्री, चतुथ कटि कसेरुक) की Spine (स्पाइन, सुषुम्ना) के पास मिलेगी। इसी जगह पर त्वचा को स्वच्छ एवं अदुष्ट करके उपरोक्त रसायनों से शून्य कर देना चाहिए।

Operator (ओपरेटर, द्रव निकालने वाला वैद्य) चतुर्थ कटि कशेरुक Fourth lumber spine (फोर्थ लम्बर स्पाइन) के पास जानकारीके लिये अपनी अंगुली रखलेता है। तत्पाश्चात् दाहिने हाथसे ½ इञ्च नीचे की ओर और ½ इञ्च दाहिने ओर सूई घुसाई जाती है। यह सूई थोड़ी ऊपर ओर थोड़ी नीचे की तरफ रहती है। यदि सूई हड्डियों को छूवे तब वापिस निकाल कर फिर प्रविष्ट करनी चाहिए। Syringe (सिरींज, पिचकारी) को जब तक कि Spinal cord (स्पाइनल कोर्ड) (सुष्पुम्ना) तक नहीं पहुंचे हटाना नहीं चाहिए।

इसके पश्चात पिचकारी वहां से हटाकर द्रव जो निकले उसे परीक्षा करने की कांच की नली में भर देना चाहिए। यहीं निदान के लिए द्रव है। इसी को परीक्षा की जाती है। जहां तक हो सके प्रथम कम द्रव निकालना चाहिए। यदि पहले पहल रक्त भी द्रवके साथ आवे तब दो Test tube (टेष्ट ट्यूब) रखनी चाहिए एक में रक्त और दूसरे में द्रव अलग अलग कर देना चाहिए।

द्रव कभी कभो बून्द बून्द करके बाहर आता है परन्तु कभी कभी जब बिमारी शक्तिशाली होती है एक साथ बाहर आजाता है जैसे Meningitis (मेनिन जाइटिश, गरदन तोड़ बुखार) इत्यादि प्रबल बीमारियों में होता है।

यह द्रव जब तक आने दिया जाता है तब कि एक एक बून्द आने लगती है।

Tuberculous Meningitis (ट्यूबर क्युलश मेनिन जाइटिश यक्ष्मा जनित गर्दन तोड़ बुखार) में पुनः पुनः द्रव निकाल लेने से बिमारी निरन्तर ठीक होती चली जाती है।

Epedemic cerebro-Spinal meningitis (एपेडेमिक सेरेब्रो स्पाइनल मेनिन जाइटिश, संक्रामक गर्दन तोड़ बुखार) में २० शी० शी० द्रव निकाल दिया जाता है। इसकी जगह ३० शी० शी० Flexner's Serum (फ्लेक्सनर्स सीरम) भर दिया जाता है।

Skull (कपाल) के Base (बेस, अधः भाग) के Fracture (फ्रैक्चर (भग्न) में यह विधि बहुत लाभदायक सिद्ध हुई है।

Tetanus:—(टीटेनस, धनुर्वात) में इसी विधिसे anti-toxin सरलता से पहुंचाया जा सकता है।

अधिक मात्रामें कुचलेके प्रयोगसे जो विष संचार Strychinine Poisoning हो जाता है, तब इसी विधिसे eucaine (यूकाइन) शरीरमें पहुंचाया जाता है।

नितम्बके अधो भागमें शून्यता Cocaine (कोकीन) या Stovaine (स्टोवीन देकर इसी विधिसे की जाती है। इस विधिसे द्रव जो अन्दर पहुंचाया जाता है उससे अधिक बाहर निकाल लिया जाता है।

Examination of Fluid (द्रवकी परीक्षा) इस तरहसे निकाला हुआ द्रव एक एक कांचके Conical Flask (कोनीकल फ्लास्क) में कुछ समयके लिये रख दिया जाता है, तब इसके स्वरूप तथा गन्धकी परीक्षा की जाती है। यह प्रायः alkaline (क्षारीय) होता है। इसमें कोई मुख्य गन्ध नहीं होती। इस द्रवमें प्रायः हिस्सा जलका होता है। थोड़ा-थोड़ा यदि इसमें फटापन प्रारम्भ

हो जाय, तब यह जानना चाहिये कि इसमें Fibrin फाइब्रीन है। परीक्षा करनेमें यदि इसमें Hooklets (हुकलेट्स) मिले या membrane lining (मेम्ब्रेन लाइनिङ्ग) के टुकड़े मिले या ameaba (अमिबा) मिले, तब दूसरी परीक्षाकी जाती है और उनका निदान कठिन हो जाता है।

इसकी रासायनिक परीक्षा भी की जाती हैं Albumin एलब्यूमिनकी परीक्षा भी की जाती है Sugar सूगर (शर्करा) की परीक्षा भी की जाती है—यही इस द्रवकी परीक्षा है

विटामिन्स या पौष्टिक तत्व

भोजनमें शरीरको शक्ति देनेके अतिरिक्त कुछ आवश्यक ऐसे पदार्थ होते हैं जैसे Vitamins (विटा- मिन्स,) जो कि शरीरको स्वस्थ बनानेमें मुख्य पदार्थ हैं। यह भिन्न भिन्न प्रकार के होते हैं, जिनमें मुख्य मुख्य Vitamins (विटामिन्स) के विवरण वंद्य बन्धुओं की जानकारीके लिए लिखगे। यदि भोजनमें से एक Vitamin (विटामिन) की न्यूनता हो जाती है तब मनुष्यके स्वास्थ्य का कुछ ह्रास होना प्रारम्भ हो जाता है। जैसे Vitamin D (विटामिन डी) भोजन में यदि नहीं रहेगा तो मनुष्य के शरीरकी हड्डियां दुर्बल हो जायेंगी या अन्यान्य हड्डियोंकी बीमारियां प्रारम्भ हो जावेंगी। दांत गलने लगजायेंगे या उनमें पीड़ा प्रारम्भ हो जायेगी।

मनुष्यके स्वास्थ्य रक्षार्थ नित्य प्रति Vitamins विटामिन्स बहुत कम मात्रामें व्यय होते हैं। इसलिए मनुष्यके नित्य प्रतिके भोजनसे जो शक्ति प्राप्त होती है वह बहुत अल्प मात्रामें या नहींके बराबर होती है।

Origin of Vitamins (विटामिन्सकी उत्पत्ति (विटामिन डी) Vitamin D के अतिरिक्त कोई भी अन्य विटामिन Vitamin मनुष्यके शरीरमें पैदा नहीं होते। विटामिन डी (Vitamins D) भी विशेष-

तथा वनस्पतियोंमें पाया जाता है। जितने भी भिन्न भिन्न प्रकारके विटामिन्स (Vitamins) हैं वे प्राय: दाल, शाक रूपमें मनुष्यके शरीरमें पहुंचते हैं और पाचन क्रिया द्वारा रक्तमें विलीन होते हैं और कुछ विटामिन्स जीवाणुओं द्वारा भी पैदा किये जाते हैं।

Fat Soluble Vitamins (वसामें घुलने वाले विटामिन्स) वसा या चर्बीमें विटामिन्स ए, (A,) डी, (D,) ई, (E,) के (K) यह चार प्रकारके (विटामिन्स) Vitamins घुल जाते हैं। परन्तु यह सिद्धान्त मिथ्या सिद्ध होता है क्योंकि जैसे Halibut Liver Oil (हलीबट मछली के यकृतका तैल) में विटामिन्स) Vitamin ए (A) और डी (D) पर्याप्त मात्रामें उपलब्ध होते हैं परन्तु विटामिन ई Vitamin E इसमें अत्यन्त अल्प मात्रामें पाया जाता है। तिल, सरसों, मूंगफली इत्यादि वानस्पतिक तैलोंमें विटामिन ए (Vitamin A) और डी (D) की न्यूनता रहती है और इनमें Vitamin (E) (विटामिन इ) अत्यधिक मात्रामें पाया जाता है। मक्खनमें जो वसा रहती है उसमें विटामिन ए (Vitamin A) पर्याप्त मात्रामें उपलब्ध होता है परन्तु विटामिन डी (Vitamin D) और (ई) E की न्यूनता रहती है। परन्तु गायको यदि भोजनमें Cotton seed (बिनौला) खिलाया जाय तो गायके मक्खनमें विटामिन ई (Vitamin E) अत्यधिक मात्रामें उपलब्ध होगा।

Vitamin A (विटामिन ए) यह वनस्पतियों में तथा शाक सब्जियोंमें सूर्य्यकी कृपासे धूप द्वारा पैदा होता है। इसमें Orange pigment (ओरेन्ज पिगमेन्ट) (नारंगीके रंगका पदार्थ) जिसे Carotene (केरोटीन) कहते हैं उपलब्ध होता है। जब वह शाक सब्जी या पौदे या वनस्पति जिनमें यह रंग रहता है मनुष्यको भोजनके रूपमें खिलाये जाते हैं तब यह पाचन क्रिया द्वारा यकृतमें होकर रक्तमें विलीन होजाता है। यह दूधमें भी Lactation (लेक्टेशन) जिस समय स्तनोंमें

दूध आता हो) के समयमें पाया जाता है। Jersey cow (जरसी काउ) (जरसी जातिकी गाय) का दूध नारंगी रंगका पीत वर्ण वाला होता है। तात्पर्य्य यह कि इसमें विटामिन ए (Vitamin A) वर्तमान है। बकरीका दूध अल्प पीतवर्ण वाला होता है जो यह स्पष्टीकरण करता है कि इसमें विटामिन ए (Vitamin A) की मात्रा बहुत अल्प रूपमें हैं क्योंकि इसमें Carotene (केरोटीन) की मात्रा बहुत अल्प रूपमें हैं।

कतिपय पशुओंमें या जीवोंमें विटामिन ए (Vitamin A) का नारंगी रंग Carotene (केरोटीन) नष्ट करनेकी शक्ति रहती है। जिससे उनका स्वास्थ्य दिन प्रति दिन नष्ट होने लग जाता है।

इसके प्रतिकारके लिये इन रोग ग्रसितोंको वे पदार्थ खिलाये जाते हैं जिनमें विटामिन ए (Vitamin A) पर्याप्त मात्रामें पाया जाता है। बहुतसे पशुओंमें एवं मछलियोंकी बसामें विटामिन ए (Vitamin A) पर्याप्त मात्रामें पाया जाता है। उपरोक्त पदार्थ या Butter (बटर, मखन) जिसमें विटामिन ए (Vitamin A) विद्यमान रहते हैं सेवन करनेसे विटामिन ए (Vitamin A) की न्यूनता नहीं होती।

जिन मनुष्योंमें इस पदार्थकी न्यूनता रहती है उनको Night Blindness (नाइट ब्लाइन्डनेस) या रतोंधी नामक रोग हो सकता है। आँखोंकी ज्योति मन्दी पड़ जाती है। नेत्रोंमें खुजली होने लगती है और व्रण हो जाते हैं। त्वचामें, जिह्वामें, मुखमें, श्वांस नलिकामें व्रण हो जाते हैं।

यह विटामिन ए (Vitamin A) ज्ञान शक्तिके लिये परमावश्यक हैं। पुरातन कालमें मिश्र देश वासी (Night Blindness) रतोंधी में यकृत खिलाकर चिकित्सा किया करते थे। यह शैली प्रसिद्ध है।

यकृतमें विटामिन ए (Vitamin A) वर्तमान रहता है। Vitamin D (विटामिन डी) यह Fungi (फनजाई, एक वनस्पति विशेष) श्रेणीको वनस्पितियोंमें अत्यधिक मात्रामें पाये जाते हैं। भिन्न-भिन्न जाति विशेषकी मछलियोंके यकृतके तैलोंमें यह पर्याप्त रूपमें पाया जाता है। चौपायों एवं मनुष्योंके यकृतमें इनकी मात्रा अल्प संख्यामें पाई जाती है क्योंकि फुफ्फुसमें जाकर यह नष्ट होता रहता है। मछलीके फुफ्फुस नहीं होते इसलिये यह नष्ट नहीं हो सकता इसलिए मछलियोंमें अत्यधिक मात्रामें पाया जाता है।

बहुत से अन्याय पौधे और वनस्पतियों में सूर्य्य की रोशनी की सहायतासे अल्प अल्प मात्रा में उपलब्ध्य होता है परन्तु कुछ समय बाद नष्ट हो जाता है। Fungi (फनजाई) जाति पोदो में यह नष्ट नहीं होते। साधारण भोजनमें गरम करने से विटामीन डी (Vitamin D) अपने गुण नहीं छोड़ता। Halibut Liver oil (हलीबट लीवर ओयल) हलीबट मछलीका लीवरका तैल में यह पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध होता है।

शोष रोग Rickets (रिकेट्स) में दांत और अन्यान्य हड्डियों को वृद्धिका सुलभ अवसर नहीं प्राप्त होता।

अस्थियां इस बीमारी में इतनी दुर्बल और मुलायम हो जाती हैं कि मांस पेशी को किंचित आकर्षित करनेसे अस्थि मुड़ने लगजाती है। दांतो में इतनी दुर्बलता आजाती है कि वे नष्ट होने लगते हैं जिससे साधारण मनुष्य यह कहने लगते हैं कि दातों में कीटाणु लग गया है।

बीस वर्ष पहले जितने भी बच्चे शहरों में रहते थे प्रायः सबके Rickets (रिक्टेस) शोष रोग हो जाया करता था। उस समय रोग का कारण शहरों की अस्वच्छता ही समझा जाता था। खाद्य पदार्थों का कुछ भी दोष नहीं माना जाता था।

परन्तु शीघ्र ही इस कारण का अन्वेषण किया गया तो हेतु मिला और चिकित्सा में भी साथ ही साथ सफलता मिली।

सूर्य्य की धूप सेवन कराने से बच्चे स्वस्थ होने लगे और बच्चों के लिए सूर्य्य की धूप परम उपयोगी सिद्ध हुई और साथ ही साथ इस बात का भी पता चला कि Cod Liver oil (कोड लीवर ओयल) काड मछलीका तैल यदि बच्चों को सेवन करवाया जाय तो बच्चोंको पर्याप्त लाभ होगा। इस तैल में Vitamin D (विटामिन डी) अत्यधिक मात्रा में उपलब्ध होता है। सन १६२४ में इस अन्वेषण का दिग्दर्शन किया गया कि वह भोजन जो बच्चोंको खानेको दिया जाता है यदि सूर्य्य की धूप में कुछ समयके लिये रख कर उसके पश्चात् बच्चों को खाने के लिए दिया जाय तो बच्चे इस रोग से मुक्त रह सकते हैं।

गर्भवती स्त्रियों में भी शोष तो नहीं परन्तु इसके समान ही एक रोग होता है जिसे अस्थिशोष Osteomalacia (ओस्टे मलेशिया) कहते हैं। इस रोगमें मुख्य लक्षण क्या होते हैं कि स्त्रियों की हड्डियाँ निर्बल हो जाती हैं वस्ति गह्वर मुख्यतया Pelvic girdle (पेलविक गर्डल) या नितम्बास्थि (Hip Bone) गर्भावस्था के पश्चात् इस रोग से स्त्रियां मुक्त हो जाती हैं। गर्भावस्थाके कुछ समय पश्चात् जबतक कि स्त्रीके स्तनों में दुग्ध आता रहता है और स्त्री बच्चे को दुग्ध पिलाती है यह रोग रह सकता है परन्तु बच्चेको दुग्ध पिलाना बन्द करनेके बाद वह प्रायः इस रोग से मुक्त हो जाती हैं। तत पश्चात् अस्थियां प्रबल एवं शक्तिशाली होने लगती हैं।

यह बीमारी Calcium (केलसियम) चूना और Phosphates फ्रोस्फेट्स क्षार विशेषकी न्यूनतासे प्रायः होती है। क्योंकि यह दोनों पदार्थ स्त्रीके बच्चेकी वृद्धिके लिए परम आवश्यक पदार्थ हैं। इस लिये उसमें इनका व्यय होनेसे इनकी न्यूनता हो जाती हैं।

परन्तु Vitamin D (विटामिन डी) Calcium (केलसियम) और Phosphates (फोस्फेट्स) के साथ Injuction इन्जेक्शन द्वारा शरीरमें पहुंचानेसे स्त्रियां की यह बीमारी नष्ट हो जाती है। गरिष्ट भोजन भी बच्चों में शोष रोग पैदा करता है क्योंकि बच्चों द्वारा उपरोक्त भोजन पचाये नहीं जासकते।

Vitamin E (विटामिन ई) यदि कुछ वनस्पतियों का तेल Sterile adult animals (स्टेराईल एडल्ट अनीमल्स) वन्ध्यत्वसे ग्रसित जीवों को खिलाया जाय तो प्रायः कुछ समयके लिए वे इस रोगसे मुक्त हो सकते हैं। इस तेलमें पौष्टिक पदार्थ विटामिन ई (Vitamin E) वर्त्त-मान रहता है।

इस पौष्टिक पदार्थ विटामिन ई (Vitamin E) की कमीके कारण पुरुष और स्त्रियोंमें Sterility (स्टेरेलिटी) वन्ध्यत्व हो जाता है। पुरुषों एवं स्त्रियोंमें यदि यौवनावस्था प्रारम्भ होने पर यदि वीर्य पैदा नहीं हो या उसका परिपाक नहीं हो या दूषित वीर्य्य पैदा हो तो इसका यह हो कारण कि शरीरमें Vitamin E (विटामिन ई) की न्यूनता है। जब युवक या युवतियोंमें दोनोंमें ही इस पौष्टिक तत्व की कमी रहती है तो सन्तान उत्पत्तिमें मुख्य बाधा उपस्थित्त हो जाती है। या तो गर्भ स्थापन ही नहीं होता है यदि होता है तो शीघ्र ही गर्भपात हो जाता है। यदि गर्भपात नहीं हो तो जो शिशु उत्पन्न होता है वो चिर काल तक जीवित नहीं रह सकता।

यदि Olive oil (ओलिव आयल) या जैतूनका तैल या और अन्यान्य तैल मनुष्य भोजनके प्रयोगमें लाता रहे तो यह ऊपरोक्त कष्ट दूर हो जाते हैं।

Vitamin k (विटामिन के) बच्चों एवं वयोवृद्ध मनुष्यों में इस पौष्टिक तत्वकी कमीके कारण अनेक प्रकारके रोग पैदा हो जाते हैं जैसे कामला, जलोदर, रक्तश्राव इत्यादि। यह पौष्टिक तत्व Vitamin K विटा-

मिन के बसा में अतिशीघ्र विलीन हो जाता है या घुल जाता है। मुख द्वारा भोजन में खिलाने से अतिशीघ्र उपरोक्त बीमारीयों से मनुष्य मुक्त हो जाता है।

उपरोक्त जितने पौष्टिक तत्वों Vitamin (विटामिन) के विषय में जो लिखा गया है यह सब पौष्टिक तत्त्व Fat Soluble (फट सोल्युबल) या बसा में विलीन होने वाले होते हैं। अब Water Soluble (वाटर सोल्युबल) याने जल में सिश्रित होने वाले पौष्टिक तत्वों के विषय में बर्णन किया जायगा। इन तत्वों के विषय में जानकारी करना अत्यन्त कठिन काम है क्यों कि इसको जलसे प्रथक करना आसान नहीं है।

Vitmin B_1 विटामिन बी १ :—जब धानमेंसे चावल निकाला जाता है और उसका परिमार्ज्जन चावलोंको सुन्दर बनानेके लिए किया जाता है उस समय एक पदार्थ अवशेष रह जाता है उस पदार्थमें Vitmin B_1 (विटामिन बी वन) अत्याधिक मात्रामें पाया जाता है। इसके अतिरिक्त Dried yeast (ड्राइड ईष्ट) में भी अत्याधिक मात्रामें उपलब्ध होता है। इस पौष्टिक तत्वकी न्यूनतासे ज्ञान तन्तुवोंमें एवं समस्त स्नायु प्रणालीमें प्रर्याप्त दुर्बलता आ जाती है। इस पौष्टिक तत्व की अत्यधिक न्यूनता से Beri-Beri (बेरी-बेरी) नामक रोग पैदा हो जाता है। स्नायुविक दुर्बलतासे मनुष्यकी पाचन क्रिया भी नष्ट हो जाती। इस पौष्टिक तत्वकी न्यूनताके कारण हृदय भी दुर्बल हो जाता हैं—हृदयकी गति धीमी पड़ जाती है। इस पौष्टिक तत्वकी कमी यदि शिशु कालमें प्रारम्भ हो जाय तब बच्चोंका शरीर निरन्तर वृद्धिको प्राप्त नहीं होता। इसकी कमीसे मनुष्यको पतली टट्टी लगनी प्रारम्भ हो जाती है।

Vitamin B_2 Complex (विटामिन बी टू कम्पलेक्ष) इस पौष्टिक तत्वके द्वारा घातक पाण्डुरोग Pernicious anaemia (परनीसस अनेमिया) Gaundis (त्वक शोथ कामला) एवं Derma-

tatis (इरमे टाइटिस) आदि रोग ठीक होते हैं। इस पौष्टिक पदार्थका B_2 Complex (बी टू कमप्लेक्स) भी कहते हैं और जी G 1 भी कहते हैं। इस पौष्टिक पदार्थमें मुख्य दो पदार्थ रहते हैं, जिसमें एकको Riboflavin (रीबोफ्लेविन) और दूसरा पदार्थ Nicotinamide (नीकोटीने माइड) नाम वाला होता है। मनुष्यमें जब उपरोक्त बीमारियां हो जाती हैं तब Nicotinamide (नीकोटीने माइड) या Nicotinic Acid (नीकोटीनिक एसिड) खाकर मनुष्य स्वस्थता प्राप्त कर लेता है।

Vitamin B_3 विटामिन बी थ्री—यह पौष्टिक पदार्थ पक्षियोंमें एवं मुख्यतया कबूतरोंकी स्वास्थ्य रक्षा तथा शरीर वृद्धिमें परम उपयोगी सिद्ध हुआ है। जो पौष्टिक तत्व Vitamin B_1, B_2, B_4, (विटामिन बी वन, बी टू, बी फोर) के अतिरिक्त होता है उसे विटामिन बी थ्री कहते हैं।

Vitaamin B_4 (विटामिन बी फोर)—यह पौष्टिक तत्व चूहोंकी शारीरिक वृद्धिमें मुख्यतया लाभ पहुंचाता है।

Vitamin C:-(विटामिन सी)--फलोंके ताजा स्वरससे एक पदार्थ प्राप्त होता है जो वात रक्त एवं त्वचाकी समस्त बीमारियोंमें तथा रक्त विकारोंमें लाभ पहुंचानेमें परमसिद्ध हुआ है।

सन्धिवात इत्यादि बीमारियोंमें भी इस पौष्टिक तत्वकी न्यूनता हो जाती है। शरीरको स्वस्थ रखनेके लिए एवं पौष्टिक तत्व शरीरमें उपलब्ध करनेकी मुख्य एवं सरल उपाय यह है कि फल खानेसे विटामिन सी (Vitamin C) और ई कोड लीवर ओयल (Cod liver Oil) मछलीका तैल खानेसे Vitamin A, D (विटामिस ए और डी) Yeast (ईष्ट) सेवन करनेसे Vitamin B_1 (विटामिन बी वन) और बी B_2 और सेव या एक दर्जन नित्यप्रति अंगूर खानेसे Vitamin C (विटामिन सी) और ई (E) शरीरमें स्वास्थ्य रक्षाके लिये पहुंच जाते

हैं। पाश्चात्य विद्वानों के मतानुसार Cod liver Oil (कोड लीवर आयल) या मछलीका तैल एक चम्मच मात्रामें यदि नित्यप्रति सेवन किया जाय तो मुख्य मुख्य पौष्टिक तत्व शरीरम पहुंच जाते हैं।

———

त्रिदोष ज्वर

त्रिदोष ज्वर—(Severtoxamia or Septicemia)

यह ज्वर उपद्रव भेदसे अनेक प्रकारका होता है। सन्निपातकी उत्पत्ति वात, पित्त, कफ तीनों दोषोंके दूषित होने पर होती है। जिस दोष के लक्षण विशेषतया प्रबल होते हैं उसीकी प्रधानता मानकर चिकित्सा की जाती है।

माधवाचार्यके मतसे सन्निपातके लक्षण:—

जिस ज्वरमें क्षणमें दाह और क्षण में शीत हो, अस्थि सन्धि तथा शिरमें दर्द हो, स्राव युक्त मैले लाल फटे हुए नेत्र हों, तन्द्रा, मोह, उन्माद प्रलाप, खांसी, श्वास, आदि लक्षण हों, कानोंमें शब्द श्रवण तीव्र पीड़ा, कंठमें कांटे उत्पन्न हों; शिरमें चक्कर, तथा जिह्वा काली-खरदरी हो, सम्पूर्ण अङ्गमें शिथिलता हो, थूकमें कफ पित्त या रक्त आता हो, सिर इधर उधर पटकता हो, तृषा अधिक हो, निद्रा नाश हो, हृदयमें पीड़ा, पसीना, मल और मूत्र इनका विलम्बसे तथा कमउत्सर्ग हो, किसी समय पसीना अधिक आता हो, व्याधि प्रभावसे शरीरमें कृशता विशेषतया नहीं व्यक्त हो; निरन्तर गलेमें घर-घर आवाज होती हो, शरीरमें लाल काले चकत्ते हो गये हों; चुपचाप पड़ा रहता हो, मुंह

कान, नाक आदि पक गये हों, पेटमें आध्मान हो, दोषका परिपाक दीर्घ कालमें हो, उसको सान्निपातिक ज्वर या त्रिदोषज ज्वर कहते हैं। इस ज्वरके चरक संहितामें दोषों के विकल्प भेदसे निम्नानुसार बहुतसे भेद किये हैं परन्तु यहां विशिष्ट १३ सन्निपातों का विवरण ही लिखा जा रहा है।

सुश्रुत मतसे सन्निपातके लक्षण :—

निद्रा नाशो भ्रमः श्वास स्तंद्रा सुप्ताङ्गता रुचिः।
तृषा मोह मदस्तम्भो दाहः शीतं हृदिव्यथा ॥ १ ॥
पक्तिश्चिरेण दोषाणामुन्मादः श्यावदन्तता।
रसनापरूषा कृष्णा सन्धि मूर्द्धास्थि जारूजः ॥ २ ॥
निर्भुग्न कलुषे नेत्रे कर्णौ शब्दरुजा न्वितौ।
प्रलापः स्रोत सम्पाकः कूजनं चेतना च्युतिः ॥ ३ ॥
स्वेद मूत्र पुरीषाणा मल्पशः सुचिरात्स्रुतिः।
सर्वजे सर्वलिङ्गानि विशेषश्चात्र मे शृणुः ॥ ४ ॥

भावार्थः— निद्राका नष्ट हो जाना; भ्रम, श्वास, तन्द्रा, अङ्गमें शून्यता होना अर्थात् स्पर्श ज्ञान न रहना, प्यास, मोह, मद, स्तम्भ (दाह) शीत लगना, हृदयमें पीड़ा होना, दोषों का परिपाक देरीसे होना, उन्माद होना, दांतकालेपड़ जाना, जिह्वामें कालापन तथा खरदरापन होना, सन्धि स्थानोंमें, मस्तक, हड्डियों में वेदना होना, आंखका बैठ जाना और गदलापन होना, प्रलाप याने निरर्थक बोलना, मुख, कान, नाक आदि का पक जाना, कण्ठसे कफ युक्त अवाज निकलना, बुद्धिका नाश होना, पेशाब, टट्टी एवं पसीनेका अल्प मात्रामें बिलम्बसे होना इत्यादि लक्षण तथा सम्पूर्ण बातके लक्षण जिस रोगमें एक साथ दिखाई दें उसको सन्नि

पात कहते हैं। यह उपरोक्त लक्षण सुश्रुताचार्यने बतलाये हैं। सुश्रुत संहितामें इस रोगके विषयमें पृथक २ दोषानुसार भेद नही किये है। केवल सन्निपातकी अभिन्यास और हतौजस यह दोही संज्ञा मानी हैं। कफ प्रधान दोषवालेको अभिन्यास तथा बात एवं पित्त प्रधानको हतौजस माना है। इसी तरह सिद्धान्त निदानमें भी भेद नहीं किये हैं। चरकाचार्यने इसके अनेक भेद किये हैं। जिसके अन्तर्गत आज कलकी प्रचलित बीमारियां जिनको देखकर हम लोग नई बीमारी समझ कर छोड़ देते हैं उन सबको खोजनेसे पूरा विवरण मिलता है। निदानमें चाहे एक मत न हो, लेकिन चिकित्सा करते समय जिस दोषके उपद्रव अधिक बढ़े हुये होते है, उनको ही शमन किया जाता है।

चरकाचार्यने तथा अन्य आचार्यों ने सन्निपातके विकृति भेदसे उपद्रवा नुसार १३ (तेरह) भेद किये हैं। जिनके नाम ये हैं।

सन्निपातके भेद

सन्धिकश्चान्तकश्चैव रुग्दाहश्चित्त विभ्रमः।
शीता ङ्गस्तन्द्रिकश्चैव कण्ठ कुब्जश्च कर्णकः ॥
त्रिख्याता भुग्न नेत्रश्च रक्तष्ठीवि प्रलापकः।
जिह्वकश्चेत्यभिन्यासः सन्निपातास्त्रयोदशः ॥

आयुवद शास्त्रमें इस प्रकार इनके नाम हैं, संधिक, अन्तक, रुग्दाह चित्त बिभ्रम, शीताङ्ग, तन्द्रिक, कंठकुब्ज, कर्णिक, भुग्ननेत्र रक्तष्ठीवी, प्रलापक, जिह्वक, और अभिन्यास।

साध्या साध्यता—

सन्धिकस्तन्द्रिकश्चैव कर्णकः कण्ठ कुब्जकः।
जिह्वकश्चित्त विभ्रंशः षट् साध्याः सप्तमारकाः ॥ ५ ॥

सन्धिक, साध्य है तन्द्रिक, कर्णक, कण्ठ कुब्जक, जिह्वक, और चित्त

विभ्रम, इसको कष्ट साध्य मानाहै। रुग्दाह अत्यन्त कष्ट साध्य तथा अन्य ६ जैसे अन्तक, शीताङ्ग, भूग्ननेत्र, रक्तष्ठीवी, प्रलापक, अभिन्यास ये आसाध्य माने हैं।

सन्निपात मर्यादा विबरण

सन्धिके वासरा सप्त चान्तके दश वासराः।
रुग्दाहे विंशतिर्ज्ञेया बह्वयष्टौ चित्त विभ्रमे ॥ ६ ॥
पक्ष मेकन्तु शीताङ्गे तन्द्रिके पञ्चविंशतिः।
विज्ञेया वासराश्चैव कंठ कुब्जे त्रयोदशः ॥ ७ ॥
कर्णके च त्रयो मासा भुग्ननेत्रे दिनाष्टकम्।
रक्तष्ठी विनिदग्धस्त्राः प्रलापेस्युश्चतुर्दशः ॥ ८ ॥
जिह्वके षोडशाहानि पक्षोऽभिन्यास लक्षणे।
परमायुरिदं प्रोक्तं म्रियते तत्क्षणादपि ॥ ९ ॥

दोष, साध्या साध्यता एवं परिपाक काल सूचक तालिका

	सन्निपातप्रकार	साध्यासाध्यता	दोषप्राधान्य	परिपाकसमय
१	सन्धिक	साध्य	वात	७
२	अन्तक	असाध्य	पित्त	१०
३	रुग्दाह	अत्यन्त असाध्य	पित्त	२०
४	चित्तविभ्रम	कष्ट साध्य	वात	२४
५	शीताङ्ग	असाध्य	कफ	१५
६	तन्द्रिक	कष्ट साध्य	वात	२५
७	कण्ठ कुब्ज	कष्ट साध्य	पित्त	१३
८	कर्णिक	कष्ट साध्य	पित्त	३ मास
९	भुग्ननेत्र	असाध्य	पित्त	८
१०	रक्तष्ठीवी	कष्ट साध्य	पित्त	१०
११	प्रलापक	असाध्य	वात पित्त	१४
१२	जिह्वक	कष्ट साध्य	पित्त	१६
१३	अभिन्यास	असाध्य	वात	१५

इस प्रकार इन सन्निपातों की अवधि तथा साध्यासाध्य अवस्था शास्त्रकारोंने बतलाई है। साथमें ऐसा भी कहा है कि "म्रियन्ते तत्क्षणादपि।" अर्थात् किसी भी समय ये मर्यादा का उल्लंघन करके क्षणमें ही मारक बन जाते हैं। इस विषयमें भी शास्त्रकारोंके बहुतसे मतभेद हैं।

"सप्तमे दिवसे प्राप्ते दशमे द्वादशेऽपिवा।
पुनर्घोर तरो भूत्वा प्रशमंयाति हन्तिवा॥"

बात प्रधान ७ वें दिन, पित्त प्रधान, १० वे दिन और कफ प्रधान सन्निपात १२ वें दिन मलपाक होनेसे शान्त हो जाते हैं। अथवा घोरतर होकर धातुपाक होनेसे रोगीको मार देते हैं। सुश्रुतका मत है कि अभिन्यास ७ वें दिन, हतौजस १० वें दिन और सन्यास १२ वें दिन मल पाक होने पर शान्त हो जाते हैं।

भालुकि ने भी ज्वरकी मर्य्यादा इस प्रकार लिखी है।

सप्तमी द्विगुणा यावन्नवम्ये कादशी तथा।
एषात्रिदोषमर्य्यादा मोक्षायच वधायच॥

भालुकिने द्विगुण तक भी मानी है जैसे (७-१४) (९-१८) (११-२२) इस अवधिमें सन्निपात या तो रोगीको छोड़ देता है या मार देता है। इसलिये दूसरे हफ्तेमें रोगीको बीमारी अति कष्टदायक हो जाती है। इसका प्रधान उद्देश्य यही है कि मल पाक होनेसे रोगी धीरे २ दोष पाचन होने पर बच जाता है, और धातुपाक होने पर रोग घोरतर होकर रोगीको मार देता है। इसलिये सन्निपात ज्वर की साध्यासाध्यता का अनुमान रोगके उपद्रवोंका बलाबल देख कर ही किया जाता है।

धातुपाक का लक्षण

सम्बाध्यमानो हृदिनाभिदेशे गात्रेषु वापाकरूजोञ्झितेषु।
प्रक्लिष्ट वाक्चेति रुजा ज्वरार्त्तः सधातुपाकी कथितो भिषग्भिः॥
अन्यदपिं निद्राबलौजो रुचि वीर्यनाशो हृद्वेदनागौरवताल्प चेष्टा।
विष्टम्भ तापस्य किलारतिः स्यात् सधातुपाकी मुनिभिः प्रदिष्टः॥

भावर्थः– जिसके हृदय और नाभि प्रदेशमें दबाने पर पीड़ा हो, गात्रमें पाक और पीड़ा हो, बोली कठिनतासे निकले, सम्पूर्ण शरीरमें वेदना और ज्वर हो उसको धातुपाक कहते हैं। इसके दूसरे लक्षण निम्न हैं निद्राका ह्रास, हृदयमें भारीपन, मलमूत्रका अवरोध, जड़ता, अन्नमें अरुचि, बलका नाश, पेटको दबाने अथवा वेदना स्थानको दबाने पर दिन पर दिन वेदना बढ़ती हुई मालूम देती हो तो धातु-पाक समझना चाहिये।

मलपाक लक्षण

दोषः प्रकृति वैकृत्यं लघुता ज्वर देहयोः।
इन्द्रियाणाञ्च वैमल्यं मलानां पाकलक्षणम्॥

भावार्थः–दोष प्रकृतिका उल्टा होना अर्थात् बढ़ते हुए दोषोंका घटना, ज्वर और देहमें हल्कापन, इन्द्रियोंमें विमलता याने हल्कापन हो तथा वेदना शान्त हो जावे ये मलपाकके लक्षण हैं। अतः सन्नि-पातकी चिकित्साके समय धातुपाक एवं मलपाककी तरफ ध्यान देना बहुत जरूरी है। क्योंकि सन्निपातके चिकित्सकको मृत्युके साथ संग्राम करना पड़ता है। यदि वह इस संग्राममें विजय पा जाता है वह सम्पूर्ण रोगोंको जीत लेता है। जो वैद्य समुद्र (गहन) रूपी सन्निपातके फन्देसे मरते हुये रोगीको बचा लेता है वह सम्पूर्ण

सुकृत कर्म्मोंको करने वाला और सर्व तरहसे आदर के योग्य होता है।

असाध्य लक्षणम्

दोषे विवृद्धे नष्टेऽग्नौ सर्व सम्पूर्ण लक्षणः।
सन्निपातज्वरोऽसाध्यः कृच्छ्र साध्यस्ततोऽन्यथा ॥

जिस सन्निपातमें तीनो दोष बढ़ जावें, और अग्नि नष्ट हो जाय और सन्निपातमें लिखे हुए सम्पूर्ण लक्षण हो जाय तो इस रोगको असाध्य समझना चाहिए। अन्यथा न्यून हो तो कष्ट साध्य या साध्य जानें।

ज्वर प्रशमन—सन्निपात ज्वरमें ज्वरका प्रशमन दो प्रकारसे होता है। एक तो धीरे २ जैसे आज १०३ डिग्री ज्वर है तो कल १०२॥ परसों १०२ इस रीतिसे घटते घटते बिल्कुल उतर जाता है। दूसरा प्रशमन एक साथ १०२ से ९७-९८ डीग्रीं तक पसीना आकर हो जाता है। यह खतरनाक होता है इसको कोलेप्सस्टेज (Collapse Stape) कहते हैं।

———

सुश्रुतमतसे सान्निपातिकज्वरमें अभिन्यासके लक्षण

नात्युष्ण शीतोऽल्य संज्ञो भ्रान्तपेक्षी हतः स्वरः।
खरजिह्वः शुष्क कण्ठः स्वेद विण्मूष्म् वर्जितः॥
सास्रो निर्भुग्नहृदयो भक्तद्वेषी हतः प्रभः।
श्वसन् निपतितः शेते प्रलापोपद्र वान्वितः॥
तमभिन्यास मित्याहु हतौजस मथापरे।
सन्निपातज्वरं कृच्छ्रमसाध्यमपरे जगुः॥

भावार्थः—जिसका शरीर न ज्यादा ठण्डा हो और न ज्यादा गर्म हो, संज्ञा कम हो गई हो, घबराया हुआ देखे, स्वर भंग हो गया हो, जिह्वापर खरदरा पन हो, कंठ सूखता हो, नेत्र जलसे भरे हुए दिखाई देते हों, हृदय भारी हो, भोजनमें अनिच्छा हो, चेहरे की कांति नष्ट हो गई हो, तथा स्वांस खींच-खींचकर लेता हो, गिरे हुएकी तरह सोता हो, प्रलापादि उपद्रवोंसे युक्त हो ऐसे लक्षणों वाले ज्वरको अभिन्यास ज्वर कहते हैं। कोई इसको हतौजस भी कहते हैं। यह कष्टसाध्य होता है एवं किसी-किसी ने इसको असाध्य भी माना है।

अभिन्यासके भेद

निद्रोपेत मभिन्यासं क्षीणंविद्या द्धतौ जसम्।
सन्यासगात्रं संन्यासं विद्यात्सर्वात्मके ज्वरे॥

कफकी उल्वणतासे अभिन्यास होता है। वात पित्तकी अधिकतासे हतौजस होता है आगे इसका पूरा विवरण लिखा जायगा

तब ही निश्चय हो सकेगा, और इसमें ओजक्षय हो जाता है, तब तीनों दोषोंसे सन्यास होता है।

सुश्रुतमें विशेष भेद नहीं माने, लेकिन चरकाचार्यने काल भेदसे १३ सन्निपात माने हैं। फिर भी कौन समय कहां और किस प्रकार का सन्निपात हो जाय, इसका कोई भी नियम नहीं है। शास्त्रकारोंने सन्निपातोंकी संज्ञा प्रधान उपद्रवोंके अनुसार ही दी है, जिसका ज्ञान नामोच्चारणसे भी हो जाता है। इन सन्निपातोंकी साम्यता अधिकांश नीचे लिखे हुए नामोंसे मिलती है। जैसेः—

आयुर्वेद रोगका नाम	दोष	पाश्चात्य रोग
तन्द्रिक	वातश्लेष्म प्रधान	इन्फ्ल्युएञ्जासे Influenza
प्रलापक	वातपित्त प्रधान	टाइफस से Typhus
रक्तष्ठीवी	कफपित्त प्रधान	न्युमोनियां में Neamonia
भुग्ननेत्र	वातपित्त प्रधान	सैरोब्रोस्पाइनल फिभर Cerobro-spinal fever
सन्धिक	आमवात प्रधान	र्‍यूमेटिक Rheunatic fare
दण्ढक ज्वर	„	„ Rheumatic „
रुग्दाह	पित्तप्रधान	टाइफाइड Typhoid

सन्निपात ज्वरके अन्तमें होनेवाले उपद्रव

वाधिर्य्यमङ्ग वैकल्य मुन्मादो मूकताऽन्धता।
क्वचित्स्युः सन्निपातान्ते एकशोवा द्विशोपिवा॥
सन्निपात ज्वरस्याऽन्ते कर्णमूले सुदारुणः।
शोथः सञ्जायते तेन कश्चिदेव प्रमुच्यते॥

कभी-कभी किसी रोगीको सन्निपात ज्वरके अन्तमें बहिरापन, अङ्गोंमें शिथिलता अर्थात हाथ पैरोंमें शून्यता उन्माद, वाक्शक्तिका लोप या गुन-गुनापन आदि उपद्रव हो जाते हैं। इसी तरह

कभी कर्णमूलमें कठिन शोथ हो जाता है। जिसको कर्णमूल शोथ कहते हैं। इसके होने से कोई ही रोगी ठीक होता है।

सन्निपातिक ज्वरमें चिकित्सा या क्रिया क्रम—

यद्यपि सन्निपात ज्वरमें वात, पित्त कफ तीनों दोष प्रारम्भसे ही रहते हैं, तथापि कफका निवास स्थान भी आमाशय और इनका उत्पत्ति स्थान भी आमाशय ही होनेके कारण सन्निपात ज्वरकी चिकित्साके समय सर्व प्रथम शास्त्र कारोंने लिखा है कि:—

"सन्निपात ज्वरे पूर्वं कुर्या दाम कफापहम्।
पश्चात् श्लेष्मणि संक्षीणे शमयेत्पित्त मारुतौ॥

अर्थात्:—समस्त सन्निपातिक ज्वरोंमें सर्व प्रथम आम और कफको जीतना चाहिये। जब कफका शमन हो जाय तो उसके बाद पित्त और वायुका शमन करना चाहिये। इसलिए सर्व प्रथम लंघनका विधान है और शास्त्रमें भी लिखा है:--

लङ्घनं वालुका स्वेदो नस्यं निष्ठी वनन्तथा।
अवलेहोऽञ्जनश्चैव प्राक्प्रयोज्यं त्रिदोषजे॥

सन्निपात ज्वरमें प्रथम लंघन, बालुका स्वेद, नस्य, निष्ठीवन उद्धूलन, अवलेह तथा अंजन कर्म करना चाहिए। अब यह प्रश्न उठता है कि लंघन कितने दिन कराना चाहिये और किस रोगमें कराना चाहिये, कम लंघितके क्या लक्षण है तथा अतिलङ्घितका पहिचान क्या है, तथा उसमें नुकसान और फायदा क्या होता है? बहुत दिवस तक लङ्घन करने पर भी रोगीकी शक्ति कैसे बनी रहती है? इनका उत्तर इस प्रकार है।

लङ्घनकी अवधि

त्रिरात्रं पंचरात्रं वा दश रात्र मथा पिवा,
लंघनं सन्निपातेषु कुर्यादारोग्य दर्शनात्।

सन्निपातके रोगीको ३ तीन ५ पांच दस १० दिवस तक लङ्घन करानेका विधान है। यदि इतने दिनमें भी दोष पाचनके लक्षण दिखलाई नहीं दे, तो ज्यादा भी जरूरतके अनुसार करा सकते हैं। जब तक सामदोष रहते हैं तब तक रोगीमें लङ्घन सहन करनेकी शक्ति रहती है। दोषोंके क्षीण होनेपर रोगी १ मिनट भी लङ्घनको सहन नहीं कर सकता है

लङ्घन लक्षण

शरीर लाघव करं यत् द्रव्यं कर्म वापुनः तल्लंघनमिति।

अर्थात् जो कर्म अथवा द्रव्य शरीरमें हल्कापन करे उसीको लङ्घन कहते हैं।

लङ्घनमें कारण

अमाशयस्थः सामदोषोअग्निं हत्वा मार्गान् पिधापयन् ज्वरं विदधाति तस्मा लघन माचरेत। तदेतत् अनवस्थित दोषाणां स्वस्थानादितस्तत प्रचलितानां दोणां पाचनं करोति तेन ज्वर निवृत्तिर्भवति शरीरे लाघवञ्च। यद्यपि सन्निपात ज्वरमें रोगीको लङ्घन अत्यन्त हितकर है, (तथापि बातवाले वृद्ध सगर्भा स्त्री और अति दुर्बलको लङ्घन नहीं कराना चाहिए। इसके अलावा काम जनित ज्वर, बात ज्वर, एवं आगन्तुक ज्वरमें भी लङ्घन नहीं कराना चाहिए। लङ्घन कराते समय चेतना शक्तिका भी ध्यान रखना चाहिये क्योंकि इसी पर समस्त कार्य कारिणी शक्तियोंका भार है, और बलकी रक्षा करनेसे ही आरोग्यता प्राप्त होती है।

सम्यक् लङ्घितके लक्षण

लङ्घन करते समय जिस रोगीका टट्टी पेशाब अपान वायुका सुख पूर्वक निसर्ग हो जावे शरीर हल्का मालूम दे, हृदय हल्का हो जावें, डकार साफ आने लगे, गला और मुखका स्वाद ठीक हो जाय, आलस्य न आता हो, मनमें किसी प्रकारकी ग्लानि न हो, पसीना आवे, खानेकी रुचि हो जावे प्यास ठीक लगे, अन्तरात्मा प्रसन्न हो, तो समझना चाहिए कि अब इसको लङ्घन ठीक हो गया है, अब और करानेकी जरूरत नहीं है। अति लङ्घन करनेसे अङ्गुलियोंकी सन्धियां टूटने लग जाती हैं, अङ्ग भङ्ग हो जाता है, खांसी-मुखशोष होने लगता है। भूख बन्द हो जाती है, अरुचि तथा तृषा ज्यादा लगने लगती है, कानोंसे कम सुनने लगता है। नेत्रोंसे कम दिखाई देने लगता है, मनमें तथा हृदयमें कमजोरी प्रतीत होती है, अन्धेरी आती है, देह और अग्नि कमजोर हो जाती है। इसलिए सन्निपातमें जब तक प्रलाप और कम्पन नहीं बन्द हो तब तक बृँहण नहीं देना चाहिये। डाक्टरोंका सिद्धान्त है कि रोगीको हर हालतमें खानेको जरूर देना चाहिये, अगर मुंहसे नहीं खा सके तो ऐसे रोगीको गुदाके द्वारा अथवा इन्जेक्शनके द्वारा ही खाद्य जरूर पहुंचाना चाहिए। हमारे आयुर्वेदका ऐसा सिद्धान्त नहीं है इसीसे सन्निपातकी चिकित्सामें पाश्चात्य चिकित्सक सफल नहीं होते। इसलिये सन्निपातकी चिकित्साके समय आयुर्वेदीय उपक्रम को नहीं भूलना चाहिये। जब तक सामदोष हो, तब तक लङ्घन कराना हित कर है। वात कफाधिक हो तो बालुका स्वेद अथवा अन्य सूखे पदार्थोंका सेक, केवल वात दोषमें स्निग्ध सेक, कफदूरीकरणार्थ नस्य, बेहोशीको दूर करनेके लिये अञ्जन, कफनिकालनेके लिये निष्ठीवन कराना चाहिये। लीन कफको निकालनेके

लिये अवलेह इत्यादि उपचारोंका विधान है। सन्निपातमें जो प्रधान उपद्रव हो उसको सर्व प्रथम जीतना चाहिये। कफको पतला करके निकालना चाहिये। जहां तक हो सके कफको सूखने नहीं देना चाहिए। रेचन कारक औषधिका प्रयोग कभी नहीं करना चाहिये। आवश्यकता हो तो हलकी बस्तिका प्रयोग या ग्लेसरीनकी वर्तीका प्रयोग करना चाहिये।

अब १३ प्रकार के सन्निपातोंका पृथक २ विशिष्ट वर्णन किया जायगा।

सन्धिक सन्निपात (Rehumatic Fever)

पर्य्याय सन्धिक ज्वर आमवातिक ज्वर निरुक्ति -

पूर्वरूप कृत शूल संभवं शोषबात बहुवेदना न्वितम् ।
श्लेष्म ताप बल हानि जागरं सन्निपात मिति सन्धिकं वदेत्

इस ज्वरमें सन्धिस्थानोंमें शोथ सहित भयंकर दुःख देने वाली पीड़ा होती हैं। बात का प्रकोप होकर शूल होता है। मुखसे कफ गिरता रहता है, शरीरमें कमजोरी मालुम होती है। वेदनाके कारण नीन्द नहीं आतो है तथाकफ युक्त खांसी भी चलती है। शास्त्रमें इनकी अवधि ७ दिवसकी मानी है। लेकिन साधारण रूपसे जब यह बीमारी होती है, तब तो ७ रोजमें हो आराम हो जाता है। परन्तु जहां पर विशेष रुपसे आक्रमण होता है वहां पर इसकी मर्यादाका कोई ठिकाना नहीं रहता; कारण जबतक भीतरी आमदोष बाहर नहीं निकलता तबतक इस बिमारी से छुटकारा नहीं होता। सिद्धान्त निदानमेंभी आमवात जनित ज्वरको ही सन्धिक सन्निपात माना है। और मेरी समझमें भी इनमें कोइ भेद नहीं है। क्योंकि माधवाचार्यने जो आमावात के लक्षण लिखें हैं, वे सब हो लक्षण इस सन्धिकमें भी पाये जाते हैं।

मधवाचार्योक्त आमवात निदान एवं सम्प्राप्ति Actrology & Pact rology

दूध मछली आदि विरुद्ध भोजनसे, अजीर्ण होनेसे; अति व्यायाम अति मैथुन, जल क्रीड़ा आदि विरुद्ध चेष्टाओंके करनेसे, मन्दाग्नि वाले अपरिश्रमी, निषिद्ध भोजनोपरान्त व्यायाम न करनेवाले को दूषित आम वायु द्वारा प्रेरित हो कर श्लेष्मस्थान आमाशय, उरः स्थान त्रिकस्थान शिरकण्ठ सन्धि स्थान, में प्राप्त होता है। फिर वहां विदग्ध होकर वायु द्वारा अति दूषित होकर धमनियोंमें गमन करता है। फिर तीनों दोषों द्वारा कुपित होकर रसवाहिनियोंके मार्गको अवरोध करदेता है। तब नाना वर्ण वाला पिच्छिल आम अग्निमान्ध हृद्दौर्बल्यादि कफ केल क्षण उत्पन्न करता है। फिर व्याधियोंका आश्रय रूप यह अजीर्णसे उत्पन्न होने वाला मनुष्यके शरीरमें क्रमशःसंचि तहोकर आम संज्ञाको प्राप्त हो जाता है। जिससे यह आम और वायु दोनों त्रिकस्थान एवं सन्धिकस्थानमें जाकर शरीरको जकड़ देते है। इसलिये इस रोगका नाम आमबात है।

माधवोक्त आमबातके लक्षण (Signs & Symptions)

अङ्गमर्दो रूचिस्तृष्णा ह्यालस्यं गौरवं ज्वरम्।
अपाकः शूनताङ्गानामामवातस्य लक्षणम्॥
सकष्टः सव रोगाणां यदा प्रकुपितो भवेत्।
हस्त पाद शिरो गुल्फ त्रिक जानूरू सन्धिषु॥
करोति सरुजं शोथं यत्र दोषः प्रपद्यते।
सदेशो रुजतेऽत्यर्थं व्याविद्ध इव वृश्चिकैः॥
जनयेत् सोग्निदौर्बल्यं प्रसेकाऽरुचि गौरवम्।
उत्साह हानि वैश्वर्य्य दाहश्च बहु मूत्रताम्॥

भावार्थ—अङ्गमर्द, अरुचि, तृषा, आलस्य, शरीरमें भारीपन होना ज्वर, अजीर्ण अङ्गोमें शून्यता आदि लक्षण होते हैं। तब इसको आम वात कहते हैं। जब यह आमयुक्त बात कुपित होता है। तब हाथ पैर शिर, गुल्फ त्रिकस्था नादिकोंमें जाकर शोथ उत्पन्न करता है। फिर इसके द्वारा सन्धि स्थानोंमें बिच्छु काटनेके समान भयंकर पीड़ा होती है। तथा इस रोगसे अग्निमान्ध, मुंहसे लालाश्राव, बैचेनी शरीरमें भारी पन, उत्साहका नाश, स्वरभेद, दाह, पेशाबका अधिक होना; तृषा; वमन, भ्रम, मूर्च्छा, हृदयका भारी पन, मलावरोध, जड़ता, आंतोमें कूजन, तथा आध्यानादि दोष पैदा हो जाते हैं। सिद्धान्त निदानमें भी इसका पूरा विवरण मिलता है, उसने भी सन्धिक को आमवातके अन्तर्गत ही माना है उसमें भी सन्धिवातका निम्नलिखित लक्षण लिखा है।

व्रणशोथ रुजा तोदैः सन्धीनापीड़यन् भृशम्।
ज्वरो घोरः महद्रोगः सन्धिको नाम कथ्यते॥

जिस रोगमें हड्डियोंके सन्धि स्थानोमें शोथ सहित सुई चुभानेके समान पीड़ा होती हो और तीव्र ज्वर हो, तथा हृदयमें दुर्बलता प्रतीत होती हो, उसीको संधिक सन्निपात कहते हैं।

पाश्चात्य मतानुसार निदान सम्प्राप्तिलक्षणादिका विशिष्ट विवरण

इस रोगका कारण शरीरमें यूरिक एसिड की अधिकता है। जब यह एसिड तन्तुओंमें प्रवेश करता है, तब इस रोगकी उत्पत्ति होती है। यूरीकएसिड कई कारणसे बनता है। प्रधान कारण यकृत ही है। जब यकृत्में गड़बड़ी हो जाती है तब ही यह अधिक मात्रामें बनता है। यकृतमें बीमारी होनेका कारण जैसे आयुर्वेदमें बताया गया है, प्रकृति विरुद्ध आहार शयनादि आचरणोंके करनेसे वैसे ही मद्यादिक सेवनसे यह रोग हो जाता है। किसी किसीको यह रोग वंश परम्परा

से भी हो जाता है, अथवा बृक और यकृत् विकृत होनेसेभो यूरिक एसिड शरीरमें बढ़ जाता है। सर्व प्रथम इस रोगमें छोटी सन्धियां आक्रान्त होती है। और यदि सन्धिबातमें पहिले बड़ी सन्धियोंमें पीड़ा हो तो यह रोग उन्हीं लोगोंको प्रायः होता है जिनकी जिन्दगी आराममें बीतती है।

शरीर ढ़कनेके लिये पूरे बस्त्र नहीं मिलते, अथवा जिनको पेट भर भोजन नहीं मिलता है।

गठिया प्रायः ऐस आराम से रहनेवालों को ही होता है। इस रोग का आक्रमण दो तरह से होता है, एक तीव्र, दूसरा साधारण यह रोग वृद्धों की अपेक्षा युबकों में अधिक पाया जाता है। इस रोग का समय शोतकाल माना गया है। इस रोग में तीव्र ज्वर, नाड़ी तेज भारी, त्वचा उष्ण, जिह्वा मैली मूत्र गदला हो जाता प्रारम्भ में साधारण ज्वर १०२—से १०४ डिग्री तक सन्धियों में शोथ प्रतीत होता है, पसीना अधिक आने लगता है। शोथ युक्त स्थान में तीव्र पीड़ा होने लगती है, पेशाब बहुत कम उतरता है। प्रायः रोगारम्भ में हृदयमें पोड़ा सन्निपातिक लक्षण, जैसे श्वास, कास, प्रलाप, अनिद्रा, तीव्र ज्वर १०५—१०६ तक भी किसी-किसी को हो जाता है। उस समय शीत क्रिया करनी चाहिये। नहीं तो मृत्यु होने का भय हो जाता है। युवावस्था में १६ वर्ष की उम्र से लेकर ३, वर्ष की आयु वालों में इसका आक्रमण विशेषतया होता है। और उनके सन्धिस्थानों में वेदना भी अधिक होती है। बाल्यावस्था में २ साल से १६ साल की उम्र के भीतर यह रोग हो जाता है तो हृदय यन्त्र में विकृति पैदा हो जाती है। यह रोग स्त्रियों की अपेक्षा पुरुषों को अधिक होता है। स्त्रियों में भी २० साल की उम्र से कम उम्र वालियों मेंही ज्यादा कर के होता है। किसी समय वृद्धावस्था में भी किसी-किसी को हो जाता है। वृद्धों को होने पर चिरकाल तक रहता है। एक समय

होने पर कुछ भी गड़ बड़ी करने से इस रोगका बार २ आक्रमण होने लगता है। सम्यक् तया चिकित्सा करने से २-३ सप्ताह निकल जाने पर आराम हो जाता है लेकिन अधिकांश रोगी हृद्रोग से पीड़ीत रह जाते हैं। ठीक होने के बाद भी हृदय की दुर्बलता के कारण थोड़ा सा परिश्रम करने से ही श्वास शोथादि लक्षण हो जाते हैं। अथवा किसो समय हृदयावरोध हो कर मृत्यु भी हो जाती है। पाश्चात्य चिकित्सकों ने इस रोग को संक्रामक एवं कीटाणु जन्य भी माना हैं। इसकी परीक्षा मूत्र चिकित्सा विधि जो इसके प्रारम्भ में लिख गयी है उसके द्वारा कर के देखें। इस रोग का निर्णय पाश्चात्यों ने पशुओं में कृत्रिम रीति से इस रोग को उत्पन्न कर के किया है। इस रोंग की साम्यता प्रायः पायो मियां (पूम मय रक्त रोग तथा बात रक्त) से भी होती है। परन्तु इस रोग में वेदना स्थान में पीप नहीं होता इसलिये इसकी समानता करना ठीक नहीं। और बात रक्त में ज्वर नहीं रहता इसलिये उससे भी समानता नहीं जँचती। डाक्टरों का कथन है कि इस रोग को पैदा करने वाले कीटाणु जब रक्त में बहुत बढ़ जाते हैं तब अपाचित आम रस में मिलकर धमनियों द्वारा सन्धि स्थान में पहुंचते हैं तब दुग्धाम लेक्टिक एसिड (Lactic Acid) बढ़ जाता है। इसी से आम बात की उत्पत्ति होती है। इससे सन्धि स्थानास्थित श्लेष्म धरा कला में कीटाणुओं का प्रवेश होने से दाह युक्त शोथ हो जाता है। तथा रक्ताणुओं की संख्या घट जाने से और श्वेताणुओं की संख्या बढ़ जाने से शरीर की कान्ति नष्ट हो जाती है। रोग होने के पहिले जब इस रोग की सम्भावना होती है तब हाथ पैर टूटने लग जाते हैं। तथा ग्रन्थियों में सूजन आ जाती है फिर थोड़े दिन बाद पैरों के घुटनों में वेदना आरम्भ होती है। फिर इसके बाद अन्य सन्धिस्थान इस रोग से आक्रान्त हो जाते हैं, तथा शीत पूर्वक ज्वर भी हो जाता है। किसी समय एक सन्धि की पीड़ा कम हो जाती है और दूसरी में चालू हो

जाती है। उस समय वायु का दोष अधिक रहने से तीव्र शूल होता है, पित्ताधिक्य होने से दाह और रक्त वर्णता, कफाधिक्य होने से जड़ता और भारी पन हो जाता है।

इस उपरोक्त सन्धिक सन्निकपात से पीड़ित बहुत से रोगी बाहर तथा अस्पताल में मेरी चिकित्सा में आये जिनमें से २ रोगियों का विवरण लिख रहा हूं। चिकित्सा का अनुभव, विज्ञ वैद्य करने की कृपा करेंगे। जहां तक मेरा अनुभव है कि निम्नोक्त चिकित्सा शैली से अधिकांश रोगी अवश्य निरोग होते हैं।

स्वानुभूत चिकित्सा:

रोगीनाम—जगदीश प्रसाद जाति—खन्डेलवाल उम्र—२२, ग्राम—नांवां (कुचामन जिला) किसन लालजी बांगड़ का मुनीम चितरंजन एवन्यु यह रोगी अस्पताल में सं० १९४३ में भर्ती हुआ उस समय इस को ज्वर १०४ डिग्री का। हाथ पैरों के सन्धि स्थानों में शोथ युक्त, अत्यन्त भयं कर वेदना थी। ज्वर निरन्तर बना रहता था, पसीना बार २ होता था, प्यास अधिक थी, जिह्व मैली, टट्टी पेशाव की कब्जियत थी, श्वास खासीं, शिर में दर्द था, पीड़ा के कारण निद्रा भी नहीं आती थी। पेट में भारी पन था। इत्यादि लक्षण थे। इसके पहिले रोज मेरे को घर पर देखने को बुलायाथा। मेरे से पहिले और भी कितने ही डाक्टर तथा वैद्य इसको देख चुके थे। मेरे पूछने पर मालुम हुआ कि डाक्टरों नें इनफ्लुएञ्जा कायम किया है तथा वैद्यों नें मन्थर ज्वर बतलाया है। मैंने जब इस रोगी की परीक्षा की तो सन्धिक ज्वर का सन्देह हुआ। मैंने घर वालों से भी कह दिया कि इसको आम वात की बीमारी है, कमसे कम २ सप्ताह आराम होने में लगेंगे। अगर मेरे कथनानु सार आप परिचर्य्या का इन्तजाम कर सके तो, यहां रखो नहीं तो अस्पताल में भर्ती करा दो। उन्हों ने कहा कि अस्पताल ही में ले चलिये, यहां

हमारे पास उपचार का कोई प्रबन्ध नहीं है। दूसरे रोज ता० ७-४-४३ को १० बजे प्रातः अस्पताल में लाकर भर्ती करा दिया गया, तब ऊपरे लिखे अनुसार लक्षण थे। रोगी वेदना के कारण बहुत छट पटा रहा था, दोनों हाथों में तथा दोनों पैरों के सन्धि स्थान में शोथ युक्त भयंकर पीड़ा हो रही थी जिससे हाथ पैर हिला भी नहीं सकता था तब मैंने भर्ती करके निम्न लिखित औषधियों की व्यवस्था प्रारम्भ की।

ता० ७-४-४३

प्रातः ७ बजे	सायं ४ बजे	मध्याह्न १२	रात्रिको ८
ज्वरसंहार ३ रत्ती		चन्द्रप्रभा	
रामबाण १ गो		वज्रक्षार	
शृंग २ रत्ती		अर्कमकोयसे	

रास्नादिपचानमधुसे १ खुराक अष्टाङ्गावलेह मधूसे बार २ चाटनेको वेदना स्थान पर वृसैन्धवादि तैलका मालिस कराकर वालुकी गरम पोटलीका सेक कराके फलालैनकी पट्टी वंधवा दी। पथ्यमें जल-वार्ली तथा पीनेको गरम करके ठंढा किया हुआ जल।

ता० ८-४-४३ पूर्ववत्

ता० ९-४-४३ वेदनामें कुछ कमी हुई ज्वर भी ऊपरमें १०३, नीचेमें १०२ रहा, टट्टी बिल्कुल नहीं हुई तब मधु गरम जलमें मिलाकर वस्ति प्रयोग किया जिससे गांठदार १ टट्टी हुई जिससे रातको ३ घंटा नींद भी आई।

ता० १०-४-४३ को ज्वर सुबह १०१ सायं फिर १०३ डीग्री तक हुआ पेशाब लाल रंगका कम हुआ। खांसी रातको अधिक आई, कफ भी निकला, छातीमें कुछ दर्दका अनुभव करने लगा, तब धत्तूरादि घृत की मालिश कराई गई। जिससे कुछ शान्ति पड़ी, नींद रातको कम आई।

११-४-४३ टट्टी नहीं हुई इस वजहसे सूजन भी बढ़ी तथा वेदना भी अधिक रही जिसके कारण नींद भी नहीं आई। तब सुबहके क्वाथमें ऐरंड तैल १ औंस मिलवाया गया, जिससे दिनमें ३ बार टट्टी हुई सायंकाल ४बजे मैंने देखा तो रोगीकी तबियत टट्टी लगनेसे प्रसन्न थी। रातको निद्राके लिये निद्रायुक्त कुमुदेश्वर १ खुराक देने के लिये व्यवस्था की गयी।

१२-४-४३ सुवह १० बजे मैंने देखा और रातके हालात पूछे तो रोगीने कहा कि रातको निद्रा ४ घन्टे आई, पीड़ा भी कमती रही और खांसी भी कम है, कफ भी अच्छी तरहसे निकलता है। कुछ भूखकी इच्छा है। तब उसका पथ्यमें जलवार्ली ऽ॥ दी गई। दिन में हालत कल जसी ही रही। टट्टी लगनेसे इसको आराम मिला। जिससे प्रातःकालके क्वाथमें रोज ऐरण्ड स्नेह १ औंस देना शुरू कर दिया गया।

१३-४-४३ सुबह रात के हाल चाल पूछने पर पता लगा कि रात को वेदना कम रही नींद अच्छी आई ज्वर भी ९९ डीग्री था सायं-काल भी ज्वर १०१ तक बढ़ा, दवा पूर्ववत् चालू रक्खी गयो।

१४-४-४३ हालत ठीक ज्वर प्रातः ९९ सायं १०० तक हुआ।

१५-४- ३ सुबह हालत ठीक थी लेकिन सायंकाल फिर ज्वर १०३ हो गया तथा हाथ पैरोंमें वेदना भी फिर बढ़ गई। तब विचार करके देखा गया कि किस कारणसे दुबारा आक्रमण हुआ तब निर्णय हुआ कि आज एकादशी है इसीसे ऐसा हुआ औषधि परि-वर्तन किया गया।

१६-४-४३	प्रातः	सायं
	आमवातारिगुटिका	बृ० वातगजांकु १ गो
	लशुन सोंठ निर्गुन्डी क्वाथसे	शृंगभस्म २ रत्ती
म० रा०	चन्द्रप्रभा बज्रक्षार गोक्षुर अर्कसे	महारास्नादि क्वाथ.

वेदना शान्त्यर्थ अदरख)— चावल)— ओकड़ा २ तो० हींग।) भर जलमें पीस कर गरम करके लेप किया तथा रातको बृ० सैंधवादि तैल गरम करके मालिश भी कराई गई।

१७-४-४३ इस उपचारसे ज्वर भी प्रातः १०० हुआ दिनमें औषधादि की व्यवस्था कल जैसी ही रखी गई।

१८-४-४३ को सुबह देखा और रातके हाल पूछे तो पता लगा कि ज्वर तो रातको १०१ ही रहा परन्तु शोच और वेदनामें कोई फर्क नहीं पड़ा तब लेप बदलना पड़ा सुल्फाबीज, वच, सोंठ, गोखरू, बरनाछाल, पुनर्नवामूल, देवदारू, कचूर, गोरखमुन्डी, प्रसारिणी, अरनीछाल, मैनफल, इन सबको कूट कर सिरकामें पीसकर गरम करके वेदना स्थानमें लेप किया और ऊपर रुई चिपका कर पट्टी बांध दी, जिससे १ घन्टे बाद ही दर्दमें शान्ति पड़ गई, नींद आ गई सायंकाल लेप गरम जलसे हटाकर बृ० विषगर्भ तैलकी मालिश कराकर शंकरश्वेद दिया गया।

१९-४-४३ हालत ठीक आमवातारि देनेके बाद टट्टी आपसे आप होने लग गई एरंडस्नेहकी आवश्यकता नहीं पड़ी।

२०-४-४३ हालत बहुत ठीक ज्वर भी प्रातः ९८ सायंकाल ९९ तक ही हुआ वेदना बिल्कुल शान्त दवामें कोई भी तरहका हेर फेर नही किया दिन पर दिन तबियत सुधरने लग गई पथ्यमें दूध बार्ली मोसमीका रस दिया गया, इस तरहसे रोगी ३ सप्ताहमें बिल्कुल ठीक हो गया। धीरे २ दवाईयां कम कर दी गई, पथ्य भी दिया गया; ता० १-५-४३ को अपने घर चला गया। वहां पर इसको कुछ दिन तक रसोनपिंडका साधन कराया जिससे बिल्कुल स्वस्थ हो गया। इस उपरोक्त प्रक्रियासे मैंने कितने ही इलाज करके देखें। अवश्य फायदा होता है।

शास्त्रोक्त चिकित्सा

इस रोगमें लंघन स्वेदन, स्नेहन, विरेचन, वास्ति, तथा कड़वी दीपन चरपरी औषधियां हित कर हैं। तथा वालु मट्टी की नमककी गरम पोटलोका सेक भी हितकर है। अथवा स्नेह रहित वात नाशक औषधियोंका परिसेक या वास्प स्वेद देवें पीनेके लिये येचकोल शृंत जल देवें। रोगीको पूर्ण विश्रान्ति दे, और नरम बिछौनों पर सुलावे। इस रोगमें हृदय पुष्टिकर वातघ्न, वद्धकोष्ठता नाशक, मूत्रल औषधियां, ही अधिकतर हितकर हैं। मालिश तथा वस्ति कर्म के लिये वृ० सैन्धवादि तैलसे बहुत अच्छा फायदा होता है।

तीव्रावस्थामें आम निष्कासनार्थ ऐरंड स्नेह सोंठ क्वाथसे देने से अच्छा फायदा होता है, इस रोगमें निम्न लिखित औषधियोंमें से किसी भो औषधिका प्रयोग किया जा सकता है। शठ्यादि क्वाथ, रास्ना-सप्तक, रास्नादिक्वाथ, महारास्नादि क्वाथ, रसोनादि क्वाथ, दशमूल क्वाथ, सिंहनाद गूगल, आमवातारि गुगल, बृ० बातगजांकुश रस, रामवाण वृ० योगराज गूगल, वात गजेन्द्र सिंह रस, समीरगज केशरी, कुचलादि वटी, रसोनपिंड, स्वच्छन्द्र भैरव अजमोदादि चूर्ण, अलम्बु-षादि चूर्ण। इनमें से प्रकृत्ति अनुकुल औषधिका प्रयोग करने से शीघ्राति शीघ्र सन्धिक सन्निपात का शमन हो जाता है।

अगर हृद्दौबल्य हो तो एतदर्थ समीरपन्नग रस, नारदीप, लक्ष्मी बिलास, मकरध्वज, अर्जुनाभ्रक मुक्ता, आदि औषधियोंका भी संयोग कर सकते हैं।

इस रोगमें प्रयोग की गई औषधियों के नुसखे।

आम वातारि वटिका।

रस गन्धक लौहार्क तुत्थं टंकण सैन्ध वान्।
समभागान् विचूर्ण्याथ चूर्णाद्विव गुणगुग्गूलु।

गुग्गुलो पादिकंदेयं त्रिफला चूर्ण मुत्तमम् ।
तत्समं चित्र कस्याथ घृतेन बटिकां कुरु ।
खादेन्माष द्वयं चेदं त्रिफला जल यो गतः ।
आमबातारि वटिका पाचिका भेदिका ततः ॥
आमबातंनिहन्त्याशु गुल्म शूलो दराणि च ।
यकृत्प्लीहान मष्ठीलां कामलां पाण्डु मुग्रकम् ॥
हलीमकाम्ल पित्तं चश्वयथुं श्लीपदावुर्दौ ।
ग्रन्थि शूलंशिरः शूलं गृध्रसींबात रोगहा ॥
गलगण्डं गण्डमालां कृमिकुष्ठ बिनाशिनी ।
आध्मान बिद्रधि हरी चोदर व्याधिनाशिनी ॥
आम बाते ह्यतीवोग्रे दुग्धं मुग्दाश्च वर्जयेत् ॥

रसयोग सागर

भावाथ—पारा, गन्धक, लोहभस्म, ताम्रभस्म, शु० नीलाथोथा, शु० बृ० सुहागा, और सैन्धब नमक, इन सबको समान भाग लेकर खरलमें डाल कर पीसले वे। फिर चूर्ण से दूना शु० गुग्गुल इस से ¼ त्रिफला चूर्ण और इसके बराबर चित्रक मूल चूर्ण मिलाकर घोटकर घृत मिला कर २ मासे की गोलीयां बनालेवे। यह बटिका पाचन और भेदन करने वाली है। यह गोली त्रिफला जल मधू के साथ खानेसे आमबात गुल्मशूल, उदर रोग, यकृत, प्लीहा, अष्ठीला, कामला, और पाण्डु रोग, हलीमक, अल्मपित्त, सूजन, अबुर्द, ग्रान्थीशूल, शिरः शूल गृध्रसी, सभीबात रोग, गलगन्डु, गण्डमाला, कृमि, कोठ, आफारा, विद्रधि, और पेट सम्बन्धो तमाम बीमारीयों को नष्ट करती है। तीक्ष्ण आम बातमें दूध और मूंगको छोड़ देना चाहिए।

रामबाण रस

पारदामृत लवङ्ग गन्धकं भागयुग्म मरिचेन मिश्रितम् ।
जातिकाफलमथाऽर्धभागिकं तिन्तिड़ी फल रसेन मर्दितम् ॥
मर्दयेत्सकल मातपेखरे वीजपूर भव नागरङ्ग जैः ॥

भावार्थ,

शु० पारा १ तो० विष १ तो० लवङ्ग १ तो० शु० गन्धक १ तो० कालीमिर्च २ तो० जायफल आधा तोला इन सबका चूर्ण तैयार करके खरलमें डाल डांसरियां स्वरस की और इमली स्वरसे की भावना देकर १-२ रत्तीकी वटी वना लेवे। इसके प्रयोगसे संग्रहणी, आमवात, अग्निमान्द्यादि रोग शीघ्र नष्ट हो जाते हैं।

मृगशृंग भस्म

शराव सम्पुटे दग्धं शृंग हरिणजं पिवेत् ।
गव्येन सर्पिषा युक्तं हृच्छूलं नाशयेत् ध्रुवम् ॥

भावार्थ हरिणके सींगका टुकड़ा करके शराव सम्पुट में रखकर गजपुटमें जलाने से भस्म हो जाती है। अथवा इसको अर्क क्षीर थूहरके दूधमें मर्दन कर चक्राकार टिकिया वनाकर धूपमें सुखाकर शराव सम्पुटमें वन्दकर गजपुटमें ७-८ वार जलानेसे वहुत अच्छी गुण कारी भस्म तैयार होती हैं। इसका प्रयोग हरेक प्रकार के शूल में करने से अच्छा फायदा होता है। गो घृतमें मिलाकर देनेसे हृदय गत शूलको तत्काल दूर कर देती है।

रास्नादि क्वाथ

रास्ना श्यामाकपथ्या मरिचमिसिशिवा विल्वमञ्जाऽश्वगन्धा।
यासछिन्नाऽजमोदा सुमुखमतिविषा वृद्ध दारो वृहत्यौ॥

शुन्ठीतिक्तायमानी सहचर चविकैरण्ड दार्वीभ कृष्णा।
उरुस्तम्भाम वात कफ पवन रुजं देण्डकांश्चाशु हन्यात् ॥

रास्ना, श्यामा (कालीसर) हरड़, काली मिरच, सोफ' आमला वेलगिरि' असगन्ध, दुशालभा, गिलोप, अजवाइन, तुलसी, अतीस, विधायरा मूल; छोटीकन्टकारी बड़ीकटेरी' सोंठ, कुटकी, अजवाइन, झिन्टा मूल, दारूहलदी, गजपीपल, इन सबको समान भाग लेकर जो कूट कर १ तोला क्राथको १६ तोला जलमें पकाकर ४ तोला जल अवशेष रखे। इस क्काथ के पीनेसे उरूस्तम्भ आमबात, कफरोग वातरोग तथा दण्डकरोग नष्ट हो जात।है।

रास्ना सप्तक

राश्नामृतारग्वध देवदारु त्रिकण्टकैरण्ड पुनर्नवाणाम्।
क्वाथंपिवेन्नागर चूर्णिमिश्रं जंघोरु पार्श्वत्रिक पृष्ठ शूली ॥

भावार्थ राश्ना, गिलोय, अमलतास, गुदा, देवदारु, गोखरू, एरण्ड मूल, पुनर्नवा' सर्व समान भाग लेकर क्काथ विधि से क्काथ तैयार कर सोंठके चूर्णका प्रक्षेप देकर पिलानेसे जंघा, ऊरू पार्श्व, पीठका दर्द शान्त हो जाता है।

रुच स्वेदो विधातव्यो वालुका पुटकैस्तथा

इस रोग में गरम वालू की पोट्टली का सेक करने से भी अच्छा फायदा होता है।

शठ्यादि क्काथः

शटी शूण्ठ्य भया चोग्रा देवाह्वाति विषामृता।
कषायमामवातस्य पाचनम् रुच भोजनम्।

कचूर, सोंठ, हरड़छाल, वच, देवदारू, अतीश, गिलोय'। काथ बनाकर सेवन करने से आमबात का पाचन हो जाता है।

दूसरा उदाहरण

रोगोनाम, उम्र, जाति, देश, यहांका पता,
दुर्गादेवी २२ गौड़ भिवानी, गणेशगढ रामेश्वर शर्म्मा

इसको इसके घरपर ही यह बीमारी हुई थी इलाज डाक्टरका हो रहा था मुझको भी देखने को बुलाया गया। तब निम्न लिखित लक्षण थे ज्वर १०४ पैरों के घुटनों में तथा हाथ की सन्धियों में शोथ युक्त तीव्र वेदना थी। खांसी श्वास 'टट्टी की कब्जियत पेटपर आध्मान' पेशाब लालरङ्ग का होता था वेदना से बहुत चिल्ला रही थी। रात को निन्द बिल्कुल नहीं आती थी। मैंने पिछले विवरण में जो औषध लिखी है उसी को चालू किया जिससे इसको बहुत आशातीत लाभ हुआ। परन्तु ठीक होने के बाद भी कभी-कभी परिश्रम करने से। या ठण्ढी हवा के लगने से सन्धीस्थान में पीड़ा हो जाती थी। इस लिये इसको स्वच्छन्द भैरव प्रातः सायं। म० रा रसोन पिण्ड का साधन कराया जिससे यह रुग्णा बिल्कुल स्वस्थ हो गई। इसबीमारी के अनेक रोगी मेरी चिकित्सा मे आये जिन को उपरोक्त औषधियों से अच्छा फायदा हुवा है।

डाक्टरी नुसखे

तीक्ष्ण प्रकोप में

सोडियम सिलासिलास ३ ड्राम	(Sodium Salsalic)
पोटास बाई कार्ब ४ ड्राम	(Potas Bi-carb)
मैग सल्फ ५ ड्राम	(Meg Sulph)
टि० नक्षवमिका १।। ड्राम	(Tr. Nuxwomica)
जल	८ औ०

१६ खुराक बनाई जाती हैं। इसमें से १-१ खुराक ३-३ घन्टो से देते हैं। तथा इस रोग में बिक्स (Vicks) आयोडेक्स (Iodex) अमृ-

ताञ्जन के मालिस से अच्छा फायदा होता है। वेदनाजल्दी ही कम हो जाती है। इसके अलावा सोडावाई कार्ब को जलमें घोलकर लेप भी किया जाता है। इससे भी वेदना में कमी हो जाती है।

यूनानी चिकित्सा

अकलील मुल्क बाबूना, गुलेरेवन, जो खुम्बाजी, प्रत्येक १-१ तोला पानी में पीसकर लेप करना चाहिये। इससे सन्धि पीड़ा शीघ्र ही शान्त हो जाती है।

खाने की दवा

हर्रे छाल, निशोत, शाहतरा, कासनो, १ तो०, गुलाबफूल १ तो०, इन सबको अधकचरा करके ऽ१॥ पानी में उबाल कर आधा पानी शेष रखें। इसको दिनमें ३ बार पिलाना चाहिये। यदि दस्त अधिक हो तो प्रथम २ औषधियां निकाल देनी चाहिये।

२ सपिस्तान ७ दाना, उन्नाव १० दाना, कासनो बीज १ तो०बनप्सा इनको अधकचरा कर के ऽ। पानी में भिगो कर रखें घन्टे बाद छान कर मिश्री मिला कर दिन में ३ बार पीना चाहिये। अगर कब्ज हो तो तुरेजबीन १ तो० अमलतास गूदा १ तोला और मिलादेना चाहिये।

साध्या साध्य ज्वर लक्षण

बलवत्स्वल्प दोषेषु ज्वरःसाध्योऽनुपद्रवः

जो बलवान् रोगी के अल्प दोषों से उत्पन्न हुआ, उपद्रव-रहित ज्वर हो तो साध्य होता है।

ज्वरो पद्रवा

श्वासो मूर्च्छाऽरुचिश्छर्दी तृष्णातीसार विड्ग्रहाः।
हिक्का कासाङ्ग दाहश्च ज्वरस्योपद्रवादश॥

श्वास, मूर्च्छा, अरूचि, बमन, प्यास, अतिसार, विष्टम्भ, हिचकी, खांसी शरीर में दाह, ये ज्वर मात्र के १० उपद्रव हैं। इसलिये चिकित्सक को चाहिये कि जहां तक हो हरेक सन्निपात की चिकित्सा करते समय उपद्रवों की तरफ अच्छी प्रकार से सचेष्ट रहे। जो चिकित्सक इन उपद्रवों से रोगी को बचालेता है, वह भयंकर से भयंकर सन्निपात को जीतने में समर्थ होता है। उपद्रवों को देखकर वैद्यको भय भीत नहीं होना चाहिये। जहां तक हो चिकित्सा करनी चाहिये, क्यों कि रोग शान्त होने पर सर्व उपद्रव स्वतः ही मिट जाते हैं। कुशल चिकित्सक प्रथम उपद्रवों को ही जीतते हैं, उपद्रवों में जो अधिक दुःख दायक होता है उसकी प्रथम चिकित्सा करते हैं। यदि प्रधान व्याधि बलवान हो और उपद्रव बल हीन न हो तो वहां पर प्रथम प्रधान व्याधि की ही चिकित्सा करनी चाहिये। अथवा विरोध रहित दोनों बाते हों तो दोनों की एक साथ ही चिकित्सा करनो चाहिये। ऐसा शास्त्र का नियम है।

१० उपद्रवाणा पृथक-पृथक चिकित्सा

यथा सन्निपात ज्वरे श्वास चिकित्सा

सिंहव्याघ्री, ताम्रमूली पटोली श्रृंगी पथ्या पुष्करं रोहिणीच शाकं
शय्याः शैलमल्ल्याश्च बीजं स्वासं हन्यात्स-न्निपातं दशांग॥

भावार्थ कंटकारी, बड़ी कंटकारी, दुरालभा, पटोलपत्र, काकड़ा सींगी, पखाल, पोकर मूल, कुटकी, कपूर, इन्द्रजौ

इन औषधियों का प्रयोग सन्निपातोद्भव श्वास रोगको नष्ट करता है। इस रोगमें जितनी भी औषधियां हैं वे सब प्रथक २ अथवा मिश्रित योग उपद्रव जन्य श्वासमें अच्छा फायदा करता है।

अथवा द्वात्रिंशक्वाथ पिपल्यादि चूर्णके प्रयोगसे तथा अपने उपलोंकी अग्निमें लोहेके दरांतको गरम करके उसके भागसे पसुलीमें दाग देवें तो श्वास में आराम हो जाता है।

ज्वरे मूर्च्छा चिकित्सा

आर्द्रकस्य रसैर्नस्यं मूर्च्छायामाचरेन्नरः।
अञ्जनञ्चप्रयुञ्जीत मधुसिन्धु शिलोषणै ॥
शीताम्भसाऽक्षिसेकः सुरभिर्धूपः सुगन्धि पुष्पञ्च ॥
मदुताल वृन्त वातः कदली दल स्पर्शः

मूर्च्छा रूपी उपद्रव में रोगी को अदरख रसका नस्य (सूंघनी) देना चाहिये। अथवा सैन्धवनमक मधु मैनशिल कालीमिर्च इन सबको घिसकर नेत्रोंमें अञ्जन लगाना चाहिये। या ठन्डे जलसे आंखों को भिगोना चाहिये। सुगन्धित धूप सुगन्धित पुष्पों का उपयोग करें। नरम ताड़ के पत्तोकी हवा करे, अथवा कोमल केलों के पत्तोंका स्पर्श करावे।

सन्निपात ज्वरेऽरुचि चिकित्सा

अरुचौतु शृंगबेर रजरसकैःसोष्ठौ ससिन्धुजैः कवलः
सिन्धुत्थ मातुलूँगी फल केशर धारणं वक्त्रः

अगर सन्निपात ज्वरमें अरुची रूपी उपद्रव होवें तो अदरख के रसको गरम करके उसमें सैन्धव, डालकर कुल्ला करावे या मुखमें रक्खें अथवा बिजोरे निम्बूकी केशर को सैन्धवके साथ मुखमें रक्खे।

वमन चिकित्सा

गिलोयका काथ बनाकर ठन्ढा करके मधुमिलाकर पीनेसे वमन शान्त हो जाती है। मक्षिका विट्को और मलिया गिरि चन्दनको शहत या मिश्री के साथ चाटनेसे वमन शान्त हो जाती है।

ज्वरमें तृषा चिकित्सा

विजोरानिम्बू, जम्भीरीनिम्बू, अनार, वेर, और चूका इनको एकत्र पीसकर मुंहमें रखने से प्यास शान्त हो जाती है। मुखमें चांदी की बनी हुई गोली चूसने से भी तृषा शांत हो जाती है। शीतल दूधमें मधुमिलाकर गले तक पीकर वमन करदेवे। इस तरह कईवार करनेसे तृषाशांत हो जाती है। वड़की कोंपल, खील मधुमें चाटनेसे प्यास शांत हो जाती है। इस प्रकार अन्य भी जैसे आलूवुखारा, कपूर काचरी, लवङ्गमिश्री जल, बड़ी इलायची, चुहारेकी गुट्ठी, आदि के प्रयोगसे भयंकर प्यास शांत हो जाती है।

ज्वरेऽतीसार चिकित्सा

लंघनमेक मुक्त्वा न चान्य दस्तीह भेषजं बलिनः।
समुदीर्ण दोषं चयं समयति तत्पाचयेदपि च॥

वलवान् ज्वरमें अतिसार वाले मनुष्यको केवल लंघन के सिवाय कोई अन्य औषधि नहीं हैं, क्योंकि लंघन ही एक ऐसा कर्म है जोबढे हुये दोष को शमन करता है और पाचन कर देता है। औषध यथा गिलोय, इन्द्रजो, नागर मोथ, चिरायता, नीमछाल अतीस और सोंठ, इनका क्काथ वनाकर पीनेसे ज्वरातिसार शिघ्र दूर हो जाता है।

अन्यः—सोंठ, गिलोय, इन्द्रजो नागरमोथ, इनका काथ भी अतिसारघ्न है तथा पाढ़ल, गिलोय, पितपापड़ा नागरमोथ, सोंठ चिरायता, ईन्द्रजो, इनका काथ अतिसारको वल पूर्वक नष्ट करता है। अथवा नागरमोथा स्वरस, पु० दाड़िमस्वरस, कुटजादि काथ बेलगिरि, जायफल, अतीस, आम्रबीज सोंठ इनका घीसा जल भी अतिसार को नष्ट करता है।

ज्वरे मलबन्ध चिकित्सा

ज्वरमें मलावरोध हो गया हो तो वातानुलोमन या वात नाशक क्रिया करनी चाहिये। गुदामें तीक्ष्ण औषधियों से वनाई हुई फलवर्ती के द्वारा मलको निकाले अथवा ग्लेसरीनकी वस्ती या मधु गरम जलमें मिलाकर वस्ती प्रयोग करे। अगर जीर्ण ज्वरमें मल वंध हो तो आरग्वधादि काथ का सेवन करानेसे मलबंध खुल जाता है।

ज्वरे हिक्का चिकित्सा

सैन्धव नमकका अत्यन्त बारीक चूर्ण जलमें मिलाकर नस्य देने से हिचकी दूर हो जाती है। या चिनी और सोंठका नस्य देने से हिचकी दूर हो जाती है। अथवा हींग या काली मिर्च की धूआं लगानेसे भी हिचकी दूर हो जाती है। खानेकी दवावोंमें पिप्पल्यादिलौह, श्वास कुठार पिच्छभस्म, जहर मोहरा खताई मुक्तादि चूर्णादिकका प्रयोग किया जाता है।

ज्वरे काश चिकित्सा

ज्वरमें खांसीका उपद्रव हो गया हो तो पीपल, पीपला मूल, मिरच, इन्द्रजो, पित्तपापड़ा, सोंठ, इनका चूर्ण शहतमें मिलाकर चटावे अथवा अडूसेका स्वरस मधु मिश्रित करके चटावे या अगस्त्यावलेह, चन्द्रामृत शृंग्यादि, वासावलेह, द्राक्षारिष्ट आदिका प्रयोग करे।

ज्वरे दाह चिकित्सा

ज्वरमें दाह उत्पन्न हो गया हो तो शतधौत घृतका मालिस करे, अथवा यव सक्तू, वेर, आमला, इनका धान्याम्ल कांजीमें पीसकर लेप करे अथवा कांजीसे कपड़ा भिगोकर शरीरपर उढ़ावे, तथा चन्दन घिस कर लगावे। फूलप्रियङ्गु लोधो सुगन्ध वाला खश, नाग केशर, मोथा, पीलाचन्दन, इनका प्रलेप करना चाहिये। दाहवाले पुरुषको कमल का जल पीलावे, मिश्रीका शर्वत पिलावे, दूध मिश्री मिलाकर पिलावे, ईखका रस पिलावे। पित्तघ्न चिकित्सा करनी चाहिये। अथवा चन्दनादि क्वाथ, सफेद चन्दन, पित्तपापड़ा, सुगन्ध वाला खश, नागर मोथा, कमल गट्टा, कमलकी नाल, सोंफ धनियां, पद्माख, आमला, इनका क्वाथ विधिसे क्वाथ वनाकर मिश्री मिलाकर पिलानेसे उग्र दाह शांत हो जाता है।

। श्री ।

होमियो पैथिक चिकित्सा १

नवीनाऽवस्थामें एको नाइट, आर्निका, आसनिक, व्रायोनिया कल्केरिया, रसटक्स सलफर सेवाईना।

पुरानी अवस्थामें एमान फास, फास्को रस' कलकेरियाकाव कास्टिकम, कालोसिन्थ, गुपेकम, लाइकोपोड़ियम, मैगनम, नैट्रम्यूर सैवाइना, साइलिसिया, सलफर, आदिदवाईयां दी जाती हैं पूरा विवरण हौमियो पैथिक मेटरियामेडिकामें देखिये।

पथ्या पथ्य

इस वीमारीमें पथ्यके समय एक वर्षका पुराना चावल गेहूं दूध, घृत, जो, वाजरा, जुवांर, सामक, पुरानी शराब, एरेण्ड तैल, गरम-जल, गोमूत्र, कुलथी यूष, मटर, चनेकायूष, शाकोमें सूखी मूली

का यूष, सोंठ, कालीमिर्च पीपल, अजमाईन, हल्दी, हींग, कलौंजी सैन्धव नमक, हल्दी, कांजी, बेंगुन, परवल, बथुवा, करेला, घृत कुमारी, टमाटर, सोयापत्ती, सहजन कीफली अमलतास के फूल अदरख, मट्ठा, लशुन, आदि देने चाहिये फलोंमें अनार, बेदाना, तालफल, आम, फालसा अंगूर आदि फायदा करते हैं मछली, मांस न खाना ही अच्छा है।

अपथ्य

दही, मछली, गुड़, पोईका शाक, उड़द की पिट्ठीके बने पदार्थ मावा, मूंग' सेमकी फली, केला, शीतलजल, पूर्व दिशाकी वायु मल, मूत्रादिक अवरोध, असमय भोजन, जागरण, मैथुन आदिक अपथ्य हैं तीव्र आक्रमण के समय स्नान करना, भोजन करना हानि कारक है।

लक्षणः—अन्तक सन्निपात ज्वर २

यस्मिल्लक्षणमेतदस्ति सकलैर्दोषैरुदीते ज्वरऽ
जस्त्रं मूर्ध्द विधूननं सकसनं सर्वांग पीड़ाधिका।
हिक्काश्वासकदाहमोह सहिता देहेऽति सन्तप्तता
वैकल्यश्च वृथावचांसि मुनिभिः संकीर्तितः सोऽन्तकः॥

भावार्थ—जिस सन्निपात ज्वरमें रोगी शिरको निरन्तर हिलाता रहे तथा खांसा, सर्वांगमें अन्यन्त पीड़ा हो, हिचकी श्वास, दाह, मोह, सन्ताप'विकलता, प्रलाप असम्वध भाषण करे उसको अन्तक सन्निपात कहते हैं। इसकी अवधि १० दिनकी है यह सन्निपात असाध्य होता है।

अन्तक ज्वर चिकित्सा।

इस सन्निपात ज्वरमे लंघनादि नियमोंको,तथा ज्वरनाशक औष-धियोंको छोड़कर ज्वरको हरनेवाले प्राणोंके रक्षक, मृत्युंजय (शंकर-

भगवान)का निरतंर चित्तमें ध्यान करना चाहिये, क्योंकि इसरोगमें गंगाजलही औषधि है और भगवान विष्णु ही वैद्य हैं। इनके सिवाय दूसरा कोई इलाज नहीं हैं।

लक्षण—रुग्दाह सन्निपात ज्वर

दाहाधिको भवति यत्र तृषातृषा च
श्वास प्रलाप विरुचि भ्रममोह पीड़ा ॥
मन्याहनु व्यथनकंठ रुजः श्रमश्च
रूग्दाह संघज्ञ उदितस्त्रिभवो ज्वरोऽयम् ॥

भावार्थ—जिस सन्निपातमें दाह अधिकहो, प्यास अधिक लगे, प्रलाप हो अरुचि हो, भ्रमहो, श्वासहो, वेहोशीहो, पीड़ा हो, ग्रीवा और ठोड़ीमें अत्यन्त वेदनाहो, कंठमें पीड़ा शरीरमें शिथिलताहो, उसको रुग्दाह सन्निपात कहतेहैं इसकी मियाद २० दिवसकी है।

चिकित्सा।

(१) इसरोग से आक्रान्त रोगिको तृषा शान्तिके लिये षढङ्गपानीय जल पीनेको देना चाहिये। (२) धनियें को रातको जलमें भिगोकर फिर सुवह उसमें मिश्री मिलाकर रोगी को पिलावे तो अन्तर्दाह और पित्तज्वर शान्त हो जाताहै। (३) अथवा पथ्यावलेह चाटनेको देवे।

पथ्यावलेह—पथ्यां तैलघृतक्षौद्रै लिंद्याद्दाहविनाशिनीम्।

(४) वेरी के पत्तेको दहीमें पीसकर लेपकरे। (५) कपूर; लालचन्दन, नीमकेपत्ता इनको मठ्ठे में पीसकर शरीरपर लेपकरे। (६) इस रोगीको सीधा सुलाकर उसकी नाभी स्थानपर तांवा या कांसी का वर्तन रखकर, फिर उसमें ठन्ढे जलकी धारा छोड़ेतो तत्काल दाह शान्त हो जाताहै। (७) शत धौत घृतको शरीरमें मालिसकरें, (८)कमल फूलों की माला पहनावे, (९) ठन्ढे जलाशयमें स्नान करावे। (१०)

कपड़े को कांजी में भिजोकर या तक्रमें भिजोकर अथवा ओसकर ठन्ढ़ा करके शरीर पर उढावे, इससे भी दाह शान्त होत है।

पथ्य—रोगी को लाज सत्तू मधु, या मिश्री मिलाकर देवे। वह तर्पण है।

अन्योपाया:

पुस्तस्त्रीस्तन हस्तास्य प्रवृत्तोशीरवारिणी धारा गृहे स्वप्यात्

जिस घरमें ठण्डे जलके फुहारे चल रहे हो, उसके आसपास कमल फूल खिल रहे हों जिस घरमें कमलके कोमल पत्तोंकी शय्या बनी हुई हो उसमें शयन करे अथवा जिस स्त्रीके शरीरमें चन्दनादि कलेप हो रहाहो ऐसी स्त्रीके सेवनसे भी दाह शीघ्रही शान्त हो जाताहै। अथवा मोतियोंकी मालासे अलंकृत और चन्दनादिकसे शीतलकी हुई, सुगन्धित पुष्पोंसे और वस्त्रोंसे विभूषित पुष्ट कुचोंवाली तरुण स्त्रीके आलिंगनसे तत्काल दाह नष्ट हो जाता है। आलिंगन करनेसे अगर उत्तेजना पैदा हो जाय तो स्त्रीको दूर कर देवें और हलका रुचिकर पथ्य देवें।

विशेष विवरण

दाह रोग ७ प्रकारका है जिसमें सबसे प्रथम पित्तज दाहके विषयमें यही कथन है कि यह बीमारी गर्मी रूपवाली होती है। इसकी चिकित्सा में भी पित्तज्वरके सामान ही की जाती है। इसके जो ७ भेद बतलाये हैं वे यह हैं जैसे पित्तज दाह, रक्तजन्य दाह, रक्तपूर्णकोष्ठजदाह मद्यजदाह, तृष्णानिरोधजदाह, धातुक्षयजदाह, मर्माभिघातजदाह। इनकी पहिचान भी अलग अलग है तथा चिकित्सा भी रोगके कारणानुसार ही की जाती है। लेकिन जिसके शरीरके भीतर दाह हो, और ऊपरसे शरीर ठण्डा हो गया हो ऐसा दाह रोगी असाध्य होता है।

उदाहरण

रोगीनाम	जाति	उम्र	देशका पता	यहां का पता
मदनलालशाह,	अम०	१८	झुंझणूं	६ नं० जगमोहन मल्लिक लेन

इसको प्रथम १०४ डिग्री ज्वर हुआ उसी रोज प्यास बहुत लगती थी शरीरमें भीतर और बाहर बहुत दाह मालूम देता था। श्वास जल्दी-जल्दी लेता था, प्रलाप करता था, खानेमें बिल्कुल अरुचि थी। फलरस, वार्ली इत्यादि भी नहीं खाना चाहता था कभी २ हिचकी भी चलती थी। गर्दनमें तथा ठोड़ीमें दर्द था, प्यास इतनी अधिक थी कि १ मिनट भी जलको छोड़ना नहीं चाहता था। इसको जब मैंने देखा तो पित्तज्वरका अनुभव हुआ क्योंकि पित्त ज्वरके समान इसके ज्वरके लक्षण थे। रक्त परीक्षा भी कराई गई, लेकिन रिपोर्टमें कुछ नहीं मिला। तब मैंने पित्तज्वर ज्वर चिकित्सा आरम्भ की।

प्रातः सायं		मध्याह्न—रात्रौ
ज्वर संहार	३ रत्ती	ब्रजक्षार—
प्रवाल	१	मिश्री जलसे
अमृतासत्व	२	

चन्दनादि क्वाथमधूसे षडंग-पानीय पीनेके लिये दिया

पथ्यमें जलवार्ली छीना जल, शर्बत वनप्सा, अनारका रस, मोसम्बी का रस दिया गया। इसको इसी क्रमपर चार रोज तक चलाया, लेकिन किसी प्रकारका भी फायदा नहीं हुआ। तब दवा परिवर्तन करना पड़ा।

प्रातः	म० रा०	सायं
महापित्तान्तक रस	संशमनी वटी	चन्द्रकला रस
द्राक्षादि क्वाथ मधूसे	पटोलपत्र स्वरस मधूसे	

भूनिम्बादि क्वाथसे,औरखानपानमें चालू व्यवस्था ही रखी।

इस प्रयोगसे इसकी तृषा भी शान्त हो गई तथा दाह भी शान्त हो गया इस रोगीको इस बीमारीमें २० दिन लगे थे ज्वर उतरने पर पथ्यमें रसगुल्ला प्रथम वार दिया गया, बादमें अन्य परवलका भर्ता आदि पदार्थ दिये गये।

रुग्दाह सन्निपातमें प्रयुक्त औषधियोंके निर्माणयोग।

(१) षडङ्गपानीय

मुस्त पर्पटकोशीरचन्दनोदीच्यनागरैः ॥
शृतशीतं जलं दद्यात् पिपासा ज्वर शान्तये ॥
यदप्सु शृतशीतासु षडङ्गादि प्रयुज्यते ॥
कर्षमात्रं ततो द्रव्यं साधयेत् प्रास्थिकेऽम्भसि
अर्धशृतं प्रयोक्तव्यं पाने पेयादि संविधौ ॥

भावार्थ—

नागरमोथा, पित्तपापड़ा, खस, लालचन्दन, गन्धवाला, सोंठ सब मिलाकर २ तोला जल २५६ में डालकर अग्नि पर पाक करे। जब जल आधा रह जाय उतार कर छान ले और ठण्डा होने पर रोगीकी प्यास बुझानेके लिये थोड़ा-थोड़ा करके पिलावे। इससे प्यास तथा ज्वर दोनों शान्त हो जाते हैं।

(२) चन्दनादि क्वाथ

पटीरपर्पटकोशीरनीरनीरदनीरजैः
मृणालमिसिधान्याकपद्मकामलकैः कृतैः।
अर्द्धशिष्टः सिताशीतः पीतः क्षौद्र
समन्वितः क्वाथो व्ययोहयेद्दाहं नृणांचपरमोल्वणम् ॥

भावार्थ—सफेदचन्दन, पित्तपापड़ा, सुगन्धवाला, खस नागरमोथा, कमलगट्टा, कमलडंडी, सौंफ, धनियाँ, पद्माख, आमला, इनको समान

भाग लेकर जो कूट करके २ तोला काथ्य द्रव्यको ३२ तोला जलमें डालकर पकावे, आधा शेष रखे, शीतल होनेपर मिश्री या सहद मिलाकर पीनेसे भयंकर दाह शान्त हो जाता है।

(३) भूनिम्बादि कषाय

ब्राह्मी द्राक्षा जल धर वचोशीर शम्याकतिक्ता
पथ्याधात् कलितरुबला निम्बकोशातकीभिः।
भूनिम्बाद्यो भवति महितः पञ्चमूली द्वयेन।
पीतः क्वाथः मकलपवन व्याधि रुग्दाह हन्ता ॥

भावार्थ—ब्राह्मी, मुनक्कादाख, नागरमोथ, वच, खस, आरग्वध, कुटकी, हर्रं छाल, आमला, बेहड़ा, खरेंटीमूल, निम्बछाल, कड़वीतुम्बी, वृ० पंचमूल, लघुपंचमूल, यह भूनिम्बादि काथ पीनेसे तमाम बात व्याधि और रुग्दाह सन्निपात मिट जाता है।

अन्यदपि—

(४) जलधर मलयज नागर सवाल कोशीर पर्पटैः क्वथितम्।
यः पिबति पयः शीतं शाम्यति रुग्दाहकस्तस्य ॥

भावार्थ—नागरमोथा' सफेदचन्दन, सोंठ; सुगन्धवाला, खस; पित्त-पापड़ा इनको दूधके साथमें औटा शीतल करके पीने से रुग्दाह सन्निपात नष्ट हो जाता है।

(५) चन्द्र कलारसः

प्रत्येकं तोल-मादाय सूतं ताम्रं तथाभ्रकम्।
द्विगुणं गन्धकश्चैव कृत्वा कज्जलिकां शुभाम् ॥
मुस्ता दाडिम तोयेन केतकी मूलवारिणा।
सहदेव्या कुमार्याश्च पर्पटो शीर मागधि ॥

श्री खण्ड सारिवा चैषां समानं चूर्णकं क्षिपेत् ।
द्राक्षाफलकषायेण सप्तधा परिभावयेत् ॥

छाया शुष्कं विधायाथ वटी कार्या चणोपमा ।
महाचद्रकला नाम्ना रसेन्द्रोऽयं निरुपितः॥

अम्लपित्तः प्रशमनः प्रदर ध्वंसकारकः ।
अन्तर्वाह्य महादाह विध्वंसन घना घनः ॥

ग्रीष्मकाले शरत्काले विशेषेण प्रशस्यते ।
रस मूर्च्छा रक्तपित्त पित्तज्वर दवानलः ॥

मूत्र कृच्छ्राणि सर्वाणि प्रमेहानपि दुस्तरान् ।
हरत्येष रसो नूनं देहे चद्रकलाप्रदः ॥

भावार्थ—शु०पारा, ताम्रभस्म, ये प्रत्येक १-१ तोला शु० गन्धकर तोला इनको कज्जलि बनाकर फिर नागरमोथा, अनार, केतकी जड़, सहदेवी, घीकुआंर, इनके रसों में १-१ दिन मर्दनकरे बाद में पित्तपापड़ा, खस, पीपल चन्दन अनन्तमूल; इनको १-१ तोला लेकर कूट, कपड़छान चूर्ण करके मिलादेवे, और द्राक्षाके काथकी, भावना देकर चणक प्रमाण गोलियां बनाकर छायांमें सुखाकर रख छोड़े। इसमें से अग्निवल देखकर १ से ३ गोली तक पित्तहरानुपानके साथ देने से अम्लपित्त, प्रदर बाहर और भीतर का दाह; रसजन्य मूर्च्छा, रक्तपित्त' पित्त ज्वर, समस्त मूत्र कृच्छ्र और प्रमेह सभी नष्ट हो जाते हैं।

(६) महा पित्तान्तक रसः

जातिकोष फले मांसी कर्ष तालीश पत्रकम् ।
मृतं स्वर्णं मृतलोहं अभ्रं दिव्यं समांशकम्।

सर्व तुल्यं मृतं तारं समं निष्पिष्य वारिणा ।
द्विगुञ्जाभावटी कार्या पित्तरोग विनाशिनी ॥
कोष्टाश्रितश्च यत्पित्तं शाखाश्रित मथापिवा ।
शूलश्च वाम्लपित्तश्च पाण्डुरोगं हलीमकम् ॥
दुर्नामं भ्रान्ति वान्तिश्च क्षिप्रमेव विनाशयेत् ।
महापित्तान्तकोनाम सर्व पित्त विनाशकः ॥

भावार्थ—जावित्री, जायफल; जटामांसो, कूठ; तालीसपत्र; स्वर्ण भस्म लौहभस्म; अभ्रकभस्म; प्रत्येक १-१ तोला रजतभस्म ८ तोला इन सबको साथमें जलसे घोटकर २ रत्तीकी गोली बनावे। यह रस तमामपित्तरोगों को शीघ्र ही नष्ट करता है।

(७) संशमनी वटी

सिद्धयोग संग्रह (रचियता आचार्य यादव त्रीविक्रम जी) द्वारा निर्दिष्ट ।

चित्त विभ्रम सन्निपात

लक्षण

यदि कथमपि पुंसां जायते काय पीड़ा,
भ्रम मद परितापो मोह वैकल्य भावः ।
विकल नयन हासो गीत नृत्य प्रलापो ऽभिदधति
तम साध्यं केऽपि चित्त भ्रमाख्यम् ।

भावार्थ—जिस सन्निपातमें मानसिक भ्रम हो वेदना, नाचना, गाना, मोह, संताप वेहोशी, दाह घवराहट और नेत्रोंमें व्याकुलतादि लक्षण दिखलाई दें उसको चित्त विभ्रम सन्निपात कहते हैं। इसकी अवधि २४ दिवस की है।

इस रोगमें वायु प्रधान रहता है। अतः शास्त्रमें इसकी चिकित्सा के विषयमें निम्न लिखित आदेश दिया है।

चिकित्सा

दीपनं पाचनं यस्मात् यद्वायोरनु लोमनम्,
बात हन्नाति कफ कृन्तत्प्रयुञ्जीत भेषजम्।
बात रोगाधिकारोक्तान् घृत तैल रसांस्तथा
रसायनानि च प्राज्ञो भिषगत्र प्रयोजयेत्।

इस रोगमें जो औषध दीपन पाचन एवं वायुका अनुलोमन तथा नाश करती हो और कफको भी बढ़ाने वाली न हो ऐसी का प्रयोग करना चाहिये तथा बात रोगाधिकारोक्त तैल, घृत, रस एवं रसायनोंको काममें लेना चाहिये।

चित्त विभ्रम सन्निपातके रोगीको सान्त्वना देनेवाले बचनोंसे, प्यारसे, तर्पणसे, चित्तमें उत्साह भरनेसे, प्रसन्नता द्वारा, आश्वासन श्रद्धा, एवं शुश्रुषा द्वारा चिकित्सा करो।

उदाहृण—

रोगी नाम	उम्र	जाति	यहाका पता	देश सुजानागढ़
सुरेन्द्रनाथ	४०	जैन	२० न० शोभाराम बैशाषष्ट्रीट	

इसको यह बीमारी इसके घरपर ही हुई थी ४ रोज तक डाक्टरी इलाज होता रहा लेकिन कुछ फायदा नही हुवा, तब बैद्य भगवानदत्त का इलाज चालू हुआ, मुझे भीउन्होंने राय लेनेके लिये बुलाया। मैंने जब देखा तथा पुराने हालत भी पूछे उस समय निम्न लक्षण थे ज्वर प्रात १०० सायं १०२ कुछ खांसी मानसिक उद्वेग बहुत था कभी पूजा करता था कभी रोता था, कभी हंसता था, कभी गालियां देता था,

कभी दवा खा लेता था, कभी नहीं खाताथा, किसी समय सोजाता था किसी समय रात दिन बैठा ही रहता था, बीचमें बोलने वाले पर बिगड़ जाता था। घबराहट बहुत थी, नेत्रों में व्याकुलता थी। इस तरह इस में चित्त विभ्रम सन्निपात के पूरे लक्षण थे, तब मैंने निम्न लिखित औषध प्रारम्भ करनेकी सलाह दी मैंने यह व्यवस्था प्रारम्भ की

३-११-४४	प्रातः	सायं	केवल जलवाली
	ब्राह्मी वटी	बृ०वातचिन्तामणि	मिश्रिभृतजलदिया
	द्राक्षादिक्वाथसे	ब्राह्मादि क्वाथसे	
	मध्यान्ह रात्रि	वज्रक्षार	
		आयामकाञ्जिकसे	

ता० ३-से ७-११-४४ तक यही दवा चालू रही। हालतमें भी कोई परिवर्तन नहीं हुआ नींद कभी आ जाती थी कभी नहीं आती थी। ७ ता०को मुझे फिर बुलाकर दिखलाया। रोगी ने मेरे साथ घन्टे भर तरह २ की पागल की तरह बात की। मैंने भी उसकी हां में हां मिलाई और सान्त्वना भी दी जिससे उसके दिलमें कुछ धैर्य्य भी हुआ।

दवा फिर कल वाली ही चालू रखी। रोगी को मेरे साथ बात चीत करने से बहुत सन्तोष हुवा इसलिये वह मेरे को प्रातः और सायं दोनों समय देखने के लिये बुलाने लग गया। मै दोनों समय उसके घर जाकर पूरी सान्त्वना देता था। एक दिन रोगी ने कहा कि मेरा चित्त यहां पर नहीं लगता है, इसलिये मै पारसनाथके बगीचेमें जाकर वहीं ही रहना चाहता हूं। घर वालोंने तथा मैंने उसको बहुत समझाया लेकिन वह माना नहीं। और दूसरे रोजही प्रातः काल बगीचेमें चला गया। दोपहरमें मेरेको बुलाकर फिर दिखलाया, और कहा कि मेरी मोसम्बो और डाब खाने की इच्छा हैं। मैंने भी आज्ञा दे दी उसने उसी समय मोसम्बी मंगवाई और उसका रस लिया। ज्वर भी उस समय उसको ६ ६ में था चित्त बहुत खुश था। बहुत शान्ति से बातें

करता था। अस्तु मैं चालू दवाई के लिये, कह कर चला आया। दूसरे रोज मैं फिर देखने के लिये गया तब इनके स्वजनों के द्वारा खबर मिली कि रातको इनको नींद नहीं आई। और रातको ३बजे ही मन्दिर में जाकर पूजा करने लगगये जो सुबह ६ बजे मन्दिर मे पूजा खत्म करके आये। मैनें रोगी को देखा और बातचीत भी की तो अनुमान हुआ कि कल से तबियत बहुत ठीक है। मैंने घर वालों को भी कह दिया कि पूजा करने से इनकी तबियत बहुत ठीक है। अगर इनकी इच्छा हो तो रोज पूजा करने दीजिये। दवा और पथ्य जो चल रहा है वही चलने दीजिये। इसी तरह यह रोगी अपने नित्य नियम का साधन करता हुआ २४ रोजमें बिल्कुल स्वस्थ हो गया और पथ्य दे दिया गया।

प्रयुक्त औषधियों के निर्माण योग, (ब्राह्मी वटी; बृ० वातचिन्तामणि के योग) आगे प्रकरणमें लिखे जायगें। केवल काथों के योग यहां दिये जा रहे हैं।

(१) द्राक्षादिक्वाथ

मृद्वीकाऽमरदारु मत्स्य शकलामुस्ताऽऽमलक्योऽमृता
पथ्यारेवत रामसेनक रजो राजी फलैः संयुता ॥
हृन्युग्श्चित्त रुजोऽथ दर्दुर दला पाठा पटोली पयः
पथ्या पर्पट राज वृक्ष कटुकाशम्बूक पुष्प्य भृताः

भावार्थ— दाख, देवदारु, कुटकी, नागरमोथा, आमला, गिलोय, हरड़छाल, अमलतास; चिरायता, पित्तपापड़ा, पटोलपत्र;। यह मृद्विकादि क्वाथ-क्वाथविधिसे तैयार करके अनुपान रूपमें देनें से चित्त विभ्रम सन्निपात में अच्छा फायदा होता है।

(२) ब्राह्मी, पाठा, पटोलपत्र, सुगन्ध वाला, हरड़ छाल, पित्त पापड़ा, अमलतास, कुटकी, शंखाहुली इनका क्वाथ बनाकर देने से चित्त-भ्रम सन्निपात नष्ट हो जाता है।

(३) यदि अतिसार हो तो उपरोक्त क्वाथ नहीं देना चाहिये परन्तु ब्राह्मी, वच, कूठ, शंखाहुलीका क्वाथ वातहर औषधियों के अनुपानसे देना चाहिये। (४) इस रोगमें कपूरकाचरी, सुगन्धवाला, नागर मोथा, महुवा, सफेद चन्दन, देवदारु, शहद, गूगल, अगर, नखी, खस, इलायची, इन सबकी धूप बनाकर भी दी जाती है। इस योगसे भी यह बिमारी मिट जाती है। तथा यह धूप ग्रह दोष को नष्टकर लक्ष्मी की प्राप्ती कराती है और सौभाग्य को बढ़ाती है। अगर इसमें चेतना शक्ति बिल्कुल ही नष्ट हो गई हो तो प्रचेतना गुटिका, योग रत्नाकरमें हैं उसका प्रयोग करे।

(५) इसके अतिरिक्त इस रोगमें कस्तूरी भैरव, रसराज, योगेन्द्ररस, बृ० वात कुलान्तक रस, लक्ष्मी नारायण रस, कस्तूर्य्यादि वटी, गोदन्ती आदि औषधियों मे से दोषका बलाबल विचार कर प्रयुक्त करे।

कस्तूर्य्यादि वटी—कस्तूरी, केशर, लवङ्ग, जायफल, पीपल इनको सम भाग लेकर खरलमें डालकर अदरख की २ भावना देकर २ रत्ती की गोलियां बना लेवें। इसको उचित अनुपानके साथ देनेसेवातोल्वण सन्निपात तथा चित्तभ्रमशान्त हो जाता है। अन्य रसोंका वर्णन आगे के प्रकरण में किया जायगा।

लक्षण शीताङ्ग सन्निपात

हिम सदृश शरीरो वेपथु श्वासहिक्का
शिथलित सकलाङ्गो स्विन्ननादोग्र तापः।

कलमथु दवथु कासच्छर्द्यतीसार युक्त
स्त्वरित मरण हेतुः शीत गात्रः प्रभावात् ॥

भावार्थ—जिस रोगमें शरीर बर्फके समान शीतल होजाय, कफ युक्त श्वास खासी आवे, हिक्का और मोह हो; कम्प तथा प्रलाप हो; अंग सव शिथिलपड़ जाय, आवाज धीमीपड जाय, भीतरमें पीड़ामालुमदे कमजोरी हो, कफ वात की बृद्धि हो, दाह एवं मानसिक व्यथा हो वमन तथा अतीसार भी हो ऐसे लक्षण जिस रोगमें एक साथ हो जाये तो उसको शीताङ्ग सन्निपात कहते हैं। यह रोग दो प्रकार से होता है, एक स्वतन्त्ररूपसे, दूसरा उपद्रव रूपसे चिकित्सा दोनोंकी एकही तरह से की जाती है। स्वतन्त्र रुपसे जो होता है। उसकी अवधि १५ दिवसकी शास्त्रकारने बतलायी है, तथा उसको असाध्य भी माना है। लेकिन उपद्रव रूपके लिये यह अवधि नहीं है। वहां पर औषधि प्रभाव से अगर हृदय नाडीकी गति अच्छी हालतमें रहे तो शीघ्र ही फायदा हो जाता है प्रारम्भिक शीताङ्ग के रोगी देखनेमें बहुत कम मिलते हैं। उपद्रव रूप से बहुत से रोगी देखनेको मिले है। जिनका यहां उदाहरण देने की आवश्यक्ता नहीं। क्योकि आगे मन्थर ज्वरादिकों मे जहां इसका विशेषतया प्रकोप होता है। वहांही इसका उदाहरण रोगी को लेकर दिखलाया जायगा।

चिकित्सा

निम्न औषधियां समयानुसार प्रयोग की जाती हैं, चन्द्रोदय, अर्जुनाभ्र, कस्तूरी, मल्लसिन्दूर, तालसिन्दूर, रससिन्दूर, पंचवक्त्ररस, प्रवालभस्म, अम्बर, मृत्संजीवनीसुरा, दशमूलासव, प्रतापलंकेश्वर कस्तूरी भैरव, अर्कादि क्वाथ दशमूल क्वाथादि सिद्ध भैषज्य मन्जूषा में भी इस रोगके लिये निम्न लिखित प्रयोग लिखे हैं।

(१) शीतविहारात्क्रुद्धसमीरे श्लेष्म विवृद्ध्यात्यन्तमधीरे
रोगिणियुञ्ज्यादार्द्रक नीरे ह्यभ्रमदभ्रं शीतशरीरे

भावार्थ- शीतल वायु अथवा शीतल जल के सेवने से वायु कुपित होकर कफकी वृद्धि कर देता है तब रोगी की शीताङ्गावस्था हो जाती है। उस समय अभ्रक भस्म अदरख रस मधु के साथ देने से रोग की निवृत्ति हो जाती है।

(२) अन्यदपि--मोह रूजादेःस्याद्यदि सूतीस्तत्रच देयापारदभूतिः
वद्ध वलासै रूद्धगलस्य वक्षसि भूयः स्वेदन मस्य ।।

यदि सन्निपात रोगी को मूर्च्छादि उपद्रव हो जायतो वहां पर पारद भस्म याने रस सिन्दूर देना चाहिये। अगर गलेमें कफ बढ़ कर गले में घर घर शब्द होने लगे तो छाती पर बार-बार सेंक करे जिस से रूका हुवा कफ पतला होकर निकल जाय ।

(३) पूर्वानुपानैः कणयाच भुक्ता रसाभ्रयुक्ता मृगनाभि रुक्ता।
हिताङ्गशैत्ये त्विति वच्मि तथ्यं मल्लालसिन्दूर मपीहपथ्यम्

शीताङ्ग के समय चन्द्रोदय, अभ्रक भस्म, कस्तूरी इनका संमिश्रण करके रोगीका बलाबल देख कर अदरख रस मधुके अनुपानसे, या पानरस मधु से अथवा पिप्पली चूर्ण मधुके साथ देने से अवश्य ही फायदा होता हैं। यह वचन सिद्धभेषज्य मन्जूषाका है। अथवा इसकी जगह मल्लसिन्दूर-ताल सिन्दूर से भी पूरा फायदा होता है।

(४) अन्यदपि—श्रीसुम शुक्ति कषायः पीतइहाष्य सहायः,
संशमनस्त्रिमलस्य ज्ञात मिदं नहि कस्य ॥

इस रोगमें केवल लवङ्ग २ तोलाका क्वाथ तैयार करके पिलाने से सन्निपात का नाश होता है। यह बात हर एक मनुष्य की जानी हुइ नहीं हो ऐसा नहीं है।

(५) पर्णार्णसा वर्णितकृष्णवर्णा तूर्णं निगीर्णा हिमचर्मणाचेत् ।
हिरण्यगर्भाभिधपोट्टलीसा हिरण्यरेतस्यत् एतदङ्गे ॥

शीताङ्ग सन्निपाता क्रान्त रोगी को जब एकदमत्वचाबरफ के समान शीतल हो गई हो; और अन्य दवाईयां काम नहीं करतीहों, उस समय हिरण्यगर्भपोट्टली रस की १ खुराक पान रस मधु के अनुपान से देने पर जैसे अग्नि द्वारा गर्मी बढ़ जाती है उसी तरह शीतलता नष्ट होकर शरीर गरम हो जाता है।

निर्माण योग

(१) मल्लताल सिन्दूर विधि

शु० पारद ८ तो०, शु० गन्धक ८ तो०, शु० सोमल४ तो० शु० ताल तपकी ४ तो०, इन चारोंको खरलमें डालकर २ रोज तक मर्दन करकेकज्जली तय्यार करके कपड़ मिट्टी की हुई आतशी शिशी में भर कर २ रोज तक वालुका यन्त्रमें पकावे, तैय्यार होने पर काम में लेवे।

(२) हिरण्य गर्भ पोट्टली निर्माण विधि

शु० पारद ४तो०, शु० गन्धक २तो०, सुवर्ण भस्म १ तो०, ताम्रभस्म ३तो,० इन द्रव्योंका संग्रह करके प्रथम पारा, सुवर्ण भस्म, ताम्र भस्म,‌का खरलमें डालकर मर्दन करे फिर गन्धक मिलाकर ७रोज तक घृत कुमारी रस की भावना देकर गुटिका बना लेवे। फिर रेशमी वस्त्रमें थोड़ी गन्धक बिछा कर, गुटिका रख देवे और पोटली बनाकर मट्टी की हंड़िया में पोटली को दोला यन्त्र की तरह रख देवे, तथा उसके ऊपर नीचे गन्धक हंडिया में भर देवे। और अग्नि के ऊपर चढ़ादेवे जब गन्धक द्रव होकर गाढो हो जावे तब दवा को बाहर निकाल कर कपड़ा हटा कर काम में लावे।

(३) अर्कादि क्वाथ

भास्वन्मूलं जीरकव्योषभार्गी व्याघ्री शुंठी पुष्करं गोजलेन।
सिद्धं सद्यः शीत गात्रार्तिमोह श्वास श्लेष्मोद्रेक कासान्निहन्ति॥

भावार्थ—आकको जड़की छाल, सफेद जीरा, कालीमिर्च, पीपल, सोंठ, भारंगी, कंटकारी सोंठ, पोहकर मूल, इनको समान भाग लेकर यव कूटक कर गोमूत्र में क्वाथ विधिसे पका कर सेवन करनेंसे शीघ्रही शीताङ्ग सन्निपात, मोह, श्वास कफ वृद्धि, खांसी, नष्ट होजाती है।

(४) शीताङ्गे लेपः

कर्कोटिकाकन्दरजः कुलत्थः कृष्णो वचाकट्फल कृष्ण जीरैः।
किराततिक्ता नलकटःफलाम्बु पथ्याभिरुद्वर्तनमत्र शस्तम्॥

भावार्थ—बांझ ककोड़की जड़ कुलथी, पीपल;बच, कायफल,काला-जीरा, चिरायता, चित्रक मूल, कायफल, नागर मोथ, हरड़ छाल इनका कपड़, छान पाऊडर बनाकर शरीर पर मलने से शीताङ्ग सन्नि-पात दूर हो जाता है।

(५) रम विषमरिच महेशप्रियफलभस्मैकभू चतुर्वसुभिः।
भागैर्मितमुद्धूलनभिदमति स्वेदशैत्य हरम् ॥

भावार्थ—पारा १ तोला, वत्सनाभ, १ तोला, कालि मिर्च ४तोला, धत्तूरे के फलको भस्म ७तो० इन सबको एकत्र पीसकर शरीरमें मालि-श करनें से अत्यन्त पसीनेका आना रुक जाता है।

एलोपैथिक मतसे शीताङ्ग वर्णन

सन्नि पातज बीमारीयों में शीताङ्ग एक बड़ी भयानक अवस्था है। इसके होनेपर अंगुष्ठमूल में नाड़ी का स्पन्दन नहीं मिलता है, अंग प्रत्यङ्ग ठण्डे पड़ जाते हैं। हृत्पिण्ड में रक्तकी कमी के कारण अथवा जलीय अंशकी कमीके कारण खून जमने लगता है, इसलिये शिराओंमें रक्तका द्वारा नहीं होता, इससे रक्त संचालन क्रिया बन्द हो जाती है। यह अवस्था जीवनी शक्ति की अन्तिम अवस्था है, रोगी देखने में मुर्दे की तरह मालूम होता है, शरीर सिकुड़ जाता है, आंखे भीतरमें बैठ जाती है, ओष्ठ, मुख और नख नोले पड़ जाते हैं, नाक पतली हो जाती है अथवा ठेढ़ी हो जाती है, सम्पूर्ण शरीर में ठण्डा पसीना हुआ करता है। हाथकी अङ्गुलियां पानी में पड़ी-पड़ी सिकुड़ जानें की तरह हो जाती है, तापमान घट जाता है, श्वास प्रश्वास में बहुत कष्ट होता है तथा श्वास प्रश्वास बरफ के समान ठण्डे रहते हैं। अगर प्रतिक्रिया नहीं होती है तो मृत्यु हो जाती है।

चिकित्सा—

शीताङ्गावस्था में गरम पानी बोतल में भरकर, कार्क लगा देना चाहिये, बोतलपर कपड़ा लपेटकर रोगी के पैर के दोनों बगल में रख देना चाहिये, प्यास के समय गरम जल पीनेको दें इस उपरीक्त सेकसे प्राय: स्वेदावरोध हो जाता है। यदि देखें कि रोगी मुंह खोलकर श्वास लेता है, और श्वास-प्रश्वासमें बहुत कष्ट होता है हृत्पिण्डकी संचालन क्रिया बन्द होकर शीघ्र ही मृत्यु की सम्भावना हो जावे तो उस समय राई पीसकर फेफड़ेके ऊपर मोटी पड़तोमें उसकी पुल्टि सलगावे।

उस समय तुम्हारी प्रयोग की हुई औषधियां निरर्थक होनेपर भी इस पुल्टिस द्वारा आशा से भी अधिक लाभ होगा। पाश्चात्य चिकित्सक ऐसे समय में एकोनाइट, कोरामिन, एड्रिनलिन, ब्रान्डी, एट्रोपीन, सैलाइन आदिका व्यवहार करते हैं। तथा रिडेक्षन, ग्लुकोज एट्रोपीन, पिच्युट्रीन का इन्जेक्सन भी देते हैं।

होमियो पैथिक चिकित्सा

आसर्निक, एकोनाइट, कैम्फर, वेरेट्रस, कूप्रम आदि औषधियां दी जाती है। उतका कथन है कि यदि शीताङ्गावस्था के पहले उपरोक्त औषधियोंका प्रयोग न किया गया हो तो शीताङ्गावस्था आनेपर इन सबका लक्षणानुसार प्रयोग करें। इनके सेवन से भी यदि फायदा नजर न आता हो तो जैबोरण्डिकी उग्रवीर्य औषधियां दें। पाइलो-कर्पिन ६ × जल्दी जल्दी प्रति घन्टे के अन्तर से दें, शीताङ्गके साथ श्वास कष्ट अधिक हो तब आर्जेन्ट सायनाड ६ × जल्दी जल्दी प्रयोग करना चाहिये एण्टिम आर्स ६ शक्ति भी लाभदायक है।

अत्यन्त स्वेदागमन के समय ठन्डे पानी से माथा अच्छी तरह धोकर कपाल में और माथेपर ठन्डे पानी की पट्टी रखकर माथेपर धीरे-धीरे हवा करो पानीके साथ थोड़ा रेक्टिफाइड स्प्रीट या सिरका मिला देना और भी उत्तम है। इस उपचार से भी शीताङ्गमें फायदाहोता है।

तन्द्रिक सन्निपात इनफ्लुएन्जा फीवर (Influenza)

माधवाचार्य मतानुसार लक्षण

तन्द्राऽतीव ततस्तृषाति सरणम् श्वासोऽधिकः कासरुक् ।
सन्तप्तार्त्ति तनुर्गलः श्वयथुना सार्धश्च कण्डूः कफः ॥
सुश्यामा रसना क्लमः श्रवणयोर्मान्द्यश्च दाहस्तथा ।
यत्रस्यात्सहि तन्द्रिको निगदितो दोषः त्रयोत्थो ज्वरः ॥

जिस ज्वरमें तन्द्रा अधिक हो, प्यास अधिक लगती हो तथा टट्टी पतली होती हो, श्वास वेगपूर्वक जल्दी २ चले, खांसी का वेग अधिक हो, ज्वरके कारण शरीरोष्मा विशेष रूपसे प्रतीत होती हो, गलेमें सूजन, खुजली हो तथा कफावृत हो गया हो, जिह्वा काली हो जाय, ग्लानि, कानोंमें वधिरता और दाह हो ऐसे उपरोक्त लिखित लक्षण जिस ज्वरमें दिखलाई दें उसको तन्द्रिक सन्निपात कहते हैं ।

आयुर्वेद मतसे यह रोग अधर्मादि पापा चारोंके द्वारा वायु मण्डलके दूषित होनेपर महामारीके रूपमें शरद्, शिशिर, वसन्त ऋतुमें फैला करता है । जिस समय इसका आक्रमण महामारी रूपमें होता है, तब बहुत आसानीसे इसका निदान हो जाता है । परन्तु साधारण तया होने पर सहज ही में पहिचानना मुश्किल होता है । पाश्चात्य चिकित्सक साधारण प्रतिश्याय जनित ज्वर को ही इनफ्लुएन्जा ज्वरके नाम से पुकारने लग जाते हैं लेकिन उनका यह कथन शास्त्रानुकूल नहीं है । बहुतसे आयुर्वेद सेवी वैद्यगण भी इस ज्वरको वात-कफज्वर मानते हैं । सिद्धान्त निदान कारने भी इसका श्लेष्मक ज्वर नामसे ही उल्लेख किया है । परन्तु यह रोग केवल श्लेष्मा जनित ही नहीं है । इसके साथमें वायु पित्त का संसर्ग भी रहता है, इसलिये दैदारिक सन्निपात के लक्षणोंके साथ इसका समन्वय करना उचित प्रतीत होता है, क्योंकि कितनो ही वार अतिसार, आमाशयिक विकार,

जाड़ा लगना, तीव्र ज्वर, सरमें वेदना, पलकोंमें वेदना, आंख नाकसे पानी गिरना, छींक, खांसी, देह टूटना, शरीरमें वेदना प्रभृति इस रोगमें प्रधान लक्षण होते हैं। साधारण सर्दीके ज्वरमें इतने लक्षण नहीं होते हैं फिर भी इसको ऐलोपैथिक वाले कैसे ऐसा नाम करण करते हैं। मेरी समझ में उनके यहां साधारण प्रतिश्याय जन्य ज्वरके लिये इतर शब्दके प्रयोग का अभाव ही है। इसीलिये ही वे साधारण ज्वरको इन्फ्लुएञ्जा शब्दके द्वारा ही सम्बोधित करते हैं। अस्तु यह रोग समग्र पृथ्वी मण्डलमें सं० १६७६ में महामारीके रूपमें फैला था, उस समय मैं भी राजपूतानामें ही रहता था, तब ही इस रोग से आक्रान्त बहुतसे रोगी मेरे देखनेमें आये थे। हमारे ग्राम चिड़ावेमें ही इस रोगके द्वारा ३०-४० रोगी प्रति दिन मरा करते थे। उस समय मेरी निगरानीमें भी ३० रोगी थे जिनका इलाज स्वर्गीय वैद्यराज पं० जगन्नाथजी आयुर्वेद शास्त्री किया करते थे। इनकी चिकित्सा अत्यन्त ही श्रेयस्कर हुई। जितने भी रोगी मेरे पास थे वे इनकी चिकित्सासे आरोग्य हुये थे। आयुर्वेदमें विशेष रूपसे इस रोगका विचरण नहीं मिलता है। आधुनिक विज्ञान वेत्ताओंने जो इसका विशद रूपसे वर्णन किया है वह निम्न प्रकारसे है वे इस रोगको कीटाणु जन्य मानते हैं। उनका कथन है कि दूषित वायुके द्वारा ही इस रोग के कीटाणुओं की उत्पत्ति होती है। मनुष्यके शरीरमें कीटाणुओंका प्रवेश श्वासमार्गसे, मुखसे, भोजनादिके साथ संसर्ग होने से एवं दूषित वस्त्रादिकोंके धारण करनेसे हो जाता है। बादमें ३-४ रोजमें ही रोग उत्पन्न कर देते हैं। बहुधा यह रोग २० से ४० वर्षकी आयुवालोंको ही अधिकतया होता है। एलोपैथिकमें इस रोगके उत्पन्न करने वाले कीटाणुओंको हीमोफाइलस वक्टीरिया (Haemobhilus Baciteri) तथा वेसिलस इन्फ्लुएन्जा (Baccillus Influenz) कहते हैं। इन कीटाणुओंका ज्ञान नासास्राव परीक्षण क्रियाके द्वारा होता है। इस

रोगका प्रारम्भ सर्दी याने प्रतिश्यायसे ही होता है। दोष संचयकाल ३-४ दिवस ही माना है। रोग निवृत्ति होने पर भी थोड़ी सी बद्-परहेजीके कारण पुनः आक्रमण हो जाता है। इसलिये पथ्यादिक पर विशेष रूपसे ध्यान रखना चाहिये। एलोपैथिकमें इन कीटाणुओंको २ विभागमें विभक्त किया है। १ वक्टीरिया (Bctari‹) २ प्रोटो जुआ (Protozoa) वक्टोरिया को वनस्पति वर्गमें, और प्रोटोजुआ को प्राणी वर्गमें माना गया है। प्रथम वक्टीरिया भी आकृति भेदसे ३ प्रकार का होता है जैसे सरलाकृति वेसिलस, अण्डाकृति कोकसगोल, स्क्रू सदृश स्पिरिला। इनमें वेसिलस अनेक प्रकारका होता है, स्पिरिला २ तरहका होता है कोकस जाति, आकृति भेदसे पाँच प्रकार की होती है। १ युग्म डिल्पो कोकस, २ स्ट्रप्टो कोकस ३ टेट्रोजिनस (Tetri genous) ४ सार सिना, इस प्रकार एलोपैथिक वाले इस रोगमें अनेक तरहके कीटाणु मानते हैं, यह सब माइक्रोस्कोप यन्त्र द्वारा ही देखनेमें आते हैं। इसलिये इसकी परीक्षा लेबोरेटरीमें ही करानी चाहिये।

सम्प्राप्ति-उपरोक्त कीटाणु जब श्वास मार्ग द्वारा शरीरमें प्रवेश करते हैं तब श्वासनलिका ओर दोनों फेफड़े विकृत हो जाते हैं। इससे श्वास नलिकाओंमें शोथ हो जाता है और कफसे भर जाती हैं; तथा न्युमोनिया के सदृश रक्त ष्ठीवनादि उपद्रव हो जाते हैं। इसी तरह अन्नमार्ग द्वारा कीटाणुओंका प्रवेश होने पर आमाशय, पक्वाशयमें खराबी आ जाती है तब वमन, अतिसार आदिकी प्रवृत्ति होती है। यदि कीटाणुओं का प्रवेश नासिका द्वारा शिरमें हो जाता है तब वहां पर अनेक उपद्रव हो जाते हैं। इस रोगमें वात-कफोल्वण सन्निपातके समान ही विशेषतः उपद्रव होते हैं। तथा ये कीटाणु कभी शनैः शनैः तो कभी तीव्रता से धातुओंको दूषित कर देते हैं। रोग होने पर रक्त में श्वेताणुओंकी संख्या घट जाती है। लसीकाणुओंकी संख्या बढ़ जाती है हृदयके

दक्षिण खण्ड विस्तृत हो जाते हैं तथा हृत्स्नायु में दाह हो जाता है। तब अत्यन्त शक्तिका ह्रास होता है।

रूप रोगकी उत्पत्ति आकस्मिक होती है। कार्यरत पुरुषके अचानक वेदना युक्त ज्वर हो जाता है तब निम्नोक्त लक्षण होते हैं यथा नाकसे जल समान पतला श्राव, कण्ठोंमें वेदना मुखमें दाह, जिह्वा सफेद मैली, शोथयुक्त, किनारेलाल, नेत्रलाल, शिरमें वेदना बार २ ठन्ड लगना कम्प हाथ पैर टूटते रहना, कमर, पीठ, छातीमें पीड़ा खांसीका ज्यादा आना जी मिचलाना ज्वर होना ४-५ रोजमें ही शरीरमें दुर्बलताके लक्षणोंकी प्रतीति होना, शारीरिक मांस पेशियोंकी शक्तिका ह्रास हो जाना या हृदयकी दुर्बलताके कारण मृत्यु तक भी हो जाती है। ये उपरोक्त लक्षण साधारण विकारमें ही होते हैं ज्वर भी इस अवस्थामें ५-७ रोजतक १०३ से १०४ डिगरी तक रहकर अकस्मात् उतर जाता है।

तीव्र आक्रमण होनेपर इसके ३ विभाग हो जाते हैं।

प्रथम जब इसका आक्रमण फेफड़ों पर होता है। तब दोनों फेफड़ों में प्रदाह, थूकनेमें कफमें रक्त मिला हुआ आता है तथा प्रलाप श्वास कासादि न्युमोनियाके लक्षण दिखलाई देते हैं. तथा किसी समय प्रदाह के कारण पूय भी भर जाती है।

अन्न मार्ग द्वारा कीटाणुओंका प्रवेश होनेपर जिसको रोग हो जाता है तब उसको वमन, अतिसार, उदर रोग, अग्निमान्द्य, प्लीहा वृद्धि पाण्डु आदि रोग तथा विष भक्षण जैसे लक्षण दिखलाई देते हैं।

तीसरा आक्रमण नासिका द्वारा मस्तिष्क और नाड़ी तन्त्रपर होता है; तब मूर्छा, वायु प्रकोप, हाथ पैरोंमें पीड़ा हृदयकी मन्द गति तथा वेदना, निद्रा नाश प्रलापादि सन्निपात के लक्षण दृष्टिगोचर होते हैं। हल्का आक्रमण होनेपर रोगी शीघ्र ही ठीक हो जाता है तीव्र आक्रमण में रोग कष्टसे मिटता है।

साधारण समयमें इस रोगकी पहिचान करनी मुश्किल है। लेकिन

देशव्यापी महामारी रूपसे जब यह रोग फैलता है तब परीक्षा सुगमता से हो जाती है। अन्य समयमें वातकफ ज्वरके लक्षणोंमें से इसको पहिचानना असम्भव है। शक्ति ह्रास होनेसे ही इन्फ्लुएञ्जा जाना जाता है इस रोगमें मस्तिष्क विकृति, अपस्मार, उन्माद, रक्त श्राव, पक्षाघात, तीव्र ज्वर वृक्कशूल, सन्धि वातादि उपद्रव नहीं हो तब यह रोग साध्य होता है। उपद्रव होनेपर मारक ही होता है। कितनी ही बार अतिसारादि उपद्रवोंके रहते हुये भी इन्फ्लुएञ्जाके प्रधान उपसर्ग सर्दी, खांसो, ब्रांकाइटिस और ब्रांको न्युमोनिया है। परन्तु शायद बहुत से मनुष्य यह अच्छी तरह नहीं जानते होंगे कि यह क्या है। इसलिये इनका विषय दूसरी जगह पर न्युमोनिया प्रकरणमें देखनेसे स्वतः ही समझ जायंगे लेकिन फिर भी कुछ जानकारीके लिये थोड़ासा परिचय दे देता हूं। यानी इन्फ्लुएञ्जाकी ब्रांकाइटिस या ब्रांको न्युमोनियामें जो श्लेष्मा निकलता है, वह गाढ़ा और गोंदकी तरह लसदार होता है, रोगी लगातार खांसता रहता है, यहां तककी खांसते खांसते क्लान्त हो जाता है परन्तु कफ शीघ्र नहीं निकलता, साधारणतः इन्फ्लुएञ्जा का ज्वर ४-५ दिनोंसे अधिक प्रायः नहीं रहता; पर यदि उसके साथ पहिले बताये उपसर्ग शामिल हो जाते हैं तो बीमारी जल्द आरोग्य हो जानेमें बाधा पड़ जाती है। बहुत दुर्बल तथा वृद्ध के लिये तो यह बीमारी घातक ही होती है क्योंकि कमजोरी के कारण रोगी कफ निकालनेमें असमर्थ रहता है अतः श्वास रुक कर मृत्युतक हो जाती है।

उपरोक्त बीमारीके अलावा एक तरहका इन्फ्लुएञ्जा और भी होता है, जिसके शिरमें बहुत तेज दर्द होता है, रोगी रोगाक्रान्त हो पड़ा रहता है और भूल बकता है, सर दर्दके साथ कानमें भी दर्द हुआ करता है, इसको सेरिब्रोस्पाइनल इन्फ्लुएन्जा कहते हैं।

प्रतिरोधक चिकित्सा इस महामारीके प्रकोपके समय अदरखरस मधु या तुलसीरस मधुका नित्य सेवन करना चाहिये। कपूर, इत्रहीना, या

नीलगिरी का तैल सूँघते रहना चाहिये। रातको सोते समय यवहरीत की चूर्ण ३ मासा गरम जलसे लेवे, या त्रिफला चूर्ण ३ मासा गरम जलमें खाना चाहिये समशीतोष्ण स्वच्छ कमरेमें जिसमें दोनों समय लोहवान की धूप दी गई हो उसमें स्वच्छ विस्तर पर शयन करना चाहिये। शरीर पर सरसोंके तैलको मालिस कराकर गरम जलसे स्नान करना चाहिये। जहाँ तक हो सर्दी गर्मी यानी जुखाम से बचना चाहिये।

चिकित्सा

जिस समय ज्वर हो जाय तब पथ्यमें गरम जल गरम दूध-साबू वाली चाय प्रभृति पीना चाहिये। फलोंमें बहुत थोड़ी मात्रामें अनार बीदानेका रस गरम करके लेना चाहिये, रोगीको बिछावनसे उठना मना है, यह बीमारी संक्रामक होती है, किसी जगह पर अगर एक आदमीको हो जाती है तो उसके संसर्गमें आनेवाले सबको हो यह बीमारी हो जाती है, यह रोग बहु व्यापक रूपमें दूर दूर तक भी फैल जाया करता है। अतएव रोगीका थूक, कफ वगैरह सावधानीसे दूर फेंक देना चाहिये, और इस बात पर भी पूरा खयाल रखना चाहिये कि रोगीका कमरा हमेशा गरम रहे आरोग्य होनेपर भी बहुत दिनों तक सर्दीसे बचावकी चेष्टा रखनी चाहिये। ज्वर उतारनेके लिये औषधिका प्रयोग नहीं करना चाहिये, यदि आवश्यकता हो तब भी अल्प मात्रामें ही देवें। क्योंकि दोष पाचन होनेपर स्वतः ही ज्वर शान्त हो जाता है।

प्रारम्भावस्थामें चिकित्सा

प्रातः सायं	म० रा०
लक्ष्मी विलास	चन्द्रामृत
बनप्सादि क्वाथ से	तालीशादि मधुसे

यदि इसका ३ दिवस सेवन करने पर भी अगर ज्वर शान्त न होवे

तो त्रिभुवन कीर्तिरस का प्रयोग क्षुद्रादि क्वाथ या गुडुच्यादि क्वाथके अनुपान से सेवन कराने पर रोगका बढ़ना रुककर रोगी स्वस्थ हो जाता है। यदि इसके उपयोग से भी रोग शान्त न हो तो, कस्तूरी भैरव नारदीय लक्ष्मी विलासके प्रयोगसे अथवा तुलसी मञ्जर्यादि क्वाथ के अनुपानसे अवश्य ही लाभ होता है यह मेरा प्रत्यक्ष अनुभव है। ज्वरके साथ मलावरोध हो तो ज्वरमुरारिसे भी उपकार होता है इस रोगमें खांसीका वेग अधिक रहता है एतदर्थ व्योषादि वटी या मरीच्यादि वटी चूसने के लिये देनी चाहिये। छातीमें वेदना हो तब पुरातन घृतको महानारायण तैलमें मिलाकर मालिस करना चाहिये। जब तक उपद्रव न हो तब तक साधारण औषधि को ही व्यवहारमें लाना चाहिये। उपद्रवोंकी अधिकता देखकर दोषानुकूल चिकित्सा करनी चाहिये। आयुर्वेदमें इस रोगकी चिकित्साके लिये असंख्य औषधियां वर्णित हैं परन्तु जहां तक हो सौम्यगुण वाली औषधियां रोगीके लिये हितकर होती है वैसी तीक्ष्ण द्रव्य निर्मित नहीं, क्वाथीय चिकित्सा ७ सप्त दिवस पूर्व नहीं करनी चाहिये। इसलिये रस चिकित्साके समय अनुपानको जगह क्वाथकी आवश्यकता हो तो ८ वें रोजसे दशमूल क्वाथ, गुडूच्यादि क्वाथ, तुलसी मञ्जर्यादि क्वाथ, भार्ग्यादिक्वाथ आदि क्वाथ दे सकते हैं। प्राचीन पुरुष औषधिके समय क्वाथों का ही ज्यादा तर उपयोग करते थे। इसलिये ही उनका जीवन सुख पूर्वक व्यतीत होता था, परन्तु आजकलके आलसी पुरुष इसको पाचन क्रियाको झंझट समझते हैं तथा मिक्श्चरको श्रेष्ठ समझकर उनका ही ज्यादातर सेवन करते हैं इस कारण सर्वदा रोगाक्रान्त रहते हैं तथा अल्पायु भी होते हैं। राजपूतानामें तथा अन्य ग्रामीणोंमें भी क्वाथोंका ही प्रचार विशेषतया होता है इससे ही वे लोग सदा स्वस्थ रहते हैं। स्वर्गीय वैद्यराज प० जगन्नाथजी शास्त्री चिड़ावेमें प्रधान चिकित्सक थे, वे प्रायः क्वाथीय

चिकित्साको ही प्रधानता देते थे, जिससे असंख्य रोगी आरोग्य होते थे यह मेरा प्रत्यक्ष अनुभव है।

राजपूतानामें महामारी रूपसे सं० १६७६ में इस रोगका भयंकर प्रकोप हुआ था तब वैद्यराजजीने निम्नलिखित औषधियों द्वारा ही हजारों रोगियोंके प्राण बचाये थे। उस समयमें इस महामारीका तीव्र आक्रमण मस्तिष्क और नाड़ीतन्त्र पर हुवा था। शायद आप लोगोंको भी याद होगा कि उस समयमें तमाम रोगियोंको प्रलापादि उपद्रव ही विशेष रूपसे बढ़कर रोगी मरते थे, इसलिये वैद्यराजजी अधिकतर ब्राह्मीवटी, मृतसञ्जीवनी वटी, आनन्द भैरव, कस्तूरी भैरव, महावातविध्वंसन रस, दशमूल क्वाथ, लवङ्गादि क्वाथ, तगरादि क्वाथ, आदि औषधियों का प्रयोग किया करते थे, उस समयमें किसी किसी वैद्यने ज्वर संहार (लालगुड़ा) का भी प्रयोग किया था। परन्तु राजपूतानामें इस दवाईसे लाभ न होकर नुकसान ही हुआ था। एलोपैथिक डाक्टरोंके पास भी कोई अनुभूत औषध नही थी। सल्फर ग्रुपका आविष्कार भी बादमें ही हुआ है। अस्तु वैद्यराजजीकी चिकित्सा शैली प्रायः चरक संहिता पद्धतिके अनुकूल ही थी। जैसे लिखा भी है।

कफ वातज्वरे स्वेदान् कारये द्रूक्षनिर्मितान्।
स्रोतसां मार्दवं कृत्वा नीत्वा पावक माशयम्॥
हत्वावात कफ स्तम्भं स्वेदोज्वर मपोहति।

यदि सर्वांगे वायत्रा कुत्रैक रिमन्नङ्ग वेदना सम्प्रजायते, तत्र वह्नि स्थित खर्परे बालुका पोट्टली सन्तप्य सन्तप्य काञ्जिके निषिच्य रुग्णस्याऽङ्गानि स्वेदितव्यानि। यावत् संजात मार्दवे स्तम्भ पारुष्यादिकानां स्वेदेन द्रवीभूतत्वात् स्वस्थ लक्षणे देहे जाते स्वेदनाद्विरामः स्यात्।

केभ्यः स्वेद विधानं हितम्।

आमज्वरे वात बलासजे वा कफोत्थिते मारुत सम्भवे वा। त्रिदोषजे

स्वेद मुदाहरन्ति स्तम्भ प्रमोहाङ्गरुजा प्रशान्त्यैः। अन्यदपि।

लंघनं स्वेदनं तिक्तं दीपनानि कटूनिच।

विरेचनं स्नेहपानं वस्तयश्चाम मारुते॥ इति

आमज्वरे अपक्वज्वरेऽथवा आम वातज्वरे, वातबलासज (बेरी-बेरी नामके ज्वरे प्रायतया शोथः समुत्पद्यते तत्र तथा वातश्लेष्मोद्भवेतन्द्रिकान्तर्गत इन्फ्लुएञ्जा नामके ज्वरे, केवल मारुतजे केवल कफजेवा च त्रिदोषजे ज्वरे वैद्याः स्तम्भप्रमोहाङ्ग रुजानां निवारणार्थं स्वेदं वदन्ति।

सम्यक् विहित स्वेदगुणानाह

अग्ने र्दिप्तिंमार्दवंत्वक् प्रसादं भक्तश्रद्धां स्रोतसां निर्म्मलत्वम् कुर्यान्। स्वेदस्तन्द्रिं निद्रे च हन्यात् सन्धीस्तब्धा श्चेष्टये दाशु युक्तः॥

अतः तीव्र आक्रमण होनेपर तन्द्रिक सन्निपातकी चिकित्सा जो शास्त्रमें लिखी है, उसके ही अनुसार मैंने अस्पतालमें जिन जिन प्रयोगों का अनुभव रोगियोंपर किया है, वेही, आपके सामने लिख रहा हूं कृपया आपलोग भी कार्यमें लाकर देखें।

तीव्र आक्रमणके समय प्रथम गतिके रोगीकी चिकित्सा।

नाम रोगी—प्रह्लादराय, बय—३० वर्ष

जाति—वैश्य निदान-तन्द्रिक (प्रथम गति

इसको ३-४ रोज से सर्दी (जुखाम) लगकर ज्वर हो गया था। बादमें श्लेष्मा दोनों फेफडोमेंजमगया जिससे खाँसी बहुत जोरसे आती थी। कफ रक्तमिश्रित निकलताथा, श्वासवेगपूर्वक चलता था, प्रलाप, तन्द्रा-अङ्गमर्द, आदि निमोनियांके से लक्षण प्रतीत होते थे, यह अस्पताल में सायंकाल ५ बजे आया; भर्ती ता० २३ ५-४४ कियागया तब उपरोक्त लक्षण थे।

चिकित्सा

प्रातः	सायं	म० रा
ज्वरसंहार ३ र०	त्रिभुवनकीर्तिरस १गो०	चन्द्रामृत गो०
शृंग २ र०	शृंग २ रत्ती	शृंग्यादि १ मा०
प्रवाल १ रत्ती	स्फटिक २ रत्ती	नरसार १ रत्ती
	क्षुद्रादिकाथमधुसे	पानरसमधुसे

पुरातनघृतकी छातीपर मालिस, तथा अलशीकी गरम पुल्टिस का सेंक कराया, एलादि बटी आचूषणार्थ दी गयी, पथ्यमें जलवार्ली।

ता०२४-५-४४ ज्वर सुवह १०२ हुआ रातका प्रलाप कास विशेषरूपसे रहा, निद्रा बिल्कुल नहीं आयी कफ चिकनाहटयुक्त वहुत कष्टसे रक्त-मिश्रित निकलता था, एवं रातमें कुछ पसीना आया था। प्रातः काल एकबार टट्टी भी हुईथी। दवाई कल वालीही चालू रक्खी तथा रातको नींदकेलिये द्राक्षासव १ औंस और खिलाया। ता० २५-५-४४ को प्रातः ज्वर १०१ रात्रिको कुछ निद्रा हुई तथा कफभी बहुत निकला, रक्त बिल्कुलबन्द हो गया, प्रलापभी कमरहा लेकिन् तन्द्रा अधिक थी एतदर्थ प्रातः कालके दशमूलकाथको हटाकर भार्ग्यादि काथकी व्यवस्थाकी और दवा सर्व पूर्ववत् चालू रक्खी गयी।

ता०२६-५-४४ हालत कुछ ठीकथी, दवा पूर्ववत। ज्वर प्रातः ९९-सायं १०१। २७-५-४४ ज्वर प्रातः ९८ सायं १०० हालतठीक, पसीना अधिक आया रातको निद्रा अच्छी तरहसे आयी उपद्रवोंका शमन हो गया, परन्तु कुछ पेटमें भारीपन तथा टट्टीकी कब्जियत मालूम हुआ, तब भार्ग्यादि क्वाथको हटाकर आरग्वाधदि क्वाथ का प्रयोग किया जिससे दिनमें १वार मलोत्सर्ग हो गया, ज्वर १०० तकबढ़ा था। ता० २८-५-४४ ज्वर प्रातः ९७॥ हो गया. हालत बहुत ठीक कफ पक कर आसानी से निकलने लगगया, कुछ क्षुधा भी लगी एवं उपद्रव सर्व शान्त हो गये, दवा पूर्ववत चालू रक्खी। ज्वर सायं काल ९८।३० तक बढ़ा।

ता० २९-५-४४ रातको क्षुधाके कारण नींद कम आयी, अतः बकरी का दूध ऽ—क्षीरपाकविधिसे पकाकर वार्लीमें मिलाकर दिया। ज्वर ९८-३०से ऊपर नहीं बढ़ा, अशक्ति का अनुभव विशेष रुपसे करने लगा

तब मुद्र यूससे पथ्य चालू कर दिया तथा औषधियां भी दुर्बलता निवारणार्थ बदल दी गयीं।

प्रातः सायं म० रा

वसन्त मालती १ रत्ती !

अभ्रक भस्म १ रत्ती द्राक्षासव १ औ०

सितोपलादि चूर्ण १ मा० मधूसे।

इस प्रकार यह रोगी १४ दिवसमें विल्कुल आरोग्य होगया।

तीव्र आक्रमणके द्वितीय गतिके रोगीकी चिकित्सा।

रोगीनाम गोविन्दी देवी उम्र ३०, जाति खंडेल,वैश्य, स्थान खिदिरपुर, रोग नाम इन्फ्लुएञ्जा।

इसको घर पर साधारण सर्दीलगकर ज्वर हुआ था, इसने किसी प्रकार का परहेज नहीं रखा, खाना पीना स्नानादिक चालू रखा, जिससे इसको बीमारी बढ़ गयीतब ता-२७-७-४६ को सुवह १० बजे अस्पताल में लाये तब लक्षण निम्नलिखित थे ज्वर १०२ सूखी खांसी-वमन, अतिसार, पेट में शूल, क्षुधानाश, प्लीहा वृद्धि, कामला आदि लक्षण थे, इसको इन्डोरमें भर्ती करके निम्न औषधियां चालूकी गयीं।

प्रातः सायं मध्याह्न रात्रिको

आनन्द भैरव १ गो० लवङ्गादि १ गो०

लवङ्गादि २ रत्ती सिद्धप्राणेश्वर १ गो० •

प्रवाल १रत्ती अर्क मकोय से

नागर मोथास्वरस मधुसे पथ्यमें जल वार्ली ऽ।।

ता २८-७-४६ सुवह मैंने देखा और रात की व्यवस्था पूछी वो ज्ञात हुआकि दवाई विल्कुल पेट में ठहरती नहीं है तथा और अवस्था भी कल जैसी ही है। ज्वर भी सायं १०४ डिगरीतक हुआ था, अब १०२ डिगरी है, पिपासा अधिक है परन्तु वमनके भय से पीना नहीं चाहती, दवा कल वाली ही चालूरखी, एलादि चूर्ण मधुसे चाटने को

दिया गया था। ता० २६-७-४६ में।

सुवह देखनेको गया और रातके हाल पूछा तव उपवैद्य ने कहाकि रात को टट्टी ६ हुई परन्तु वमन बहुत हुआ, इसलिये जो भी औषधि खाने की दी गई सभी उल्टीसे निकल गयी तथा पसीना भी बहुत हुआ हालत जब मैंने देखी तो हृदय तथा नाड़ीमें दुर्बलताका अनुभव हुआ, तव मध्या० रात्रि की दवा में परिवर्तन किया उसकी जगह रसादि वटी, जहरमोहराखताई, पिच्छ भस्म दिया गया तथा बीच बीचमें ४-४ घन्टाके हेरफेरसे मृगमदासव—३० बूंद लवङ्ग शृत जलमें मिलाकर देने का आदेश दिया।

ता० ३०-७-४६ में

टट्टी रात को चार हुईथी, वमन भी कम हुई परन्तु आंखो में पीलापन दिखलाई दिया, घरवाले भी वहुत चिन्तित हो गये तथा फिर दवाई बदलनी पड़ी।

प्रातः साय		म० रा०
खण्ड खाद्य लौह ४रत्ती		रसादि वटी २ गो०
मुक्तापिष्टी	१ रत्ती	जवाहर मोहरा १रत्ती
प्रवाल भस्म	१ रत्ती	पिच्छ भस्म १ रत्ती
अमृता सत्व	१ रत्ती	मधुसे।
भोमसेनी	$\frac{1}{2}$	रातको बृ० वाताचिन्तामणी १रत्ती
नागर मोथा स्वरस मिश्रीसे।		प्रस्वप्रार्कसे

पीपलकी छालको जलाकर शृतशीत जलमें बुझाकर पीनेको दिया पथ्यमें छेना जल दिलाया। मृगमदासव वन्द करके वहां पर कोरामिन (Coramine) १५ बूंद चार चार घन्टासे दी गयी।

३१-७ ४६ सुवह देखा और रात को अवस्था पूछी तो मालूम हुआ कि रातको टट्टी नहीं हुई,वमन २-३वार ही हुआ, औषधियां भी प्राय: पेट में ठहरी, कल से आज कुछ ज्ञान भी हुआ है, मैंने भी देखातो हालत

कुछ सुधरती हुई दिखलाई दी तब दवा में कोई भी परिवर्तन नहीं किया इसी दवाको ३रोज तक चालू रखा ।

ता०-४-८, ४६ हालत बहुत सुधर गई, उपद्रव सबशान्त हो गये ज्वर भी प्रातः ९९-३० था तथा खाने को भी मांगने लग गई, तब क्षीर पाक विधिसे पकाकर ु— गो दूध दिया।

ता० ५-८-४६, अवस्था बिलकुल ठीक हो गयी पथ्यक्रम पूर्वक चालू कर दिया। इस तरह इस रोगी को स्वस्थ होने में चौदह १४ दिवसका समय लगा परन्तु प्लीहा अभी भी बढ़ीथी एतदर्थ चालू दवा बन्द करके उसकी जगह निम्न लिखित औषध चालूकी।

प्रातः सायं	म० रा०
नवायस लौह ३ रत्ती	चन्द्रप्रभा १ गो०]
मुक्ताशुक्ति १ रत्ती	वज्रक्षार ६ रती जलसे

कुलेखाड़ारस मधुसे, इस तरह इस रोगीको अस्पतालमें रखकर २१ रोज बाद छुट्टी दी गयी।

तीव्र आक्रमणके तृतीय गतिके रोगीकी चिकित्सा

रोगीनाम नथमल शर्मा, उम्र ३५, जाति गौड़, स्थान चोरबगान न० २०, रोग नाम इन्फ्लुएञ्जा ।



इसको इसके घरपर ८ रोजसे बीमारी थी, अस्पताल में लाये तब निम्न लिखित लक्षणथे। प्रलाप, मूर्छा, निद्रानाश, हाथपैरों में फूटनी, वायुका प्रकोप, हृदयमें दुर्बलता आदि चिन्ह थे, इसको गाड़ीसे उतार कर ता० ६-२-४७ को अस्पतालमें भर्तीकिया पलंग पर सुलातेही मूर्छा हो गयी, पसीना आकर हाथपैर ठन्ढे होगये नाड़ीका स्पन्दन अत्यन्त हीन प्रतीत होता था तब सर्व प्रथम इसको १ खुराक निम्न लिखित औषधिकी दीगई।

न० १	
मकरध्वज १रत्ती	न० २
प्रवाल १ रत्ती	महाशक्तिरसायन १ रत्ती

मुक्ता	१ रत्ती	
अर्जुनाभ्रक	१ रत्ती	दशमूलार्जुन अर्कसे
भीमसेनी	½ रत्ती	
कस्तूरी	१ रत्ती	इसप्रकार १ न०—२ न० दवाईयां २—२
पान रसमधुसे १ पु०		घन्टाके हेरफेर से चालूकी गयी,

हाथपैरोंमें सोंठकी मालिस करनेको दी इन दोनों औषधियों की २—२मात्रा देनेके बाद पसोना बन्द हो गया। रातको निद्रा नहीं आयी प्रलाप बहुत करताथा इसलिये बृ० वातचिन्तामणि १ खु० प्रस्वप्रार्क से दी गयी ता०७-२-४७ सुबह मैंने देखा और रातके समाचार उपवैद्यसे पूछा तो मालुम हुआ कि ज्वर रातभर १०२ रहा पेशाव -२ वार बेहोशोमें किया,प्रलाप रातभर करता रहा,नींद नहींआयी नाड़ीकी गति प्रतिमिनट १०२ रही। सुवह रक्तपरीक्षा करायी गयी जिसमें इन्फ्लुएञ्जा निकला तब निम्नलिखित औषधियां चालू की गयी।

प्रातः		सायं		मध्याह्न
कृष्णचतुर्मुख	१ रत्ती	मकरध्वज	१ रत्ती	शृंग्यादि१ मा०
प्रवाल	१ रत्ती	सौभाग्यवटी	१ वटी	पान मधु रससे
अर्जुनाभ्रक	१ रत्ती	प्रवाल	१ रत्ती	
तन्द्रिक	अधिकारोक्त	मृगमद	½ रत्ती	

तगरादिक्वाथ मधूसे। जटामांस्यादि क्वाथ मधूसे

रातको बृ० चिन्तामणि १ रत्ती—। तालछाड़ारस मधूसे

इस तरह उपरोक्त औषधियां चालू की गयी।

ता० ८—२ -४७ सुबह मैंने देखा तथा रात्रिके समाचार पूछे तब मालुम हुआकि रातको प्रलाप कमती किया, निद्रा ३ घन्टे आयी, कलसे आज ज्ञानभी हुआहै, ज्वरभी १०१ था रातको ज्वर १०३ डिगरी तक हुआ था। अस्तु मैंने देखकर दवाई कलवाली ही चालू रक्खी।

९—२--४७ तबियत बहुत ठीक, प्रलाप शान्त, निद्रा रात्रिभर आयी

१ टट्टी भी हुई दवा पूर्ववत् ज्वर प्रातः १०० सायं १०२ ता० १० सुबह ६६ उपद्रव सर्व शान्त सायं ज्वर १०१ तक हुवा ता० ११—२—४७ ज्वर प्रातः ६७। सायं ६६ तक रहा भूख की इच्छा हुई तब पथ्य में जलवार्ली दीगयो इसप्रकार १७ रोजमें बिल्कुल स्वस्थ होगया। औरक्रमानुसार पथ्य चालू करदियाऔषधियांभी परिवर्तन करदी गयी।

प्रातः सायं	म०रा०
मकरध्वज १ रत्ती	द्राक्षासव १ औंस
नवायस २ रत्ती	१ औंस जल मिला कर
मुक्ता १ रत्ती	२० रोज अस्पतालमें रहकर
मधुसे।	घर चलागया।

तीसरी गति की चिकित्सा

(३) यदि इन फ्लुएञ्जामें मस्तिष्क और नाड़ी तन्त्रपर आक्रमण होता है तब मूर्छा, वात प्रकोप, हाथ पैरमें फूटनी, हृदयकी गतिमें अनियमित मन्द गति, निद्रा नाश प्रलापादि सन्निपातिक लक्षण होजाते हैं।

ऐसी उपरोक्त अवस्था में निम्नलिखित चिकित्सा करनी चाहिये। प्रथम ज्वर यदि तीव्र होतो पञ्चवक्त्र रस प्रातः सायं गुडूच्यादि क्वाथ से देना चाहिये। मूर्च्छा होतो संचेतनी वटी या ब्राह्मी वटी ब्राह्मी क्वाथ से देनी चाहिये।

प्रलाप - अथवा वातकी अधिकता होतो वातकुलान्तक रस,मृतोत्थापनरस ,रसराज रस, आदि वातनाशक औषधियां अष्टादशाङ्गक्वाथ, दशमूल क्वाथ आदि के अनुपान से देनी चाहिये। हृदयगति की मन्दतामें पूर्ण चन्द्रोदयरस, कस्तूरी, प्रवाल,अर्जुनाभ्र आदि ताकत देने वाली औषधियों का प्रयोग करना चाहिये। हाथ पैर में फूटनी ज्यादा हो तो महानारायण तेलकी मालिस करना चाहिये। यदि उपरोक्त चिकित्सा से कोई फायदा नजर नहीं आवे तो प्रलापक सन्निपात की जो चिकित्सा है उसी को करना चाहिये।

ज्वरसंहार

सोठ, कालीमिर्च, पीपल, कुटकी, नीमकीअन्तरछाल, नागरमोथा, सफेदसरसों, इन्द्रजौ, शु० सुहागा, ममीरी, लालचन्दन, अतीस, सर्व— १-१ तोला रससिन्दूर ६ तोला, शु० हिंगुल ६ तोला।

प्रथम रससिन्दूर हिंगुल को बारीक पीसकर अन्य द्रव्योंको कूट छानकर सबको एक साथ मिलाकर खरलमें डालकर अदरख तुलसीके रसमें ३-३ दिन तक घोटकर सुखालेवें। मात्रा २-४ रत्ती तक देव। ज्वरसंहार रस अनुपान विशेषसे सर्वप्रकारके ज्वरोंमें विशेषतः कफ वात प्रधान ज्वरमें अच्छा लाभ करता है।

दशमूलक्काथ

विल्वश्योनाक गम्भारी पाटला गणिकारिका।
दीपनं कफवातघ्नं पंचमूलमिदं महत् ॥
शालपर्णी पृश्नपर्णी बृहती द्वय गोक्षुरम्।
वातपित्तापहं वृष्यं कनीयं पञ्चमूलकम् ॥
उभयं दशमूलंहि सन्निपात ज्वरापहम्।
काशश्वासे च तन्द्रायां पार्श्वशूलेचशस्यते ॥
पिप्पली चूर्ण संयुक्तं कण्ठहृद्ग्रह नाशनम्।

बेलगिरी, अरनी, सोनापाठा, गंभारी, पाढ़ल, शालपर्णी, पृश्नपर्णी, वडी कटेली, छोटी कटेरी, इसे अधकचरा कूटकर रखलेवें। १ तोला लेकर १६ तोला जलमें पकाकर ४ तोला जल बाकी रखें और आवश्यकतानुसार देवें।

उपयोग मुंहका सूखना, हाथ पांव आदि अवयवोंका ठण्डापन, चक्कर आना, पसीना अधिक आना, खांसी श्वास छाती तथा पार्श्वशूल तन्द्रा शिरकेदर्द युक्त सन्निपात ज्वर सूतिका ज्वरमें तथा शोथमें प्रयोग करे

यदि सन्निपातमें नींद न आती हो तो क्वाथमें लवंग, जटामांसी, ब्राह्मी, तगर, शंखाहुली, सर्पगन्धा ये द्रव्य १-१ भाग मिला देवें।

चन्द्रामृत

त्रिकटु त्रिफला चव्यं धान्यजीरक सैन्धवम्।
रसगन्धक लोहाभ्रं प्रत्येकं कार्षिकम् शुभम्॥
टंकणस्य पलं दत्वा वासानीरेण मर्दयेत्।
अथवा अजाक्षीरेण मर्दयेत्।
गुञ्जात्रय प्रमाणेन वटिकां चैव कारयेत्॥
कासेयञ्चविधंचापि श्वासांज्वर समन्वितं।
अनुपानविशेषेण हन्ति चन्द्रामृतो रसः॥
कासे सरक्ते दातव्यो रक्तोत्पल रसाल्पुतः।
भैषज्यरत्नावलिसे किंचित् परिवर्तित।

सोंठ, कालीमिर्च, पीपल, हरड़छाल, बहेड़ाछाल, आमलाछाल, चव्य, धमासा,जीरा, सैन्धानमक, शु० पारा, शु० गन्धक, लोहभस्म, अभ्रभस्म, प्रत्येक १-१ तोला शु० सुहागा ४ तोलाले प्रथम पारे गन्धककी कज्जली करके पीछे उसमें अन्य भस्में तथा वनस्पतियोंका कपड़छान चूर्ण मिलाकर बकरीके दूधमें या वासास्वरसकी ३ भावना देकर ३-३ रत्तीकी गोली बना छायामें सुखाकर रख छोड़ें। मात्रा और अनुपान।

१ गोली सहदमें मिलाकर चटावे ऊपरसे वनप्सादिक्वाथ, द्राक्षारिष्ट या शर्बत जूफा पिलावे, यदि खांसीमें रक्त आता हो तो १ गोलीमें ५ रत्ती खूनखरावा मिलाकर लाल कमलके फूलके स्वरसके साथ देवे। खांसीके साथ श्वास भी हो तो सोमचूर्ण ५-७ रत्ती मिलाकर शहदके साथ देवे।

उपयोग सर्वप्रकारकी खांसी श्वास हल्काज्वर हो तो इस योगसे अच्छा गुण होता है।

शृंग्यादि चूर्ण

शृंगी कटुत्रय फलत्रयकंटकारी,
भार्गी च पुष्करजटालवणानिपंच ।
चूर्ण पिवेदशिशिरेण जलेन हिक्का,
श्वासोर्ध्ववात कसनारुचि पीनसेषु ॥

काकडा सींगी, सोंठ, मिर्च, पीपल, हरड़छाल, बहेड़ाछाल, आमला-छाल, कंटकारी, भार्गीछाल पोहकरमूल, पांचोनमक। इन सबको सम भाग लेकर कूटकर कपड़ासे छानकर चूर्ण बनाकर गरम जलमें या पानरस मधूसे, सेवन करनेसे श्वास, ऊर्ध्व वात,खांसी, अरुचि, जुखाममें अच्छा फायदा होता है।

आरग्वधादिक्काथ

आरग्वधग्रन्थिक मुस्ततिक्ता हरीतकीभिः क्वथितः कषायः ।
सामे सशूले कफवातयुक्तं ज्वरेहितो दीपन पाचनश्च ॥

अमलतासका गूदा, पीपलामूल, नागरमोथ, कुटकी, हरड़ छाल, सर्व सम भाग लकर यव कूट करके १ तोलाको १६ तोला जलमें पका-कर ४ तोला बाकी रखकर किसी भी दवाके साथ अनुपान रूपसे देनेसे सामदोषयुक्त ज्वरमें, कफवात ज्वरमें. जहां टट्टीकी कब्जी हो वहां अच्छा फायदा करता है।

वसन्तमालती रस

स्वर्ण मुक्ता च दरदं मरिचे भाग वृद्धितः ।
खर्परयष्टौ कलांशं स्यान्नवनीतं पयोभवम् ॥
निम्बुकै मर्दयत्तावत् यावत् स्नेहोलयं व्रजेत् ।
मालती प्राग्वसन्तोयं रसोधातुज्वरं जयेत् ॥

मात्रा गुञ्जाद्वयोन्माना शाणंमधु समन्वितः।
प्रकुञ्चपञ्चके पञ्चनवतिर्निम्बुकान्यलम् ॥

सिद्धभैषज्यमणिमाला

द्रव्य और निर्माण विधि—

सुवर्णभस्म अथवा सोनेके वर्क १ तोला, मोतोकी पिष्टी २ तोला, शु० हिंगुल ३ तोला, कालीमिचका कपड़छान चूर्ण ४ तोला, जसदकी भस्म ८ तोला। यदि सुवर्णकी भस्मली हो तो सर्वद्रव्योंको एक साथ मिला कर ३ घन्टा मर्दन करे, यदि सोनेके वर्कलिये हो तो अन्य द्रव्योंको मर्दन करके बादमें १-१ वर्क मिलाता जावे और मर्दन करता जावे, जबतक सोनेके वर्क अच्छी तरहसे मिल न जाय। बादमें २ तोला दूधमेंसे या छाछमेंसे निकाला हुआ मक्खन मिलाकर १ दिन मर्दन करे। पीछे कागजी निबूका छाना हुआ रस मर्दन योग्य डालकर दिन भर मर्दन करे। एक बारका डालाहुआ रस सूखनेपर ही दूसरा रस डाले। इस तरहसे जबतक मक्खनकी चिकनाई दूर न हो, तबतक निबू रसमें मर्दन करे। सामान्यतः चिकनाई हटानेके लिये ६५ नीबू मध्यम श्रेणोका रस पर्य्याप्त है। पीछे गोली बनाकर छायामें सुखा ले यह रस वसन्तमालती नामसे संसारमें प्रसिद्ध है। मात्रा १-२ रत्ती सुबह सांम दिनमें दो बार है।

अनुपान—छोटी पीपलका बारीक चूर्ण २ रत्तीके साथ मधु मिलाकर चटावे। अथवा सितोपलादि चूर्ण १ मासा मिलाकर मधुमें देवे।

यह योग जोर्णज्वर राजयक्ष्मा रोगान्त दोर्बल्य, श्वेतप्रदर, पांडुरोग, अग्निमान्द्य, गण्डमाला, अन्त्रक्षय, फुफ्फुसकला शोथ, बाल-शोष इन रोगोंमें विशेष फायदा करता है।

सितोपलादि चूर्ण

सितोपलां तुगाक्षिरीं पिप्पली वहुलात्वचम्।

अन्त्यादूर्ध्वं द्विगुणितं लेहयेन्मधुसर्पिषा ॥
चूर्णितं प्राशयेद्वातच्छ्वास कासकफातुरम् ।
सुप्तजिह्वारोचकिन मल्पाग्निं पार्श्व शूलिनम् ॥
चरक चि० अ० ११

निर्माणविधि--मिश्री १६ तोला, वंशलोचन, ८ तोला, छोटी पीपर ४ तोला, इलायची छोटी २ तोला, दालचीनी १ तोला सर्व कूट कपड़-छान चूर्ण करके रखलेवे।

मात्रा और अनुपान ४-१२ रत्तीतक शहद और गायके घृतके साथ मिलाकर देवे। यदि वातपित्त प्रधान रोगोंमें अथवा वातपित्त प्रकृतिवाले पुरुषको देना हो तो अनुपानमें शहद १ भाग घृत २ भाग लेवे। यदि कफ प्रधान रोगवालेको देना हो तो शहद २ भाग घृत १ भाग लेवे।

सूखी खांसी में घृतके साथ कफ अधिक तथा सरलतासे निकलता हो ऐसी खांसी में शहदके साथ ही देवें।

मरिच्यादि अवलेह। भैषज्य रत्नावलि

कर्षः कर्षार्धमथो पलं पलद्वयं तथार्द्धकर्षश्च।
मरिचस्य पिप्पलीनां दाड़िम गुड़याव शूकानाम् ॥
सर्वौषधैरसाध्याये कासाः सर्व वैद्यविनिर्मुक्ताः।
अपि पूये छर्दयतां तेषांमिदमौषधं पथ्यम्

निर्म्माण विधि—काली मिर्च १ तोला, छोटी पीपल ½ तोला दाड़िम बीज ४ तोला, पुराना गुड़ ८ तोला, यवक्षार ½ तोला गुड़ को पानी में ओटाकर गुड़ पाक विधि से पाक करके उपरोक्त द्रव्यों का कपड़ छान चूर्ण करके मिला देवे। इसको अवलेह रुप में अथवा गुटिका रुपमें देने से पांचो तरह की खांसी जल्दी ही आराम हो जाती हैं

यह प्रत्यक्ष देखी हुई है। किसी टाइम रक्त अधिक आता है तो इसको न देकर एलादिवटी देनी चाहिये।

युनानी चिकित्सा

इसरोग में वनप्सादि (जोसांदा) क्वाथ देते हैं जिसका नुसखा यह है।

गुलवनप्सा, गाजुवान, मुलेहठी, मुनक्का, सोंफ अंजोर, उन्नाव अडूसा, जूफा, सपिस्तान, खूबकला, हंसराज, सोंठ कालीमिर्च प्रत्येक समभाग लेकर अधकचरा करके छोड़ ले फिर इसमें से १तोला लेकर उसको १० तोला जलमें पकाकर ४ तोला जल बाकी रहे तब कपड़े से छानकर उसमें ३ मासा मिश्री या मधु मिलाकर दिनमे २-३ बार देवें। मेरेमत से इसको अकेला न देकर नारदीय लक्ष्मीविलासके साथ अनुपान रुपमे देने से अच्छा फायदा होता है।

उपयोग प्रतिश्याय – (जुकाम सर्दी में कफज्वर में तथा उस खांसी में तथा उस श्वासमें जहां कफ जमा हुआ गाढ़ा हो सरलता से न निकलता हो उसमें इस क्वाथ से बहुत अच्छा फायदा होता है। इस क्वाथ को केवल या ५ रत्ती नरसार और यवक्षार ५ रत्ती मिलाकर उपयाग करें।

तन्त्रान्तरोक्त आनन्द भैरव रस

हिंगुलञ्च विषं व्योषं टकणं गन्धकं समम।
जम्बीर रस संयुक्तं मर्दये यामंमात्रकम् ॥
कासश्वासातिसारेषु ग्रहण्यांच हलीमके।
अपस्मारे ऽनिले मेहे ऽजीर्णे वह्निमान्द्यके,
गुञ्जामात्रः प्रदातव्यो रस आनन्द भैरवः ॥

शु० हिंगुल, शु० वत्सनाभ, सोंठ, मिर्च, पीपल, शु० सुहागा, शु० गन्धक, यह सर्व समान भाग लेकर जम्भीरी के रस में १ प्रहर तक

अच्छी तरह से मर्दन करके १-१ रत्ती की गोली बनाकर छाया में सुखा लेवं।

उपयोग—यह आनन्द भैरव रस अनुपान भेद से कासश्वास अतिसार, संग्रहणी, पाण्डु, हलीमक, मृगी, बायु सम्बन्धी रोग, प्रमेह अजीर्ण अग्निमन्द सम्बन्धी बीमारियों में अच्छा फायदा करता है।

लवङ्गादि वटी

जाती फलं त्रिदश पुष्प समन्वितश्च।
जीरश्च टंकण युतं मुनिभिः प्रणीतम्॥
एतानि माक्षिक सिता सहितानि लीढ्वा।
आमातिसार मखिलं ज्वर माशुहन्ति॥

जायफल, लवङ्ग, सफेद जीरा, सुहागा इनको सम भाग लेकर कूट छान कर के जल से १ मासा की गोली बनाकर रख लेवं।

उपयोग मधु मिश्री में मिलाकर चटाने से आमातिसार तथा अन्य अतिसारों में अच्छा फायदा होता है।

खण्डखाद्य लौहम्

शतावरी छिन्नरूहा वृषो मुण्डि तिकाबला।
तालमूली च गायत्री त्रिफलायास्त्वचस्तथा॥
भार्गी पुष्कर मूलश्च पृथक पञ्च पलानि च।
जलद्रोणे विपक्तव्य मष्टभाग विशोषितम्॥
दिव्यौषधि हतस्यापि माक्षिकेण हतस्य वा।
पलद्वादशके देयम् रूक्मलोहस्य चूर्णितम्॥
खण्ड तुल्यं घृतं देयं पलषोडशिकं बुधैः।
पचेत्ताम्रमये पात्रे गुड़ पाको मतोयथा॥

प्रस्थार्धं मधुनो देयं शुभाकम जतुके त्वचम् ।
भृंगी विडगं कृष्णा च शुण्ठा जाति फलं पलम् ॥
त्रिफला धान्यकं पत्रं यत्तं मरिच केशरम् ।
चूर्णं दत्वा सुमथितं स्निग्ध भाण्डे निधापयेत् ॥
यथा कालं प्रयुञ्जीत चतुर्गुञ्जा मितेततः ।
गव्यं क्षीरानु पानश्च सेव्यं मांस रसं पयः ॥
गुरु वृष्यानु पानानि स्निग्धमांसादि बृहरणम् ।
रक्त पित्त क्षयं कासं पक्ति शूलं विशेषतः ॥
वात रक्तं प्रमेहश्च शीत पित्तं वमिक्लमम् ।
श्वयथुं पान्डु रोगश्च कुष्ट प्लीहोदरं तथा ॥
आनाहं रक्त माऽवेव मम्ल पित्तं निहान्ति च ।
चक्षुष्यं बृहणं वृष्यं मांगल्यं प्रीतिवर्धनम् ॥
श्री करं लाघव कर खण्डखाद्यं प्रकीर्तितम् ॥

सतावर, गिलोय, अडूसा, गोरख मुण्डी, खरेटी, मुसली, खैरसार, त्रिफला, भारंगी, पोहकर मूल, ये प्रत्येक औषधि २०-२० तोला लेकर कूट कर १०२४ एक हजार चौबीस तोले भर जल में डालकर पकावे, जब पकते पकते आठवां हिस्सा काढ़ा शेष रह जावे तब छान कर इस में मैनसिल से अथवा सोना माखीसे मारा हुआ तीक्ष्ण लोहा ४८ तोला, चीनी ६४ तोला, घृत ६४ तोला, इन सब को मिलाकर तांबे के वर्तन में डालकर जिस प्रकार गुड़ का पाक बनता है उसो प्रकार पकावे शीतल होने पर मधु ॐ॥ मिलावे फिर वंशलोचन, शिलाजीत, काकड़ासिंगी, पीपल, वायाविडङ्ग सोंठ, जायफल, त्रिफला, धनियां तेजपात, दालचीनी, नागकेशर, प्रत्येकका चूर्ण ४-४ तोला लेकर सबको

मिलाकर अच्छी तरहसे मथ कर चिकने बर्तन में भर कर रख देवे इसी को खण्ड खाद्य लौह कहते हैं।

उपयोग —इस औषधि में से ४ रत्ती अथवा कुछ अधिक समयानुसार लेकर गाय के दूध के साथ सेवन करना चाहिये। इस लौह का सेवन करनेवाला पथ्य में मांस का रस दूध,भारी पदार्थ, वृष्य, मांसादि द्वारा पुष्टिकारक पदार्थों का सेवन करे, इस लोह को भक्षण करने से रक्तपित्त क्षय, खांसी, पार्श्वशूल, वातरक्त, प्रमेह, शीतपित्त, वमन, ग्लानि, सूजन, पाण्डुरोग, कुष्ठ, प्लीहा, उदररोग, आफरा, मूत्रकृच्छ और अम्ल पित्त ये सब रोग नष्ट होते हैं। नेत्रों को हितकारी पुष्टि करने वाला वृष्य मंगल रूप प्रीति बर्धक लक्ष्मी जनक शरीर में हल्कापन करने वाला है।

रसादि वटी

रसबली घनसार चन्दनानां मनलद सेव्य पयोदजीवनानाम्।
अपहरति वटी मुखस्थितेयं सकल समुत्थित दाहमश्रमेण॥

योग रत्नाकर, तथा सिद्ध योग संग्रहसे उधृत

द्रव्य और निर्माण विधि

शु॰ पारा, शु॰ गन्धक, कपूर, सफेद चन्दन, जटामांसी, नेत्रवाला, नागरमोथ, खस, प्रत्येक समभाग प्रथम पारद गन्धककी कज्जली करके पीछे अन्य द्रव्यों का बारीक चूर्ण करके मिलावे और गुलावजल चन्दन अर्क में २-३ दिन मर्दन करके दो दो रत्ती की गोलियां बनाकर छायामें सुखा कर रख लेवे। मात्रा २-४ रत्ती।

वैद्यराज पं॰ यादवजी बम्बई वाले इस योग में छोटी इलायची दरियाई नारियल की गिरी ओर मिलाते हैं। इस से विशेष लाभ होता देखा गया है।

उपयोग—सभी प्रकार का दाह, तृषा, हिक्का, और वमन में इस योग

का उत्तम फल होता है। हैजामें वमन निवारणार्थ इसका उपयोग होता है।

जहरमोहरा खताई पिष्टी

यह बाजार में प्रायः मुसल्मान पंसारियों के पास इसी नाम से मिलता है। यह एक पत्थर है जो रंग में सफेद कुछ पिलाई और हरापन लिये हुए होता है। जो वजन में हल्का तथा चिकना हो वह अच्छा समझा जाता है। यह युनानी में प्रचलित द्रव्य है। हकीम लोग इसको विषघ्न, हृदय बलकारक, वमन को बन्द करने वाला तथा तरगरम मानते हैं।

पिष्टी की विधि

इसको इमाम दस्ते में कूटकर खरल में डाल कर गुलाब जल में पीस कर अति सूक्ष्म पिष्टी बनाले।

उपयोग—इसका उपयोग वमन, दाह, दिलकी घबराहट, अम्लपित्त विसूचिका बच्चों के हरे पिले रंगके दस्तों में होता है। मात्रा २ रत्ती से १ मासा

होमियोपैथिक चिकित्सा

एकोनाइट ६, ३०—तीव्रज्वर, सर्दी, बैचेनी, प्यास, सूखी खांसी प्रभृति लक्षणोंमें दिया जाता है।

जेलसिमियम १ + ६, ३०—शीत कम्पयुक्तज्वर तथा ज्वरके साथ कोई विशेष उपसर्ग नहीं हो—तथा नासिकासे जलस्राव अधिक होता हो, माथा गर्म हों छींक आती हो, गलेमें जलन अथवा वेदना होती हो शरीरमें भी दर्द होता हो, तन्द्रा आती हो ऐसे लक्षण होनेपर दिया जाता है।

इयुपेटोरियम पर्फो –३, ६, ३०–शरीरमें हड्डी टुटने जैसी वेदना, पित्त का वमन, जी मिचलाना, कमरमें दर्द, दुर्बलता, तृषा प्रभृति लक्षणोंमें फायदा करता है।

आर्सेनिक आयोड ३×, ६, ३० यह इस रोगकी प्रधान औषधि है। अगर जेलसियमके साथ इसका पर्य्याय क्रमसे प्रयोग किया जाता है, तो ज्वर तथा अन्य उपद्रव बहुत शीघ्र ही घट जाते हैं। जेलसियम १×, आर्सेनिक १× व्यवहारमें लाना चाहिये।

अन्य औषधियां जैसे एलियम सिपा ३, ६, कैलिबाईक्रोम ६, ३०-२००, मर्कुरियस सोल ६, ३०। नैट्रमसल्फ ३० बौप्टोशिया १×। इन्फ्लुएञ्जिनम ३०, २०,। आदि औषधियां भी दी जाती है।

ऐलोपैथिक चिकित्सा

नुस्खा नं०१सोडासैलीसिलास	Soda-Salycilas	४० ग्रेन
लाइकर स्ट्रीकनिया हाइड्रोक्लोराइड	Liq. Strychnia Hydrocholore	१० बूंद
पोटास बाईकार्ब	Pot. Bicarb	१ ड्राम
पोटास ब्रोमाइड	Pot. Bromide	३० ग्रेन
एक्सट्रैक्ट ग्लीसरी जालिक्डि	Ext. Glyceriza liquid	१॥ ड्राम
लाईकर एमोनियां एसिटास	Liq. Ammonia Acetas	६ ड्राम
जल	Aqua	३ औंस

इन सबको मिलाकर ३ हिस्सा करके दिनमें ३ समय देवें।

नुस्खा नं० २ ज्वर उतारकर एमोनियाकार्ब	Ammonia Carb	३ ग्रेन
टिंचर सिला	Tr. Scillae	१० बूंद
लाईकर एमोनिया एसिटेट	Liq. Ammonia Acetate	१ ड्राम
टिंचर डिजिटेलस	Tr. Digitelis	५ बूंद
टिंचर नक्सवमिका	Tr. Nux-Vomica	५ बूंद
स्प्रिट् कम्फर	Spt. Camphor	१० बूंद
दालचीनी सुवासित जल		१ औंस

यह प्रयोग इन्फ्लुएञ्जाके लिये उत्तम है और आजकल Influenza Tablets भी व्यवहारमें लाई जाती हैं।

कण्ठ कुब्ज सन्निपात (डिप्थेरिया)

शिरोर्ति कण्ठ ग्रहदाह मोह कम्प ज्वरा रक्त समीरणार्ति।
हनुग्रहस्ताप विलाप मूर्च्छाः स्यात्कण्ठकुब्जः खलुकष्ट साध्यः

जिस सन्निपातमें शिरमें पीड़ा हो, कण्ठ रुक जाय, दाह हो, मोह हो, रक्त तथा वात जन्य पीड़ा हो, ठोडी जकड़ जाय, शरीरमें ताप हो, तथा विलाप मूर्च्छा ऐसे लक्षण हों, उसको कंठ कुब्ज सन्निपात कहते हैं। कंठकुब्जमें और त्रिदोषज कण्ठ रोहिणी में कुछ भी फर्क नहीं है क्योंकि जो लक्षण कण्ठकुब्जमें है वही रोहिणी में है। इसकी अवधि १३ दिवस की है।

रोहिण्याः सनिदान सम्प्राप्तिः

गलेऽनिलः पित्तकफौ च मूर्च्छितौ प्रदूष्य मांसञ्च तथैव शोणितम्
गलोपसंरोधकरैस्तथांकुरै निहन्त्यसून्व्याधिरयं च रोहिणी ॥

भावार्थ—यस्मिन रोगे गले अनिलः वृद्धः तथा पित्त कफौ मूर्छितौ दग्धौ मासं शोणितं च प्रदुष्य तथा गलोपसंरोधकरैरसून्निहन्ति स रोहिणी संज्ञो व्याधि ज्ञेयः। सर्वा रोहिण्यस्त्रिदोष जा इति।

भावार्थ—गलेमें वायुके दोष से अथवा पित्त और कफ के दोषसे अथवा रक्त दोष अथवा मांस दोष से रक्त दूषित होकर मांसांकुरोंको पैदा कर देता है तब उससे रोहिणी नामक रोग हो जाता है और वह शीघ्रही प्राणोंका नाश करने वाला होता है।

अथरोहिणी मरणाऽवधि

सद्य स्त्रिदोषजा हन्ति त्र्यहात्कफ समुद्भवा।
पञ्चाहा त्पित्त सम्भूतासप्ताहा त्पवनोत्थिता ॥

भाषा—त्रिदोषसे उत्पन्न रोहिणी तत्काल मार देती है। कफोद्भवा तीन दिनमें मारदेती है पित्त जन्य पांच दिनमें मार देती है। वातजन्य ७ दिनमें मारदेती है।

अथ कंठकुब्ज चिकित्सा

(१) फल त्रिकत्र्यूषण मुस्त तिक्ताकलिंग सिंहानन शर्वरीभिः
क्वाथः कृतः कृन्तति कण्ठकुब्जं कंठीरवः कुञ्जरमाशु तद्वत् ॥

भाषा—त्रिफला, त्रिकटु, नागरमोथा, कुटकी, इन्द्रजौ, अडूसा, हल्दी इन सब औषधियोंका क्वाथ इस सन्निपातको तत्काल नष्ट करता है। जैसे सिंह हाथी को मार देता है।

(२) किरातादि चिरायता, कुटकी, पीपल, इन्द्रजौ, कंटकारी कचूर, बहेड़ा, हरड़,देवदारु, मिर्च,कायफल,नागरमोथ, अतीश, आमला, पोहकरमूल, चीता, काकड़ासिङ्गी, अडूसा, सोंठ इनका क्वाथ कण्ठ-कुब्जको नष्ट करता है।

(३) अपनयति कंठकुब्जं कृष्णापामार्गबीजदंनस्यम्।
अथ हन्ति सलिल सहितं त्रिकटुककटुतुम्बिनी नस्यम् ॥

छोटी पिपल, चिरचिरा बीज, कानस्य देनेसे कंठ कुब्ज नष्ट हो जाता है।

(४) त्रिकटु, कडुवी तुम्बीबीज; जलमें पोसकर नस्य देने से भी कण्ठ कुब्ज नष्ट हो जाता है।

गलरोगोंकी सामान्य चिकित्सा

(१) कंठ रोगेष्वसृङ्मोक्षैस्तीक्ष्णैर्नस्यादि कर्मभिः।
चिकित्सक श्चिकित्सान्तु कुशलोऽत्रसमाचरेत् ॥

विद्वान् वैद्यगलरोगोंकी चिकित्सा जोकों द्वारा अथवा शस्त्र कर्म द्वारा रक्त मोक्षण कराकर अथवा तीव्र नस्यादिकोंके द्वारा करे।

(२) दारु हल्दी, तज, नीमछाल, रसोत, इन्द्रजौ, इनका क्वाथ पिलावे। या हरड़ छालके क्वाथमें मधु मिला कर पिलावे। इससे वातज रोहिणी नष्ट हो जाती है।

(३) पित्तज रोहिणीमें, कुटकी, अतीश, देवदारु, पाढल नागरमोथा, इन्द्रजौ, इनका क्वाथ गोमूत्रमें पकाकर पिलावे।

(४) कफज रोहिणी में दाख, कुटकी, सोंठ, मिरच, पीपल दारुहल्दी, त्रिफला, नागरमोथा, पाठा, रसोत, दूर्वा तेजवल, इनका क्वाथ मधु मिलाकर पिलावे।

(५) यवक्षार, तेजबल; पाढल, रसोत, दारुहल्दी पीपल इनकी शहदमें गोली बनाकर चूसनेको देनेसे समस्त गलेके रोग मिटजाते हैं।

नोट—

इस रोगसे ग्रस्त बहुतसे रोगी मैंने देखे। और इलाज भी किया परन्तु फिरभी इसकी चिकित्सा जैसी ऐलोपैथिक में डिफ्थीरिया सीरम के प्रयोगसे आशुफलदायिनी होती है वैसा हमारे यहां नही होती निदान भी डाक्टरी वालोंके यहां जैसा विशद रूपसे मिलता है वैसा हमारे यहां विशेष रूपसे नहीं मिलता। अतः इस रोगमें डाक्टरी निदानकी सहायता लेनाभी अत्यन्त हितकारी है। अतः आगे डाक्टरी मतानुसार ही इसका विवरण दिया जारहा है।

कंठ कुब्ज सन्निपात। डिफ्थीरिया (DIPTHERIA रोहिणी

यह एक प्राण घातक बीमारी है। इसमें शरीर का रक्त दूषित हो जाता है। ज्यादा करके कम उम्र वाले बालक बालिकाओं को यह बीमारी अधिकतया होती है। अगर किसी घरमें एक बच्चेको यह बीमारी हो जाती है तो उसमें रहने वाले दूसरे बच्चोंको भी होने की सम्भावना रहती है। १ से ५ वर्ष को आयु वालोंको अगर यह बीमारी हो जाय तो यह प्राण घातक ही होती है। डाक्टरी मतसे

इसकी उत्पत्ति एक तरहके कीटाणु से मानी है। जिसको (B. diptheria कहते हैं। जिन बच्चोंको अकसर तालुमूल प्रदाह (टोनसिलाईटिस) हो जाता है अथवा जिनके दांत का मसूड़ा फूलता है या दांत में कीड़े लग जाते हैं, या गलेमें दर्द हो जाता है, उनको ही यह बीमारी अधिक दिखाई देती है। इसके अलावा जो मनुष्य गलेसडे स्थानोंमें रहते हैं उनको पुष्टि कर स्वच्छ भोजन न मिलनेके कारण रोग हो जाता है उनको भी यह बीमारी हो जाती है।

प्रथमावस्था के लक्षण

प्रारम्भावस्थामें गले के भीतर देखनेसे उपजिह्वा और उसके चारों तरफ याने टोनसिल के आस पास लालिमा युक्त सूजन दिखलाई पड़ती है। तथा टांनसिल के ऊपर सफेद रंगके छोटे छोटे मलाई के टुकड़ों जैसा प्रलेप २-३ दिन बाद दिखलाई देता है। इस समय रोगी को हर एक वस्तु निगलने में बहुत तकलीफ होती है। तथा ज्वर १०२ डिगरी से १०४-१०५ तक हो जाता हैं। एकदम हलका रूप होने से गलेमें तथा शरीरमें हल्का दर्द निगलनेमें कष्ट इत्यादि भी होते हैं। उग्र रूप होने से ग्रीवा अकड़ जाती है। कानमें दर्द होता है जबड़ेकी दोनों तरफकी ग्रन्थियां फूल जाती है। गले के भीतर सफेद पदार्थ दिखाई देता है तथा श्वास लेने में बहुत कष्ट होता है। कभी कभी सफेद पदार्थस्वर-यन्त्र तक फैल जाते हैं तब उस समय उसको लेरिंजियलडिप्थीरिया कहते हैं।

तीव्राऽवस्था के लक्षण

जब इस रोगका आक्रमण स्वासनलिका पर होता है तब श्वासकी ध्वनि को सुनते ही अथवा श्वासक्रियाऽवलोकन से ही सहज ही में इस रोग की पहिचान हो जाती है। याने इस रोगमें श्वास मार्ग अवरुद्ध होजाता है इसलिये रोगी को खूब जोरसे कष्ट के साथ श्वास

लेना आरछोड़ना पड़ता है। इस रोगमें गलेमेंजोरकी आँधीकी तरह एक प्रकार की आवाज होती है। पँसलियां खिचती हैं और शरीर नीला-पड़ जाता है यह एक भयंकर सांघातिक रोग है इससे प्रायः रोगी मरही जाते हैं इस रोगका आक्रमण अन्न नलीमें होनेसे निगलना विल्कुल बन्द हो जाता है, तथा कभी-कभी इस रोगके साथ ब्रांकोनिमो-नियां ब्रांकाइटिस प्रभृति उपसर्ग भी वर्तमान रहते हैं। पक्षाघात भी इस बीमारी का एक प्रधान उपसर्ग है। यह प्रायः बीमारीसे छुटकारा होनेके २-४ सप्ताह बाद होता है। पक्षाघात का दौरा अगर तालू पर हो जाता है तो रोगी नासिका द्वारा गुनगुनाता हुआ बोलता है। तथा खाद्य पेय वस्तुओं को खाते समय नाकसे निकाल देता है।

इस बीमारी के साथ निची लिखी हुई कई बीमारियों का भ्रम भी हो जाता है इसलिये उनके भेदोंको जाननेकी भी आवश्यकता है। यथा काली खांसी इसमें भी श्वासनलिका और उसके ऊपरी अंशकी श्लैष्मिक झिल्लीमें प्रदाह हो जाता है और वहांपर एक नकली पर्दा उत्पन्न हो कर श्वास कष्ट युक्त एवं खांसी की आवाज कुत्ता भोंकनेकी तरह या फूटे वर्तन की तरह होती है। तथा ज्वर भी हल्का ही रहता है खांसीका वेग भी अत्यन्त आक्षेपिक होता है। डिप्थीरिया के लक्षण इससे विपरीत होते हैं। जैसे डिप्थीरिया में गलेमें घाव होता है उसके ऊपर एक सफेद पर्दा पड़ा रहता है, घाव गला नाक और फेफड़े के ऊपरी भाग तक फैल जाता है। इसलिये इसको कोई सड़ने वाला गलक्षत और कोई मारात्मक टानसीलाईटिस कहते हैं। डिप्थीरिया में ज्वर प्रबल रहता है तथा रोगीकी अवस्था बहुत हो कमजोर और शिथिलहो जाती है। लेकिन हूपिंग कफ Hooping Cough काली खांसी में प्रायः ज्वर नहीं रहता दोरेके रूप में प्रबल वेगसे खांसी चलती है। और खांसी का वेग न रहनेसे रोगी स्वस्थकी तरह हो जाता है तथा

गलेके भीतर पर्दा भी नहीं होता है . ब्रोंकाइटिस में परीक्षा के समय नानाप्रकार को आवाजें मिलती हैं छातीमें दर्द रहता है। लेकिन गलेमें घाव दिखाई नहीं पड़ता।

इस रोग में अन्य रोगों का सम्पर्क विशष भय प्रद होता है। जो रोगी ठीक होने वाले होते हैं तो उनके सांसकी दुर्गन्धि मिट जाती है, शोथ और प्रदाह घट जाता है। गलेके भोतर से सफेद सफेद मलाई के से टुकड़े निकल कर घाव साफ हो जाता है। जो रोगी बिगड़ने वाले होते हैं। उनके श्वास प्रश्वासमें बहुत सड़ी दुर्गन्धि आनेलगती है। नाड़ी क्रमशः क्षीण उतावली और मन्द पड़ जाती है तथा वमन बेहोशी प्रलाप, ज्वर वृद्धि, श्वासमें कष्ट, या श्वासावरोध', इत्यादि लक्षण होने लगते हैं, तथा पेशाब भी रुक जाता है' नासिका आक्रान्त होने पर समस्त पीने की चीजें नाक से बाहर आ जाती है। इसके अलावा बीमारी ठीक होने पर भी कितनेक रोगियोंको स्थानिक या सर्वांगिक पक्षाघात हो जाता है, कभी कभी बोलनेकी शक्ति, खाने की शक्ति कम या एकदम लुप्त हो जाती हैं।

चिकित्सा और पथ्य

डिप्थीरिया में तीव्र आक्रमण के समय जिस घरमें रोगी रहे उस घर की हवा हर समय तर रखना आवश्यक है, निम्न लिखित उपायों से कमरे में वाष्प पैदा कर देने पर कमरे की हवा तर रहती है, और इससे रोगी का श्वासीयकष्ट भी घट जाता है, तर रखने का उपायः-

१-या २ ड्राम रेक्टिफाइडस्प्रीट , एक औंस जल में मिलाकर, वह पानी स्टीम ओटो माइजर नामक यन्त्रके ग्लासमें डाल कर उसका स्पिरीट लैम्प जला कर, युवा" मनुष्यके मुंहके पास और बच्चों के बिस्तर के पास रख देना चाहिये। उससे जो वाष्प निकले, उसको रोगी अपने श्वास मार्ग से ग्रहण करे। यह यन्त्र ऐलोपैथिक औषध विक्रेताओंके पास मिल जाता है। अगर यह यन्त्र नहीं मिले तो इसकी

जगह चाय की केतली, या गंगा सागर में ऊपर बताये हुये हिसाब स्पिरिट से मिला हुआ पानी रखकर उस केतलीके नलीके नलसे रबड़ की नली जोड़ कर केटली को आगपर चढ़ाकर भाफको काममें लावे, लेकिन ऐसे समय केटली या अन्य गंगासागरादि यन्त्रको कमरे केबाहर और नल को रोगीके बिछोने के पास रक्खे इस क्रियासे हवा भीतर हो जाती है, और रोगीको श्वास लेने में भी कष्ट कम हो जाता है। हमारे यहां रेक्टिफाइडकी जगह लोहबान का चूर्ण पानी में डाल कर उसकी भाफ से भी काम लिया जाता है। मुंहके घावको भी हर समय साफ करते रहना चाहिये, इसके लिये डाक्टरी वाले ग्लिसरीन, हैड्रोजिन-प्रोक्साइड, बोरो फैक्ष आदि का प्रयोग करते है।

हमारे यहाँ आयुवद में मुख शुद्धिके लिये टंकण मधुमें मिलाकर रूई की फुरेहरी द्वारा प्रयोग किया जाता है। अथवा उदुम्बर सार का कुल्ला या अजवाईन अर्क को गरम जलमें डालकर कुल्ला कराया जाता है। इस प्रयोग से मुंह का घाव बहुत कुछ साफ हो जाता है, इस बीमारीमें गलेमें दोषका संचय होने से श्वासावरोध होकर मृत्युकी सम्भावना हो जाती है। ऐसे समय रोगीके गलेकी नली काट कर श्वास दिलाने का प्रयत्न करना चाहिये। इसक्रियाके लिये अस्पताल में भेज देना चाहिये।

पथ्य में —जलवाली, साबू आरारोट,हार्लिक्स,ग्लुकोज वाटर, मिश्रीजल देना चाहिये। अगर मुंह से न खासके तो डाक्टर लोग मल द्वार रास्ते से आहार देनी की व्यवस्था करते हैं।

मल द्वार से आहार प्रदान करने की विधि

यह कार्य वस्ति यन्त्रके द्वारा किया जाता है जैसे काचनिर्मित एनिमा यन्त्र जिसमें रबरको ट्यूब लगी रहती है, उसको एक ५-६ इञ्च लम्बी कांचकी नली में रबर के नल को एक तरफ जोड़ दे, और दूसरी

तरफ भी ५-६ नम्बरके मेलका साफ्ट कैथिटर लगादे, इसके बाद रोगी को बांयी करवट सुलाकर कथिटर जिस मुंह की तरफ छिद्र है उसीकी तरफसे मल द्वारके भीतर जितनी दूर तक सम्भव हो प्रवेश करादे, प्रवेशके पूर्व कैथिटर के मुंह पर थोड़ा सा ग्लेसरीन, या जैतुन का तैल अथवा नारियलका या एरंण्ड का तैल चुपड़दे, फिर आहारद्रव्य एनिमा (डूस) के पात्रमें धीर धीरे ढाल दे, और उस कांच की नली में से जाते हुए खाद्य पदार्थ को देखता रहे कि नली से पदार्थ आहिस्तेसे भीतर प्रवेश कर रहा या शीघ्रतासे या नहीं जा रहा है, इस क्रिया में खाद्य पदार्थ धीरे२ ही जाना चाहिये शीघ्रता पूर्वक जानेसे आंत ग्रहण नहीं करती है। इसलिये इसक्रियामें कुछ अधिक समय लगाना चाहिये। अगर नियम से आहार न पहुंचाया जा सके तो कांचकी पिचकारीके द्वारा भी यह कार्य होने सक्ता है। रोगी की कमजोर हालतमें स्टिमु-लैण्ट की जरूरत होती है। ऐसे समय डाक्टरी वाले पुरानी ब्राण्डी देते हैं। आयुर्वेदमें ऐसे समयमें मृतसंजीवनी सुराका प्रयोग किया जाता है।

ऐलोपैथिक औषध

डिफ्थेरिया सिरम ही इसकी विशिष्ट औषधि है। इसके सामयिक प्रयोग से लगभग ८० प्रतिशत रोगी ठीक हो जाते हैं।

आयुर्वेदीय चिकित्साका उदाहरण

रोगीनाम	उम्र	जाति	देश	यहांका पता
सावित्री	३ साल	अग्र०	गुड़ा	खिदिरपुर, रामकुमार

इसको सं० १६४३ में यह बीमारी हुई मुझे भी देखनेके लिये बुलाया,— मैं जब वहां गया तब निम्नलिखित लक्षण थे। ज्वर १०४ श्वास लेने में कष्ट, खांसी सूखी बार २ में चलती थी, स्तनपान नहीं करती थी, जिह्वा सफेद बाव युक्त थी, पानी पीनेमें बहुत कष्ट होता था, बाजे

प्रायः जल बाहर ही निकल जाता था, गले के बाहर शोथ था, गले को खोल कर देखने से भीतर सफेद मल जैसा जमा हुआ था कुछ झोंकोंके लक्षण भी थे। मैंने उसको देख कर कंठ कुब्ज सन्निपात स्थिर किया, उसी समय एक डाक्टर भी आया उसनें देख कर रक्त परीक्षा के लिये आर्डर दिया। दवा के लिये मैंने घरवालोंसे पूछा कि इलाज कौन का करायेंगे। घर वालों ने कहा कि डाक्टरी इलाज हमारे घरमें शुभ नहीं होता है। कविराजी इलाजही करायेंगे, आप ही इसकी चिकित्सा कीजिये। अतः निम्नलिखित औषध व्यवस्थाकी गई।

प्रातः	सायं	मध्यान्ह
वालरोगान्तक रस १ रत्ती कुटकी, अतीश, देवदारू, पाठल, मोथा, इन्द्र जो इनके क्वाथ के अनुपान से दिया।	कुमार कल्याण रस माता दूधसे	पुस्करादि चूर्ण २ रत्ती अदरख रस मधुमें

कालक चूर्ण मधुसे बार २ चाटनेके लिये दिया, लोहवान का बफारा दिया तथा छातीमें और गलेपर पुरातन घृतको मालिस करा कर बालुका सेक दिया इस तरह इस दवा को ७ रोजतक चालू रखा। मुंहको दिनमें ३-४बार अजवाइनअर्क मिले हुये जलसे साफ करने के लिये कहा गया ७ रोज मेंही यह लड़की बिल्कुल ठीक हो गयी। पथ्यमें माताका दूध, जल बार्ली, मिश्रीका शर्बत दिया गया, ज्वर ७ रोजके बाद भी ९८-९९ डिग्री ५-६ रोजतक रहा था लेकिन और कोई त्रुटि नहीं रही थी।

आयुर्वेद में इसकी चिकित्सा के लिये कितनी ही औषधियां हैं। परन्तु इस रोग को देखतेही वैद्यलोग घबड़ाकर, अथवा घरवाले घबरा कर इलाज डाक्टरों को दे देते हैं। ऐसा करना उनकी भूल है, आयुर्वेदके बराबर चिकित्सा प्रणाली अन्य कोई भी नहीं है, त्रुटि सिर्फ अनुभवकी है, अगर हर एक वैद्य अपना अनुभव मासिक पत्रों के द्वारा, अथवा पुस्तक रूपमें बाहर प्रकाशन करने लग जावें तो अन्य चिकित्साओंका

महत्व भारत वर्षमें टिकने ही नहीं पाये । लेकिन हमलोगोंमें यह बहुत बड़ा दोष है, इसको मिटाये बिना वैद्य समाजकी उन्नति असम्भव है।

रोगी का नाम	उम्र	जाति	देश	यहां का पता
बाबूलाल	१८	अग्र०	झाझर,	मारवाड़ी छात्र निवास

इसको प्रारम्भमें ज्वर १०४ हुआ था। इसमें २-३ रोज डाक्टर को बुलाकर दिखाया और उनका इलाज चालू किया। २-३ रोज तक इलाज चलनेके बाद भी ज्वर कम नहीं हुआ तब उन्होंने मियादी ज्वर कायम करदिया, और आज कलकी टाईफाईडकी दवा चालू कर दी। ४ रोज यह दवा चलनेके बाद ज्वर उतर गया, लेकिन जी घबराना, खाँसी, गलेमें भयंकर वेदना, प्रलाप, श्वासमें रुकावट आदि उपद्रव खड़े होगये, तब घरवालोंने मुझको देखनेके लिये बुलाया तब निम्नलिखित लक्षण थे। ज्वर ६८ था। गलेमें भयंकर वेदना, निगलनेमें पूरी रुकावट, सूखी खांसी, सन्धियोंमें पीड़ा, शिरमें दर्द, मोह एवं दाह था। नाड़ीकी गति कमजोर थी। मैंने इसको देख कर डिप्थीरिया रोग कायम किया, और निम्नलिखित इलाज चालू किया।

प्रातः	सायं	मध्याह्न
कस्तूरी भैरव १ रत्ती	लक्ष्मी विलास १ गो०	श्रृंग्यादि चूर्ण
माणिक्य रस १ रत्ती	माणिक्य रस १ रत्ती	
भार्ग्यादि क्काथ मधुसे	पान रस मधुसे	अदरख रससे

रातको कृष्ण चतुर्मुख पान रस मधुसे। गले पर धत्तूरादि घृतकी मालिस कराकर गुलबनप्सा गरम करके पट्टी बाँधी गयी।

लोहबानका भफारा दिया। पथ्यमें जल साबू दिया इस तरह यही दवा ७ रोज तक चालू रखी, इससे १३ रोज की अवधिमें ही ठीक होकर देश चला गया।

नोट—यह रोग बालकों के लिये जितनाकष्ट दायक है, उतना बड़ोंको नहीं। इस रोगमें वायु तथा कफ प्रधान रहता है। इसलियेकफ नाशक चिकित्सा करनी चाहिये। जैसे शास्त्रमें भी लिखा है।

ऊर्ध्व जत्रु विकारेषु विशेषान्नस्य मिष्यते।

नासाहि शिरसोद्वारं तेन तद्व्याप्य हन्तितम्॥

जत्रु वक्षत्रोऽसयोः संधिः जत्रुण ऊर्ध्व मूर्ध्व जत्रु। याने जतुकास्थि के ऊपरके हिस्से का नाम ऊर्ध्व जत्रु है। इसलिये इसमें जितने भी रोग होते हैं उनको चिकित्सा नस्य हैं और इसका देनेका मार्ग नासिका है, अतः नासिका द्वारा दिया हुआ नस्य ऊर्ध्व जत्रु विकारों का नाश करता है। और यह नस्य तीन प्रकार का होता है।

विरेचनं वृंहणं च शमनं च त्रिधामतम्।

रेचन क्रिया द्वारा दोषोंको निकालनेवाला, तथा वृंहण क्रिया द्वारा दोष मेटनेवाला, और शमन क्रिया द्वारा शान्त करनेवाला, इस तरह यह तीन तरहका है इसलिये इस रोगमें शास्त्रमें लिखा है कि—

विरेचनं शिरःशूलजाड्यस्यंद गलामये।

शोफ गंड कृमिग्रन्थिकुष्ठापस्मार पीनसे।

जिस नस्य से भीतर के पदार्थोंकी हीनता हो उसको रेचन नस्य कहते हैं। इसलिये शिरो रोग, जड़ता, कफ रोग, गलेके रोगमें नस्यका विधान है अतः इस रोगमें नस्य देना होतो प्रातः ही देना चाहिये। अगर रोगीकी स्थिति भयंकर हो तो किसी भी समय दे सकते हैं। बाल्यावस्थामें ८ वर्षके नीचे की अवस्थामें इसका प्रयोग नहीं करे तथा ८० वर्ष से ऊपर के वृद्ध को भी नहीं देवे।

इसरोगमें प्रयुक्त औषधियोंके योग



बालरोगान्तक रस

शाणः सूतस्य शुद्धस्य गन्धकस्य च तत्समम् ।
सुवर्ण माक्षिकस्यापि चार्धभागं विनिक्षिपेत् ॥
ततः कज्जलिकां कृत्वा लोह पात्रे दृढे नवे ।
केश राजस्य भृंगस्य निगुण्ड्याः पत्र सम्भवम् ॥
स्वरसं कोक माच्याश्च ग्रीष्म सुन्हर कस्य च ।
सूर्यावर्तवर्षाभू मेकपर्णीरसैस्तथा ॥
श्वेता पराजितायाश्च रसं दद्याद्विचक्षणः ।
देयं रसार्धभागेन चूर्ण मरिच सम्भवम् ॥
शुभ्रे शिलामये पात्रे लोह दन्डेनमर्दयेत् ।
शुष्कमातप संयोगात् वटिकां कारयेत्भिषक् ॥
प्रमाणं सर्षपस्येव बालानां विनियोजयेत् ।
ज्वरं त्रिदोषकश्चैव ज्वरमामं सुदारुणम् ॥
कासं पञ्चविधश्चापि सर्वरोगान् निहन्ति च ।
शिशूनां रोग नाशाय निर्मितोऽयं महारसः ॥

निर्म्माण विधि

शु० पारद $\frac{1}{2}$ शु०गन्धक $\frac{1}{2}$ स्वर्णमाक्षिक भस्म $\frac{1}{4}$ इन सबको लोहेके पात्रमें डालकर कज्जलि बनावे, फिर केशराज, जलभांगरा, सम्हालु पत्ता, मकोय, मण्डुकपर्णी इसके रसकी १-१ भावना देवे और काली मिर्च

का चूर्ण ३ मिलाकर लोहेके खरलमें पत्थरकीमुसलीसे मर्दन करके सरसों के परिमाण की गोली बनालेवे। यह गोली अनुपान भेदसे देने पर सन्निपातज्वर, आमज्वर, कास, सम्बन्धि बालकोंके समस्त रोगोंको नष्ट करता है। मैंने डिप्थीरियारोगमें इस रस का प्रयोग किया है इससे अच्छा फायदा होता है।

कुमार कल्याण रसः

सिन्दूर मौक्तिकं हेम व्योमाया हेम माक्षिकम् ।
कन्यातोयेन सम्मर्द्य कुर्यान्मुग्द मिता वटी ॥
वटिकां वटिकार्द्धंवावयोवस्थां विविच्यच
क्षीरेण सितया सार्द्धं बालेषुविनियोजयेत् ॥
कुमाराणा ज्वरं श्वासं वमनं पारिगर्भकम् ।
ग्रहदोषांश्च निखिलान् स्तन्यस्याग्रहणं तथा ॥
कामलामतिसारञ्च कृशतां वह्निवैकृतम् ।
रसः कुमार कल्याणो नाशयेन्नात्र संशयः ॥

निर्म्माण विधि —

रससिन्दूर, मुक्ताभस्म, स्वर्ण भस्म, अभ्रक भस्म, स्वर्णमाक्षिक भस्म इनसबको बराबर लेकर खरलमें डालकर घृत कुमारी स्वरसमें ३ रोज तक मर्दन करके मूंगके बराबर वटो बनालेवे। और बालककी आयु बला बल तथा दोष के बलाबलको देखकर मात्रा से दूध चीनी में या माता के दूध के साथ सेवन करावे। इसके सेवनसे बालकों का ज्वर, श्वास, वमन, पारिगर्भिक रोग, ग्रहदोष, स्तन्यदोष, कामला, अतिसार, दुर्बलता, अग्निविकृति नष्ट होता है।

१ रोहिणी प्रति विष Diptheria Antitoxies इसकी मात्रा रोगके बलाबल को देख कर ही प्रयुक्त की जाती है साधारणावस्थामें प्रारम्भिक मात्रा ४००० एक यूनिट की है। असंदिग्ध अवस्था में विष प्रभाव की अनुपस्थिति में १५००० यूनिट देनें चाहिये। विषका प्रभाव बढ़नें पर ३०००० - ६०००० यूनिट तक दें लेकिन् अधिक मात्रा में देने से बिलम्ब से दिये जानें की त्रुटी की पूर्ति नहीं होगी इस लिये रोगारम्भके साथ ही इस चिकित्सा का उपयोग कर लेना अधिक श्रेयस्कर है। पहली मात्रा देने के १२ या २४ घन्टे बाद दूसरी मात्रा पहिले से आधी ही देनी चाहिये। तीव्रावस्था में यह मात्रा ३-४ दिन तक देनी पड़ती है। इस इन्जक्सन को पेशीवेध से देना चाहिये इसके लिये उत्तम स्थान उरूप्रसारिणी पेशी है। अत्यावश्यकीय अवस्थामें सिरावेध द्वारा भी दे सकते हैं। इसका अधिक प्रयोग होने से मूर्च्छा, प्रकम्प, अशक्ति आदि उपद्रव उत्पन्न हो जाते हैं। ऐसे समय ऐड्रीनलीन का इन्जेक्सन दे देना चाहिये। प्रायः इस इन्जेक्सन प्रयोग के १० दिन बाद त्वचा में फोड़े हो जाते हैं तथा सन्धिशूल और तीव्र उदर शूल भी हो जाता है। ज्वर तथा बमन भी होने लग जाती है। फोड़े प्रथम इन्जेक्सन स्थान के पास होते हैं फिर क्रमशः समस्त शरीर में फैल जाते हैं। ये २-३ दिन तक रहते हैं तथा इन में खुजली भी बहुत चलती है। इस दोष से बचने के लिये १ रत्ती चूना दिन में ३ बार देना चाहिये। जब फोड़े अच्छी तरह से बाहर आजावें तब एक औंस पैराफीन में एक ड्राम मेन्थौल डालकर मरहम बनाकर लगाना चाहिए। सन्धिशूल के लिये सोडियम सिलसिलास दे देना चाहिये।

विशेष आवश्यक्ता पड़ने पर पेनीसिलीन टेब्लेट या इन्जेक्सन भी दिया जाता है। निरन्तर श्वास में कष्ट रहने पर तथा श्वास

ध्वनि में वृद्धि का अनुभव होता हो वहाँ पर कण्ठ नाड्युच्छेद योग्य सर्जन के द्वारा करा देना चाहिये अन्यथा श्वासावरोध से मृत्यु हो जाती है ।

होमियोपैथिक चिकित्सा

नवीनाऽवस्था में फेरम-फास, एकोनाइट, वेलाडोना, कास्टि-कम, ड्रोसेरा, कैलि-बाइक्रोम, हिपर, केलीफास, लैकेसिस आदि ।

मध्यमावस्थामें आर्सनिक, एपिसवेल, क्रोटेलस ।

तीव्रावस्था में एकोनाइट और स्पञ्जियाका । मात्रा क्रम ६-१२

डा० सुसलर के मत से प्रारम्भावस्था में इस रोग में फरम फास उत्तम काम करती है । इसकी ३ × शक्ति में ग्लेसरीन मिलाकर गाल के भीतर लगाने से अच्छा फायदा होता है । अगर इसके साथ केलीसल्फ की पर्याय क्रम से व्यवस्था की जाती है तो और भी अच्छा फायदा होता है । कफ निकलने पर नेट्रम्यूर, कैलीम्यूर देना चाहिये मात्रा ३× ×३०+ और भी लिखा है कि अगर वीमारी का मालूम हो जाय कि ठीक डिफ्थीरिया है तो वहाँ पर डिफ्थेरिनम (Diptherinum) ३०० २०० शक्ति वाला की २-१ मात्रा के प्रयोग से बीमारी की तीव्रता घट जाती है । कभी-कभी इसके प्रयोग के बाद दूसरी औषध की जरूरत ही नहीं होती ।

डा० क्लार्क का भी यही मत है । वे इस रोग में डिफ्थेरिनम, मर्कुरियस, सियानेटस और फाइटो लैक्का इन तीन औषधियों को ही श्रेष्ठ मानते हैं तथा यह भी लिखते हैं कि इस विमारी के अन्य भी कोई त्रुटी अवशेष रह जाती है वे सब उपरोक्त औष-धियों द्वारा ही मिट जाती है ।

कर्णिक सन्निपात (Mump)

लक्षण—

प्रलापश्रुतिहास कण्ठग्रहाङ्ग व्यथाश्वासकास प्रसेकप्रभातम्।
ज्वरंताप कर्णान्तयोर्गल्लपीडा बुधाःकर्णकं कष्टसाध्यं वहन्ति ॥

भावार्थ—जिस ज्वरमें तीनों दोष अत्यन्त कुपित होकर कानकीजड़में अत्यन्त सूजन कर दें और जिससे सूजनमें पीड़ा तथा कंठ तक जाय, वहरापन, श्वासकास, प्रलाप, पसीना, ज्वर, दाह, गलेमें पीड़ा आदि लक्षण हों उसको कर्णिक सन्निपात कहते हैं। और यह कष्टसाध्य व्याधि हैं।

अन्यत्—सन्निपात ज्वरस्यान्ते कर्णमूले सुदारुणः।
शोथः सञ्जायते तेन कश्चिदेव प्रमुच्यते ॥

सन्निपात ज्वरके अन्तमें कर्णमूलमें कठिन शोथ उत्पन्न होता है, इसके होनेपर कोई ही रोगी बचता है। ऐसा शास्त्रका सिद्धान्त है। लेकिन् इस विषयमें यह बात भी याद रखनी चाहिये।

ज्वरस्यपूर्वं ज्वर मध्यतोवा ज्वरांततोवा श्रुतिमूल शोथः।
क्रमादसाध्यः खलुकष्टसाध्यः सुखेनसाध्यो मुनिभिः प्रदिष्टः ॥

यदि यह शोथ ज्वरके पूर्व ही हो जाय तो असाध्य, वीचमें होवे तो कष्ट साध्य, और अन्तमें साध्य माना है, परन्तु कहींपर मियादि ज्वरके अन्तमें भी होनेवाले शोथसे रोगी बच जाते हैं। प्रारम्भसे होनेवालेकी अवधि ३ मास तककी मानी है।

डाक्टरीमें मम्पस पेरोटाइटिस कहते हैं (Mups or pavotitis)

डाक्टरीमें यह तीव्रसंक्रामक कीटाणु जन्य माना है; प्रायः यह रोग शीतकालमें बच्चोंको या युवाओंको ठण्ठ लगनेसे होता है। इस रोगमें कर्णमूलिका ग्रन्थियोंपर दाहयुक्त शोथ होता है। और इसमें कठोरपन अधिक होनेके कारण मुखकी तमाम क्रियायें नष्ट हो जाती हैं

तथा इस रोगीके श्वासमें दुर्गन्ध आती है। तथा जिह्वा सफेद रंगकी मैली हो जाती है खाने पोनेमें भी बहुत कष्ट होता है। इसके कीटाणु रक्त परीक्षामें नहीं मिलते हैं। दोषोंका संचयकाल २-३ सप्ताह माना है।

चिकित्सा

आदौविम्लापनं कुर्यात् द्वितीय मवसेचनम्।
तृतीय मुपनाहंच चतुर्थी पाटनक्रिया॥
पंचमे शोधनं कार्यं षष्ठेरोपण मिष्यते।
एते क्रमाव्रणस्योक्ताः सप्तमं वैकृतापहम्॥

व्रणके प्रारम्भमें ८ उपक्रम इसके लिये शास्त्रमें बतलाये हैं। जैसे विम्लापन, अवसेचन, उपनाह, पाटन, शोधन रोपण विकृतापह।

सुश्रुतमते शोफस्यैकादशो पक्रमाभवन्ति--अपतर्पणादयो विरेचनान्तास्ते च विशेषेण शोथ प्रतिकारा वर्तन्ते व्रणभावमापन्नस्य च न विरुध्यन्ते शेषास्तु प्रायेण व्रणप्रतिकार हेतव एव। अपतर्पणन्स्वाद्य उपक्रम एष सर्व शोफानां सामान्यः प्रधानतमश्च।

शोथ शान्तिके लिये शास्त्रमें अपतर्पणसे लेकर विरेचन पर्य्यन्त ११ उपक्रम बतलाये हैं। वे निम्नलिखित हैं। अपतर्पण (आलेप, परिषेक, अभ्यङ्ग, स्वेद, स्नेहन, विम्लापन, उपनाह,' पाचन, विस्रावण, स्नेहन, वमन और विरेचन, इसतरह ये ११ ग्यारह शोथके उपाय हैं। परन्तु यही शोथ व्रणभावको (याने फटकर घाव हो जाता है) तब यह उपरोक्त उपाय उचित नहीं है। तब तो अन्य उपाय जो घावको ठीक करनेके हैं वेही श्रेष्ठ हैं। जैसे अपतर्पण लंघन कराना सर्वशोफों का प्रथम उपचार है क्योंकि कहा भी है "वातेसामेऽपि लङ्घनम्। अर्थात् दोषोंसे आनद्ध पुरुषके कफाधिक दोष और उन करके दूषित धातु तथा मल और मल अवस्था और प्रकृतिको देखकर दोषके वेगको

रोकनेके लिये अपतर्पण कराना चाहिये। लेकिन् जिनके लिये अप-तर्पणका निषेध है उनको नहीं करावे।

आलेप कहां करना चाहिये—

शोफषूत्थित मात्रेषु व्रणेषूग्ररुजेषुच।
यथास्वैरौषधैर्लेपं प्रत्येकञ्चैव कारयेत् ॥

ज्योंही शोथ अथवा तीव्र वेदना युक्त व्रण उत्पन्न हो उसी समय यथोक्त औषधियोंका लेप करे। इस विषयमें एक दृष्टान्त है कि जैसे जिस घरमें आग लग जाय और उसमें यदि जल डाल दिया जाय तो अग्नि शीघ्र ही शान्त हो जाती है। उसी प्रकार लेप करनेसे शोफ युक्त वेदना भी शीघ्र ही नष्ट हो जाती है। इसके करनेसे केवल वेदना ही शान्त नहीं होती है, साथमें शोफका शोधन, हरण, उत्सादन, रोपण, अवसादन सवर्णीकरण भी हो जाता है।

लेप एवं नस्य

(१) हल्दी, इन्द्रायण, कूठ, सैन्धव नमक, देवदारु, हिंगोटकी जड़ इनको समभाग लेकर कूटकर चूर्ण बनालेवे और आकके दूधमें पीसकर लेप करनेसे कर्णक नष्ट हो जाता है। परन्तु यह लेप दोपहर बादमें करे, प्रातःकाल करनेसे आकका दूध विषका काम कर जाता है।

(२) कुलथी, कायफल, सोंठ, काला जीरी, इनको समान भाग लेकर गोमूत्र में पीसकर कुछ गरम करके वार २ लेप करनेसे कर्णक नष्ट हो जाता है।

(३) सहूत चूना हल्दीका लेप करनेसे भी कर्णक शान्त हो जाता है।

(४) गेरु, सज्जीखार, सोंठ, बच, राई, इनको थूहरके रसमें पीसकर लेप करनेसे व्रण जल्दी ही पककर फूट जाता है।

(५) एलुआ, (मुसब्बर,) समुद्र फेन, अफीम, धतूरेका पत्ता इनको धतूरेके रसमें मर्दन कर लेप करनेसे भयंकरसे भयंकर भी कर्णमूल

शोथ शीघ्र ही नष्ट हो जाता है। यह सैकड़ोवार अनुभव किया हुआ है।

(६) मिर्च, पीपल, जीरा, सैन्धवनमक, इनको जलमें पीसकर गरम करके नस्य देनेसे कर्णककी पीड़ा शान्त हो जाती है।

(१०) बिजोरेकी जड़, अरनी, देवदारु, सोंठ बड़ीकटेली, रास्ना, इनका लेप वातज शोथको नष्ट करता है।

(११) हिंगोटकी छालका चूर्णकांजीमें पीमकर लेप करनेसे वातज शोथ का नाश होता है।

दूर्वा, नालुक, मुलेहटी, लालचन्दन, इनकालेप अथवा शीतल द्रव्यों का लेप पित्त जन्य शोथ को नष्ट करता है।

असगन्ध, वच, तगर, देवदारु, कमीला, बच्छनाभ, इनको जलमें पीसकर गरम करके लेप करनेसे कफ जन्य शोथ नष्ट होता है।

(१४) सांपकी कांचुली की भष्मको कड़वे तेलमें मिलाकर लेप करने से कर्णमूल शोथ नष्ट हो जाता है।

लेप करने के नियम—

न रात्रौ लेपनं दद्याद्दत्तं च पतितं तथा।
न च पर्युषितं चैव शुष्यमाणं च धारयेत् ॥
शुष्यमाण मुपेक्षेत प्रदेहं पीड़नं प्रति।
नचापि मुख मालिम्पेत्तेन दोषः प्रसिच्यते ॥

रात्रीमें लेप नहीं करना चाहिये, लेपके ऊपरभी लेप नहीं करना चाहिये। लगाया हुआ लेप नीचे गिरजाय तो उसको ही उठाकर नहीं करना चाहिये। बासी लेप नहीं करना चाहिये। लेपके सूखने पर भी नहीं रखना चाहिये। लेप प्रतिलोम गतिसे करें, अनुलोम गति से न करें, क्योंकि प्रतिलोम रीतिसे लेप करने परही औषध अच्छी तरह से ठहर सकती है, और रोमकूपोंसे भीतर प्रवेश करके रोगोंको शमन करती हैं।

शुष्कलेप निष्फल तथा फोड़े-फून्सी करने वाला होता हैं। लेप शास्त्रमें तीन प्रकारका माना है, १ प्रलेप, २ प्रदेह, ३ आलेप,

(१) प्रलेप उसे कहते हैं जो ठन्डा होता है, और पतला किया जाता है, और अविशोषी तथा विशोषी होता है।

(२) प्रदेह वह होता है जो उष्ण, अथवा शीत, पतला अथवा गाढ़ा, और अविशोषो होता है।

(३) आलेप प्रलेप और प्रदेह दोनों के लक्षणों के मध्यवर्ती होता है। रक्त पित्त जनित रोगों में आलेप हितकारी है।

प्रदेह कफवात जनितरोगों को शान्त करता, सन्धान, शोधन, रोपण करनेवाला, सूजन की पीड़ाको नष्ट करता है, यह शोथमें तथा व्रणमें हितकर है। इसको कल्क और निरुद्धालेपन भी कहते हैं। अगर इसमें स्नेह मिलाना हा तो पित्तजनित रोगोंमें छः गुना और बातजनित रोगोंमेंचार गुना, कफ रोगोंमें अठगुना मिलाना चाहिये।

लेप का प्रमाण

भैंसके गीले चमड़े के समान मोटा लेप करना कहा है रात्रिमें लेप करना उचित नहीं क्योंकि शीत गरमीको रोक लेता है और गरमी के न निकलने से अनेक उपद्रव हो जाते हैं। अतः जो रोग प्रदेह से साधन करनेके योग्य हों उनमें तो दिनमें ही लेप लगाना चाहिये। अगर लेपादि करने पर भी शोथका शमन न हुआ हो तो वहांपर परिषेक करना उचित है।

बात शोकमें परिषेकका फल और प्रयोग

बात जन्य शोथ में वेदना को शान्ति के लिये घृत, तैल, काजो, मांसरस, और बातहर औषधियों के गरम-गरम क्वाथ से परिषेक करें। पित्तादि दोषोंसे उत्पन्न शोथमें दूध, घी सहत, और चीनी मिला हुआ जल ईखका रस, काकोल्यादि मधुर औषधि, वटादि क्षीर वृक्ष इनके शीतल क्वाथसे परिषेक करें।

कफज शोथमें तेल, गौमूत्र, खार, मद्य, शुक्त, चन्दन, अगर और कफघ्न औषधी इनके क्वाथको ठन्डा करके सेक करें। जैसे जल डालने पर अग्नि शान्ति हो जाती है वैसे ही परिषेक से दोषाग्नि शीघ्रही शान्त हो जाती है।

अभ्यङ्गका प्रयोग

दोषोंके अनुसार यदि उचित रुपसे मालिस किया जायतो वह दोषों को शान्त कर देता है, और सूजन स्थान को कौमल बना देता है। बात कफ जनित सूजन में तैल, और रक्त विषादि जन्य शोथमें शतधौत घृत का मर्दन हितकारी है। यह क्रिया स्वेदन, विम्लापन मर्दन विरेचनादि क्रियाओं के पहिले ही की जाती है।

स्वेदन क्रिया

वातकफ जनित वेदना युक्त दारुण और कठोर सूजन में पसीना देना चाहिये।

विम्लापनम्

अभ्यज्य स्वेदयित्वातु वेणु नाड्या शनैः शनैः विम्लापनार्थं गृह्णीत नलेनाङ्गुष्ठकेनवा पहिले मालिस ओर स्वेदन क्रिया करके एक बांसकी पोगली को गरम करके हथेली अथवा अँगुठे से रगड़े इससे सूजन नष्ट हो आता है। इसीको विम्लापन कहते हैं।

अवसेचनम्

रक्तावसेचनं कुर्यादादावेविचक्षणः।
शोफे महति संवृद्धे स्वेदनावतिवा व्रणं॥
योनयाति शमं लेपात् स्वेद सेकाऽपतपर्णैं॥
सो ऽपिनाशं व्रजत्याशुशोथ शोणित मोक्षणात्।
एकतश्च क्रियाः सर्वारक्त मोक्षणमेकतः॥
रक्तं हि विक्रियां याति तन्मोक्षे नास्ति विक्रियः

जहांपर शोथ बहुत बढ़ गया हो, अथवा जिस व्रणमें वेदना अधिक हो वहांपर बुद्धिमान वैद्यको चाहिये कि सर्व प्रथम रक्तावसेचन क्रिया करें शोणित मोक्षण क्रिया द्वारा जो सूजनलेप स्वेद सेक अपतर्पणादि क्रियाओं के ठीक नहीं होता है वह उपरोक्त क्रिया द्वारा जल्दीसे जल्दी ठीक हो जाता है। सम्पूर्ण लेपादिक क्रियायें एकतरफ हैं, और रक्त मोक्षण क्रिया एक तरफ है परन्तु इन दोनोंमें भी श्रेष्ट रक्त मोक्षण क्रिया ही है। क्योंकि रक्तही दूषित होकर रोगको करता है, उसके निकलने के बाद रोग की जड़ही नष्ट हो जाती है।

उपनाह विधि

शाकयोरूपनाहन्तु कुर्यादाम विदग्धयोः।
अविदग्धः शमंयाति विदग्धः पाकमेति च ॥

आम और विदग्ध दोषमें उपनाह क्रिया करे, इससे कच्चा शोथ शान्त हो जाता हैऔर जो पकने वाला है वह पक जाता है। उपनाहमें निम्नलिखित ओषधियां काममें आती है। तील, अलशी, दही, अम्ल-रस, सत्तु, चावलोंकी किणकी, कूठ, लवङ्ग, इनमेंसे किसीकी भी जैसे तिलादिकोंका सत्तुमें मिलाकर लूपरी (पुल्टिस) गरमकरके व्रणपर बाधें

अथवा सनके बीज, सहिजनके बीज, तिल, सरसों अलशी, सत्तु सुराबीज, तथा अन्य उष्णद्रव्योंको शोथको पकानेके लिये लूपरिके काम में लेना चाहिये। डाक्टरीमें ऐन्टोफ्लोजिष्टीन, को गरम करके व्रण पर बांधा जाता है।

इसके अलावा चोकरकी पुल्टिस, आटेकी पुल्टिस, नीमके पत्तों की पुल्टिस, अलशीकी पुल्टिस, चारकोलकी पुल्टिस भी बांधी जाती है। तथा गीलावाष्प स्वेद भी दिया जाता है।

वाष्प स्वेद विधि—

सूजन स्थानको प्रमाणके फुलालैनके दो चोहरा कपड़े लेकर केवल गरम जलमें या पोस्तकी डोडी डालकर किये गये गरम जलमें डालदेने चाहिये। फिर रुग्ण स्थानपर अंगोछा रखकर फुलालैनके एक टुकड़ेको जलमेंसे निकालकर निचोड़कर, उसको रुग्ण स्थानपर रखकर ऊपरसे अंगोछा ढांप देना चाहिये। यह कपड़ा ठंडा हो, इससे पूर्व दूसरा कपड़ा निचोड़कर वेदना स्थान पर पहिले की तरह सूजन पर रख देवें और पहिलेको गरम जलमें डाल देव। इस प्रकार आध घण्टे तक सेक करना चाहिये। इसके बाद उस स्थानको पोंछकर शुष्ककर देना चाहिये। कईवार सेककिये हुये कपड़को निचोड़कर ब्रणपर बंधा रखनेसे भी बहुत लाभ होता है। इसी तरह ईंट या पत्थरको भी गरम करके जलमें भिगोकर भाप कम होने पर कपड़ेमें लपेटकर सेककिया जाता है।

एभिरुपायैः पक्वस्य पाटनं (विश्रावणम्) हितम्।

परन्तु बालक, वृद्ध सुकुमार, क्षीण, डरपोक तथा स्त्रियोंके लिये शस्त्र कर्म निसिद्ध है। मर्मस्थानपर किसी भी पुरुषको ब्रण हो गया हो तो वहां पर भी शस्त्र क्रिया नहीं करनी चाहिये। ऐसे स्थानोंपर ब्रणको दारण करनेके लिये निम्नलिखित उपाय करना चाहिये।

(१) गौके दांतको जलमें घिसकर विन्दुमात्र ब्रणपर लगानेसे शोथको फाड़ देता है।

(२) प्रति सारणीय क्षारकी सींक लगानेसे भी ब्रण फट जाता है। दारण द्रव्याणि

अथवा—चिरविल्वाग्निदन्ति चित्रको हयमारकः।
कपोतकङ्कगृध्राणां पुरीषाणि च दारणम्॥

करंजुवा, भल्लातक, जमालगोटा, चित्रक, कनेर, कबूतर, कंकगीध इनकी विष्ठाका लेप करनेसे भी दारण हो जाता है। पाटनक्रिया करनेके बाद भी अगर ब्रण दोष रहित न हुआ हो तो वहांपर तिल

सन्धव नमक, घी, हल्दी, दारुहल्दी, निशोत, मुलेहटी, निम्बपत्र इन्हें एकत्र मिश्रितकर लेप देनेसे व्रणका शोधन हो जाता है अथवा अनन्त मूलका ही लेपकरनेसे व्रण शोधन हो जाता है।

अथवा त्रिफला, खदिरकाष्ठ दारु हल्दी, न्यग्रोधादिगण, बला, नीमपत्र, वेरीकी मूल (रांगजड़) और पटोल पत्र, इनमें प्रत्येकका कषाय व्रणको शोधनकर देता है। शोधन क्रियाके बाद रोपणके लिये कितनी ही प्रकारकी कागलीकी मरहम बाजारमें मिलती है उसे लगाने से व्रण आपही भरकर ठीक हो जाता है, मगर यदि व्रण स्थित मांसां कुर खराब हो गये हो, उसके कारण घाव नहीं भरताहो तो वहांपर तिलकल्कमें मधु मिश्रितकर लगाना चाहिये इससे शीघ्रही व्रण भर जाता है। अगर किसीको नासूर रूप घाव हो गया हो तब मनुष्यकी हड्डोकी भस्मका या महिषोके सींगकी भस्मको घृतमें मिलाकर लगानेसे अवश्यही फायदा होता है। यह मेरा प्रत्यक्ष अनुभव किया हुआ है।

इस रोग से आक्रान्त मेरे पास नानो अवस्था के रोगी आये जिनका मैंने देशमें तथा यहां अस्पताल में जो इलाज किया उसका भी थोड़ा सा विवरण आपके सामने उदाहरण रूपसे लिख रहा हूं कृपया आप परीक्षा करके देख।

रोगी नाम	उम्र	जाति	देशमें
पृथ्वीसिंह	३०	क्षत्रिय	केड़

यह रोगी राजपूतानाके केड़ नामक ग्राम का रहने वाला था, इनके जमीदारी अच्छी थी, तथा गांवके ठाकुर थे। इसको प्रारम्भमें ही शीत ऋतुमें ठंन्ड लग कर कानोंकी जड़में दोनों तरफ सूजन पैदा हो गया, तब २-३ रोज तक तो यह अपने घर में ही इलाज कराता रहा, परन्तु कुछ फायदा नहीं हुआ और ज्वर तथा प्रलाप कास, मोह आदि उपद्रव बढ़ गये। तब इनके घर वालोंने जयपुरसे डाक्टर बुलाये और उनका इलाज चालू कर दिया, डाक्टरोंने १५

रोज तक इलाज किया, लेकिन कुछ भी फायदा नहीं हुवा दिन पर दिन दिन हालत खराब होनें लग गई तब डाक्टरोंनें कह दिया कि हालत बिल्कुल खराब है, अब आप और किसी का इलाज कराईये हमारे पास तो अब चीरनें सिवाय कोई इलाज नहीं है, और चीरा देनें की रोगीकी हालत नहीं है। यह सुन कर घर वाले घबरा कर रोने लग गये। उनकी ऐसी हालत देख कर उन्हीके घरके वृद्ध पुरुषनें कहा कि आप लोग धैर्य्य रखिये, और किसी आदमीको जसरापुर भेज कर रामबक्षजी जोशीके घरसे उनके पुत्रोंमें से किसी को बुला लीजिये अपनें घरमें उनके आनेसे ही रोगी ठीक हो जाता है। वृद्धका कहना मान कर जसरापुर ऊंटका सवार भेजा गया वहां से मेरे चाचा केदारनाथ जी उसके साथ केड़ गये और रोगीको हालत देखी, और निम्नलिखित चिकित्सा चालु की।

प्रातः सायं	मध्याह्न	रात्रीको
कस्तूरी भैरव	अष्टाङ्गावलेह	कृष्णचतुर्मुख
भार्ग्यादि क्वाथ मधुसे।	अदरख रस मधुमें	पानरस मधुमें

तथा सूजन पर-कबूतर की विष्टा जलमें मिला गरम करके २-२ घन्टा से लेप करना शुरू किया, दूसरे ही रोज एक तरफ की गांठ फूट गई और पीप निकलने लग गया, परन्तु घावका मुंह छोटा था इस लिये पीप अच्छी तरह से नहीं निकलता था तब नीमको पत्तियोंका भरथा बना कर घाव पर बंधवाया जिसके दो बार बांधनेंसे ही घाव बिल्कुल साफ हो गया और रोगीको दवा वगैरह निगलने में भी सुविधा हो गयी तथा ज्ञान भी हो गया। इसी प्रकार दूसरी गांठको भी भेदन किया गया बादमें लाल रंगकी कागजी मरहम की पट्टी लगा दी। इस तरह यह रोगी बहुत जल्दी ही चाचा जी के इलाज से ठीक हो गया और पथ्य भी दिलवा दिया गया।

द्वितीय रोगी

रोगी नाम	उम्र	जाति	देश
रायचन्द्र	१०	जैनी	झुंझणूं (जयपुर)

इसको झुंझणू में ही सं० १६८२ की साल में चैत्र मास में मन्थर ज्वर हुआ था। इसकी चिकित्सा वैद्यराज पं० मृजामल्ल जी जोशी कर रहे थे। उन्होंने मेरेको भी बुला कर इस रोगी को दिखलाया; उस समय इसके निम्नलिखित लक्षण थे। ज्वर प्रातः १०२ डिगरी सायं-काल १०३ प्रलाप, तन्द्रा, मोह, गले में कफकी आवाज दोनों फेफड़े कफसे आवृत, टट्टी बिल्कुल नहीं होती थी, पेशाब विस्तर में ही करता था, तब जोशी जी ने तथा मैंने मिल कर चिकित्सा चालू की।

प्रातः सायं	म० रा०	शयनकाले
ब्राह्मी वटी	शृंग भस्म ३ रत्ती कृष्णचतुर्मुख १ रत्ती	
अष्टादशाङ्ग क्वाथमधुसे।	शृंग्यादि १ मा०	दशमूलक्वाथ से
अष्टाङ्गावलेह मधुसे चाटनेको दिया,	पानरस मधुमें	पान रस मधुमें

इसको यह औषध १० रोज तक चलाई गई जिससे ज्ञान की वृद्धि भी हो गई, ज्वर भी कम हो गया, तथा श्लेष्मा भी निकलने लग गया परन्तु अचानक दोनों कानोंकी मूलमें शोथ हो गया, तब उस पर काला जीरी गोमूत्र में पीस कर गरम करके लेप कराया, उससे कुछ फायदा नहीं हुवा तब कुलत्थादि लेप कराया, इससे शोथमें कुछ कमी हुई परन्तु फिर जुकाम हो गया जिससे शोथ बहुत बढ़ गया और ज्वर भी फिर बढ़ गया, तब लेप बन्द करके अलशी की पुल्टिस चालू की तथा खाने की औषधियों में भी परिवर्तन किया।

प्रातः सायं	म० रा
कस्तूरी भैरव १रत्ती	लक्ष्मी विलास
भार्ग्यादि क्वाथ मधुमें	पान रस मधुसे

पथ्यमें जलबार्लीही दिया गया।

ग्रन्थियां पक गई लेकिन फूटी नहीं तब विदारण के लिये कपोत विष्ठाका लेप कराया, जिससे एक ग्रन्थि कानके भीतर में फूट गई बहुत पूय निकली, इसको निम्ब पत्र शृत जल से साफ करते थे, तथा साथ में हाईड्रोजन पैरोक्साइडसे भी साफ करते थे बादमें पंचामृत तैल कानमें डाला जिससे घाव बिल्कुल ठीक हो गया।

दूसरी गांठके ऊपर प्रतिसारणीयक्षार लगाया जिससे वह भी फूट गई, तब इसके ऊपर नीमका भरथा बंधवाया २ पट्टी बांधने से ही घाव साफ हो गया बादमें लाल मरहम लगाई जिससे घाव बिल्कुल सूख गया। ज्वर भी छूट गया तब पथ्य चालू कर दिया। यह बहुत पुराना किस्सा है। इसकी तारीख याद नहीं है इस रोगी के इलाज में ३ मास लगे थे इस लिये ता० वार विवरण नहीं लिख सका।

मेरी चिकित्सामें अस्पतालमें तथा बाहर भी बहुत से रोगी आये। जिनमें बहुतों को लेपादिक क्रियाओं के द्वारा ही फायदा हुआ है और कई एक जलौकाऽवचारण से तथा बहुतों के शस्त्र क्रिया भी करनी पड़ी है। अतः चिकित्सकको चाहिये कि इस रोगमें समयानुकूल रोगीकी हालतको देख कर ही चिकित्सा करे।

॥ श्रीः ॥

अष्टादशाङ्ग क्वाथ

दशमूली शटी शृंगी पौष्करं सदुरालभम्।
भार्गी कुटज बीजञ्च पटोलं कटुरोहिणी॥
अष्टादशाङ्ग इत्येष सन्निपात ज्वरापहः।
कास हृग्ग्रह पार्श्वार्ति श्वास हिक्का वमीहरः॥

भावार्थ—दशमूल, कचूर, काकड़ाशिंगी, पोहकर मूल, धमासा, भारंगी, इन्द्रजो, पटोल पत्र, कुटकी, इन सर्व औषधियोंके मिलित योग का अष्टादशाङ्ग क्वाथ कहते हैं। यह क्वाथ विधि पूर्वक निर्माण करके सेवन करनेंसे, उपद्रव सहित सन्निपात ज्वर नष्ट हो जाता है।

चतुर्दशांङ्ग क्वाथ

चिर ज्वरे वात कफोल्वणे वा त्रिदोषजेवा दशमूल मिश्रः। किराततिक्तादि गणः प्रयोज्यः शुद्ध्यर्थिने वा त्रिवृताविमिश्र :॥

भावार्थ—पुरानें ज्वर में, वातक फोल्वण ज्वर में अथवा त्रिदोष ज्वरमें किराततिक्तादिगणमें दशमूल मिला कर सेवन करानें से बहुत अच्छा फायदा होता है। यदि मलावरोध होतो इसमें निशोतका चूर्ण और मिला देवे।

भार्ग्यादि क्वाथ

भार्गीजया पौष्कर कंटकारी कटुत्रिकोग्रा वनकुण्डलीभिः।
कुलीर शृंगी कटुकी रमाभिः कृतः कषायः किल कर्णकघ्नः॥

भावार्थ—भारंगी, अरणी, पोहकर मूल, कटेरी, सोंठ, मिरच, पीपल, वच, नागरमोथ, गिलोय, काकड़ा शींगी, कुटकी, रास्ना, इनका क्वाथ विधिसे क्वाथ बना कर सेवन करनें से कर्णक सन्निपात नष्ट हो जाता है।

एलोपैथिक चिकित्सा—

इसरोगमें पाश्चात्य चिकित्सक सल्फर मूप खानेके लिये देते हैं तथा लाईकर हाईड्राज एमोनेटा लगानेको देते हैं, सूजनके न घटने पर ऐन्टी फ्लोजिस्टीनकी पट्टी बंधवाते हैं। इनके पास इस रोगको विशिष्ट चिकित्सा नहीं है। उनका कथन है कि जब तक तापमान अधिक

तथा शोथ रहे अबतक रोगीकी सेवा बिस्तर पर ही करनी चाहिये। मुंह खोलनेमें कष्ट होनेके कारण भोजन तरल ही देना चाहिये। उसको नलिकासे चूसकर भी पिया जा सकता है। मुंहको हर समय कुल्ला कराकर साफ रखना चाहिये पीड़ा शान्त्यर्थ सेक करना चाहिये। १४ दिवस पर्य्यन्त अन्य रोगियोंसे दूर रखना चाहिये।

अथ भुग्ननेत्र सन्निपात ज्वरलक्षणम्

भृशं नयनवक्रता श्वसनकासतन्द्रा भृशं
प्रलाप मदवेपथु श्रवणहानि मोहस्तथा।
पुरोनिखिलदोषजे भवति यत्र लिंगंज्वरे
पुरातन चिकित्सकैः स इह भुग्ननेत्रो मतः॥

भावार्थ—जिस सन्निपात ज्वरमें नेत्रोंमें अत्यन्त टेढापन हो गया हो, श्वास, खांसी, तन्द्रा भयंकर प्रलाप, मद और कम्प आदि लक्षण हों तथा कानोंमें बहरापन और मोह होवे, ऐसे लक्षण वालेको प्राचीन वैद्य भुग्ननेत्र सन्निपात कहते हैं। इस रोगसे आक्रान्त रोगी मेरे देखने में नहीं आये इसलिये इस विषयमें साधारणतया ही चिकित्सा जो ग्रन्थोंसे प्राप्त हुई है, उसीको सूक्ष्म रूपसे लिख रहा हूं। इसकी चिकित्सा वैद्य बन्धु स्वानुभवसे ही करें। मियाद ८ दिवसकी है।

शास्त्रीय चिकित्सा —

तुरंगगन्धालवणाग्रगन्धा मधूकसारोषण·मागधीभिः
बस्ताम्बुशुण्ठी लशुनान्विताभिर्नस्यं कृशं भुग्नदृशं करोति॥

भावार्थ – असगन्ध, सैन्धवनमक, बच, महुवेका सार, कालीमिर्च, सोंठ और लहसुन, इनको बकरेके मूत्रमें पीसकर नस्य देवे, अथवा तन्द्रामें कहे हुये अंजन और नस्य देवे।

अथवा रसराज रस, संज्ञाप्रबोधन रस, सूचिका भरण रस, आदि तीव्र ओषधियोंका प्रयोग कटेहरी, गिलोय, पोहकरमूल, सोंठ, भारंगी, दूरद्द क्वालके क्वाथके अनुपानसे करे।

रक्तष्टीवि श्वसनक ज्वर

श्वसनक ज्वर फुफ्फुस सन्निपात-रक्तष्ठिवी सन्निपात, न्युमोनिया माधवाचार्य मतसे लक्षण—

रक्तष्ठिवी ज्वरवमितृषामोहशूलातिसाराहिक्काध्मान भ्रमणदवथु श्वाससंज्ञाप्रणाशाः । श्यामारक्तोधिकतर रसना मण्डलो त्थानरुपा रक्तष्ठिवी निगदित इह प्राण हन्ताप्रसिद्ध ॥

भावार्थ—जिस ज्वरमें वमन हो, प्यास अधिक हो, शूल हो, अतिसार हो, हिचकी हो, अफारा हो भ्रम हो, छींक ज्यादा आती हो, श्वास अधिक वेगसे चलता हो, संज्ञाकी कमी हो गई हो, जिह्वा काली लाल चकत्तोवाली हो गई हो, उस रोगको रक्तष्टिवी सन्निपात कहते है। इस रोगमें थूकते समय बहुधा रक्तमिश्रित कफ आता है। मारवाड़में इसको गुजरातीके नामसे भी पुकारते हैं। कहीं पर रक्त नहीं भी आता है परन्तु और सम्पूर्ण लक्षण होते हैं। यह रोग प्रायः गरीब लोगोंको जिनके पास बिछाने ओढनेके कपड़ोंका अभाव रहता है उनके फेफड़ोंमें ठण्डके लगनेसे होता है जैसे सिद्धान्त निदानमें भी लिखा है।

समाच्छादनहीनानां दुर्बलानां विशेषतः
दीनानां दूनचित्तानां शीतवर्षादि बाधनात्

उपरोक्त कारणों द्वारा शिशिर, वसन्त, ग्रीष्म ऋतुमें ही यह रोग प्रायतया होता है। दूसरा कारण कृमि भी माना गया है। जिस समय इस रोगका कारण कृमि होता है, उस समय यह रोग बहुतायतसे महामारी रूपमें फैल आता है। इस रोगमें सर्दी लगती है। रोगीको कपकंपी लगकर जोरका ४-५ डिग्री तक बुखार चढ़ जाता है जो ४-५ रोज तक नहीं उतरता है। प्रायः शुष्ककास चलती है, कफ गाढ़ा और गंदला रहता है। प्रथम

कफ श्वेत और झागदार आता है, पीछे भूरासा हो जाता है। साधारणतः कोई तीव्र शूल नहीं होता ; जबतककी फुफ्फुसावरण प्रदाह (प्लूरिसी) न मिली हो। परन्तु प्रायः प्लुरिसी इसमें मिली ही रहती है। चाहे दर्द तीव्र हो या न हो परन्तु आयुर्वेद मतसे मन्द चुभनेवाला दर्द छातीमें रहता ही है। रोगीका श्वास तेज याने स्वाभाविकसे दुगुना या इससे भी अधिक हो जाता है ज्वरका वेग १०४°-१०५° तक होता है। अच्छे होनेवाले रोगियोंमें ७ से १२ वेदिन ज्वरमान सहसा गिरकर प्राकृतिक अवस्था पर आ जाता है। यदि दिन भरमें ज्वर १०४ से ऊपर न जावे नाड़ी स्पन्दन १२० से अधिक न बढ़े तथा श्वास की गति ३५ से ऊपर न जाय तो समझना चाहिये कि रोगी ठीक हो जायगा यदि रोगी अच्छा नहीं होनेवाला होता है तो श्वासमें काठिन्यताका अनुभव करने लगता है, नाड़ीको गति बढ़ जाती है। ज्वर १०५-१०६ तक हो जाता है, रोगीको प्रलाप हो जाता है तथा तन्द्रामें पड़ा रहता है। ऐसे लक्षण होनेपर रोगी मर जाता है। श्वास यन्त्र पर इस रोगका आक्रमण होता है इसलिये इसको श्वसनक ज्वर भी कहते हैं। कितने आचार्योंने इस रोगमें फेफड़े दूषित होते हैं इसलिये फुफ्फुस सन्निपात भी कहा है। इस तरह भावमिश्रने इस रोगका नाम कर्कटक सन्निपात भी कहा है। आयुर्वेदमें इस रोगका विशेष विस्तार पूर्वक वर्णन नहीं मिलता है। उपद्रव रूपसे प्रायः मोतीझरा वगैरह बड़े रोगोंमें अक्सर इसका असर देखा जाता है। अतः चिकित्सकको चाहिये कि इसके लिये समयानुकूल परीक्षा करके चिकित्सा करें। सिद्धान्त निदानमें इसका नवीन शैलीसे वर्णन किया है।

सिद्धान्त अरिष्ट लक्षण—

स्वेदोभृशं ज्वरस्तीव्रो वृद्धः क्षीणोऽथवातुरः
पात्रत्रयस्य सम्पत्त्या सतुजीवेत कथञ्चनः ॥

जिसको निरन्तर पसीना आता हो ज्वरका वेग तीव्र हो रोगी वृद्ध हो अथवा क्षीण हो गया हो तो पात्रत्रय विद्यमान रहने पर भी शायद ही जीता है।

अरिष्टलक्षणम्

द्वावेव फुफ्फुसौ दुष्टौ समग्रो यस्यवैकृतः।
नासा श्वासौ भृशंस्वेदो दुर्लभं तस्य जीवितम्॥
मन्दे किंचित् प्रलपति स्वेदः स्नातः प्रमुह्यति।
वेपते करपादश्च प्राणास्तस्यापि दुर्लभाः॥
अतीसारेण वाक्रान्तां दुर्वारेण भवेद्‌यदि
क्षीणः श्वसनके नार्तो दक्षिणाभिमुखोहि सः॥

भावार्थ–जिसके दोनों फुफ्फुस खराब हो गये हैं अथवा जिसका सम्पूर्ण खराब हो गयाहो, नासिका जिसकी फूल कर श्वास कष्ट से लेती हो, पसीना भयंकर आता हो ऐसा रोगी मुश्किल से ठीक होता है। अथवा जो रोगी कुछ २ मन्द प्रलाप करता हो तथा पसीनोंकी अधिकतासे शिथिल हो जाता हो, हाथ पैर जिसके कांपते हो, ऐसा रोगी मुश्किल से बचता है। अथवा जिस रोगी को बलवान अतीसार हो गया हो तथा लंघानादिकों के द्वारा अति क्षीण हो गया हो, श्वास की गति ज्यादा बढ़ गई हो ऐसा रोगी यमालयको चला जाता है। यह सर्व लक्षण सिद्धान्त निदान में लिखे हैं।

डाक्टरी मत से निदान प्रथम जब न्युमानिया होता है तब उसमें सर्व प्रथम दोनों फेफड़ो में शोथ आता हैं। वह शोथ दो प्रकार को होती है १ लोव्युलर न्युमोनिया–इस अवस्था में शोथ फेफड़े के छोटे टुकड़ो में होती है। २ लोव्युर निमोनियां इस रुप में शोथ फेफड़े के एक टुकड़े में होती है। प्रथम रुपको ब्रांकोनिमोनियां

कहते हैं।। फेफड़ों के अन्दर सूजन चिर कालीन रोगोंमें भी हो जाती है इस अवस्था में कोई विशेष लक्षण प्रारम्भ में दिखाई नहीं देते। यह रोग प्रायः मद्य पीने वालों में या बुड्ढों में अथवा बच्चों में पाया जाता है। यह अन्य रोगों की उत्पत्ति में भी हो जाता ह। इस रोग का आक्रमण २ तरह से होता है। (१) फुफ्फुस खण्ड प्रदाह २) श्वास नलिका प्रदाह इसमें फुफ्फुस खण्ड प्रदाह विशेष घातक है। फुफफुस क्या वस्तु है? उत्तर—श्वासोच्छ्वास क्रिया के साधन २ फेफड़े हैं वक्ष गह्वर में हृदय के दोनो तरफ १--१ करके दोनो फेफड़े रहते हैं। ये फेफड़े बहुत मृदु कुछ तेजस्वी दबाने पर स्पञ्ज के समान दबने वाले और वजन में हल्के होते हैं। इनमें मधुमक्खी के छाते के समान छिद्र होते हैं। यह जल पर तैरने वाले हल्के होते हैं। इनमें संकोचन प्रसारण क्रिया भी रहती है। सद्योः जात शिशु के फेफड़े का रंग कुछ गुलाबी होता है। बड़ी आयु वालों के फेफड़े का रङ्ग मैला हो जाता है। वृद्धावस्था में इनका रंग काला हो जाता है। स्त्रियों की अपेक्षा पुरुषों के फेफड़े अधिक काले होते हैं।

पुरुषों के दहिने फेफड़ो का वजन ५५ तोला और बायें का ५० तोला होता है। पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियों के फेफड़े में वजन कम होता हैं। फेफड़ा के ऊपर का भाग नीचे की अपेक्षा पतला होता है। ऊपर के भाग को फुफ्फुस शिखर (ऐपेक्स Apex) कहते हैं और नीचे को भाग को बेस (Base) कहते हैं। इन फेफड़ों में अनेक छिद्र होते हैं। इनमें ३ मुख्य हैं। जिनमें १ वृन्त खात और २ हृदय खात कहलाता है। फुस्फुसमूल इन छिद्र द्वारा भीतर प्रवेश करता है। हृदय खात बाएं फेफड़े की अपेक्षा दाहिने में अधिक गहरा है।

फुफ्फुस वृन्त मूल (Root) फुफ्फुसों में जाने वाली श्वासनलिका

की शाखा में, रुधिर वाहिनी नाड़ियां रसायनिया, इन सबका समूह जिनके द्वारा फुफ्फुस का हृदय और श्वास नलिकाओं के साथ सम्बन्ध रहता है। इन फुफ्फुसों की बनावट मधुमक्षिका के छत्ते की भांति होती है। जिस प्रकार छत्ता अनेक कोठरियों से बना होता है, उसी तरह फुफ्फुस सहस्त्रों वायु कोष्ठों से बना होता है, जिसमें वायु प्रणाली से वायु आती रहती है। यह वायुकोष एक दूसरे से बहुत पतली दीवारों के पड़तों के द्वारा भिन्न रहते हैं। यह भित्ती एक प्रकार की कला वा झिल्ली से बनी होती है। इसमें मोटाई बहुत कम होती है। इसमें अनेक रक्त नलिकायें लगी रहती हैं। यह सब केसिकायें होती हैं। इनकी संख्या बहुत अधिक होती है। जितने वायु कोष्ठ होते हैं उनमें हरेक में केशिकाओं का एक ही परत रहता है, क्योंकि इनकी दिवारें बहुत पतली होती है। इसलिए उसमें अधिक केशिकाओं का समावेश नहीं हो सकता। दिवारों के पतली होनेका का एक कारण और भी है, कि इनके पतली होने से ही वायु का परिवर्तन हो सकता है। वायु कोष्ठ में वायु रहता है और कोशकी दिवारों की केशिकाओं में रक्त का प्रवाह होता रहता है। इससे वायु रुपी आक्सिजन दिवारों में होकर रक्त में पहुंच जाती है और रक्त की दूषित गैस दिवारों के द्वारा वायु में आकर मिल जाती है। इस प्रकार यह दिवारें वायु परिवर्तन में बाधा नहीं करती। मोटी दिवारें होने से गैस के परिवर्तन में कठिनाई होती है और श्वास कर्म निरर्थक हो जाता है। इसलिये ईश्वर ने कहीं पर भूल नहीं की। उसने जो भी वस्तु बनाई है खूब सोच समझकर ही बनाई है।

इन फुफ्फुसों के ऊपर एक प्रकार की खोली चढ़ी रहती है जो सैत्रिक तंतुओं से बनी होती है। इसको फुफ्फुसावरणकला प्लुरा

Pleuro कहते हैं। इसके दो परत होते हैं। एक बाहरी जो वक्षः स्थल में भीतर की तरफ मांसपेशियों और पर्शूकाओं से मिला रहता है। और दूसरा भीतरी फुफ्फुस के ऊपर चिपटा रहता है। ये दोनों परत एक ही झिल्ली से बने होते हैं। इन परतों में कुछ तरल पदार्थ रहता है। यह चिकनाईट का काम करता है तथा यह तरल ही हृदय की गति को सुगमता से करने देता है और फुफ्फुसों को फैलने और संकोच करने में सहायता देता है। परतों में शोथ आने पर तरल का बनना कम हो जाता हैं। इससे छाती में बहुत तीव्र शूल होने लगता है। जिस मार्ग से श्वास फुफ्फुस तक जाता है वह नासिका के छिद्रों से आरम्भ होता है। प्रकृति ने नासिका के छिद्रों में प्रबन्ध कर रखा है कि जो वायु श्वांस लेते समय भीतर जाता है वह रन्ध्रो में स्थित बालों द्वारा छन कर ही जावे, जिससे वायु के साथ जाने वाले जन्तु तथा कण वही हीं रुक जाते हैं। नासिका की रचना भी सधारण नहीं है। इसमें भी कई प्रकार की सुरंगे और गढ़े होते हैं जो श्लैस्मिक कला से ढके रहते हैं। इसलिये इसमें ठोस वस्तु जैसे कण छिद्रस्थित बालों में से भीतर पहोंच जाते हैं तो कला तुरन्त उत्तेजित होकर छींक आने लग जाती है, जिससे तुरन्त बाहरी वस्तु फेंकी जाती है। वायु नासिका के द्वारा स्वरयन्त्र में पहुंच कर वहां के नलिकाओं के द्वारा फेफड़ों के कोष्ठों में पहुंचती है। वायु प्रणाली की पिछली भित्ति सैत्रिक तन्तुओं की बनी होती है और चपटी होती है। किन्तु आगे की ओर से गोल और उभरी होती है। यह सारी प्रणाली एक कला से मढ़ी हुई होती है।

इसकी रचना विशेष प्रकार की होती है, इस कला के सेलों के एक ओर से सूक्ष्म तार से निकले रहते हैं, जिनको झिल्लिया

कहते हैं। इन सिलियों में हर समय गति होती रहती है। वायु प्रणाली का सर्वाङ्ग इन सिलियों से आवेष्टित रहता है। इनकी गती एल साल एक ही तरफ होती है। जब वायु प्रणाली में कोई वस्तु घुस जाती है तब एक साथ ये सब क्रुद्ध होकर अपनी क्रिया द्वारा उस घुसी हुई वस्तु को बाहर निकाल देती है। शायद आपने देखा होगा कि जल पीते समय कुछ पानी नलीका में चला जाता है तो बहुत वेग से खांसी आने लगती है। यह सब इन सिलियों को क्रिया के कारण ही होती है। जब तक तमाम पानी इससे बाहर नहीं निकलता तब तक ये विश्राम नहीं लेती।

यह वायु नलिका अन्त में दो भागों में बिभक्त होती है। प्रत्येक भाग एक फेफड़े में जाता है। फेफड़े के भीतर के प्रत्येक भाग से शाखायें निकलती है। इनमें से फिर अन्य छोटी २ कितनी ही शाखा और प्रसाखा निकलती है। जो एक वृक्ष की तरह बन जाती है। इन उपरोक्त शाखा और प्रशाखाओं की रचना मूल नासिका की जैसी होती हैं। वह सैत्रिक तन्तु की बनी होती है। जिसमें कारटीलेज के आधे छल्ले रहते हैं। छोटी शाखाओं में यह नहीं होते वह केवल सैत्रिक तन्तु की बनी हुई होती है। फेफड़े कई भागों में विभाजित होते हैं। दाहिना फुफ्फुस ३ भागों का बायां दो भागों का बना हुआ होता है। इनमें से फिर कितने ही छोटे २ भाग बन जाते हैं। इनमें से सबसे छोटा भाग पालिका कहलाता है। क्योंकि इसमें एक वायु नलिका रहती है, वायु कोष्ठ होते हैं और स्वयं श्वास क्रिया करता है। इसलिये वायु कोष्ठों के संग्रह का नाम फुफ्फुस है। इनका काम रक्त को स्वच्छ करना है। हृदय जितना रक्त फेफड़ों के पास भेजता है वे उतना ही शुद्ध करके लौटा देते है। इनको पोषण करने के लिये दूसरे ही स्थान से अन्य नलिकाओं द्वारा जो वृधमनी की शाखायें है रक्त आता है। श्वास

कर्म में न केवल फेफड़े ही काम करते हैं; किन्तु पर्शुकाओं पर लगी हुई जो मांस पेसी है वे भी साथ देती है। ये मांस पेसी जब बाहर को ओर फैलती है तब फेफड़े भी फैलते हैं। और वायु का भीतर प्रवेश हो जाता है जिस समय पेशियां भीतर की ओर संकोच करती है तब फुफ्फुस भी दब जाते हैं जिससे भीतर की वायु बाहर आ जाती है। इन पेशियों के अलावा श्वास कर्म में उदर की पेशियां भी सहायता देती है। इसमें जो सबसे बड़ी पेशी जिसको महा प्राचीरा पेशी (Diaphram) कहते हैं जो वक्षःस्थान और उदर के बीच में रहती हैं।

यह दोनों प्रान्तो में छाते के माफिक खुली हुई फैली रहती है। जब यह पेशी नीचे की तरफ संकोच करती है तब फेफड़ों में वायु प्रवेश कर जाती है। जब ऊपर की तरफ फुलती है तो फेफड़े दब जाते हैं जिससे भीतर की वायु बाहर निकल जाती है। इस तरह वायु फेफड़ों के भीतर जाती है और बाहर आती है। १ मिनट में १८ बार हम श्वास लेते हैं और छोड़ते हैं। इस प्रकार एक बार फैलने के बाद फेफड़े फिर अपनी पुरानी दशा में आ जाते हैं। लेकिन् इससे फेफड़ों की सारी वायु बाहर नहीं निकलती है। उस समय पर प्रश्वासक पेशी की सहायता लेनी पड़ती है। यह यह उच्छ्वास पेशियां से अलग होती है। साधारणतया श्वांस के बाहर निकलने के बाद फिर भी वक्ष को दबाते हैं तो कुछ वायु बाहर निकलती है। ऐसा करने में प्रश्वासक पेशी अवश्य काम करती है।

श्वांस कर्म

साधारण अवस्था में हम १ मिनट में १८ बार श्वास लेते हैं; किन्तु आवश्यकता पड़ने पर फुफ्फुस अधिक बार भी श्वास ले सकता है। व्यायाम करते समय तथा अन्य परिश्रम करते समय

श्वास जल्दी जल्दी आने लगता है। उस समय रक्त को अधिक आक्सीजन की आवश्यकता होती है। उस समय में श्वास क्रिया वेग से चलने लगती है। जितने फुफ्फुस के ऐसे रोग है, जिनमें फुफ्फुसों की कार्य शक्ति घट जाती है, जैसे निमोनियां, राज यक्ष्मा आदि, इन सर्व रोगों में श्वास कर्म अधिक वेगसे होता है। जैसे निमोनियो में १ मिनट में ४० से ५० बार तक श्वांस चलता है।

जो हवाई जहाज से यात्रा करते हैं, उनको भी अधिक श्वांस लेने की आवश्यकता पड़ती है। न्युमोनिया प्रभृति रोगो में फेफड़ें का भाग विकृत हो जाता है। जिससे रोग ग्रस्त भाग आक्सिजन ग्रहण नहीं कर सकता, इसलिये इस कमी को पूरा करने के लिये प्रकृति फेफड़ों से अधिक वेग पूर्वक श्वास कार्य करवाती है। साधारण तया श्वांस और नाड़ी में १—४ निपात रहता है। जितने समय में हम एक बार श्वास लेते हैं, उतने समय में नाड़ी चार बार चलती है।

संचालक

श्वांसकर्म का प्रधान संचालक श्वासकेन्द्र है

शरीर की अन्य क्रियाओं को भांति श्वास क्रिया भी संचालक के अधीन है। संचालक केन्द्र मस्तिक ही है। इसकी बिगर आज्ञा के कोई कर्म नहीं होता। फुफ्फुस भी इसकी आज्ञा से ही श्वांस कर्म करता है। सुषुम्ना के सबसे उच्च भाग में एक केन्द्र है जो श्वास केन्द्र कहलाता है। वह सदा फुफ्फुस और उरस्थ मांस पेशियों को सूचना भेजा करता है। उसी के अनुसार कार्य होता रहता है। हमारी इच्छानुसार हम श्वांस गति को घटा बढ़ा और रोक भी सकते हैं। किन्तु ज्योंहि हम विचार को छोड़ देते हैं, श्वास फिर

अपनी पूर्वावस्था पर आ जाता है। इस प्रकार यह क्रिया हमारी इच्छा के आधीन नहीं है। श्वास केन्द्रको जब आवश्यकता होती है श्वास गति को बढ़ा देता है। यह सब जरूरत उसने अपने तत्वावधान में ही रक्खी है। सारे शरीर से इस केन्द्र को सूचनायें मिला करती हैं। उसी के अनुसार यह घटा बढ़ी हुआ करती है। वैज्ञानिक भी इस बात को मानते हैं और कहते हैं कि इन सभी क्रियाओं को उत्तेजित करने वाला श्वास केन्द्र ही है। इसके द्वारा ही उत्तेजना श्वास पेशियों को जाती रहती है। उदाहरण:— जैसे जब रक्तमें अशुद्धि अधिक होती है और रक्त मस्तिष्क में पहुंच जाता है तब वह इस केन्द्र की क्रिया को बढ़ा देता है। इससे अधिक उत्तेजनायें जाने लगती हैं और स्वास कर्म शीघ्रता से होने लगता है।

॥ श्री ॥

पाश्चात्यमतसे विशेष निदान

रक्तष्ठीवि फुफ्फुस खण्ड प्रदाह

निदान—श्वसनक ज्वर (Lobar Pneumonia) में ज्वर तीव्र याने १०५ डिग्री तक होता है तथा आशुकारी होता है। यह रोग छोटे, बड़े, बूढ़े सबको समान रूपसे होता है, परन्तु १० सालसे पूर्व अथवा २० से ५० वर्ष तकको आयुवालोंको विशेष करके होता है। वृद्ध मनुष्योंके लिये यह बीमारी घातक होती है। स्त्रियोंकी अपेक्षा पुरुषों को विशेष करके होती है। इस रोगकी उत्पत्ति ठण्डी हवाके चलनेसे नंगे बदन घुमनेसे, धूपमें घूमकर ठण्डी जगहमें जाकर विश्राम लेनेसे, अथवा ठण्डे जलसे स्नान करनेसे, अथवा ठण्डा जल पीनेसे, तेज पंखे

की हवामें सोनेसे, दोपहरमें धूपके समय अथवा रात्रिको अधिक ठण्डेके समय स्नान करनेसे, अतिमद्य पान करनेवाले अथवा जिसको छातीमें चोट लग गई हो, ऐसे मनुष्योंके होता है। इनके अतिरिक्त गन्दे वातावरणवाले मकानों में रहनेसे; तथा विषमज्वर, प्रतिश्याय, वृक्क शोथादि रोगोंके द्वारा जीर्ण होनेपर थोड़ा सा भी ठण्ढी हवाका आघात लगने पर तथा मिथ्या आहार विहारके सेवनसे भी यह रोग हो जाता है। दूसरा कारण निम्नलिखित कृमि भी है। जैसे :

(१) न्युमोकोकस (Pneumococcus) (२ बेसिलस (Becillis) (३) (३) स्टफिलोकोकस (Saphylococcus) (४) स्ट्रेप्टोकोकस (Sreptococcus) इन कृमियों द्वारा भी होती है। इसके अलावा स्थान और उपद्रव भेदसे भी इनके कितने भेद किये हैं। (१) उभय फुफ्फुसग्राही (Doublepneumonia) (२) परिभ्रमण करनेवाला (Wandring) विशेषतः यह मद्यपीनेवालोंको और वृद्धोंको ही होता है। (३ केन्द्रिक फुफ्फुसों के बीच के भाग को दूषित करनेवाले (Central) ४) प्रलापादि उपद्रवोंसे युक्त जिसमें (Toxemia) के चिन्ह प्रारम्भसे ही हो जाते हैं। ५ जुकाम होकर श्वासनलिकामें प्रदाह (Lobular) (६) फुफ्फुसावरणके सहदाह (Pleuritic) (७) उपदंश जनित (Syphilitic) (८) आन्त्रिक ज्वरके साथ (Typhoid Pneumonia)

सम्प्राप्ति :—इस रोगके कीटाणु श्वासमार्ग द्वारा फुफ्फुसोंमें जाकर, या वहां ही उत्पन्न होकर दोनों फेफड़ोंमें रक्तको दुष्ट करके जमा देते हैं। इससे लसिका भी गाढ़ी हो जाती है तथा इस कारणसे वातादि दोष कुपित होकर श्वासनलिका यन्त्रको दूषित कर देते हैं, जिससे वह स्थान दूषित होकर शोथयुक्त ठोस हो जाता है तथा श्वासोच्छ्वासक्रिया कष्ट युक्त हो जाती है। इन कृमियों द्वारा फुफ्फुस आक्रान्त होनेपर ४ अवस्था होती हैं। रक्ताधिक्य (१) हायपरेमिया

(Hyparami३) (२) रक्त घनीभाव रेडहिपटिएसन Red Hepatiyation (३) असित घनी भाव (ग्रे हिपटिएसन) GrayHepatiyat'on (४) प्रकृतिभाव (रेजाल्युसन) Resolu ion इस रोगमें वात, पित्त, कफ, तीनो दोष कुपित होते हैं, परन्तु कफका प्रकोप ज्यादा होता है।

पूर्वरूप—इस रोगमें फेफड़ोंका जकड़ना श्वास, कास, कहीं पर कम्प, ठण्ड लगना, क्षुधानाश, कमजोरी, दिलमें बैचेनी, नाड़ीमें तेजी इत्यादि लक्षण दिखाई देते हैं।

रूप—इस रोगमें ज्वर प्राय शीतपूर्वक आता है, प्रायः ज्वर तीव्र होता है। तथा अरुचि, तृषा, पार्श्वशूल, कास, श्वासवृद्धि, बार २ में रक्तमिश्रित चिकिना गाढालहेसदार दुर्गन्ध युक्त कफ निकलता है। श्वासके वेगसे पंसुली और नाक फूलते रहते हैं। मस्तक और शरीर पर पसीना बार २ आता है, तथा गलेपर सरसोंके समान पिड़िकायें भी दिखती है। रोगीको कमजारीका अनुभव होता है। मोह प्रलाप गलेमें घर-घर करकी आवाज सुनाई देता है।

जिह्वा कठोर, शुष्क मली हो जाती है, नाड़ी कोमल, स्थूल, चंचल हो जाती है, नाड़ीकी गति १०१ से १३० तक हो जाती है। ज्वर १०४ डिग्री तक हो जाता है। वृद्धोंमें ज्वर कम रहता है, स्वस्थावस्थासे श्वासोच्छ्वास गति द्विगुणा या त्रिगुणी तक हो जाती है। मद्य पीनेवालोंको उन्माद भी हो जाता है। यदि प्रारम्भसे ही प्रलाप हो तो निद्रा नाशादि हो जाते है। प्रारम्भमें कफ थोड़े दिन तक पतला निकलता है, फिर फफड़ोंमें कठोरता आनेपर कफ चिकना पीले रंगका अथवा रक्त मिला हुआ आता है। यदि रोग बलवान होता है तो कफ मैला दुर्गन्धयुक्त पीप सहित लाल रंगका आता है। पीप अधिक होनेपर रोग असाध्य हो जाता है। इस रोगमें अच्छी तरहसे चिकित्सा न होनेपर बालकोंको कर्णश्राव, गर्भिणीका गर्भपात, फुफ्फु-

सशोथ, हृदयावरण प्रदाह मस्तिष्कावरण प्रदाह आदि उपद्रव हो जाते हैं।

मलपाक नियमानुसार हो जाय तो ७-९-१२ वें दिन अकस्मात् जोरका पसीना आकर ज्वर उतर जाता है। पसीना अधिक आनेसे शरीर ठण्डा हो जाता है, कहीं पर नाड़ी भी लुप्त हो जाती है। उस समय सावधानी पूर्वक चिकित्साकी जाती है तो रोगी ठीक हो जाता है। यदि कफका प्रकोप भीषण होता है तो मृत्यु हो जाती है।

परीक्षा विधि

प्रारम्भावस्थामें परीक्षाके समय छातीपर कनिष्ठिका अंगुली रखकर ठेपन क्रिया द्वारा परीक्षाके समय मन्दध्वनि सुनाई देती है, श्रवण यन्त्र द्वारा सुननेसे केशमर्दनकी ध्वनि सुनाई देती है। यह ध्वनि लम्बा श्वास लेने पर ही सुनाई देती है। फुफ्फुसोंमें शोथ होकर कुछ श्राव होने पर ही यह ध्वनि उत्पन्न होती है अन्यथा नहीं। द्वितीय और तृतीय अवस्थामें ठेपनेमें यह ध्वनि पत्थरकी आवाजकी तरह ठोस रूपमें सुनाई देती है। स्टेथिस्कोपके द्वारा परीक्षा करनेपर वायु कोषकी आवाज सुननेमें नहीं आती है। सिर्फ श्वासनलिकासे श्वासीय शब्द ही सुनाई देता है। श्वास लेने और छोड़नेके समय जो फेफड़ोंमें संकोचन और प्रसारणकी क्रिया है वही दिखाई नहीं देती बल्कि रुग्णस्थान शोथमय उभरा हुवासा प्रतीत होता है। किसी किसी रोगीको श्रेष्ठ उपचार करनेपर तीसरे चौथे रोज ही पीड़ा शान्त होकर खांसी हल्की पड़ जाती है तथा कफ भी पतला होकर निकलने लग जाता है। कहीं पर किसी रोगीको ज्वर भी ४-५ रोजमें पसीना आकर उतर जाता है। परन्तु यह उतरना खतरे से खाली नहीं है क्योंकि सर्व क्रियायें पूर्वावस्था में जब तक नहीं आती हैं तब तक ज्वर का उतरना अच्छा नहीं होता है। इसके उतरने से अन्य उपद्रवों की आशंका रहती है। मियाद पक कर

शनः शनैः निर्दोष रूप में जो ज्वर उतरता है वही आरोग्यता विधायक होता है। यद्यपि किसी २ रोगी को दोष पाचन होने पर भी एक साथ पसीना देकर अथवा ज्यादा अतिसार होने पर भी ज्वर उतर जाता है। इस समय चिकित्सक को भयभीत होने की जरूरत नहीं, अगर अन्य क्रियायें, श्वास, नाड़ी की तथा हार्टकी गति ठीक हो तो। परन्तु फिर भी सावधान रहने की जरूरत है। पसीना होते समय सर्दी लग कर फिर रोग होने की सम्भावना रहती है। एतदर्थ ठण्ढी हवा से बचने का प्रयत्न रखें। रोग मिटने पर भी किसो २ रोगी को फुफ्फुसों म शोथ अथवा फुफ्फुस विद्रधि तथा कासादि उपद्रव बाकी रह जाते हैं। इस से फेफड़े कमजोर बने रहते हैं। जिससे थोड़ा भी शीत सम्पर्क होते ही फिर मनुष्य को यह रोग पकड़ता रहता है। इस रोग के प्रकोप से मूत्र की क्षारीय क्रिया बहुत कम हो जाती है। रोग मिटने पर स्वतः अपने आप हो चालू हो जाती है। फुफ्फुस रोग में (याने यक्ष्मा प्रभृति रोगों म ऐसी बातें नहीं होती।

Brancho Pneumonia

ब्रांको न्यूमोनियां

यह रोग प्रायः छोटे बच्चों तथा दुर्बल और बृद्धोको, क्षय-अतिसारादि रोगों के अन्त समय में प्रायः करके होता है। इस रोग का आक्रमण फुस्फुसों से सम्बन्ध रखने वाली सूक्ष्म श्वास नलिकाओं में होता है, जिससे वे दाह शोथ युक्त हो जाती हैं। प्रायः देखा गया है कि मसूरिका, कण्ठरोहिणी, इनफ्लुएञ्जा आदि विषमय रोगों में उपद्रव रूप से होता है। छोटे स्तन पीने वाले बच्चों को जब यह रोग होता है, तब आयुर्वेद मे उत्फुल्लिका रोग के नाम से पुकारा जाता है। भाषा में इस रोग का नाम डब्बा या पसली उठना कहते हैं। जब यह रोग बच्चोंको होता है तब श्वासके-

नमें दोनों पंसलियों के बीच गड्ढा सा पड़ने लग जाता है, जिसको हिन्दी में बाख उठते हैं ऐसा शब्द बोला जाता है। यह तीव्र संक्रामक होता है, इसमें पूयजनक कीटाणु कफ परीक्षा में पाये जाते हैं।

सम्प्राप्ति —इस रोग में ठण्डे वगैरह अथवा मिथ्या आहार विहार के कारण दोष कुपित होकर, श्वास नलिकाओंमें शोथ पैदा करके श्वास मार्ग को संकुचित कर देता है जिससे दोनों फुफ्फुसों के वायु कोष दूषित हो जाते हैं। तब सूक्ष्म श्वास नलिकाओं में लसिका-स्राव भर जाता है, जिससे ये तथा इनसे सम्बन्ध रखने वाले वायु कोष दूषित होकर संकुचित हो जाते हैं तथा आस पास के अन्य वायु कोष भी सर्व शोथयुक्त हो जाते हैं।

(रूप)—यदि यह रोग स्वतन्त्र रूप से होता है तब तो आक्रमण अकस्मात् ही बगैर अन्य सूचना के हो जाता है। वहां पर इसके प्रारम्भ में पहिले शीतपूर्वक ज्वर होता है, तथा छाती में दर्द, कास श्वास की वृद्धि तथा किसी को शुरूमे ही ज्वर तीव्र, अथवा किसीको कुछ समय बाद धीरे धीरे १०२ से १०३ तक होता है। इस रोग की परीक्षा सिवाय स्टेथिस्कोपके, अन्य लक्षणों को देखने मात्र से होनी असम्भव है। श्रवण यन्त्र के द्वारा सुनने पर भी स्वस्थ्य ही दिखलाई देते है। क्योंकि छोटे छोटे कोषों में ठोसपन होनेसे सम्यकतया प्रतीति नहीं होती। जब रोग बहुत बढ़ जाता है, और वायु कोष भी बहुत ठोस याने घन हो जाते हैं, तब टेपन-क्रिया में जड़ ध्वनि आती है, और स्टेथिस्कोप में भी साफ शब्द सुनाई देता है। बच्चों को जब यह रोग होता है तो पहले जुखाम होकर नाक से पानी झरता है तथा ज्वर, मल-मूत्र में कमी, श्वांस जल्दी २ चलने लगता है। बालक सुस्त हो जाता है। खाने पीने में अरुचि हो जाती है। बार २ चमक चमक कर जागता है, रोता है, मुख का रंग भी बदल जाता है, इत्यादि लक्षण हो जाते हैं।

यदि अन्य रोगों में उपद्रव रूप से यह रोग होता है, तब शुरू में खांसी होती है। या ज्वर भी बढ़ कर मियादी रूप में चला जाता है। श्वासोच्छ्वास की क्रिया बढ़ जाती है, खांसी प्रबल वेगसे चलती है और पंसुलीयों में खड्ढे पड़ने लग जाते हैं, कफ चिकना ल्हेसदार मुश्किल से निकलता है। नाड़ी भी दुर्बल दिखाई देती है। उस समय ज्वर भी कभी तेज कभी हल्का होता रहता है। उतरते समय क्रम २ से उतरता है। यदि बल क्षय हो जाय तो उपद्रव उग्र रूप धारण करके रोगी को प्राण मुक्त कर देते हैं। किसी-किसी रोगी को अभिन्यास हो कर मृत्यु हो जाती है। परन्तु यह रोग फुफुमखण्डप्रदाह की तरह मारक नहीं है।

फुफ्फुसधरा कला शोथ (प्लुरिसी) फुफ्फुसावरण प्रदाह

इस रोग में फेफड़ों को आच्छादित करने वाली कला में शोथ हो जाता है। यह शोथ ऊपर आच्छादन में अथवा नीचेके आवरण में होती है जिससे दोनों आवरण पृथक् २ हो जाते है। स्वस्थावस्था में ये आवरण परस्पर में मिले हुये रहते हैं, और इनको गीला रखने के लिये एक तरह का श्राव रहता है जो परस्पर की रगड़ को बचाता रहता है। इस रोग में प्रथम शर्दी लग कर ज्वर चढ़ जाता है फिर पार्श्व में शूल की तरह चुभने वाला दर्द पीछे से अथवा पार्श्वों से उठकर ऊपर की तरफ जाता है। उस समय खांसी सूखी चलती है तथा श्वास थोड़ा रुक रुक कर आता है। खांसने या जोरसे श्वांस लेने से या लेटते समय पार्श्व में बहुत पीड़ा होती है। नाड़ी तेज और रज्जुवत कठोर हो जाती है। जिह्वा मैली सफेद हो जाती है, मूत्र भी गंदला और लाल पीले रङ्गका आता है। शरीर गरम, ज्वर १०० डिगरी से १०२ डिगरी तक हो जाता है।

प्लुरिसी और न्युमोनिया में इतना ही भेद रहता है कि प्लुरिसी

में दर्द तेज शूल की तरह चुभने वाला भयंकर होता है। न्युमोनियां में दर्द मन्द होता है। दूसरा फर्क यह है कि प्लुरिसी में खांसी जोर देकर सूखी और धीमी चलती है। बलगम बिल्कुल नहीं आता है। न्युमोनिया में खांसी लम्बी और झागदार या भूरे रङ्ग का कफ निकलता है, जिसमें कभी२ रक्त भी मिला हुआ होता है। रोग की हलकी अवस्था में इसका भ्रम वातज शूल से भी हो जाता है, परन्तु वातजशूल में ज्वर नहीं होता है।

फुफ्फुस खण्डप्रदाह (लॉब्युर न्युमोनिया चिकित्सा)

इस रोग की चिकित्सा में सर्वप्रथम सन्निपात ज्वरे पूर्वं कुर्यादामकफापहम् इस क्रिया को काम में लाना चाहिये, जिससे दोष का पाचन जल्दी ही हो जाय। फिर दोष को बाहर निकालने के लिये लंघन, स्वेदन, निष्ठीवन, अवलेहाञ्जन चिकित्सा करे। रोगी को विस्तर पर सुलाये रक्खे तथा कमरे में वायु मन्डल को गरम वाष्प से तर रखना चाहिये। कभी भी इस रोग से पीड़ित रोगी को अन्धकारमय शीतल स्थान में न रक्खें। रोगी को सीधी वायु से बचाना चाहिये, तथा बोलने डोलने से रोकना चाहिये। कमरे में किसी प्रकार का धूआं या गन्दगी नहीं रहने देना चाहिये। रोशनी में मीठा या कड़वे तैल का दीपक हो या बिजली हो तो हल्के पावर की रखनी चाहिये। किराशन तैल के दीपक को बिलकुल नहीं घुसने देना चाहिये। फेफड़ों को हर समय ठण्ड से बचाने की चेष्टा करनी चाहिये। छाती पर पुराने घृत की या धत्तूरादि घृत को गरम हाथ से धीरे२ दिन में ३ बार लगाकर अलसी का पुल्टिस या एन्टीफ्लोजिष्टीन की पट्टी लगा देनी चाहिये, परन्तु हृदय को छोड़कर। इस रोग में लंघन करना अत्यन्त हितकर है फिर भी रोगी विशेष कमजोर हो तो

साबू या बार्ली पथ्य में दे देनी चाहिये। फलों के रस से तथा दूध से एकदम बचाना चाहिये। जल की प्यास हो तो गरम करके कवोष्ण जल देना ही उत्तम है। शृत-शीतजल से कफ जम जाता है। शीतसे बचाने के लिये तथा कमजोरी से बचाने के लिये थोड़ी मात्रा में मद्यका सेवन हितकर है। औषधियों में भी हृद्दौर्बल्य कारक वत्सनाभ घटित औषधि का प्रयोग नहीं करना चाहिये। रोगी को पूर्ण विश्रान्ति दें। जहां तक हो पेशाब का प्रबन्ध भी सोते २ ही कराना चाहिये। अगर कोष्टबद्धता हो तो हल्का रेचन दे देना चाहिये। नींद के लिये पूरा प्रयत्न करना चाहिये। नींद आने से दोष का पाचन जल्दी होता है। नींद न आने से दोष प्रकोप बढ़ता है। परन्तु अहिफेनघटित औषधि का प्रयोग न करे। ज्वर के वेग को कम करने के लिये भी फिनासीन जैसी औषधि का प्रयोग नहीं करना चाहिये। छोटे से लेकर बड़े रोगी तक को उत्तेजक औषधि ही देनी चाहिये। खास कर रोगी तन्द्रावस्था में हो तो उत्तेजक औषधि अवश्य देनी चाहिये।

आयुर्वेदीय औषधियां

कस्तूरीभूषणरस, शृंगभस्म, लक्ष्मीनारायण रस, लक्ष्मी-विलास रस, कस्तूरीभैरव रस, मकरध्वज, समीरपन्नग रस श्री वेताल रस, चतुर्भुज रस, मल्लवटी, हरिताल भस्म, अभ्रक भस्म, चतुर्मुख रस, स्फटिक भस्म; मयूरपिच्छ भस्म, अष्टांगावलेह, दश-मूलासव, द्राक्षासव, मृतसंजीवनीसुरा, चतुर्दशांगक्काथ, अष्टादशांग क्काथ, भार्ग्यादि क्काथ, कट्फलादिकषाय, क्षुद्रादि क्काथ, दशमूल क्काथ, अचिन्त्य शक्तिरस; आदि औषधियां दी जाती है।

लाक्षणिक चिकित्सा

ज्वर वेग को कम करने के लिये शिरपर दशांग लेप तथा नरसार कल्मीशोरा को जल में मिलाकर पट्टी अथवा बर्फ की थैली लगानी चाहिये।

पार्श्वशूल कमकरने के लिये धत्तूरादि घृत, पुरातन घृत, महानारायण तैल, अमृताञ्जन बाम आदिकी मालिश करके अलसी का सेक नमक का सेक, या एलुवा को या बारह सींगे को जल में घोसकर लेप करना चाहिये। शूलशमनार्थ शृंगभस्म, कुचला घटित औषधि का प्रयोग करना उत्तम है। निद्रा लाने के लिये सोते समय बृ० वातचिन्तामणि प्रस्वपनार्क में या शैवरसायन शर्बत का प्रयोग करना चाहिये।

प्रलाप हो तो शिर के बाल कटवा कर पुरातन घृत में पान का रस मिलाकर मालिस करनी चाहिये या बर्फ का प्रयोग, अथवा काकमाची को पीसकर लेप करना चाहिये।

कफ निकालने के लिये अष्टांगावलेह, अदरखरस मधु से अवलेह देना चाहिये। शृंग्यादि चूर्ण, चन्द्रामृत, वासाक्षार, अपामार्गक्षार, कंटकार्यादि काथ, भार्ग्यादि काथ, वासकादि काथ, पानरस मधु मधुयष्ट्यादिकाथ का प्रयोग करना चाहिये।

हृदय दौर्बल्य निवारणार्थ पूर्णचन्द्रोदय रस, अर्जुनाभ्र, मुक्ता, भीमसेनी, मृगमदासव, मृतसंजीवनीसुरा, द्राक्षासव आदि औषधियां देनी चाहिये।

कफमें रक्तको बन्द करने के लिये—वासावलेह, खूनयोग, कहरवा, शु० स्फटिक भस्म, एलादिवटी, वासकस्वरस आदि औषधियां देनी चाहिये।

मलावरोध दूर करने के लिये—आरग्वधादिकाथ, अश्वकंचुकी, ज्वरमुरारी, मलप्रवर्त्तनी बत्ती, इच्छाभेदीरस इनमेंसे जो अनुकूल हो वही देवे।

मेरा अनुभव—इस रोगके लिये आयुर्वेदमें अगणित औषधियोंका वर्णन किया गया है। परन्तु मेरे अनुभवमें जितना काम शंखियाघटित अथवा तपकिया हरताल घटित औषधियोंसे जल्दी फायदा होता है उतना अन्यसे इस अनूपदेशके लिये नहीं। राजपुताना प्रांतमें उग्रवीर्य औषधकी इतनी जरूरत नहीं पड़ती है वहां प्रायः दशमूल, अष्टादशाङ्ग काथ, कस्तूरीभैरव, लक्ष्मीविलास, शृंग, अभ्रकसे ही बहुत रोगी ठीक होते हुये देखे गये हैं। वैद्यराज पं० जगन्नाथजी के अनुभवसे भी पता चलता है कि उन्होंने भी मेरे सामने बड़े बड़े न्युमोनियांके रोगियोंको उपरोक्त दवाओंसे ही अच्छा किया था। मैंने भी काजड़ामें तथा झूंझणुंमें बहुतसे रोगियों की उपरोक्त औषधियोंसे चिकित्सा की थी, जिसमें बहुत सफलता मिली थी। इस विषयमें एक नवीन अनुभव भी याद आ गया वह भी लिखता हूं। घटना इस प्रकार है कि संवत १९८३ में मैं झूंझणुंमें सेठ रामविलासरायजीके दवाखानेमें प्रधान चिकित्सक था, तब १ जाट बीबासर नामक ग्रामसे आया उसने १ कागजमें दवाओंकी लिखी हुई सूची मुझको दी, मैंने देखा तो उसमें तमाम बड़ी २ सन्निपातकी औषधियां लिखी हुई थी, मैंने पूछा कि यह किसलिये लाये हो तो बतलाया कि एक जाट वैद्य हमारे घरपर आ रहा है मेरा भाई बीमार है उसके इलाजके लिये उसने कागजमें लिखी हुई औषधियां मंगवाई है, साथमें २) रुपया भी दिया है। तब मैंने पूछा कि बिमारी क्या है, इसमें तो तमाम सन्निपातों की दवा लिखी है इसका मूल्य भी १००) से कम नहीं लगेगा सो तुम्हारी इतनी सामर्थ्य हो तो ले जावो। इतना सुनकर वह शहरमें चला गया वहां फिर अन्य कई वैद्योंसे भी निगरानी की सबने इतनी ही कीमत बतलाई तब वह वापिस मेरे पास आया और बोला हम लोग गरीब आदमी हैं। कृपया एक बार आप ही हमारे गांव चले चलिये, और इलाज कीजिये। उसकी दीनताके शब्द सुनकर मुझको भी दया आ

गयो और उसी समय मैं उसके साथ चला गया। वहां पहुंचा उसी समय रोगीकी मां बाहर रोती हुई आई और बोली, बेटा ये कौन हैं, उसने कहा मां यह वैद्य हैं भाईको दिखानेके लिये लाया हूं। मुझको बैठनेके लिये खटिया दे दी गई और यह भीतरमें चला गया थोड़ी देर बाद मुझको भी भीतर रोगीके पास ले गया वहां जाकर देखा तो ५-६ आदमी उसको पकड़े बैठे हैं, मुझको देखकर वे लोग सब बाहर आ गये और कमरा जो कच्चा बना हुआ था उसीमें रोगी एक बड़ी खाट (डहला) पर सो रहा था मैं ज्योंही उसके पास पहुंचा वह बैठ गया। मैं उसको चेष्टाओंको दूर खड़ा ही देखता रहा जब उसने कुछ बोलते हुये खाटके नीचे पैर रखे, तो मैं और थोड़ा पीछे हट गया जब वह वहांसे चला तो मैंने कहा कि क्या करते हो तब उत्तर न देकर पासमें ही पीसनेकी चक्की रक्खी थी उसका पाट ऊपरको उठाया इतना देखते ही मैं बाहर आगया और कमरेके किवाड़ बन्द कर दिये, और घरवालों को आवाज दी, तब वहां कोई भी नहीं था तब आवाज सुनकर उसकी मां आई बोली क्या बात है, तब मैं ने कहा कि सब आदमी कहां चले गये वह चक्कीका पाट लिये खड़ा है, जल्दी बुलाकर लाओ, तब वह दौड़कर बाहरसे ५-६ आदमियोंको बुलाकर लाई तब उस रोगीको मुश्किलसे पाट छीनकर खटिया पर सुलाया। परन्तु वह खाटपर टिकता नहीं था पकड़ने वालोंको मारना पीटना शुरू कर दिया। तब उसके हाथ पैर खटियामें बांध दिये, और उसकी नाड़ी अच्छी तरहसे देखी तथा छातीकी परीक्षा भी की तब मालूम हुआ कि इसको न्युमोनिया है। पुरानी हिष्ट्री पूछनेसे भी पता लगा कि यह खेतमें वर्षाके समय भीगता रहा था उसी दिन इसको ज्वर हो गया था। चार रोज बाद आठ वैद्यको दिखाया गया था। इसने कमजोरी बताकर इसको गोंदके लड्डु खानेको दिये थे उसी दिनसे प्रलाप हो गया और साथमें शीताङ्ग भी हो गया, तब मैं ने उसी समय १-१ घन्टाके हेरफेरसे ज्वर चढ़ानेके लिये

नं०१ मकरध्वज १ रत्ती प्रवाल१ रत्ती मृगमद १ रत्ती भीमसेनो ½ रत्तीका संमिश्रण तथा २नं० कस्तूरीभैरव प्रवालका संमिश्रण पानरस मधुसे चालू किया। इस संमिश्रण दवाकी ५ पुड़िया पहुंचनेके बाद उसको ज्वर १०२ हुआ, और प्रलाप भी कम हुआ, तथा ज्ञान भी हुआ, तब उसने अपने पूरे हालचाल कहे दवा निम्नलिखित चालू की।

प्रातः सायं	म० रा०
कस्तूरी भैरव १	शृंग्यादि १ मासा
प्रवाल १	शृंग ४ रत्ती
चतुर्दशाङ्ग क्वाथ मधुसे	टंकण १ रत्ती
	१ पु० पानरस मधुसे

अष्टाङ्गावलेह अदरख रस मधुमें बार ७ चाटनेको दिया, तथा पुरातन घृतकी छातीपर मालिस कराकर अलशीका सेक दिया, इतना बन्दोबस्त करके मैं वापिस आ गया। २-२ रोज बाद रोगीका आदमी हाल चाल कह जाता था। इस तरहसे यह रोगी ठीक रास्तेपर आ गया परन्तु कफ नहीं निकलता था इसके समय २ के हाल चाल तो मिलते नहीं थे। बाहर ग्राम था फिर मैंने एक दिन जाकर देखा कफ पक तो गया परन्तु गाढ़ा विशेष है। इसलिये भार्ग्यादि कट्फलादि कषाय भी दिया परन्तु फिर भी नहीं निकला, तब एक नया योग कल्पित किया था।

पांचो नमक ५तो०, सज्जीक्षार १तो०, यवक्षार १तो०, नरसार १तो०, आपामार्ग बीज २ तो०, अर्क छाल १ तो० सबको पीसकर आकके पत्तों के बीच में रखकर हांड़ीमें गजपुटमें भस्म बनाकर ६-६ रत्तीकी मात्रामें दिया जिसकी २-३ पुड़िया पहुंचते ही कफ निकलने लग गया और रोगी बिल्कुल निरोग हो गया। जब मैंने इस रोगीका इलाज किया था तब वैद्य मूंगराज मेरे पास उपवैद्य थे उन्होंने यह नुसखा नोट कर

लिया और असंख्य रोगियोंको फायदा पहुंचाया २० साल बाद उन्होंने फिर इस साल जब मैं देश गया तब यह नुसखा याद दिलाया सो आप लोगोंके सामने रख दिया है।

द्वितीय रोगी

रोगी नाम दुर्गादत्त, मोढा ; रोग डबल न्युमोनिया
उम्र ५०, स्थान नं० ६८, बड़तल्ला ष्ट्रीट ।

इस रोगी को ७-८ रोज से न्युमोनिया की बीमारी थी। डा० बि० सी० राय का इलाज था। बनारसी लाल केड़िया सहायक डाक्टर थे। २ नर्स तथा कम्पाउन्डर उपचारक थे। इसकी रातके ८ बजे हालत बिगड़ गई और श्वास की गति ५० हो गया ; ज्वर १०५ तथा संज्ञाहीन होकर बेहोश की तरह गिर गया। पसीना भी बहुत आता था। कण्ठमें इतना भयंकर कफका प्रकोप था कि ३ तल्लेके श्वासकी आवाज नीचे चौकमें सुन रही थी। डाक्टर लोग जवाब देकर चले गये। तब सुबह ५ बजे मुझको तथा वैद्य-राज पं० कृष्णदत्तजी प्र० चिकित्सक लक्ष्मीविलास आयुर्वेद भवन वालेको बुलाया। हम दोनों ने जाकर देखा तो हालत बहुत खराब नजर आयी याने निम्न लिखित लक्षण थे। दोनों फेफड़ोंके खण्ड रोगाक्रान्त हो रहे थे। याने कफसे व्याप्त थे, श्वासके कारण नासिका छिद्र बहुत जोर फूलते थे, नाड़ी गति अनिमियत थी, जो गणनामें भी नहीं आती थी; हाथ पैरोमें पसीना आकर ठण्डे हो रहे थे। मस्तक पर पसीना आता था आंखें लाल सुर्ख हो रही थी। पानी पिलानेमें भी बहुत कष्ट होता था। मन्द मन्द प्रलाप था अति दुर्बलता के लक्षण दिखाई देते थे। हम लोगोंने अच्छी तरह से परीक्षा करके घरवालों को पूछा कि डा० लोग क्या बोल गये हैं। उन्होंने कहा कि उनके पास जो दवा थी वह सब दे चुके आखिरी गैस भी रात भरसे चालू है। दुबारा बुलाने गये

तब उन्होंने साफ कह दिया कि हमारे पास इसका कोई इलाज नहीं है। तब हम दोनोंने परस्पर में राय मिलाई और घरवालों को कहा कि यह इस समय बिल्कुल असाध्य है। हमारे पास इस समय इसकी एक दवा है जो क्या तो २० मिनटमें ठीक कर देगी या खत्म हो जायगा। खत्म हो जाय तो यह दोष हमलोगोंको नहीं दीजियेगा। तब घर वालोंके सम्बन्धी वगैरह राय मिलाकर बोले हमारी तरफसे तो यह खत्म हो गया आप लोगोंको दवा पर भरोसा हो तो दे सकते हैं। तब हम लोगोंने तपकिया हरताल भस्म आध रत्ती पान रस मधुसे खिलाने के लिये १ पुड़िया में दिया और घरवालोंको कहा कि दवा देनेके १५-२० मिनट बाद यह रोगी छट पटावेगा, तब इसको जितना भी पीने सके गाय का गरम दूध पिला देना बादमें इसको उल्टी होगा उससे आपलोग घबराना नहीं हमको खबर दे देना। उन्होंने वैसा ही किया दूध भी ऽ।। पिलाया जिससे उसको वमन शुरू हुई। घन्टा भरमें ही तमाम कफ निकल गया ज्वर १०१ हो गया। ज्ञान शक्ति भी आ गयी। सायं काल इस रोगी की हालत बिल्कुल सुधर गयी। दूसरे रोजसे दवा बदल दी गयी।

प्रातः सायं	म० रा०	अष्टाङ्गावलेह मधु से चाटने को
कस्तूरी भूषण १ रत्ती	शृंग्यादि २ माशा	
प्रवाल १ रत्ती	शृंगभस्म ४ रत्ती	
मुक्ता १ रत्ती	टंकण १ रत्ती	छातीपर मालिश
अर्जुनाभ्रक १ रत्ती	पिप्पली १ रत्ती	
दशमूल क्वाथ मधुसे	पान रस मधुमें	अलसीका सेक

इस तरहसे यह रोगी बहुत जल्दी ही ठीक हो गया।

रोगीका नाम पन्नालाल अग्र०, उम्र २७, रोग न्युमोनिया प्लुरिसी मलेरिया, यहां का पता रामदेव लक्ष्मीनारायण का मकान रामकृष्टोपुर

इसको सं० १९४७ ता० १४-७-४७ को इसे शीत पूर्वक ज्वर हुआ तब इसने ज्वरकी कोई परवाह नहीं की ज्वर उतर गया। दूसरे ही दिन स्नान कर लिया तथा भोजन भी कर लिया और बाजार में चला गया। वहीं पर इसको शीत देकर ज्वर हो गया खांसी भी जोर से आने लगी। श्वांस फूलने लग गया तथा पार्श्वमें शूल भो चालू हो गया। इसने डा० श्याम बाबू को बुलाकर दिखलाया उन्होंने उसका इलाज १६-७-४७ को चालू कर दिया और रक्त परीक्षा के लिये भी आदेश दे दिया। १७-७-४७ को रक्त परीक्षा की रिपोर्ट आई जिसमें मलेरिया न्युमोनियां टाइफाइड निकला तब घर वाले बहुत घबराए और ता० १८-७-४७ को सुबह मेरे पास आये तब मैं भी देखनेको गया वहांपर उन्होंने पूरा हालचाल कहा और रक्तकी रिपोर्ट भी दिखलाई। मैंने जब रोगीको देखा तब निम्नलिखित लक्षण थे ; ज्वर १०३ खांसी सूखी तथा मुश्किलसे थोड़ा २ रक्त मिश्रित कफ निकलता था। पार्श्वमें शूलकी तरह वेदना थी, प्यासके कारण कण्ठ सूखता था, लेटने से तथा श्वांस खांसी लेने में बहुत कष्ट होता था, टट्टी भी कब्ज थी, ज्वर दिनमें १ बार शीत लगकर १०४-१०५ तक बढ़ता था। पसीना आकर नीचेमें १०२ हो जाता था, प्लीहा और यकृत बढ़े हुये थे, नाड़ीकी गति १३० थी, श्वांसकी गति ४२ थी, ऐसी हालत देख कर मैंने निम्न लिखित दवा चालू की।

१८-७-४७ प्रातः सायं	म० रा०
ज्वर संहार २ रत्ती	श्रृंग्यादि
श्रीवेताल रस १ रत्ती	चन्द्रामृत १ गोली
भार्ग्यादि क्वाथ मधुसे	सोमकल्प ४ रत्ती
	पानरस मधुमें

शिरपर यू०डी० कोलनकीपट्टी तथा छातीपर पुरातन घृतको मालिश तथा पल्टो फ्लोजिस्टीनकी पट्टी दिलवायी अष्टाङ्गावलेह चाटनेको दिया

इस तरह से ३ रोज तक यही क्रम चालू रक्खा पथ्यमें जल वाली मिश्री का औटाया हुआ जल दिया। ता० २१-७-४७ को सुबह ज्वर १०० दोपहरमें ६६ सायं फिर १००। खांसीमें कफ पका हुआ आने लगा। दवा वही चालू रक्खा १० वें रोज यह रोगी बिल्कुल ठीक हो गया। दवामें से वेताल रस हटा दिया इसकी जगह लक्ष्मी बिलास कर दिया, ३ रोज बाद ज्वर बिल्कुल उतर गया, पथ्य दे दिया, बाद में दवाई परिवर्तन कर दी गयी।

प्रातः-सायं	म० रा०
मालती वसन्त १ रत्ती	तालीशादि चूर्ण १ मा०
चतुःषष्ठी पिप्पली १ रत्ती	चन्द्रामृत १ गो०
अभ्रकभस्म १ रत्ती	मधुसे
मधुसे	

यह रोगी जैसा कठिन दिखलाई दिया था उतना ही जल्दी ठीक हुआ। इस रोगके लिये ताल जैसी अत्यद्भुत दवा है वैसी अन्य दवाई नहीं, मैंने वेताल रस, चतुर्भुज रस ऐसी औषधियोंका बहुतसे रोगियों पर अनुभव करके देखा पर इस योगसे शत प्रतिशत न्युमोनिया प्लुरिसी के बीमार निश्चय करके ठीक होते हैं। ऐलोपैथिक वाले भी आज जो सल्फरग्रूप देते हैं मेरी समझमें तो वह सल्फरसे न बनकर वह भी ताल घटित योग ही दिखता है। इसलिये उससे भी अच्छा फायदा होता देखा गया है। परन्तु हमारे योगमें और उनके सल्फरग्रूपमें यह भेद जरूर है कि उनका दवा केवल कफ जन्यव्याधियोंमें ही फायदा करता है और उसमें जी घबराकर उल्टीकी शिकायत भी ज्यादा रहती है। लेकिन हमारी दवामें यह शिकायत पैदा नहीं होती तथा त्रिदोष जनित सर्व व्याधियोंमें फायदा करता है, यही इसकी विशेषता है। यह तो हुआ स्वतन्त्र न्युमोनियाका इलाज अब परतन्त्रका और पढ़िये।

अरुण कुमार उम्र ५, डालमियाँ, रोग मसूरिका, यहाँ का पता संगईवगान मदनलालजी डालमियाँ नं० ६।१ इसको ता० ४-७-४७ में सर्वप्रथम जुकाम होकर ज्वर १०४ हुआ ४ रोज तक लगातार ज्वर रहनेके बाद एक रातको यह नींदमें प्रलाप करने लग गया टट्टी भी २-३ पतले हुये तथा खांसी, छींक, नाकसे पानी झरता था। पांचवें रोज सुबह मैं देखनेको गया तब कान, गाल, ओष्ठ पर मच्छड़ काटने जैसे चकत्ते दिखलाई दिये ज्वर भी १०२ हो गया परन्तु खांसीका बहुत वेग था तब मैंने निम्नलिखित दवा चालू की।

ता० ८-७-४७

प्रातः	सायं	म० रा०
ब्राह्मी वटी	त्रिभुवनकीर्ति रस	चन्द्रामृत १ गो०
लवङ्गकाथसे	पानरस मधुसे	टंकण १ रत्ती
		मधुसे

लवङ्गशृत जल पीनेको दिया, पथ्यमें जलबार्ली

ता० ६-७-४७ सुबह में जब फिर देखनेको गया तब ज्वर १०० था दाने सर्व बाहर निकलनेसे शरीर लाल वर्णका हो रहा था। दवा वही चालू रक्खी, टट्टी पतली हुई इसके लिये लवङ्ग काथ जलमें जायफल ½ और मिला दिया था।

ता० १०-७-४७ ज्वर प्रातः ६८में हो गया टट्टी नहीं हुई परन्तु खांसी वैसे ही आती थी। ज्वर कम होनेसे बच्चा चंचल स्वभावका था इसलिये घूमने फिरने लग गया था. इसीसे फिर ठण्ढ लग गई और शामको ही ज्वर १०४ फिरसे हो गया, खांसी बन्द हो गई तथा श्वास तेज चलने लगा गया तब मुझको तथा कविराज हिरण्यमयसेनको फिर बुलाकर दिखलाया, तब हमलोगोंने देखकर इसको डबल न्युमोनिया कायम किया तथा औषधि भी परिवर्तन कर दी गयी।

प्रातः सायं	म० रा०	रातको
कस्तूरी भैरव ½ गो०	शृंग्यादि ४ रत्ती	चतुर्भुज रस ¼
लवङ्गादि १ रत्ती	टंकण १ रत्ती	लवङ्ग काथसे
प्रवाल भस्म १ रत्ती	पिप्पली भस्म ½	
पानरस मधुसे	पान रस मधुम	

अष्टाङ्गावलेह, नरसार मधुसे बार २ में चाटनेको दिया ; छाती पर धस्तूरादि घृतकी मालिस की गई।

इस तरह यह २ रोज तक ऐसी ही हालतमें रहा तथा दवा भी यही चालू रक्खी।

१२-७-४६ सुबह हम दोनों आदमी फिर देखनेको गये तब ज्वर १०३ था श्वासोच्छ्वास ४२ था नाड़ी की गति १२४ थी कफ कुछ पतला भी हुआ लेकिन ज्वर कम न होनेकी वजहसे तथा श्वास गतिकी अधिकता सुनकर घरवाले घबड़ा रहे थे तब दवा फिर बदली की।

प्रातः सायं	म० रा०	शयनकाले
कस्तूरी भूषण १ रत्ती	गोरोचन ¼	चतुर्भुज रस
प्रवाल १ रत्ती	शृंग्यादि १ मा०	दशमूल काथसे
नरसार १ रत्ती	टंकण १ रत्ती	अष्टाङ्गावलेह
पानरस मधुसे	पिप्पली १ रत्ती	बार २ में चाटनेको
	मधु से	

तथा छाती पर धस्तूरादि घृतकी मालिस करके ऐन्टीफ्लोजिष्ट्रीनका पट्टी लगवाया। दिन भरमें ज्वर १०२, १०३ रहा रातको १२ बजे कुछ पसीना आया तथा ज्वर भी एक बार १०१ हुआ तब फिर रातको हम दोनोंको देखने के लिये बुलाया, तब और सब हालत ठीक थी परन्तु ज्वरको बढ़ाने के लिये मृतसंजीवनी की १ खुराक देकर नीचे आये तब सामने ही सोहनलाल जी जाजोदिया मिले जो आकर डालमियांजी की बैठक में बैठ गये, और मदन लाल जी को बोले कि अरुणकी तबीयत का क्या हाल है। उन्होंने सब

हाल चाल बतलाये, तब सोहन लालजीने कहा कि आप लोगों की बड़ी भूल है, जो न्युमोनियांके केशमें कविराजी इलाज करा रहे हैं। मै अभी डाक्टरको बुलाता हूँ उन्हीका इलाज कराना पड़ेगा उन्होंने उसी समय रातको एक बजे डाक्टर साहब को टेलीफोन किया। परन्तु कर्मयोगसे डाक्टर नहीं मिला। तब उनको चुप होना पड़ा, फिर वापिस जाते समय बोले कि मैं सुबह आऊंगा तब ही डाक्टरको बुलाऊँगा। खैर सुबह डा० गोर मोहन रायको बाबू मदन लालजीने ही बुलवाया, और वह आकर देखकर बोला कि कलसे रोगी आज बहुत ठीक है। याने ।।) भर ठीक है। दवाई बदल ने की कोई जरूरत नहीं है। घन्टे भर बाद मैं भी पहुंचा तो देखा कल से बहुत ठीक है। तब हमने भी घर वालोंको आश्वासन दिया कि कल से आज ठीक है। तब मदन लालजीने कहा कि रातको सोहन लालजी ने आकर हमलोगों को बहुत खोटी खरी सुनाई कि इलाज कविराजी बन्द करो, परन्तु उनको डाक्टर नहीं मिला सुबह गौर मोहन रायको परीक्षाके लिये बुलाया था उसने भी ।।) भर फायदा बतलाया सो अब मेरा दिल जम गया है। इलाज किसी के कहने से भी नहीं बदलूंगा। अस्तु इस उपरोक्त दवासे ही बच्चा अरुण १४ दिनमें ठीक हो गया। बादमें धीरे २ पथ्य की व्यवस्था की गई खांसी मात्र शेष रह गई थी। उसके लिये दवा दूसरी चालू कर दी गई।

प्रातः सायं	म० रा०
शृंगाराभ्र	चन्द्रामृत
पानरस मधुसे	टंकण मधुसे

प्लास्टर बन्द कर दिया तथा पुरातन घृतकी मालिस १ हफ्तेतक चालू रक्खी। इस तरह से यह बच्चा जल्दी ही १४ रोजमें ठीक हो गया। क्रमशः पथ्य चालू कर दिया। इस बीमारी के असंख्य

रोगी मेरे इलाजमें आये जिनमें से कुछ की चिकित्सा का वर्णन मैंने किया है विशेष वर्णन लिखने से पुस्तक बहुत बड़ी हो जायगी। इसलिये नहीं लिखा। वैसे आज कल कागज छपाई में भी बहुत खर्चा लगता है। अतः संक्षेपमें ही लिखना उचित समझा।

भार्ग्यादि क्वाथ (त्रिंशति)

भार्गीनिम्बघना भयामृतलता, भूनिम्ब वासाविषा।
त्रायन्ति कटुका बचात्रिकटुकश्योनाक शक्रद्रुमैः ॥
रास्नायासपटोल पाटलित्रिवृद्दार्वीविशालानिशा।
ब्राह्मीपुष्कर सिंहिकाद्वयशटी धात्र्यक्षहेमद्रुमैः ॥
क्वाथोयं किल सन्निपातनिवहान् द्वात्रिंशदङ्गः क्षणा।
दुर्धर्षान्निजतेजसा विजयते सर्वान् गरुत्मानिव ॥
किञ्च श्वास वलास कामगुदरुग्हृद्रोगहिक्कामरुत्।
मन्यास्तम्भ गलामया हितमला वष्टम्भवर्धमानपि ॥

द्रव्य और निर्माण विधि

भार्गीमूल, नीमकोछाल, नागरमोथ, हरड़छाल, गिलोय, चिरायता, अडूसा, अतीश, त्रायमाण, कुटकी, बच, सोंठ, काली मिर्च, छोटी पीपल, सोना पाठा, कूड़ाछाल, रासना, जबांसा, कड़-वेपरवलके पत्ते, पाढ़ल, निशोत, कचूर, आंवला, बहेड़ा, देवदारु, इन सब औषधियोंको बराबर लेकर अधकचरा कूट कर रख ले। फिर १ तोलाको १६ तोला पानीमें डालकर क्वाथ करे ४ तोला अव शेष रहने पर कपड़ेसे छानकर काममें लें।

उपयोग—यह क्वाथ दिनमें दो-तीन बार अकेला या दवाईके अनु-पान से नरसार यवक्षार ५-५ रत्ती मिलाकर देवें। यह क्वाथ कफ ज्वर, कफोल्वण सन्निपात, श्वसनक जर (न्युमोनिया) फुफ्फुस

धरा कला शोथ (प्लुरिसी) पार्श्व शूल, कफजनितकास तथा श्वास रोगमें अत्यन्त उपयोगी है।

चतुर्दशाङ्ग क्वाथ

चिरज्वरे वात कफोल्बणेवा, त्रिदोषजेवा दशमूलमिश्रः।
किराततिक्तादिगणः प्रयोज्यः शुध्यर्थिनेवा त्रिवृताविमिश्रः॥

दशमूल, चिरायता, मोथा, गिलोय, सोंठ, कुटकी सब मिलाकर क्वाथ विधिसे तैयार करे। उपयोग पुरातनज्वर, वातकफ प्रधान ज्वर तथा सन्निपात ज्वरमें देवे।

यदि रोगीको मलावरोध हो, तो निशोतका चूर्ण ३-४ मासे का प्रक्षेप देवे।

अष्टादशाङ्ग क्वाथ

भूनिम्बदारुदशमूलमहौषधाब्दतिक्तेन्द्रबीजधनिकेभकणाकषायः।
तन्द्रीप्रलापकसनारुचिदाहमोह श्वासादियुक्तमखिलंज्वरमाशुहन्ति

चिरायता, देवदारु, दशमूल, सोंठ, मोथा, कुटकी, इन्द्रजौ, धनियां, गजपीपल इन अठारह औषधियोंका क्वाथ समान भाग लेकर क्वाथविधिसे बनावे। उपयोग—यह क्वाथ अकेला अथवा अन्य औषधिके अनुपानसे सेवन करने पर तन्द्रा, प्रलाप, कास, अरुचि, दाह, मोह, श्वासयुक्त ज्वरका नाश हो जाता है।

अष्टाङ्गावलेह

कट्फलंपौष्करं श्रृङ्गी व्योषंयासश्चकारवी।
श्लक्ष्ण चूर्णिकृतं चैतन्मधुना सहलेहयेत्॥
एषावलेहिकाहन्ति सन्निपातं सुदारुणम्।
हिक्कां श्वासश्च कासश्च कण्ठरोधं नियच्छति॥

उर्ध्वगश्लेष्महरणे उष्णस्वेदादि कर्मणि ।
विरोध्युष्णे मधुत्यक्त्वा कार्यैषार्द्रकजै रसैः ॥

भावार्थः—काय फल, पोहकर मूल, काकड़ा सिंगी, कालीमिच, पीपल, सोंठ, दुरालभा, कालाजीरा इन सबको समान भाग लेकर चूर्ण बना लेवें। इसके प्रयोगसे दारुण सन्निपातज्वर नष्ट हो जाता है। उपयोग हिक्का स्वास, कास, कण्ठरोधमें मधुके साथ चटावे। सन्निपातज्वरमें ऊर्ध्वमार्ग द्वारा कफको निकालने के लिये स्वेदन किया जाता है। स्वेदनके उष्ण होनेसे उष्णविरोधी मधुका प्रयोग सन्निपातमें नहीं करना चाहिये। मधुके बदले इस अवलेहको अदरख रस के साथ देना चाहिये।

क्षुद्रादि क्वाथ

क्षुद्रामृतानागर पुष्कराह्वयैः कृतःकषायः कफमारुतो त्तरे ।
सश्वासकासा रुचिपार्श्वरुक्करे, ज्वरेत्रिदोषप्रभवे ऽपिशस्यते ॥

भावार्थः—कंटकारी छोटी, गिलोय, सोंठ, पोहकर मूल, इनको समान भाग लेकर क्वाथ विधिसे क्वाथ तैयार करके सेवन कराने से श्वासकास, अरुचि, तथा पार्श्वशूल, वात कफ ज्वर, सन्निपात ज्वर नष्ट हो जाते हैं।

बृहत् कट् फलादि क्वाथ

कटफलाब्दवचा पाठा पुष्कराजाजिपर्पटैः ।
शृंङ्गी कलिङ्गधन्याकं शटी भृङ्ग कणाह्वयम् ॥
तिक्ताभयाम्बु कैरातं भार्गीरामठकं बला ।
दशमूली कणामूलं निः क्वाथ्य क्वाथ मुत्तमम् ॥
हिंग्वार्द्रक रसोपेतं सन्निपात विनाशनम् ।
गल गण्ड गण्ड माला स्वरभेदं गला मयम् ॥

कर्णमूलोद्भवंशोथं हन्या द्धनु मुखामयान् ।
कफवात ज्वरं कासं तथा हन्ति शिरोगदान् ॥
शिरोगुरुत्व बाधिर्यं निहन्ति कफवातिकम् ।

भावार्थ कायफल, मोथा, वच, पाठा, पोहकरमूल, कालाजीरा, पित्त पापड़ा, काकड़ा सिंगी, इन्द्रजौ, धनियां, कचूर, भांगरा, पीपल, कुटकी, हरड़, मोथा, चिरायता, भार्गी, हींग, खरेंटो दशमूल, इन सबको समान भाग लेकर अधकचरा कूटकर २ तोलाकी मात्राको ३२ तोला जलमें पकाकर ८ तोला अवशेष रखे।

उपयोग—इस क्वाथको हींग तथा अदरख रसके साथ सेवन करनेसे सन्निपात ज्वर गलगण्ड, गण्डमाला, स्वरभेद गलरोग, कर्णमूल शोथ दन्त मुखरोग नष्ट हो जाते हैं। एवं वात-कफ ज्वर शिरोरोग, कानका रोग सर्व मिट जाते हैं।

वेताल रसः

शुद्धं सूतं विषंगन्धं हरितालं समाक्षिकम् ।
मर्दयेच्छिलयातावद्यावज्जायेतकज्जली ॥
आर्द्रकस्य रसेनाऽथ कारयेद्गुटिकाः शुभाः ।
गुञ्जामात्राः प्रदातव्याः सन्निपाते सुदारुणे ॥
साध्यां साध्यं निहन्त्याशु सन्निपातं भयंकरम् ।
ईशेन कथितोह्येष वेतालाख्यो महारसः ॥
अस्यमात्रा गुञ्जमिता पिप्पलीमधु संयुता ।
योज्यावाते तथा शिग्रु रसेनाऽर्द्र रसेनवा ॥

सितयाजीरकेणाऽपि देयापित्तज्वरे बुधैः
शर्करामधुयष्टीभ्यां भुनिम्बसितयाऽथवा ॥
शीतज्वरेषु याज्या सापिप्पली मधुसंयुता ।
अथवा मधुशुण्ठीभ्यामनुपानेनरोगजित् ॥

भावार्थ—शु० पारद, शुवच्छनाग, शु० गन्धक, शु० हरिताल, स्वर्ण माक्षिक भस्म इन सबको समभाग लेकर नीलवर्णकी कज्जलीकर अदरख रससे १-२ दिन मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलियां बनाकर रख छोड़ें।

उपयोग—इसमेंसे १ गोली पीपल चूर्णके साथ देनेसे साध्य असाध्य सन्निपातको नष्ट करती है। सहजना अदरखके रसके साथ वायु; चीनी और जीरेके साथ पित्तजरोग, मुलहटी चिरायता चीनीके साथ शीतज्वर नष्ट होता है अन्य रोगोंमें सोठ अथवा मधु से उपयोग करे।

कस्तूरी भूषण रसः ॥

रसाभ्रटंकणं शुण्ठी कस्तूरी पिप्पली तथा ।
दन्तीमूलं जयाबीजं कर्पूर मरिचं समम् ॥
आर्द्रक स्वरसेनैव मर्दयेत् सप्तवारकम् ।
शृङ्गवेररसैर्युक्तं योजयेद्रक्तिकाद्वयम् ॥
वातश्लेष्मणि मन्देऽग्नौ पित्तश्लेष्माधिकेऽपिच ।
त्रिदोषजनिते घोरेकासे श्वासेक्षयेतथा ॥
ऊर्ध्वजत्रुगरोगे च सशोथे विषमज्वरे ।
एष सर्वामयान हन्तिमुक्तौवा [illegible] ॥

भावार्थ—शु० पारद, अभ्रक भस्म, सुहागा, सोंठ, कस्तूरी, पिप्पल दन्तीमूल, भांगके बीज, कपूर, कालीमिर्च इन सबको सम भाग लेकर काष्ठौषधियोंकाकपड़ छान चूर्ण बनाकर खरलमें डालकर अदरख रसकी सप्त, भावना देकर २रत्तीकी गोली बनावे। भैषज्यरत्नावली

उपयोग—अदरख रस मधुसे वात कफ जन्यरोग, मन्दाग्नि, पित्त कफाधिक रोग, त्रिदोष रोग, घोर कास, श्वास, क्षय, ऊर्ध्वजत्रुगतरोग शोथयुक्त विषमज्वर, प्रभृति रोगमें फायदा करता है। तथा वीर्य ओज बलको बढ़ाता है।

समीरपन्नगरस

पारदं गंधकं मल्लं हरितालं तथैव च।
एतच्चतुष्टयं सर्वं तुलसी रस मर्दितम्॥
वटीं कृत्वाऽभ्रकेणैव वेष्टयेग्दोलकन्तुतत्।
शराव युगले क्षिप्त्वा वालुकायन्त्रगे पचेत्॥
दीपिका प्रमितं वह्नि दत्वायाम चतुष्टयम्।
स्वाङ्गशीतं समुद्धृत्य नाम्नाऽमौवातपन्नगः॥
सन्निपाते तथोन्मादे सन्धिबन्धे कफामये।
नागवल्ल्यादलेनैवभक्षयेग्दुञ्जिकाद्वयम्।

रसयोग सागर

भावाथ पारा १ तो० शु० गन्धक १तोला, शु० संखिया १ तो० शु० तपकिया हरिताल १ तो० सबको खरलमें डाल कर नील वर्णकी कज्जली कर तुलसी रसकी १-२ भावना देकर गोली बनाय सफेद अभ्रक पत्तोंमें लपेटकर शराव सम्पुटमें बन्द कर २-३ कपड़ मिट्टी लगाकर वालुका यन्त्रमें रख कर मन्दाग्निसे ४ प्रहरकी अग्नि देवे। स्वांग शीतल होने पर निकाल कर रख लेवें।

उपयोग इसमें से १ या २ रत्ती लेकर पानरस मधु से देनेसे सन्निपात, उन्माद, सन्धिक सन्निपात और कफ रोग याने न्युमोनिया प्रभृति रोगोंमें अच्छा फायदा होता है। श्वासावरोध या खांसोमें कफ निकालने के लिये। वासक छाल या पत्तें, मुलहटी बहेड़ा छाल, भारङ्गीके क्वाथमें मिश्री मिला कर इसके अनुपान देवें। इस समीर पन्नग रसमें सोमल हरताल, मिला है ये दोनों ही अत्यन्त उष्णवीर्य है।

भावार्थ इन दोनोंमें भी मल्ल प्रधान है फिर भी मल्ल भस्म मल्ल पुष्प, मल्ल सिन्दूरकी अपेक्षा यह रस कम तीव्र है। जहां मल्ल भस्म देनेमें हानि होनेका भय रहता है, वहां पर समीरपन्नगरस अधिक भयप्रद नहीं है। मल्ल सिन्दूर समीरपन्नग दोनों गुण धर्ममें समान है। परन्तु मल्लसिन्दूर अत्यन्त तीक्ष्ण उष्ण श्लेष्मिक कलापर उग्रता उत्पादक है। समीरपन्नगमल्ल कल्प होने पर भी अन्यकी अपेक्षा कम तीव्र गुणयुक्त अल्पदाहक अल्पस्फोटोत्पादक है। समीरपन्नग श्वासनलिकामें उत्पन्न हुए वात कफात्मक दुष्ट व्रणोंको कफ श्रावके द्वारा नष्ट कर देता है। मल्ल सिन्दूरसे कफ शोषण होकर श्वास नलिकायें शुष्क हो जाती है। इसलिये जिन रोगोंमें कफ श्राव कराना हो वहां समीरपन्नग से हो अच्छा फायदा होता है। यदि उरस्तोय याने प्लुरिसी हो वहां पर इससे विशेष काम नहीं होता है वहां पर शृंगभस्म अभ्रक भस्म ही अच्छा काम करती है। समीरपन्नग दिन में एक वार ही देना चाहिये। और इसमें अन्य दवाका संमिश्रण भी नहीं करना चाहिये। अन्य दवाका संयोग करनेसे इसकी क्रियामें बाधा पड़ती है। यह समीरपन्नगरस, उपदंश, सुजाक, सन्निपात, रक्तविकार, त्वचा रोग, जीर्ण पक्षाघात, अर्दित, जिह्वा स्तम्भ, धनुर्वात, आदि रोगोंमें जब कफ मिल गया हो तो अच्छा फायदा करता है। वातजन्य आक्षेपमें भी अच्छा

फायदा करता है। समीरपन्नग कटु रसात्मक विपाकमें कटु उष्ण तीक्ष्णवीर्य उत्तेजक, बल्य कफ वातघ्न है, कितने चिकित्सक इसको मकरध्वजकी तरह शीशीमें भरकर वालुका यन्त्रमें पकाकर भी तैयार करते हैं यह २४ घण्टेमें तलस्थ रसायन तैयार होता हैं। इस रसको शीशीमें तैयार करना हो तो डॉट हल्का सा बन्द करके पकायं अग्नि बहुत मन्द दे। तीव्र अग्नि देनेसे शीशी फूटनेका भय है। यदि तलस्थ रसका रंग तेजस्वी काला न हुआ हो तथा सख्त न बना हो तो कच्चा समझकर फिर ४-६ घण्टा अग्नि देकर तैयार करे। यदि एकदम कच्चा ही रह गया हो तो फिर गन्धक देकर पाक करना चाहिये।

(मयूर पिच्छ भस्म)

मयूरपक्षंनिर्दह्यतद्भस्म मधुमिश्रितम्।
लीढ्वा निवारयत्याशुछर्दिं सोपद्रवामपि ॥

भावार्थ—मोरपंखके चन्दवेको जलाकर कपड़छान करके रख लेवें इसमें से २ रत्ती मधुमें मिलाकर खानेसे हिचकी वमनमें अच्छा फायदा होता हैं।

युनानी चिकित्सा—जुन्दवेदस्तरको शराबमें मिलाकर छातीपर मालिश करनी चाहिये। बच्चोंके रोगमें सारा रेवन १-२ रत्ती देनेसे उल्टी टट्टी होकर शीघ्र ही आराम हो जाता है कविराज ज्योतिर्मयजी इस रोगमें बच्चोंके कफ निस्सारणार्थ मुक्ताभुरीका अनुपान दिया करते थे जिससे टट्टी उल्टीके द्वारा कफ निकलकर बहुत जल्दी ही फायदा हो जाता था। हब्बेबनप्सा—गुलबनप्सा, निशोथ, सतमुलहटी, वर्कचांदी गुलेसुर्ख, प्रत्येक ४-४ मासे गारीकुन २ मा० सिकमोनिया २ मा० ठंडे पानीसे गोली बनाये।

यह गोली छातीमें जमे हुये कफको निकालती है रातको १ गोली खाकर फिर प्रातःकाल ऊपरसे यह ओसादा पीवे गुलबनप्सा ७ मा० कासनीकी जड़ ७ मा० मुनक्का ६ दाना सौंफ ७ मासा गाजुबान ५

मासा उस्तखदूस ५ मा० रातको गरम पानी १ पाव में भिगोकर छान लेवे। फिर गुलकन्द खमीरा बनप्सा शकर सुर्ख प्रत्येक ४-४ मासा मिलाकर २ बार छान लेवे कब्ज हो तो ७ मासा सनायका पौडर मिलाकर पिलावे। इससे न्युमोनियामें अच्छा फायदा होता है।

एलोपैथिक चिकित्सा—डाक्टरी वाले इस बीमारीमें ऐन्टीफ्लोजिष्टिन (Antiphlogistine) या एन्टीफ्लेमिन (Antiflamin) की पट्टी लगवाते हैं या कैटाप्लाज्माकेओलिनो चिपका दिया जाय तो उपनाहके बार बार बदलनेका झगड़ा भी नहीं करना पड़ता। यह ध्यान रखना चाहिये कि कहीं अत्यन्त गरम वस्तुका प्रयोग न किया जाय प्राथमिक श्वसनक ज्वरमें सल्फापिरोडीन (Sulphapurudin) या M. &. B. 693 सभी प्रकारके फुफ्फुस सम्बन्धी रोगोंमें अव्यर्थ औषधि है। इसकी बनी बनाई गोलियां बाजारमें बिकती हैं। इसको मात्रा शारीरिक शक्तिपर निर्भर करती है। इसकी मात्रा २४ घन्टेमें बालकको उसके प्रत्येक सेर भार पर १ रत्ती औषध दी जाती है। ३ वर्ष तककी आयुवालेको ड्योढ़ी मात्रा तक भी दी जा सकती है। इसका नियम चार चार घन्टेके अन्तरसे तबतक देनेका है जबतक ज्वरका वेग स्वस्थावस्था तक न आ जाय। इसके बाद धीरे धीरे अवस्थानुसार मात्राको कम कर देना चाहिये। बालक इन गोलियोंको सहन कर लेता है। उसको यह गोलियां दुग्ध, तथा फलोंका रस या जलमें घोलकर देनी चाहिये। बादमें जल भी पर्याप्त मात्रामें इतना पिलाना उचित है जिससे ३ ॥ मूत्र बन सके। इस उपचारसे २४-३६ घन्टेमें ज्वर छूट जाता है लेकिन फिर भी कुछ एक अंशोंमें रोग बना ही रहता है। कभी कभी औषधि प्रयोगके साथ वमन भी इतना होने लगता है कि वह पच ही नहीं सकती। इस अवस्थामें इसको बन्द करके सल्फाथियाजोल (Sulphathizole) अल्प मात्रामें दी जा सकती है। इन उपरोक्त औषधियोंके सेवनके समय इसके साथ सोडा बाइ-

कार्ब या सोडियम साइट्रेटका संमिश्रण अवश्य करना चाहिये जिससे मूत्रको प्रतिक्रिया क्षारीय रक्खी जा सके। यदि इन औषधियोंसे फायदा न मालूम दे तो वहां पेनीसिलिनका प्रयोग करना चाहिये। निद्रा न आनेपर डोवर्स पाउडर देना उचित है। इससे भी अगर निद्रा नहीं आवे तो अमोनियम ब्रोमाइड दे देना चाहिये।

ज्वरका वेग अधिक हो तबतक

पोटास नाइट्रास	(Potas Nitras)	१ ड्राम
लाइकर एमोनिया एसीटास	(Liq. Ammonia Acetatis)	१॥ औंस
स्पिरीट ईथरिस नाईट्रोसी	(Spt. Eattres Nitrosi)	४ ड्राम
टिञ्चर आरेञ्ज	(Tr. Orange)	३ ड्राम
एका कैम्फर	(Aqua Campher)	६ औंस

इन सबका मिक्चर बनाकर ४-४ ड्राम ३-३ घन्टेपर देते रहें।

लगानेकी दवा—लिनीमेन्ट टरविथनी, एसटिकमूको मालिस करे अथवा गाया कोल, जैतुन का तेल, युकेलिप्टस ओयल, कैम्फर ओयल, टरपन टाईन ओयल को मिलाकर छातीपर मालिश करावे और गरम सेक देवें।

श्वासाधिक्य होने पर निम्न लिखित औषधियों द्वारा वाष्प क्रिया करे।

टि० बेञ्जाइनको १ड्राम लेकर उबलते हुये जल में मिला कर १ मिनटमें ८-१० बार नाक मुखसे वाष्प लेवे। यह क्रिया १० मिनट तक हो करे। इस क्रियाके लिये बना बनाया यन्त्र बाजारमें मिलता है उसके द्वारा वाष्प लगानेमें सुगमता रहती है।

होमियोपैथिक चिकित्सा

निमोनिया की प्रथमावस्थामें एकोनाइट, वेरेट्रम विरीडी (सल्फर)।

विकारावस्थामें ब्रायोनिया, फास्फोरस, आयोडिन, सैंगुनेरिया मर्कुरियस, एण्टिमटार्ट, चेलीडोनियम, सल्फर आदि।

हार्ट दुर्बलताके समय कैम्फर, स्ट्रोफेन्थस, डिजिटेलिस, क्रैटिगस, आइबेरिस प्रभृति।

टाइफाइडके समय बैप्टीसिया, रस टक्स, आर्सनिक, ओपियम, फास्फोरस, कार्बो।

अत्यन्त श्वासकृच्छ्रतामें ग्रिण्डेलिया, रोबस्टा कार्बोवेज प्रभृति।

दाहिने फेफड़ेमें रोग होने पर एण्टिमटार्ट, चेलीडोन, मर्कुरियस, प्रभृति।

बायें फेफड़े पर रोग होनेसे—सल्फर अच्छा काम करता है।

————

प्रलापक सन्निपात (टाईफस फीवर Typhus)

आयुर्वेद मतसे निदान

यत्र ज्वरे निखिल दोष नितान्त रोष,
जाते प्रलाप बहुला सहसो त्थिताश्च।
कम्प व्यथा पतन दाह विसंज्ञता स्यु,
नाम्ना प्रलापक इति प्रथितः पृथिव्याम् ॥

भावार्थः जिस ज्वरमें तीनों दोषोंके कुपित होनेसे प्रलाप, कम्प, उठ-उठ कर दौड़ना, अथवा गिरना दाह और अत्यन्त बेहोशी होना ऐसे लक्षण होते हैं, उसको प्रलापक सन्निपात कहते हैं। प्राचीन शास्त्रों में इस रोगका इतना ही वर्णन मिलता है, लेकिन

नवीन शास्त्र वेत्ताओंने इसका विशेष विवेचन किया है। वह निम्न प्रकार से है।

प्रलापक ज्वर—काला मधुरा—टाइफस फीवर

यह रोग प्रायः शर्दीयुक्त गन्दी जगहमें रहने वाले, निर्धन, क्षुधातुर मनुष्यों में होने वाला १४ दिवस की अवधि वाला ज्वर है। ऐलोपैथिक में इसको कीटाणु जन्य माना है। उनका कथन है कि यह रोग जूंओं द्वारा मनुष्यों में फैलता है। इसका संक्रमण काल १२ दिन का बतलाया है याने जुंआदि जन्तुओं के द्वारा काटे जाने पर १२ दिवस के भीतर ही मनुष्य इस रोगका क्षेत्र बन जाता है। यह तीव्र संक्रामक कीटाणु जन्य रोग है। परन्तु अभी तक इसके कीटाणुओंका पूरा ज्ञान पाश्चात्य विज्ञान वेत्ताओं को भी नहीं हुआ है। इसलिये इनको अणु वीक्षण यन्त्रसे न दिखने वाले कहा है। तथापि उनका कथन है कि इस रोगसे ग्रसित रोगीका रक्त लेकर अफ्रीकन बन्दर के शरीरमें संयुक्त करने से उसको यह रोग हो जाता है, इसलिये ही इसको कीटाणु जन्य मानते हैं। आयुर्वेद में भी ऐसा मत स्वीकार किया है कि संक्रमन्ति नरान्नरम। अर्थात् यह रोग अन्य रोगियों के वस्त्रादिक संसर्ग से भी उत्पन्न हो जाता है। आरोग्य होने पर भी ३-४ हफ्ते तक आहारादिकों की तरफ विशेषतया सावधानी रखनी चाहिये। यह रोग क्या बालक, क्या युवा क्या वृद्ध, क्या स्त्री, क्या पुरुष सब ही को होता है। गरम देशोंकी अपेक्षा शीत प्रधान देशोंमें अधिकतया होता है तथा जो पुरुष बहुत दिनों तक स्नान नहीं करते हैं तथा मैले वस्त्र पहिनते हैं और बहुत से मनुष्योंके साथ एक ही बिस्तर पर सोते हैं, उनके कपड़ेमें जूंए पैदा हो जाती हैं, उनके काटने से इस रोगकी उत्पत्ति हो जाती है। राजस्थानमें प्रायः यह रोग नहीं होता है। यूरोपादि शीत प्रदेशोंमें अधिकतासे होता है।

पूर्व रूप

जब यह रोग होने वाला होता है तब शिरमें पीड़ा हाथ पैरो में फूटनी मलावरोध वमनादि उपद्रव होकर शीतपूवक तीक्ष्ण वेग युक्त ज्वर हो जाता है।

स्पष्ट लक्षण—इस रोगमें ज्वर होने पर जबतक लाल रंगकी पिड़िकाय बाहर नहीं निकलती है तब तक ज्वर तीक्ष्ण याने १०४ १०५ डिग्री तक निरन्तर बना रहता है, इसका प्रधान लक्षण यही है। पिड़िकाय ग्रीवासे आरम्भ हो कर नीचे जानु तक आती है। ज्वरके साथ शिरमें, कमर में, सन्धियोंमें भयंकर पीड़ा होती है तथा तन्द्रा, भ्रम, मुख, आंखों- लाली तथा नेत्रोंमें श्राव, मल का रङ्ग काला शुष्क, मल मूत्रावरोध कहीं गुदा नाकसे रक्त श्राव, स्वेदाऽवरोध शरीरमें रुक्षता निद्रा नाश, प्रलाप तीव्र ज्वरादि लक्षण होते हैं। तथा जिह्वा काली या मैली स्वेत रङ्गकी रहती है। दुर्बलताके लक्षण प्रतीत होते है, नाड़ीकी गतो तीव्र रहती है, कहीं पर ज्वर १०५ से १०७-१०६ डिग्री तक भी बढ़ जाता है। यह खराब लक्षण है। यह ज्वर प्रायः १४ चौदहवें दिन पसीना आकर या अतिसार होकर उतर जाता है। अथवा जिम रोगीको उपद्रव बढ़ने वाले होते हैं वह १० व रोज निर्बल होकर संज्ञा हीन की तरह पड़ जाता है। उसके नेत्र खुले रहते हैं; धीरे-धीरे प्रलाप करता रहता है, शरीर पर से कुछ चुनता हो ऐसी चेष्टा करता रहता है ५.पट्टोंको फाड़ देता है, तथा बहुत जोरसे चिल्लाने लगता है, कफ वृद्धि होने से पसीना आने लगता है और हाथ कांपने लग जाते हैं। ऐसी अवस्थामें गात्र कोथ होकर रोगी मर जाता है।

असाध्य लक्षण—मूत्रावरोध, ज्वरतिशय, गात्रकोथ शय्याव्रण, शुष्क कास, स्वासवृद्धि, अथवा आंकों न्युमोनियां, इसके अलावा गालोंपर शोथ, रक्तमें पूय होकर व्रणोत्पत्ति हो जाना,

पैरोंके शिराओंमें रक्त जमकर व्रण हो जाना इत्यादि कष्ट दायक उपद्रव होनेसे मृत्यु संख्या ३०-४० प्रतिशत हो जाती है।

चिकित्सा

इस रोगमें प्रायः चिकित्सा टाईफाइड, आन्त्रिक सन्निपातके समान ही की जाती है, उसका विवरण आगे लिखा जायगा अतः उसी प्रकरणमें देखें। आयुर्वेदमें इस रोग की चिकित्सामें तगरादि क्वाथ अच्छा फायदा करता है।

मेरा अनुभव

मेरे पास अस्पतालमें तथा बाहर भी इस रोगसे पीड़ित बहुत से रोगी आये उनकी चिकित्सा मैंने जिस विधि से की उसका विवरण मय रोगीके उदा हरण स्वरूप आपके सामने लिख रहा हूं। कृपया आप लोग भी प्रयोगमें लाकर देखें। अस्तु यह रोग २ प्रकारसे होता है एक स्वतन्त्र रूपसे दूसरा उपद्रव रूपसे। स्वतन्त्र रूपसे जहां होता है उसमें प्रथम ज्वर तीव्र होकर प्रलाप चालु हो जाता है तथा उसमें वायु, पित्त दो दोष ही प्रधान रहते हैं। अत. इसकी चिकित्सामें बहुत सुविधा रहती है। परन्तु जहां परतन्त्र रूपसे आंत्रिक ज्वरादिकों में हो जाता है, वहांपर चिकित्सकको भी बहुत बुद्धि लड़ानी पड़ती है। अब यहां इस प्रकरणमें स्वतन्त्र रूपसे जिन रोगियों के प्रलापक हुआ है उसका अनुभव लिख रहा हूं।

रोगीनाम, सत्यनारायण हरलालका उम्र १५ जाति वैश्य देश लक्ष्मण गढ़ यहांका पता ११४ नं० तुलापट्टी।

इस रोगीको इसके घरपर तीव्र ज्वर होकर प्रलाप शुरू हो गया, तब ता० २-१०-४३ को रात्रिमें ११ बजे अस्पतालमें लाकर ऐलोपैथिक विभागमें भर्ती किया गया, तब डाक्टरोंने इसकी चिकित्सा चालू कर दी तथा निद्राके लिये बहुत चेष्टा की लेकिन निद्रा रात भर बिल्कुल नहीं आई। तब प्रातःकाल रक्त परीक्षा की गई, जिसमें टाईफाइ

(Typhus) प्रलापक मिला ! तब रोगीके कुटुम्बी घबरा गये और अस्पतालमें मेरे पास आयुर्वेद विभागमें ट्रान्सफर कर दिया, मेरे पास जब यह रोगी प्रवेश हुआ तब इसको चार रोज रोगाक्रान्त हुये हो गये थे। तथा प्रवेश ता० ५-१०-४३ थी, उस समय इसको ज्वर १०४ डिग्री था प्रलाप विशेष रूपसे करता था, याने ४-५ आदमियोंके पकड़ने पर भो काबूमें नहीं आता था मार पीट गाली देना आदि लक्षण थे, तथा मलमूत्रावरोध हो रहा था। प्यास अधिक लगती थी, आंखें लालिमा युक्त थी स्वजनोंको पहिचानना बन्द था शिरको इत स्ततः निरन्तर घुमाता था। ऐसी हालत देखकर मैंने निम्नलिखित औषध व्यवस्था चालू की।

ता० ५-१०-४३ को प्रातः

प्रातः ६ बजे से प्रारम्भ	न० २ मकरध्वज १ रत्ती
न० १ रसराज २ रत्ती	गजक्षार ½
प्रवाल १ रत्ती १ पु०	जलसे

दशमूल, ब्राह्मी, शंखाहुली, जटामांसी, दुरालभा, लवङ्गका क्वाथ मिलित १ तोलाको क्वाथ विधिसे पकाकर उपरोक्त औषधिके अनुपान रूपमें चालू किया याने १ न०—२ न० दवाओंको ३-३ घन्टेके हेरफेर से चालू की। षडङ्ग पानीय जल पीनेको दिलवाया। पथ्यमें कुछ नहीं दिया।

ता० ६-१०-४३, जब सुबह देखनेको गया तब रात्रिके समाचार घरवालोंसे पूछे तो उन्होंने कहा कि रात्रिमें कलसे आज कुछ शान्ति रही कभी नींद आती थी कभी प्रलाप करता था, पेशाब भी रात्रिमें ३ बार हुआ, अपान वायु निर्गमन भी हुआ, अस्तु मैंने जब उसके हाथको देखनेके लिये हाथ बढ़ाया तो गाली बकने लगा और उठ बैठ करना प्रारम्भ कर दिया। तब मैंने अस्पतालीय कर्मचारियोंकी सहायतासे अच्छी तरहसे परीक्षाकी उस समय ज्वर १०४ डिग्री था, पेटपर

कुछ अध्मान था और सर्व लक्षण पूर्ववत् थे, नाड़ीकी गति १४४ थी। उसीसमय कविराज श्रीज्यातिर्मयजी जो अस्पतालके प्रधान चिकित्सक थे आ गये और अच्छी तरहसे रोगीकी परीक्षा की तथा उपवैद्य द्वारा चालु व्यवस्था पत्र भी सुना, तदन्तर कविराजने कहा कि औषध-व्यवस्था बहुत सुन्दर है दिनमें इसीको चालू रखिये, यदि रात्रिमें निद्रा नहीं आवे तो १ खुराक वृ० वातचिन्तामणि, तालपत्र स्वरस मधू से दीजियेगा। उनका यह कथन सुनकर मैंने प्रार्थनाकी कि महाराज मेरी समझमें औषधिके साथ २-३ उपचारोंकी प्रथम आवश्यकता है। उन्होंने पूछा कि क्या तब मैंने निवेदन किया, इसको टट्टी हुये ५-६ रोज हो गया अतः फलवर्ती द्वारा मल निस्सारण क्रिया करनी चाहिये, दूसरा उपचार यह होनेकी आवश्यकता है कि इसके सिरके बाल बहुत बड़े हैं अतः इनको कटवाकर शिरपर शीत क्रिया याने (आइस बैग) का प्रयोग होना चाहिये। इस कथनको कविराजजी ने भी स्वीकार कर लिया और अनुमतिसे दोनों ही उपचार कर दिये गये, जिससे दिन में प्रलाप कुछ कम रहा और रात्रिमें ३ घन्टा निद्रा भी आई।

७-१०-४३ अवस्था पूर्ववत्।

८-१०-४३ ज्वर प्रातः १०२ ज्ञानमें वृद्धि औषधि पूर्ववत।

९-१०-४३ ज्वर प्रातः १०१ सायं १०२ ज्ञान अच्छी तरहसे हो गया। १ टट्टी हुई पेशाब कहकर किया नाड़ीको गति ११० पथ्यमें जल वार्ली ऽ।। मिश्री शृत जल दिया गया। इस उपरोक्त चिकित्सा द्वारा यह रोगी १४ चौदह रोजमें स्वस्थ हो गया और पथ्य विधिसे पथ्य चालू किया गया बिल्कुल स्वस्थ होकर घर चला गया।

नोट—कभी कभी किसी किसी रोगीके शिरपर प्रलापक रोगमें हम लोग बर्फकी जगह काक माची (मकोय) का लेप भी किया करते हैं, उससे भी अच्छा फायदा होता देखा गया है। गर्दन तोड़ जैसी भयङ्कर बीमारियोंमें चन्दनादि लेपसे अच्छा फायदा होता है परन्तु

प्रलापककी चिकित्साका वर्णन आगे मन्थर ज्वर प्रकरणमें लिखी जावगी। अतः कृपया उसी प्रकरणमें देखें।

प्रलापक सन्निपातमें काममें आनेवाली औषधियोंके नुसखे।

तगरादि क्वाथ

म तगर वरतिक्ता रेवताम्भोदतिक्ता,
नलद तुरग गन्धा भारती हार हूरा।
मलयज दशमूली शंख पुष्प्य सुपीताः
प्रलपन मपहन्युः पाननोनाति दूरात् ॥

भावार्थः— तगर, पित्तपापड़ा, अमलताश गूदा, नागर मोथा, कुटकी, जटामांसी, असगन्ध, ब्राह्मी, मुनक्का, लालचन्दन, दशमूल शंखाहुली, इन सबका समान भाग लेकर जो कूट करके रख लेवे। आवश्यक्ता के समय १ तोला क्वाथको १६ तोला जलमें पका कर ४ तो० अवशेष रख छान कर काममें लावे।

उपयोग—यह क्वाथ प्रलापक सन्निपातमें अत्यन्त लाभदायक है। इसका सेवन केवल या० रसराज, बृ० कस्तूरी भैरव रस, वातकुलान्तक रस, प्रताप लंकेश्वर रस के अनुपान रूपमें प्रयाग करे। यदि रोगीको अतिसार भी साथ में हो तो इसमें से कुटकी, अमलतास, मुनक्का को निकाल कर उपयोग में लावे।

चन्दनादि लेप

सफेद चन्दन, रक्तचन्दन, गेरू, गिलेअरमानी, कपूरकाचरी, हंसराज, गेहुला इसको सम भाग लेकर जलमें पीस कर लेप करे।

बात जन्यप्रलापमें वातहर लेप अथवा उपनाह जैसे उड़दकी रोटी तथा मावा गरम करके शिरपर बांधना चाहिये।

वातहर लेप

तम्बाकू, कायफल, कोड़िया लोहवान, हींग, गुड़, इनको

समान भाग लेकर जलमें पीस कर गरम करके कपड़ेमें लगाकर कपाल, कनपटी, मस्तक पर बांधे लेप मोटा रखना चाहिये। इस लेपसे वात जन्य प्रलापको बकवाद शीघ्र ही शांत हो जाती है। तथा निद्रा भी आजाती है। पित्त जन्य प्रलाप में इसका उपयोग नहीं करे। वहां पर शतधोत घृत का बार २ में प्रलेपन करे, या पूर्वोक्त चन्दनादिक लेप लगावे। इस रोगमें निद्राका न आना प्रबल उपद्रव हैं। यदि निद्रा आ जाय तो रोगबल स्वतः ही कम हो जाता है। निद्रा न आने से उत्कृष्ट गुण वाली औषधि देने पर भी रोगका शमन होना कठिन हो जाता है। अतः इस उपद्रवको शीघ्राति शीघ्र दमन करनेके लिये चेष्टा करनी चाहिये।

निद्रा कारक अञ्जन

एरंडकी गिरी को पीस कर कुछ कस्तूरी मिला बत्ती बना कर काजल उपाड़ कर आंखोमें बार २ अञ्जन करने से वातज प्रलाप शांत हो जाता है।

अन्य उपाय—(१) पैरोंके तल भागमें कांसीकी कटोरी से घृतको रगड़े।

(२) भांगको बकरीके दूध में पीसकर शिरपर या पैरके तलुओंमें लेप करे।

(३) सेकी हुई भांगके चूर्णको मधुसे खिलावे।

(४) पीपला मूल चूर्ण ३ मासा से ६ मासा तक मधुमें चटावे।

(५) घृत या एरंड तैलको कांसेके बर्तनमें घिसकर अञ्जन करे।

रस राज रस

पलैकं रस सिन्दूरं व्योम सत्वंच कार्षिकम्।
तदर्धं काञ्चनं दद्यान्मुक्ता विद्रुम मेवच॥

लौहं रौप्यं मृतंवङ्गं वाजिगन्धा लवङ्गकम् ।
जाती कोष फले क्षीर काकोलीं च तदर्धतः ॥
कन्यायाः काकमाच्याश्च रसैः पिष्ट्वा वटीं चरेत् ।
गुञ्जा द्वयो न्मितां दत्वा गोक्षीर मनुपाययेत् ॥
पक्षाघाताऽर्दिते वाते हनुस्तम्भेऽपतानके ।
आक्षेपके कर्णनादे तथैव मस्तक भ्रमे ॥
सर्व्व वात विकारेषु रस राजः प्रकिर्तितः ॥

द्रव्य निम्र्माण विधि

रस सिन्दूर ४ तोला, अभ्रक भस्म १ तोला, सुवर्ण भस्म ½ तो० मुक्तापिष्टी ½ तोला, प्रवाल भस्म ½ तोला, लोहभस्म ¼ तोला, रजत भस्म ¼ तोला, बंग भस्म ¼ तोला, असगन्ध ¼ तोला, लवङ्ग ¼ तो० जावित्री ¼ तोला. जायफल ¼ तोला, काकोली ¼ तोला प्रथम रस सिन्दूर खूब महीन पीसकर उसमें अन्य भस्में तथा काष्ठौषधियों का कपड़ छान चूर्ण मिला एक दिन घृत कुमारी और मकोयके रसमें मर्दन कर २-२ रत्तीकी गोलियां बनाकर छायामें सुखाकर रख लेवे। मात्रा १ गोली मधुमें चटाकर गायका दूध पिलावे।

उपयोग—सर्व्व प्रकारके वात रोगोंमें विशेषतः पक्षाघात, अर्दित, अपतन्त्रक आक्षेपक कानकी आवाज सिरमें चक्कर आना आदि रोगों में उपयोग करे ।

बृ० वात चिन्तामणी रस

भागैकं स्वर्णभस्म द्विभागं रौप्य मभ्रकम् ।
मौक्तिकं विद्रुमं लौहं भागत्रय मितं भवेत् ॥
काकोली मग्निजारं च भागमेकं विनिक्षिपेत् ।
चन्द्रोदयं सप्तभागं कन्यारस विमर्दितम् ॥

द्विगुञ्जा वटिका कार्य्या देया योग्यानुपानतः ।
वातचिन्तामणिर्हन्याद्वात रोगान शेषतः ॥

सिद्धियोग संग्राहात्

द्रव्य और निर्म्माण विधि

स्वर्ण भस्म १ तोला, रजत भस्म २ तो०, मुक्तापिष्ठी ३ तो०, काकोली चूर्ण १ तो०, अम्बर १ तो०, चन्द्रोदय ७ तो० इन सबको खरलमें मिलाकर घृत कुमारी स्वरसमें मर्दन करो अच्छी तरहसे पिस जाने पर १-१ रत्तीकी गोलियां बनाकर सुखाकर काममें लावे।

मात्रा अनुपान १-१ गोली यथावश्यक दिनमें ३-४ बार शहदमें मिलाकर चटावे।

गुण और उपयोग— यह रस हृदय और मस्तिष्कके लिये उत्तम बल-कारक है तथा वात कफ नाशक और बाजीकरण है। सर्व प्रकारके वात रोगों में इसका प्रयोग करे।

आक्षेपक, अपतानक, अपतन्त्रक, मांस्यादि क्वाथके अनुपान से देवें। सन्निपात ज्वरमें जब प्रलाप, मोह नाड़ीकी क्षीणता, हाथ-पांवका कांपना पसीना अधिक होकर शरीर ठण्डा पड़ना इत्यादि लक्षण हों तो इसके प्रयोगसे अच्छा लाभ होता है। प्रलापावस्थामें तगरादि क्वाथके साथ प्रयोग करे। अथवा अनिद्रामें प्रस्वप्रार्क के साथ प्रयोग करे।

प्रस्वप्रार्क

जटामांसी ऽ॥ जवासा ऽ॥ मालकांकणी ऽ॥ सर्वगन्धा ऽ॥ असगन्ध ऽ॥ ब्राह्मीपत्ती ऽ॥ खुरासानी अजवाईन ऽ। इन सर्वको १६ गुना जलमें भिगोकर वाष्प यन्त्रके द्वारा अर्क निकालकर अनिद्रा प्रलापादि मस्तिष्क रोगोंमें काममें लावें। मात्रा १ औंससे २ औंस तक।

ऐलोपैथिक चिकित्सा

यह रोग प्रायः तीव्र ज्वरोंमें होता है। अतः रोगीके सिरपर ठन्डे पानीकी पट्टी या बर्फका बेग अथवा कोलन वाटरकी पट्टी रखनी चाहिये। हाथ पांवको ठण्डे कपड़ेमें लपेट देना चाहिये। शीत जलकी वस्ति देना भी उत्तम है। निद्रानाशादि उपद्रव होनेपर निम्न औषधियाँ दी जाती हैं।

क्लोरल हाई ड्रास (Chloral Hydras) ५ से २० ग्रेन

पोटासियम ब्रोमाइड (Pottasum Bromide) १० से ३० ग्रेन

सोडियम ब्रोमाइड (Sodium Bromide) १० से ३० ग्रेन

एमोनियम ब्रोमाइड (Amonioum Bromide) १० से ३० ग्रेन

इनमेंसे एमोनियम ब्रोमाइड कफघ्न, स्वेदल, मूत्रल, कुछ उष्ण और निद्राकारक है। हृदयको गतिको मन्द भी नहीं करता है। शेष सर्व हृदयको कमजोर करनेवाले हैं। यदि उन्माद का असर कम हो तो निद्रा लानेके लिये सोने से पूर्व सल्फोनाल (Sulphonal) १० से ३० ग्रेन तक गरम जलमें मिलाकर पिलाना चाहिये। यह औषध हृदयाव सादक नहीं है, मलावरोधक अवश्य है। अतः मलावरोध हो तो इसका प्रयाग नहीं करे। इसके अलावा ल्युमिनल (Luminal) (ट्रायोनल) (Tryonal) भी है जिसको देनेसे आध घन्टे बाद ही नींद आ जाती है। नींद लानेवाली औषधियोंका प्रतिदिन प्रयोग नहीं करना चाहिये।

युनानी चिकित्सा

मगजख्यारोन २॥ तोले, मगज कद्दू २॥ तोले, तुख्मकाहु २॥ तोले, मुलहटी का सत ६ माशे, निशास्ता ६ माशे, अफीम ६ माशे, कूट छानकर ईशबगोलके लुआबमें लेनी चाहिये, मात्रा ६ माशे।

होमियोपैथिक चिकित्सा

ज्वरकी उष्णताको कम करनेके लिये ऐसिटेनिलिडियम ३ × किंवा

जाता है। अन्य लक्षण होनेपर टाइफायड अधिकारोक्त औषधियों द्वारा ही चिकित्सा की जाती है।

आयुर्वेद मतानुसार आन्त्रिक ज्वर (Typhoid) टाइफाइड

यह एक त्रिदोषसे उत्पन्न होनेवाला मियादी ज्वर है, इसमें मियाद का कोई नियम नहीं; किसी रोगीको २१ दिवसमें किसीको २७ में छोड़ता है। वैसे इससे पीड़ित लम्बी मियादके रोगी भी मैंने देखे हैं जो ४५—५१—६७ दिवस पर्यन्त रोगाक्रान्त रहकर आरोग्य हुए हैं।

निदान—इस रोगकी उत्पत्ति अधिक मार्ग गमन, उष्णवात, कृशता, सूर्यतापमें भ्रमण, अशुचिस्थानमें निवास करनेसे दूषित मलमूत्रादि संसर्गयुक्त जलपान, तथा मक्षिकादि दूषित खाद्य पदार्थोंके सेवनादिकसे होती है। पाश्चात्योंका मत है कि यह रोग कीटाणुओंके अन्त्र स्थानमें प्रवेश होनेपर होता है फिर ये कीटाणु ही रसरक्तादि धातुओंको तथा वात, पित्त, कफादि दोषोंको शीघ्र ही प्रकुपित कर देते हैं। प्रथम कीटाणुओंका आक्रमण छोटी आंतोंमें होता है, वहांसे रोग बढ़ने पर फिर बड़ी आंतोंमें भी प्रवेश हो जाता है।

पूर्व रूप

जब यह रोग होनेवाला होता है तब शिरःशूल, अरुचि, अङ्गमद, मलावरोध, बेचैनी, भ्रम, हाड़फूटनी आदि लक्षण हो जाते हैं।

रूप—यह ज्वर प्रारम्भमें ५ दिवसतक समान तीक्ष्ण वेगसे रहता है। किसी किसीको शनैः शनैः क्रम क्रमसे पहिले दिवसकी अपेक्षा दूसरे रोज १-१ डिग्री बढ़ता जाता है। पहले हफ्तेमें कुछ प्लीहा भी बढ़ जाती है। ६-७ वें रोज सरसोंके समान पिटिकायें गलेके आसपास दिखलाई देती हैं। श्यामवर्ण रोगी होनेपर नहीं भी दिखती हैं। प्रायः पांच दिवसके बाद पीले रंगकी पतली टट्टी होने लगती है। द्वितीय सप्ताहमें ज्वर बढ़कर स्थिर हो जाता है, सुबह कुछ कम होकर

दोपहरमें बढ़ने लगता है, तथा सायंकाल तक पूर्ण रूपसे बढ़ जाता है। इस समय तन्द्रा, प्रलाप, मुखशोष, बेहोशी, कास, दौर्बल्य, पेटपर आध्मान, जिह्वा मैली फटी हुई तथा लालकिनारी युक्त हो जाती है। इस रोगमें ज्वरानुकूल धमनीमे चञ्चलता नहीं होती है। याने ज्वर की अपेक्षा नाड़ीकी गति मन्द रहती है इसके अतिरिक्त सन्निपातोद्भव भी किसी किसी रोगीको हो जाते हैं। तीसरे या चौथे सप्ताहमें ज्वर शनैः शनैः कम होता हुआ उतर जाता है। प्राचीन आयुर्वेदीय ग्रन्थोंमें इस रोगका विवरण नहीं मिलता है। परन्तु रोगमें होनेवाले लक्षणोंसे प्रतीत होता है कि यह सन्निपात ज्वर है। यह महा भयानक रोग है, बच्चों और वृद्धोंकी अपेक्षा युवक इससे विशेष आक्रान्त होते हैं। १० सालकी उम्रसे ३० सालकी आयुवाले इस रोगके शिकार अधिकतर होते हैं। ४० वर्षकी आयुसे ऊपर वालोंको कम रूपमें ही होता है। किसी किसीको पिड़िकायें विलम्बसे निकलती है तब रोगीको बहुत बेचेनी होती है। पिडिका निकलने पर शान्तिका अनुभव होने लगता है। रोगका समय शरद् वसन्त ऋतु होता है। रोगाक्रान्त होनेपर दोष वृद्धिकाल ७ से २१ दिवसके मध्यमका है। परन्तु प्रायः १० अथवा १४ दिवसके भीतर ही औपद्रविक लक्षण देखनेमें आ जाते हैं। प्रथम सप्ताहमे ज्वर तीव्र होनेपर दाने पांचवें रोज ही बाहर निकल आते हैं। किसीको दूसरे सप्ताहमे ज्वर तेज होता है तो दाने १०-१२ वें रोज देखने में आते हैं। इनका प्रारम्भ जिह्वासे होता है और जानु पर्यन्त समाप्ति होती है। पाश्चात्य विद्वान इनका कोई महत्व नहीं समझते हैं। आयुर्वेदज्ञ चिकित्सक इनका बहुत महत्व मानते हैं। साध्य रोगियोंमें दाने निकलनेपर ज्वरका वेग कम होने लग जाता है तथा अतिसारादि उपद्रव भी शान्त हो जाते हैं। यदि इन दानोंका छातीके ऊपर निकलना लोप हो जाय तो वह स्थिति भयप्रद मानी जाती है। ऐसी परिस्थितिमें दानोंको निकालनेके लिये उचित चिकित्सा शीघ्र ही करनी

औपद्रविक लक्षण

ज्वर तीव्र हो जाता है, प्रलाप। जिह्वा खरदरी लाल किनारीवाली चमकदार हो जाती है। दांतोंपर मैल जम जाता है। ओष्ठ फट जाते हैं तथा रक्त झरने लगता है। रोगीका मांस और शक्ति क्षीण हो जाती है। ज्ञान लुप्त हो जाता है यहां तक कि पार्श्वस्थित स्वजनों को पहिचाननेमें भी असमर्थ हो जाता है। प्रलापावस्था होनेपर कपड़ोंको चुनने लगता है, हाथोंमें कम्पन हो जाता है; उपरोक्त लक्षण आंतोंमें विशेषतया विकृति होनेपर ही होते हैं। यदि रोगीके आखों की पुतलियां (कनीनिका) विस्तृत हो जायं तथा नासिकासे या गुदासे रक्तश्राव, आक्षेप, प्रलापादि लक्षण हो जावे तो रोगीको अवस्था विषम समझनी चाहिये।

रोगीके ताप मानपर हर समय निगरानी रखनेकी आवश्यकता है। रोगीका तापमान प्रथम सप्ताहमें १०४-१०५ तक पहुंच जाता है। दूसरे सप्ताहमें कुछ ऊपर चला जाता है तथा तृतीय, चतुर्थ सप्ताहमें बिल्कुल उतर जाता है।

सहसा अथवा अनियमित रूपसे तापमानका बढ़ना इस बातका द्योतक है कि इसके स्थानीय उपद्रव यथा-ताजे व्रणोंका होना तथा रक्ताभि संधिसे व्रणोंका फटना, आध्मान फुफ्फुस प्रदाहादि लक्षण हो जाते हैं। तापका आकस्मिक पतन रक्तश्रावका सूचक माना जाता है।

असाध्य लक्षण

आंतमें छिद्र हो जाना, काले रंगका चिकना रक्त मिश्रित मलका होना, आंतोंमें वायुका अवरोध होकर आध्मान हो जाना, शरीरमें कम्प, नेत्रोंमें कालापन, वृक्कशोथ, फेफड़ोंमें तथा श्वासनलिकाओंमें शोथ, शीघ्र श्वासोच्छ्वास होना नाड़ीकी गति १३० से अधिक होना इत्यादि लक्षण होनेसे असाध्य रोग माना जाता है। अतिस्थूल, अति-

कृश, सगर्भा, प्रसूता, दुग्ध पीनेवाले बच्चोंको यह रोग भयप्रद होता है।

पाश्चात्य मतसे निदान

एलोपैथिक वाले इस रोगको कीटाणु जन्य मानते हैं। उनका कथन है कि वासिलस टाइफोसस (Bycil ustyphousus) जाति के कीटाणु बाहरसे रक्तमें प्रवेश करके इस रोगको पैदा करते हैं; अथवा अजीर्ण दोषमें उत्पन्न हुआ आमदोष इस रोगके कीटाणुओंको उत्पन्न करता है। फिर ये कीटाणु बड़े होकर आंत, मूत्राशय, पित्ताशय, यकृत, प्लीहा, रक्त-नलिका ग्रन्थियोंमें प्रवेश कर जाते हैं, तथा मल-मूत्र, स्वेद द्वारा बाहर भी आते रहते हैं। इसी कारण यह रोग एक से दूसरेको भी संसर्ग से हो जाता है। इसका प्रकोप काल सितम्बर तथा मार्च अप्रैल माना गया है।

रोगके प्रारम्भमें ज्वर प्रातः काल १ डिग्री घट जाता है और सायं काल २ डिग्री तक बढ़ता है। इस तरह यह धीरे २ बढ़ता है, इसमें जिह्वा मैली रहती है तथा इसके ऊपर लाल अंकुर होते हैं और किनारे लाल रहते हैं; यकृत और प्लीहा भी बढ़ जाते हैं तथा कहीं पर हृदयकी कमजोरी, शिर, वृक्कस्थान फेफड़ोंमें दाह, ठण्डापन, भ्रम, निद्रा नाश, पेटपर अफरा, दबाने पर नाभीके नीचे पेटमें दर्द होना प्रथम सप्ताहमें मलावरोध पश्चात् पतले दस्त कहीं पर प्रारम्भसे ही पतले दस्त, सायंकाल ज्वर १०४ डिग्री तक बढ़ना ऐसे लक्षण होते हैं। दूसरे सप्ताहमें छोटी आंतके अन्तः भागमें लसिका-ग्रन्थियों पर शोथ हो कर व्रण बन जाते हैं, तथा आन्त्र-पुच्छपर शोथ भी हो जाता है। तब दुर्बलाता, कम्प, प्रलापादि उप-द्रव हो जाते हैं। तथा जिह्वा और ओष्ट फट जाते हैं। दांतोंपर मैल जम जाता है। किसी किसीको शुष्ककास और रक्त मिश्रित टट्टीयें भी होने लगती हैं। ऐसे समय पर योग्य चिकित्सक द्वारा

चिकित्सा नहीं की जाती है तो रोग भयंकर रूप धारण कर लेता है, अर्थात् रक्तमें विष बृद्धि होनेसे ४-६ सप्ताह तक भी रोगका शमन नहीं होता है। तथा किसी-किसीको उदर्य्यकला पर शोथ हो कर मृत्यु तक हो जाती है।

यह रोग विद्वान चिकित्सककी व्यवस्थानुसार पथ्य पूर्वक चलने से तीन सप्ताह बीतनेपर चला जाता है। परन्तु फिर भी आंतोंमें व्रण तथा दुर्बलता अवशेष रह जाती हैं। अथवा किसी—किसीको आन्त्रस्थित कृमी भी अधिक दिनों तक रह जाते हैं। अतः चिकित्सक को चाहिये कि ज्वर शमन होनेपर भी पथ्यके समय पूर्णतया सावधानी रक्खें नहीं तो फिर पुनरावर्तक हो जावेगा।

आन्त्रिक ज्वरका विशद् रूपसे वर्णन

इसको एण्टरिक-फीवर (आन्त्रिक ज्वर) मियादी ज्वर भी कहते हैं। यदि किसी अविराम ज्वरमें सामने कनपटीमें अचानक दर्द, भूल बोलना, बहुत बेहोशी, पेट फूलना, पेट दबाने पर गड़-गड़ाना, कब्ज या अतिसार, जल्दी २ कमजोर होते जाना, ज्वरका धीरे २ बढ़ना बिलम्बसे आरोग्य होना, नाशिकासे रक्त श्राव, रक्तके दस्त, जिह्वा पहिले लाल इसके बाद क्रमसे सूखी और भूरी हो जाना, फट जाना और प्लीहा की वृद्धि, गैष्टिक ग्लैण्ड (औदरिक ग्रन्थि का फूलना, अथवा घाव, फुफ्फुस प्रभृति यन्त्रोंमें विकृति होना, इस प्रकारके कितने ही लक्षण दिखाई दें, तो उसको टाइफाइड (Typhoid) मियादी ज्वर समझना चाहिये। यह बीमारी शरद् और बसन्त ऋतुमें ही अधिकतया होती है। अस्वस्थ और रोगी मनुष्योंकी अपेक्षा सबल और निरोग व्यक्तियों पर इसका अधिक आक्रमण होता है। १५ सालसे लेकर २५ वर्षकी उम्रके भीतर ही यह बीमारी ज्यादा होती है, बच्चोंकी और ६० वर्षकी

उससे ऊपर वालोंको यह रोग बहुत कम संख्यामें होता है। बच्चोंकी बीमारीमें प्रबल उपद्रव न हों, तो मारात्मक नहीं होता है।

यह रोग संक्रामक नहीं है, इस रोगके रोगीके पास रहने वालोंको यह रोग नहीं होता है। इस रोगीके मलमें ही टाईफाइड का विष रहता है, यही मल युक्त पानी, कपड़े, बिस्तरोंके द्वारा अथवा सड़ा हुआ मल वायुके साथ मिल जाता है, तब ही इस रोग का आक्रमण होता है।

आन्त्रिक ज्वरके अन्यान्य लक्षणोंके वर्णनके पहिले इसके तापको गतिका कुछ आभास दिया जाता है। इसके चढ़ाव उतारके द्वारा ही रोग असली मियादी ज्वर टाइफाइड है या नहीं, यह बहुत कुछ समझ में आ जाता है।

तापमान सूची

१ दिन	प्रातः ९८-५	संध्यामें	१००-५
२ रे दिन	९९-५	"	१०१-५
३ रे दिन	१००-५	"	१०२-५
४ थे दिन	१०१-५	"	१०३-५
५ वें दिन	१०२-५	"	१०४-५

इसके पश्चात् से प्रायः द्वितीय सप्ताहके अन्ततक प्रति दिन संध्यामें ज्वर १०३-५ डिग्री तक चढ़ता है और सवेरे उससे कुछ कम रहता है, पर रोगकी और उसके साथ वाले उपसर्गोंकी तेजी के अनुसार परिवर्तन भी हो जाता है। इस रोगका अवधिकाल ४ सप्ताह रहता है। उनमें १ प्रथम सप्ताह से ४ चौथे सप्ताह तक रोगी में जो-जो प्रधान लक्षण दिखाई देते हैं।

उनकी सूची निम्न प्रकारसे है

१ प्रथम सप्ताह—ज्वर त्वचाका रुखापन, नाड़ीकी गति तेज। नाड़ीका स्पन्दन प्रति मिनट १०० से १२०। रातमें नाड़ीका वेग

बढ़ना, मनकी अवस्था खराब अर्थात् रोगी अपनी व्यथाओंको सम-झानेमें असमर्थ रहता है, सिर्फ सिर दर्दकी बातको ही बारम्बार कहता है, रात्रिमें भूल बकता है, पेट बड़ा हो जाता है, ताड़ना करनेपर फूले हुयेको तरह ढप-ढप आवाज होती है, पेट दबानेपर दर्द होता है। तथा गड़गड़ शब्द होता है। जोभके बीचमें सफेद मैल (कोटिङ्ग) इकट्ठा होता है, पर किनारे लाल रंगके साफ रहते हैं। इसके द्वारा रोग निर्वाचन सहज ही में हो जाता है। इसके अलावा अधिक प्यास कानमें आवाज होना, नाकसे रक्त गिरना जी मिचलाना, वमन होना प्रभृति कितने ही लक्षण पाये जाते हैं। प्रथम सप्ताहमें रोगी इतना अधिक दुर्बल नहीं होता। मुखश्री भी कान्तिहीन नहीं होती।

२ द्वितीय सप्ताह—इस सप्ताहमें रोगी अधिक दुर्बल हो जाता है ज्वर भी बढ़ जाता है, किसी समय दिनमें दो बार करके उतरता बढ़ता है। ज्वर प्रातःकाल कुछ कम रहता है, दिनमें ११-१२ बजनेके समय बढ़ता है, सन्ध्याको ५ बजे कुछ कम पड़ता है, परन्तु रातमें फिर बढ़ जाता है। जो भी हो इस ज्वरमें किसी प्रकारकी स्थिरता नहीं है। अभी देखेंगे १०२ फिर देखेंगे १०४ डिग्री, फिर एक घन्टे बाद देखेंगे तो १०१, इस तरह प्रायः ज्वरमें परिवर्तन होता रहता है। अगर ज्वर तीव्र रहता है, तो फेफड़ों और श्वास नलीमें रक्त-सञ्चय हो जाता है, इससे ब्रांकाइटिस (श्वासनलियुक्त प्रदाह) ब्रांको न्युमोनिया (फुफ्फुस प्रदाह) हो जाता है। छातीके भीतरसे सांय सांय शब्द, जल्दीसे श्वास प्रश्वास, सिर दर्द, तन्द्रा, दांतोंपर मैल इकट्ठा होना, रात्रीमें प्रलाप, मुंहमें चकाचौंधका भाव कानोंसे कम सुनना, आखोंकी पुतलियोंका फैलना, कंठ ओष्ठका खुश्क होना प्यास की वृद्धि आदि कितने लक्षण दिखलायी देते हैं। इसी सप्ताहमें आंतोमें घाव हो जाते हैं। इसीलिये प्रायः पतले दस्त, खूनके दस्त, और पेटके बिकार पैदा हो जाया करते हैं। दिन-रातमें ६-७ से

लेकर २५-३० बार दस्त आ जाते हैं, दस्त लगने पर भी पेट हल्का नहीं होता। मल पतला मटरके रंगका दुर्गन्ध युक्त होता है। कभी-कभी दालके छिलकेकी तरह हरे रंगका दस्त होता है, उसमें फेन और रक्त भी रहते हैं। कभी कभी बिल्कुल कब्ज हो जाता है और दो तीन या चार दिनोंके अन्तरसे ही टट्टी होता है। प्लीहा बढ़ जाती है, प्रथम सप्ताहके अन्तमें परीक्षा करनेपर हाथसे स्पष्ट मालूम होती है तथा मोतीझरा के दाने निकलते हैं। ये पहिले ग्रीवापर निकलते हैं, दबाने पर गायब हो जाते हैं, परन्तु फिर पहिलेकी तरह ही दिखायी देने लगते हैं इनका निकलनेका समय ७ से १२ दिनोंके बीचका है तथा रोग भोगनेके अन्ततक रहते है। किसी-किसी रोगीको मूत्र पिंडका प्रदाह (नेफ्राइटिस), हृदयावरण प्रदाह एण्डोकार्डाइटिस), मस्तिष्का वरण प्रदाह (मेनिञ्जाइटिस), प्रभृति उपसर्ग दिखलाई देते हैं। हृत्पिण्ड कमजोर हो जाता है, नाड़ीका स्पन्दन १०० से ११० होता है। इस ज्वरमें ताप मान तेज रहने पर भी नाड़ीकी गति अत्यन्त धीमी रहती है, यहां तककी नाड़ीकी गति देखकर चिकित्सक कहेंगे कि ज्वर ९९ डिग्री है, परन्तु थर्मामिटर लगाने पर १०२ १०३ डिग्री दिखलाई देगा। नाड़ीका यह लक्षण रोग निर्वाचनका एक विशेष सहायक लक्षण है इस रोगमें श्वास प्रश्वासके समय चूहेके बदनकी गन्ध जैसी गन्ध निकलती है।

३ रा सप्ताह

जिन रोगियोंमें दूसरे सप्ताहमें कोई विशेष उपद्रव नहीं होते हैं, उनका ज्वर प्रायः इसी सप्ताहके अन्तमें घट जाता है। प्रातःकाल १०० सायंकाल १०१ डिग्री रहने लगता है, इस तरहके रोगीका ज्वर प्रायः २१ दिनमें छूट जाता है। परन्तु अगर उपसर्ग दूसरे सप्ताहमें उत्पन्न होते हैं तो वे सभी अर्थात्—ज्वर, कास, दस्त रक्त

भाव, प्राय ३ रे सप्ताहके अन्तमें घटने लगते हैं। अथवा कभी-कभी ऐसा न होकर रोग कठिन रूप धारण कर लेता है।

उग्र रूप धारण कर लेता है तो रोगी विस्तरपर चित्त होकर पड़ा रहता है और क्रमशः विस्तरके किनारेकी और सरकता जाता है। स्थिर नहीं रहता है। जिह्वा पर मोटा सूखा भूरे रंगका मैल इकट्ठा होता है, तथा जिह्वा सूखे मांसके टुकड़के समान फटी-फटी हो जाती है, पेशाबकी मात्रा कम हो जाती है तथा रंग लाल गाढ़ापनयुक्त हो जाता है। कितनी ही बार पेशाब बन्द भी हो जाता है। हाथकी अंगुली कांपती है बिछावनकी चादर नोंचता रहता है, और हाथ उठाकर कुछ पकड़ना चाहता है, कानोंसे सुनाई नहीं देता, स्वकीय जनोंको भी पहिचानने नहीं सकता, नाड़ी क्षीण, दुर्बल चलती चलती। बीच-बीचमें रुक जाती है, लगातार या हल्के दस्त आते हैं, आंतों में छिद्र हो कर पेरिटोनाइटिस (Petronitis) हो जाता है। ज्वर १०४ से १०५ डिग्री तक रहता है, पेटका आध्मान नहीं घटता, आंतोंमें छिद्र होनेसे शीताङ्ग होकर रोगी मर जाता है, किसी समय केवल ज्वरके द्वारा ही उपद्रवोंके न होते हुए भी एका-एक रोगी की मृत्यु हो जाती है।

चौथा सप्ताह—उपसर्गोंके घटनेपर इस सप्ताहमें अक्सर ज्वर घट जाता है, जिह्वा साफ हो जाती है, तमाम उपद्रव घट जाते हैं और क्षुधा बढ़ जाती है। इसको आरोग्योन्मुखि अवस्था कहते हैं। इस समय रोगीको सावधानी पूर्वक रखना चाहिये, नहीं तो बीमारी दोहराई जाती है। यदि उपद्रव पूर्ण रूपसे नहीं घटे हों तो और २-१ सप्ताहका समय लग जाता है और ज्वर भी धीरे २ घट जाता है।

आन्त्रिक ज्वरमें प्रधान उपसर्ग— हिक्का, पेटका फुलाव, स्वर-यन्त्रमें विकृति, जिह्वास्तम्भ, कर्णमूल शोथ, मस्तिष्का वरण प्रदाह

(मेनिञ्जाइटिस), कामला, तीव्रज्वर, रक्तके दस्त, मूत्रकृच्छ्र, मानसिक विकारादि इनमेंसे गर्दन तोड़, हिचकी, रक्तमिश्रीत मूत्र होना, बहुत ही बुरा लक्षण है।

इस रोगमें होने वाले विपत्ति-जनक उपद्रवोंका विवरण

रक्तश्राव—यह फेफड़े या नासिकासे अथवा आंतोंमें व्रण से होता है। कभी कम या कभी अधिक परिमाणमें मल द्वारसे होता है, एका-एक अधिक मात्रासे होने पर रोगीकी हालत बिगड़ जाती है। आंतोंके भीतर रक्त श्राव होनेसे रोगीको मूर्च्छा और मृत्यु तक हो जाती है, अथवा शीताङ्ग हो जाता है।

अशक्ति- बहुत पतले दस्त लगनेसे हो जाती है।

उदर्य कला शोथ (पेरिटानियम) आंतोंको ढकने वाली कलामें शोथ होनेपर पेटमें तीक्ष्ण शूल उत्पन्न हो जाता है, तथा पेट फूल जाता है, जी मिचलाता है या वमन, मुखकान्ति विहीन हो जाता है, ज्वर बढ़कर या शीताङ्ग होकर २-३ रोजमें ही मृत्यु हो जाती है।

निमोनिया प्लुरिसी—के होने से बिमारीके शीघ्र आराम होनेमे बाधा पड़ती है या अवसन्नता आकर मृत्यु हो जाती है। इनका बिस्तृत विवरण रक्तष्ठीवि अधिकारमें देखिये।

पुनरावर्तक--कितनी ही बार रोग नष्ट होनेपर पथ्यादिक दोषों से दुबारा हो जाता है। कमजोरके लिये यह बहुत कष्टदायक माना है।

मिथ्यादि ज्वर—(टाइफायड ज्वर) के साथ बहुतसे स्थानों पर टाइफस, टाइफो मलेरिया (सन्निपातिक मलेरिया ज्वर) का भ्रम हो जाता है, उनकी प्रभेद जानेनेकी विधि नीचे लिखी जाती है।

टाइफस (प्रलापक)—इसमें ज्वर तथा दूसरे उपसर्ग एका-एक

बढ़ जाते हैं। ज्वर मान १०४ से १०६-७ डिग्री तक बढ़ जाता है। प्रायः ज्वर घटता नहीं है, रोग दिनों दिन भयङ्कर रूप धारण करता है। पांचवें या छठवें रोज मच्छर काटनेकी तरह गुलाबी दानें निकल आते हैं। तथा बिमारीको अन्तिम अवस्था तक रहते हैं, अधिकतर मलावरोध रहता है। पेटके दाहिने तरफ दबानेसे वेदना और गुड़-गुड़ शब्द नही होता, सिरमें दर्द रहता है, प्रायः सात आठ दिवसके बाद ज्वर छूट जाता है। इसका अवधि काल १४ से २१ दिनका है। इसका प्रधान उपद्रव निमोनियां है।

आन्त्रिक ज्वर (टाइफायड) में ज्वर प्रातः काल घटता है तथा मध्याह्नमें बढ़ता है। साधारणतः १०४ से १०५ डिगरी तक ज्वर बढ़ता है। ७-१२ दिवसके बीच मोती झरेके दानें निकलते हैं और रोगावस्थामें हीं गायब हो जाते हैं। इसमें प्रायः पतली टट्टी हुवा करती हैं, किसी-किसीको मलावरोध भी होता है।

दाहिने पेटके तल पेटपर दबानेसे वेदना सहित गड़गड़ शब्द होता है। कनपटीमें अधिक वेदना होती है। ज्वर धीरे धीरे घटकर छूटता है। इसकी अवधि २१ से ४२ दिवस तक की है। इस रोग में एक तिहाई रोगियोंको आंतोंसे रक्तश्राव हो जाता है। यह तथा पेरिटोनाइटिस मारात्मक उपद्रवहोते हैं।

टाइफो मलेरिया—इसमें एकाएक ज्वर बढ़ जाता है—याने कुछ ही समय के भीतर ही ज्वर १०३-१०४ डिग्री तक चढ़ जाता है। इसमें शीतपूर्वक एकाएक ज्वर चढ़ता है। ज्वरकी गति आन्त्रिक ज्वरकी तरह नियमित रूपसे नहीं होती। शरीरपर प्रायः दानें दिखाई नहीं देते त्वचा पीली रहती है, यकृत्‌में वेदना होती है और प्लीहा बहुत बढ़ जाती है, इस रोगमें मलेरिया और टाइफाइडके सभी मिश्रित लक्षण दिखायी देते हैं। बहुतसे रोगियोंमें टाइफाइडकी अवधि व्यतीत होनेपर मलेरियाका लक्षण प्रतीत होता है।

वात ज्वर—इस ज्वरमें भी किसी किसी समय अङ्ग प्रत्यङ्गमें खूब दर्द हो जाता है, टाइफाइडमें भी इस तरहका दर्द रहता है, परन्तु वात ज्वरमें सन्धिस्थानोंका दर्द घट जानेपर फिर अविराम गतिसे ऊंचा ज्वर आने लगता है, इसके साथ ब्राङ्काइटिस भी रहता है, तथा ये लक्षण टाइफाइडके साथ भी रहते हैं, परन्तु इन दोनोंमें अन्तर यही है कि वात ज्वरमें टाइफाइडके उदर और आंतोंसे संबन्ध रखनेवाले तथा अन्य कितने ही लक्षण बिलकुल ही नहीं रहते, यही देखकर इसका प्रभेद जाना जाता है।

सेरिब्रो स्पाइनल मेनिञ्जाइटिस—इस बीमारीकी प्रारम्भावस्था में कितने ही लक्षणोंके साथ आन्त्रिक ज्वरका सादृश्य दिखायी देता है। परन्तु मेनिञ्जाइटिसमें प्रथम आक्रमणमें उदर नौकाकृति हो जाता है या उदरमें तनावका भाव रहता है, श्वास प्रश्वास लम्बा या अनियमित रहता है, तथा भयंकर सिर दर्द, प्रलाप, मन्द ज्वर, नाड़ीमें कोमलता रहती है, और ग्रीवामें दर्द लगातार वमन तथा ग्रीवामें कड़ापन आदि लक्षण होते हैं। टाइफायडमें उपरोक्त लक्षणोंका अभाव ही होता है।

एपेडेमिक इन्फ्लुएञ्जा—पक्वाशय अति आक्रान्त होनेवाले रूप। इस बीमारीमें भी टाइफायडसे भ्रम हो जाता है, पेट फूलना, पेटकी गड़गड़ाहट प्लीहा वृद्धि, अतिसार, ज्वर प्रभृति टाइफायडके लक्षण दिखाई देनेपर भी इस रोगमें ज्वर एकाएक ही १०३-१०४ डिगरी तक हो जाता है और एक सप्ताहके भीतर ही छूट जाता है—ऐसे लक्षण टाइफायडमें नहीं होते हैं। तथा इन्फ्लुएञ्जामें प्रारम्भावस्था से ही कमजोरी अधिक आ जाती है। लेकिन टाइफायडमें दुर्बलता धीरे धीरे होती है।

पाइमिया सेप्टिसिमिया सूतिका ज्वर

इस रोगमें आन्त्रिक ज्वरके समान लक्षण होनेपर भी इसमें वमन

और अतिसारअधिक होते हैं तथा नाड़ीकी गति बहुत तीव्र रहती है। पियोर पेरल सेप्टिसिमिया (Pure Pearl Septicimia) सूतिका ज्वर यह बीमारी सूतिका गृहमें स्त्रियोंके प्रजननके समय रक्त दुष्टिसे हो जाती है इसमें वमन, अतिसार, तीक्ष्ण ज्वर, नाड़ीमें चञ्चलता तथा नासिका से आन्त्रिक ज्वरकी तरह रक्तश्राव भी हो जाता है, परन्तु कानोंमें बधिरता नहीं होती है।

काला आजार—

इसमें मन्द अविराम सन्ततकी तरह ज्वर होनेपर भी ज्वर २४ घन्टेमें २ बार चढ़ता है, उदर विकार तथा फुफ्फुस सम्बन्धी कोई उपसर्ग नहीं होते हैं, सिर्फ प्लीहा बढ़ जाती है और बहुत कड़ी रहती है।

पथ्य और चिकित्सा

ज्वरावस्थाके समय इस बीमारीमें औषधियोंको अपेक्षा पथ्य और सुश्रुषा पर अधिक लक्ष्य रखना चाहिये। इस आन्त्रिक ज्वरमें पेटकी बीमारी और पेटमें आध्मान एक प्रधान उपसर्ग है और यह प्रायः प्रारम्भसे ही दिखलायी देने लगते हैं, इसलिये बहुत आसानी से पचनेवाली हल्की वस्तुओंके खाने पीनेका प्रबन्ध करना चाहिये, कितने ही चिकित्सकोंका मत है कि इस रोगमें दूध ही प्रधान पथ्य है, परन्तु बहुतसे रोगियोंको दूध ठीक २ नहीं पचता है, पेट फूल जाता है और पतले दस्त आने लग जाते हैं। आयुर्वेदका भी सिद्धांत है कि —

जीर्णज्वरे रसेक्षीणे क्षीरं स्यादमृतोऽपम्
तदेव तरुणेपीते विषवत्हन्ति मानवम्

इसलिये प्रथम सप्ताहमें दूधका पथ्य बिल्कुल ही नहीं देना चाहिये। इस रोगमें रोगीको जलीय (पानीकी तरह पतली चीजें) ही पीनेको

देनी चाहिये। यदि पतले दस्त आते हों या दस्तमें टूकड़ा टूकड़ा सफेद छीनेकी कोई पदार्थ निकलता हो तो दूध बिल्कुल मना है। रोगीको जलको बार्ली, जलका आरारुट, लवङ्ग शृतजल ठण्डा करके अधिक मात्रामें पिलाना चाहिये, ज्वरकी तीव्रावस्थामें— रक्तमें जलीय अंश कम रहता है, इस समय रोगीको अधिक मात्रामें अगर जल पीने को दिया जाता है तो जल्दी फायदा होता है, इसके अलावा अधिक जल पिलानेसे पेशाबके द्वारा आन्त्रिक ज्वरका विष निकल जाता है। इसलिये दिन रातमें ऽ२॥ सेर जलीय पदार्थ रोगी को पिलाना उचित है। जलबार्ली, जल आरारुटके अलावा छीनाका पानी (Whey) भी विशेष लाभदायक है। इसको तैयार करनेके बाद २-३ घन्टेसे ज्यादा न रख छोड़े, प्रत्येक बार नया तैयार करके पिलाना ही उत्तम है।

फलोंमें बीदाना रस, या मोसम्बीका रस गरम बर्तनमें ढालकर गरम किया हुआ ही देना चाहिये। तथा ग्लूकोज "डी" १-२ तोलाको गरम किये हुये जल में मिलाकर या मिश्रीका पतला सर्बत १-१ चम्मच करके इच्छानुसार दिन रातमें पीनेको देना चाहिये। कोई भी वस्तु चबाकर देना एकदम मना है। यदि छीना जलका साधन अच्छा हो तो बार्ली प्रभृति श्वेत सार न दें।

आन्तरिक ज्वरके प्रधान उपसर्ग--तीक्ष्ण ज्वरके कारण प्रलाप छटपटाना, इधर उधर भागना इत्यादि हैं। खूनके दस्त, बहुत अधिक आध्मान, अधिक पतले दस्त, आंतोंमें छिद्र हो जाना, मस्तिष्कावरण प्रदाह, रक्तका पेशाब ये सब उपद्रव बहुत हो भय कारक है। अगर ज्वर अधिक बढ़ जावे तो (स्पञ्जिग) शरीरको गरम जलमें तौलिया भिगोकर पोंछ देना और माथेपर दशाङ्गलेपकी पट्टी या यूडीकोलन को ठण्डे जलमें मिलाकर पट्टी अथवा आइस बैगका प्रयोग करना चाहिये।

स्पंजिग (शरीरको पोंछना) शरीरका ताप जब १०२ डिग्री से १०३ १०४ डिग्री हो, उस समय जलको गरम करके ठण्डा होनेपर एक टूकड़ा फलालेन, गमछा या तौलिया जलमें भिगोकर और निचोड़ कर, प्रथम हाथ, पैर शाखा अंग इसके बाद दूसरे अंगोंको पोछकर, साथ ही-साथ एक दूसरे कपड़े से भीगे-स्थानको पोंछकर गरम कपड़ेसे ढँक दे, इस क्रियाके समय खिड़की दरवाजे सब बन्द कर देना चाहिये, जिससे उस समय किसी तरह हवा न लग जावे और आध घन्टे बाद खोल देना चाहिये। यदि ज्वरके साथ निमोनिया भी रहे, तो पीठ और छातीको छोड़कर अन्य स्थानोंको ही पोंछना चाहिये। अगर ज्वर किसी भी समय घटता नहीं हो तो दिनमें २-३ बार स्पञ्जिङ्ग करना चाहिये। इससे ज्वर अवश्य ही १-२ डिगरी कम हो जायगा। अगर घर वाले इस क्रियाको पसन्द नहीं करते हों तो वहां पर आइस बैग, यूडी-कोलन, अथवा सिर्काकी पट्टी या नीम्बू रस मिश्रीत जलकी पट्टी, नरसार, कल्मी शोरा की पट्टीका ही उपयोग करे। निमोनिया आदि उपसर्गोंको देखतेही छातीको रूईके द्वारा ढ ँक देनी चाहिए। जब तक रोगी पूरी तरहसे आरोग्य न हो जाय, तब तक विस्तरसे उठने न देना चाहिये, बिस्तर हमेशा साफ सुन्दर रहना चाहिये।

कब्ज— आन्त्रिक ज्वरावस्थाके समय बहुतसे रोगियोंको मलाव-रोधके साथ पेट फूला रहता है, ऐसे समय २-३ रोजके अन्तरसे रोगी के मल द्वारमें ग्लीसरीन सपोजिटरी या नहानेके साबुनका टूकड़ा १॥ इञ्च लम्बा कलमकी नोककी तरह काट कर उसमें थोड़ा घृत या शहद लगाकर मल द्वारमें प्रवेश कर २०-३० मिनट तक छोड़ देना चाहिये, और मल द्वारको हाथसे दबाके रखना चाहिये, जिससे बत्ती निकल न जावे। इस विधिसे सहज ही में मल निकल जायगा। टाइफायडके रोगीको जुलाब कभी भी न देना चाहिये। यदि इस

२४ घन्टेमें ८-१० बार हो होता हो तो रोकनेकी चेष्टा नहीं करनी चाहिये। परन्तु हमारे समाजमें दस्तोंका लगना बहुत बुरा लक्षण समझा जाता है, प्रायः दस्तोंका लगना सुनते ही घर वाले तथा इष्ट मित्र सबही चिन्तित हो जाते हैं और चालू इलाज या चिकित्साको बन्द कर देते हैं। आयुर्वेद मतानुसार भी अधिक दस्त लगना इस रोगमें हानि कारक है, परन्तु एकदम रोक देना अत्यन्त ही भय प्रद है। अवरोधक औषधियोंका प्रयोग करनेसे आध्मानादि कितने ही उपद्रव खड़े हो जाते हैं। अतः जहां तक हो पाचन क्रिया द्वारा ही अतिसारको बन्द करना चाहिये। मूत्रकी तरफ विशेष खयाल रखना अत्यावश्यक है। मूत्रावरोध होनेपर शीघ्रता पूर्वक मूत्रल औषधियों द्वारा अथवा वस्ति प्रयोग द्वारा मूत्रको निकालना चाहिये। अगर मलावरोधके कारण उदरमें वायु सचित होकर मूत्रका अवरोध हुआ हो, तो दारुषट्क लेप, यवक्षारको आयामकाञ्जिक में भिगो कर वस्ति स्थान पर शीत परिसेक, अथवा नरसार, कलमी शोरा, हजरतबेरका वस्ति स्थानपर लेप करना चाहिये। अगर मलावरोध हो तो ग्लेसरीन-सपोजिटरीसे मलको निकाल देवें इससे स्वतः ही मूत्रोत्सर्ग हो जायगा। आधुनिक चिकित्सक ज्वरकी प्रारम्भावस्था में विरेचन देते हैं, इससे रोगीकी हालत बहुत कमजोर हो जाती है। आयुर्वेदका ऐसा सिद्धान्त नहीं है। वहां तो सर्वप्रथम यही लिखा है कि

ज्वरादौ लंघनं प्रोक्तं ज्वर मध्येतु पाचनम्।
ज्वरान्ते रेचनं दद्या देषः सर्वत्र निश्चयः॥

इसीलिये सन्निपातिक रोगमें जैसी आयुर्वेदीय चिकित्सा उपयुक्त होती है वैसी अन्य नहीं। यद्यपि पाश्चात्य चिकित्सकोंने नये-नये आविष्कार किये हैं जैसे आर्यो माईसीन।

क्लोरोमाइसिटीन (Chloromicitine)

आदि औषधियोंका प्रयोग चालू किया है, परन्तु यह भी एक भारतवासियोंके लिये नुकसानकारक ही हैं। आयुर्वेदमें सन्निपात रोगकी अनेकों औषधियां वर्णित हैं, परन्तु मैंने जिनजिन औषधियोंको प्रयोगमें लाकर अनुभव प्राप्त किया है वे निम्न हैं। इनमेंसे योग्य चिकित्सक दोषानुसार काममें लावें। जैसे संजीवनी वटी, ब्राह्मीवटी, लक्ष्मी विलास रस, आनन्द भैरव रस, सौभाग्य वटी, रसराज रस, वृ० वातचिन्तामणि रस, वातविध्वंसन रस, चतुर्भुज रस, सर्वाङ्गसुन्दर, सिद्धप्राणेश्वर रस, लवङ्गादि वटी, अगस्त्य सूतराज रस, सूतशेखर रस, प्रवाल भस्म, मुक्ता भस्म, स्वर्णमाक्षिक भस्म, अर्जुनाभ्र, भीमसेनी, कस्तूरी, दशमूलक्वाथ, अष्टादशाङ्ग क्वाथ, तगरादि क्वाथ, षडङ्ग पानीय आदि हैं।

तीक्ष्णावस्थामें मकरध्वज, हेमगर्भ पोट्टली रस जैसी औषधियां भी प्रयोगमें लानी पड़ती हैं।

आंतोंसे रक्तस्राव

आन्त्रिक ज्वराक्रान्त रोगीको जब आंतोंसे रक्तस्राव होने लग जावे तब उसको पथ्यमें जलके सिवाय और कोई वस्तु खानेको न देना चाहिये। हमारे यहां ऐसे समयमें कत्था और लाक्षाका क्वाथ बनाकर ठण्डा करके पीनेके लिये जलकी जगह दिया जाता है। इससे रक्तस्राव बहुत ही शीघ्र बन्द हो जाता है। ऐसे रोगीके पेट को सफेद वस्त्र (फलालैन) से बांध रखना चाहिये। आन्त्रिक ज्वरमें यह एक सांघातिक उपसर्ग है, इससे रोगीका ज्वर एकाएक छूटकर शीत आजाता है, और पसीना आनेके कारण रोगीके हार्टफैल होने की सम्भावना हो जाती है, अतः ऐसे समय शीघ्रातिशीघ्र सावधानीसे इलाज करना चाहिये।

हार्टफैल किसे कहते हैं ?

जब यह देखें कि किसी बीमारीकी अन्तिम अवस्थामें रोगीका श्वास प्रश्वास जल्दी जल्दी तेजीसे चलना आरम्भ हो गया है और हृत्पिण्डका धुक्-धुक (लब-डब) शब्द स्पष्ट सुना नहीं जाता है, केवल सों-सों शब्द ही सुनाई पड़ता है, हाथ-पैर और सम्पूर्ण शरीर ठण्ढा, नाड़ी अति क्षीण है, पर तेज चल रही है, चेहरे पर बूंद-बूँद पसीना होता है, उसी समय समझ लेना चाहिये रोगीका मृत्युकाल सन्निकट है। हार्ट फैल द्वारा होनेवाली मृत्युका यही प्रबल लक्षण है।

यदि ज्वर अचानक ९६-९७ डिग्री हो जाये, पेटमें बहुत यन्त्रणा हो, पेट फूल जावे, शीत आजाये, नाड़ी और श्वास-प्रश्वास अति तेज हो तो उसी समय समझ लें कि आंतोंमें छेद हो गया है। ऐसे समय हार्ट फैल होनेकी सम्भावना ही अधिक होती है।

नाड़ी— इस रोगमें नाड़ीपर हमेशा सतर्क दृष्टि रखनी पड़ती हैं। क्योंकि इस रोगमें सभी समय नाड़ी और हृदय बिगड़नेकी सम्भावना रहती है, इसलिये दोनों समय नाड़ी देखना अत्यावश्यक है। नाड़ीकी अवस्था किसी समय बिगड़ती हुई दिखलाई दे तो वहां पर मृतसंजीवनी सुरा, या मृगमदासवका प्रयोग शीघ्राति-शीघ्र करना चाहिये। एलोपैथिक वाले भी नं० १ ब्रान्डी दिया करते हैं। इससे नाड़ीकी दुर्बलता दूर हो जाती है। टाइफायडमें नाड़ीकी गति १ मिनटमें १३० या इससे अधिक हो जाय तो बहुत ही चिन्ताकी बात है। इसके अलावा और भी कई विपत्तिकी आशंकाके लक्षणों को याद रखना चाहिये। नाड़ीकी तरह घड़ीका सेकेण्ड कांटा देखता हुआ १ मिनट तक पेट पर हाथ रखकर पेटका चढ़ना उतरना गिने, यही श्वास-प्रश्वासके जाननेकी विधि है। गिनने पर श्वास-प्रश्वास ३० से अधिक, नाड़ी १३० या इससे अधिक, एक तरफ टकटकी लगाकर देखना, अज्ञानता, पुकारने पर उत्तर न देकर केवल

देखतेही रहना, बिस्तर से उठकर भागने की चेष्टा, भूल बकना, मारने काटनेके लिये चेष्टा करना, बिछावनको फाड़ना, अनजानमें टट्टी पेशाब करना, जिह्वा काली या मैल युक्त होना, जीभ कांपना और बाहर न निकाल सकना ज्वरका ताप प्रातः १०४ सायं १०५ डिग्री कुछ दिनों तक एक भावसे रहना तथा शय्याक्षत (bed sore) का होना, इत्यादि हैं। शय्याक्षत होने पर उस स्थानपर गरम पानीसे सेक करना चाहिये तथा स्प्रोटसे साफ कर ग्लेसरीन या वेसलीन या शतधौत घृत लगाना चाहिये। इस बीमारी में किसी-किसी रोगीको रक्त मिश्रित पेशाब भी हो जाता है, यह होना बहुत ही खराब लक्षण है।

साधारण चिकित्सा

अगर शरद् ऋतुमें मोतीझरा को बीमारी हुई हो तो शुरूमें संजीवनी वटी या ज्वर संहार, प्रवाल, मुक्ता, प्रातःसायं षडङ्गपानीय क्वाथके साथ देवें; मध्याह्नमें वज्रक्षार जलके साथ दें, रात को नींद नहीं आती हो तो बृ० वातचिन्तामणि १ रत्ती जटामांसी जवासाके फान्टमें मिश्री मिलाकर देवें। इस प्रयोगसे पित्तका शमन जल्दी ही होकर रोगी जल्दी ही स्वास्थ्य लाभ करता है।

अगर वसन्तमें यह उपरोक्त बीमारी हुई हो तो लक्ष्मीनारायण रस या लक्ष्मीविलासरस, ज्वर संहार, कस्तूरी भैरवादि तेज औषधियोंका प्रयोग करना चाहिये। अनुपानमें दशमूल क्वाथ, तुलसीरस मधु, पान रस मधुके अनुपानसे सेवन कराना चाहिये। म० रा० चन्द्रामृत, शृंग्यादि अष्टाङ्गावलेह, तालिशादि चूर्ण आदि औषधियोंके प्रयोगसे सत्वरही लाभ हो जाता है।

विशेषावस्थामें चिकित्सा

प्रलाप, स्वेद शुष्ककास आन्त्र शोथ, और व्रण शमनके लिये

प्रवाल भस्म, मुक्ता भस्म. मकरध्वज, अर्जुनाभ्र आदि औषधियों का प्रयोग ऊपरकी दवाइयोंमें संयोग कर देना चाहिये।

वायु जनित तीव्र प्रलाप हो तो रसराज, कृष्णचतुर्मुख, योगेन्द्र रस, वृ० वात चिन्तामणि, वात विध्वसन रस आदि औषधियों का प्रयोग तगरादि क्वाथके अनुपानसे सेवन कराना चाहिये। इससे प्रलापका शीघ्र शमन हो जाता है।

शुष्ककास और फेफड़ोंकी निर्बलतामें पित्त कफोल्वण सन्निपात में कहा हुआ पर्पटादि क्वाथ, श्रृंग्यादि चूर्ण, श्रृंग भस्म, लक्ष्मी विलास, मरिच्यादि वटी, चन्द्रामृत रस, पिप्पली चूर्ण, अमृतासत्व, टंकणक्षार, नरसार, लवङ्गादि चूर्ण, सितोपलादि चूर्ण आदि औषधियोंके संमिश्रणसे अच्छा फायदा होता है।

नाक, मुख या गुदासे रक्त श्राव हो तो प्रवाल पिष्टी, स्वर्ण माक्षिक भस्म, गिलोय सत्व, गैरिक चूर्ण, स्फटिक भस्म, रक्तपित्त कुलकुठार, चन्द्रकला रस, मुक्ता पिष्टी, शुक्ति भस्म, कुर्सकहरबा आदि औषधियोंका संमिश्रण आयापान स्वरस, वासास्वरस मधु, लाक्षा क्वाथ आदिके अनुपानसे देना चाहिये।

मलावरोध हो तो ग्लेसरीनकी वत्ती या मधु १ औंस गरमजल २ औंस मिलाकर वस्ति प्रयोग करे। अथवा एरंड तेल पेटपर चुपड़ दे। इससे आरामसे टट्टी हो जाता है। सुखपूर्वक दाने निकालनेके लिये— मुक्तापिष्टी १ रत्ती, श्रृंगभस्म २ रत्ती खूबकलाके क्वाथसे देनेसे ही दबी हुई फुन्सियां जल्दी ही बाहर आ जाती हैं।

राजपूतानेमें एतदर्थ ब्राह्मीवटी, लवङ्ग, जायफल, जावित्री, सोंठ, अकरकरा, ब्राह्मीपत्तीके क्वाथसे दिया जाता है। इससे फायदा भी बहुत अच्छा होता है इस रोगमें रोगीकी शक्ति अनुसार १ से २१ लौंग जलमें पीस उबाल, छानकर प्रातः सायं देनेसे दाने सुखपूर्वक निकल आते हैं, प्यास कम हो जाती है, दस्तकी दुर्गन्धि भी कम हो जाती है।

अग्नि भी प्रदीप्त हो जाती हैं। लौंगके बराबर इस रोगकी कोई भी दवाई नहीं है। इसका अकेलोका प्रयोग ही इस रोगसे छुटकारा दिलवा देता है। अगर दवाके साथ दिया जाय तो और भी अच्छा फायदा होता है।

प्यास अधिक हो तो छिलका सहित बड़ी इलायची और कमलगट्टे को भूनकर शहदमें मिलाकर चटावे।

आफरा और अन्यवात विकार हो जाय तो हिंग्वाष्टकवटी, चन्द्रप्रभावटी, यवक्षार, वज्रक्षार, अजवाइन अर्क आदि औषधियोंका प्रयोग करे तथा पेटपर दारुषट्क लेप, रसोनादिवटीका लेप तथा गरम पानीका सेक करे, या मकोय बीज, अजवाइन, हींगकी पोटलीको गरम करके सेक करे या लेप करे। अगर पेशाब कम होता हो तो नरसार कलमीशोराको पुरातन घृतमें मिलाकर लेप करे या उपरोक्त द्रव्योंको आयाम कांजिकमें मिलाकर पट्टी पेटपर रक्खें। अथवा बंगाल में पाना नामक एक औषधि पुराने तलावोंमें मिलती है उसका लेप करे इसको आयुर्वेदमें मूषाकर्णी कहते हैं। यह पुराने तलावोंमें मिलती है। इसकी पहिचान यही है कि यह जलके ऊपर तैरती रहती है पत्ते चूहेके कानके सदृश होते हैं। जड़ चूहेकी पूंछके समान होती है।

अगर भयंकर परिमाणमें अतिसार बढ़ जाय तो लवङ्गादिवटी, सिद्ध प्राणेश्वर, जातिफलादि वटी, गंगाधर चूर्ण, उ० सर्वाङ्गसुन्दर, महागन्धक, रसपर्पटी आदि औषधियां नागरमोथा स्वरस, कशेरुस्वरस पुटपक्वदाड़िम स्वरसके अनुपानसे या जायफल, बेलगिरी, अतीश, सुपारी आमकी गिरीको जलमें घिसकर मिश्री डालकर अनुपान रूपमें देनेसे अतिसारावस्थामें बहुत ही अच्छा फायदा होता है।

साधारण अनिद्रामें जटामांसी, जवासाके अनुपानसे बृ० वातचिन्तामणि देवें या काकमाचीका मस्तक पर प्रलेप करे।

प्रलाप जनित अनिद्रामें निद्रायुक्त कुमुदेश्वर जटामांस्यादि फान्टसे दे या हमारे यहांका प्रस्वप्नार्क दें, शिरपर शीत उपचार बर्फकी थैली की व्यवस्था करे।

सिर दर्द और व्याकुलता पर। यदि ज्वर १०५ हो तो मस्तिष्ककी रक्षाके लिये बर्फकी थैली लगाव अगर बर्फ उपलब्ध नहीं हो तो नरसार और कलमीसोराको ठन्डे पानीमें मिलाकर शिरपर पट्टी भिगोकर लगावे या कोलन वाटरकी पट्टी या दशाङ्ग लेपकी पट्टी लगावे या पुरातन घृत पानरस मिलाकर लगावे, इससे प्रलापादि उपद्रव भी शान्त हो जाते हैं तथा ज्वर भी हल्का हो जाता है।

हृदय दौबल्य शमनार्थ

यदि हृदयमें शिथिलता आ जाय, तो हृदय दौर्बल्य, दाह शमनके लिये तथा शक्ति बढ़ानेके लिये पूर्ण चन्द्रोदय रस, महाशक्ति रसायन वटी, भीमसेनी कर्पूर, वृ० कस्तूरो भैरव, जवाहिरमोहरा, अम्बर, मुक्ताघटित औषध तथा कस्तूरी, प्रवाल, अर्जुनाभ्रक, मुक्ताभस्म, संजीवनी सुरा, मृगमदासव आदि औषधियोंका प्रयोग करे।

विशेष दौर्बल्य हो तो हेमगर्भपोट्टली रसकी व्यवस्था करें, इसके प्रयोग से हृदयक्षीणता, नाड़ीकी मन्दता, प्रस्वेद, हाथ पैरका ठण्डापन, ये सब लक्षण दूर हो जाते हैं।

आंतसे रक्तश्राव हो, तो पेटपर बर्फकी थैली रखकर शीतलता पहुंचावे और खानेकी औषधिमें कर्पूर रस आध ½ रत्ती मिलाते रहें। अन्य गरम औषधियों को बन्द करके मुक्तापिष्टी, भीमसेनी आदि शीतवीर्य चूनेवाली औषधियोंका प्रयोग आयापान स्वरस, वासास्वरस, लाक्षाक्वाथ; दूर्वास्वरसके अनुपानसे करें। रोगीको सीधा लेटाये रखे, उठना बैठना बन्द रखे, उदुम्बरसार, लाक्षाक्वाथमें शु० फिटकिरी मिलाकर गुदाके रास्तेसे धीरे-धीरे १-१ बूंद करके रबड़ नलिकाके द्वारा

पेटमें पहुंचावे और कुछ समय तक भीतर रखने की चेष्टा करें इससे रक्तश्राव अवश्य बन्द हो जाता है। आंतसे रक्तश्रावका उपद्रव उठ बैठ करनेसे अथवा विरुद्ध उपचार या अपथ्य सेवनसे तीसरे सप्ताहमें होता है। यह बहुत ही भयंकर उपद्रव है इसकी तरफ पूरी सावधानी रखनी चाहिये। आंत फटनेपर मुँहसे कुछ भी खानेको नहीं दे। अगर आवश्यकता समझे तो ईशबगोलको गरम जलमें मिलाकर ठण्डा होने पर थोड़ा अनार का रस मिलाकर या मिश्रीका शर्बत मिलाकर १-१ चम्मच करके दिनमें ४ बार देवे।

मूत्रावरोध हो जाय तो रबड़की नलीसे मूत्र निकालना चाहिये।

मूत्रमें जलन हो तो उशीरासव, तृणपचमूल, गोक्षुर अर्कका प्रयोग करे।

भयङ्कर कफ बृद्धि हो जाय तथा बेहोशी हो तो समीरपन्नग रस, कस्तूरी भूषण रस, चतुर्भुज रस, शृंग भस्म, मल्ल सिन्दूर आदि औषधियोंका उचित अनुपानके साथ प्रयोग करे।

सर्वाङ्गमें कम्प, हनुस्तंभ, जड़ता आदि उपद्रव हो तो रसराज, महायोग राज, कपीलू आदि औषधियोंका प्रयोग करे।

प्रस्वेद अधिक आवे तो सोंठ, आरा रोट, चना भूना हुआ का पाऊडर बनाकर मालिस करें। प्रतापलंकेश्वर रस औषधिके रूपमें खानेको देवे। ज्वर उतरने पर मालतीबसन्त, नवायस, मुक्ता, आदि औषधि बल बढ़नेके लिये देवे।

मन्थरज्वर चिकित्सा उदाहरण

रोगीका नाम सुन्दरी देवी, उम्र २५, जाति अग्रवाल, घरका पता ७४ नं० तुलापट्टी, मदन लाल खेतान। इसको प्रारम्भमें ज्वर कुछ ठन्ड लग कर हुआ था, परन्तु हल्का होने पर इसने भोजन कर लिया। उसी रोज शामको ३ बजे फिर ठन्ड लगकर ज्वर १०५ डिग्री हो गया। रात भर ज्वर बना रहा सुबह १०४ डिगरी हुआ, बस्ते

भर बाद फिर १०५ हो गया, तब घर वालोंने डाक्टर नवरत्नको बुलाया और उसका इलाज चालू कर दिया। डाक्टरने मलेरिया समझ कर कुनाइनका इन्जेक्सन दे दिया। २ इन्जेक्सन देनेके बाद अतिसार चालू हो गया, तथा टेम्प्रेचर भी पसीना आकर उतर गया परन्तु ज्वर उतरते ही रोगीको घबराहट बढ़ गई। चिल्लाना शुरू कर दिया। तब घर वाले घबराये और गोस्वामी गुलराजजीको बुलाकर लाये और उनका इलाज चालू कर दिया, जिस दिन ज्वर उतरा वह सातवां दिन था, उसी शामको ७ बजे मुझको भी बुलाया जिस समय मैं गया उस समय पसीना बहुत जोरसे आ रहा था, ज्वर ९५ डिगरी था। हाथ पैर ठन्डे हो रहे थे, कम्प था, टट्टी १०—१५ पतली हुई थी। नाड़ीकी गति १२० थी तथा श्वास गति ३४ थी। दोनों तरफ कफ फेफड़ोंमें जमा था, पेशाब टट्टीके साथ ही थोड़ा २ होता था। अस्तु मेरे को बुलानेके लिये रोगीका बहनोई जो गरीब हालतमें था वही आया था। उसीके दबावसे घरवालोंने दवा चालू की।

ता० १५-८-४९ कस्तूरी भैरव १ रत्ती
प्रवाल १ रत्ती
लवङ्गादि २ गो०
मुक्ता १ रत्ती
भीमसेनी ½ रत्ती | १ पु०

लवङ्ग जायफल मिश्रीके जलसे ३-३ घण्टासे

ता० १६-८-४९ सुबह ७ बजे फिर देखनेको बुलाया। यही दवा चालू रखी। टेम्प्रेचर मुँहमें ९८ में आया, परन्तु पसीना बन्द नहीं हुआ। फिर दो पहरमें १२ बजे देखनेको गया, तब ज्वर मुँहमें ९९ था, परन्तु बगलमें ९९ ही था। टट्टी १२ बजे तक ७ हुई थी। मेरे सामने ही कणाके पतीके दोस्त तथा

भाई वगैरह आ गये थे, और उनका मन कुछ डाक्टरी इलाजकी तरफ हुआ। मैंने इनका रुख देख कर समझ लिया और दवाके लिये कह कर चला आया। मेरे जानेके बाद ही डाक्टर चटर्जीका इलाज चालू हो गया।

ता० १७-८-४६ को मेरे पास दिन भरमें कोई खबर नहीं आई। इलाज चटर्जीका ही चालू रहा फिर रातको १२ बजे हालत विशेष खराब हो गई, तब चटर्जीको फिर बुला कर लाये। उसने देख कर कह दिया कि हालत बल्कुल खराब है। हमारे यहां जो इलाज है वह सब कर चुका, अब तुम लोगोंकी जैसी इच्छा हो वैसा इलाज करावो। तब घर वाले घबराये और रातको एक बजे मेरे पास अस्पतालमें आये और रोने लग गये। इनकी ऐसी अवस्था देख कर मेरे दिलमें दया आ गई, और मैं उसी समय उनके साथ दवाकी पेटी लेकर चला गया। जब रोगीको पास जाकर देखा तो हालत बहुत ही खराब हो गई थी। नाड़ी गति १३० श्वास प्रश्वास ४०, टेम्प्रेचर मुँहमें ६५, प्रलाप, हाथ पैर शीतल बर्फके समान, टट्टी ५-५ मिनटसे लग रही थी, पेटमें आफरा, दोनों फेफड़ोमें कफ वृद्धि, जी घबराकर उल्टी होती थी, रोगी चिल्ला रहा था मरा, मरा, बचाओ मैंने ऐसी अवस्था देख कर २ खुराक दवा घर वालोंको दी।

रस राज २ रत्ती	
प्रबाल १ रत्ती	
लवङ्गादि २ रत्ती	
भीमसेनी ½ रत्ती	१ पुड़िया

मधुसे ३-३ घन्टे बाद देनेको कहा और यह भी कहा कि तुम लोग वैद्यपर विश्वास नहीं करते हो जब तक एक वैद्य के हाथमें इलाज नहीं रहेगा रोगी ठीक नहीं होगा।

तब घर वाले बोले महाराज हमारी भूल हुई, सगे सम्बन्धियोंके फेरमें पड़कर हमने आपका इलाज बदल दिया था। सो अब पछता रहे हैं। अब आप जानें आपके जचे जैसा करें हमलोगोंने तो इसके जीनेकी आशा छोड़ दी है। यह सुनकर मैंने रोगीका इलाज फिर सम्हाला, २ पुड़िया दे कर अस्पतालमें सुबह ७ बजेका वादा करके चला गया।

१८-८-४६ सुबह ७ बजे गया तब हाल चाल पूछने से पता लगा कि रातको आपकी दवा देनेके बाद ३ टट्टी हुई तथा कुछ नींद भी आई। पेट पर अफारा भी कम है। पेशाब भी होता है। पेटसे अपान वायु बहुत दुर्गन्ध युक्त १०-१० मिनटसे निकलती है। ज्वर मुंहमें ९८ है तथा शरीर भी कुछ गरम है। नाड़ीकी गति भी १२० हो गई तथा श्वास ३२ थे परन्तु पसीना बन्द नहीं हुआ। एतदर्थ दवा निम्न लिखित चालू की।

नं० १ कस्तूरी भैरव	१ गो०	नं० २ मकरध्वज	१ रत्ती
लवङ्गादि	२ गो०	उ० सर्वाङ्ग	२ रत्ती
प्रवाल	१ रत्ती	लवङ्गादि	२ गो०
मुक्ता	१ रत्ती	प्रवाल	१ रत्ती
भीमसेनी	½ "	अर्जुनाभ्र	१ रत्ती
नागरमोथा रस मिश्रीसे		जायफल लवङ्ग मिश्रीके जलमें	

इस तरहसे इन १ — नं० तथा २ नं० दवाइयोंके संमिश्रणको ३-३ घन्टाके हेरफेरसे चालू किया। तथा ४-४ घन्टासे मृतसंजीवनी सुरा ।) भर जल मिला कर दी। छातीपर धत्तूरादि घृतकी मालिश कराई। तथा हाथ पैरोंमें सोंठ कायफल आरारोटका पाउडर बनाकर रगड़वाया यह प्रयोग दिनभर चालू रखा, सायंकाल ७ बजे फिर बुलानेको आया तब जाकर देखा कि ज्वर ९९ बगलमें है, प्रलाप बेचैनी अधिक है तब

रातको ८ बजे बृ० वातचिन्तामणि २ रत्ती, प्रस्वप्नार्क १ औंसके अनुपानसे दी। रातको २ घन्टे नींद आई तथा १ टट्टी भी हुई परन्तु रातको २ बजे रोगी फिर घबराया, १ बमन भी हुई तब मेरेको फिर बुलाया रोगीको जाकर मैंने पूछा तो कहा कि जी बहुत घबराता है। उल्टीकी बहुत इच्छा होती है तथ कुछ हिचकी भी आतो है, तब मैंने पिच्छ १ रत्ती, रसराज २ रत्ती, बड़ी इलायची चूर्ण १ मासा मिलाकर मधुसे बार २ चाटनेको कहकर चला आया।

१६-८-४६— सुबह ६ बजे घरके आदमीने रात के समाचार कहे कि आपके आनेके बाद उल्टी, जी घबराना बन्द हो गया, टट्टी १ हुई, पेशाब ५-६ बार हुआ, अब आपको बुलाया है। मै ७ बजे रोगीके घरपर गया तो ज्वर ९९ था, हाल अच्छा था परन्तु खांसी बार २ में आतीथी जिससे रोगी घबराता था, दोनों फेफड़ोंका कफ भी पतला हो गया था, तब मैंने दवा चालू ही रखी तथा खांसीके लिये चन्द्रामृतरस ४ रत्ती तालीशादिचूर्ण ३ मासाको मिलाकर मधुसे बार २ में चाटनेके लिये कहा।

दो पहरमें १२ बजे फिर देखनेके लिये गया तो पसीना कभी २ आता था परन्तु ज्वर १०० डिग्री हो गया था।

सायंकाल ७ बजे फिर गया तब ज्वर १०२ हो गया हाल और सब ठीक थे।

२०-८-४६ रातका हाल कहनेके लिये सुबह आदमी आया कहा कि नींद ३ घन्टे आई आपको देखनेको बुलाया है। मैं ७ बजे गया ज्वर ९९, पसीना बिल्कुल बन्द था परन्तु गलेमें दर्दका अनुभव करती थी इसलिये टंकण मधुमें मिलाकर लगानेको कहा और उन्नावसत चूसनेके लिये दिया, सायं १०२ ज्वर हुआ था दवामें कोई परिवर्तन नहीं किया।

२१-८-४६ हालत कल जसा ही रही।

२२-८-४६ जीभमें कुछ ललाई मालूम दो और रोगीको खुश्कीका अनुभव भी होने लगा तथा कफ भी कम हो गया। एतदर्थ दवा परिवर्तन कर दी।

प्रातः सायं	म० रा०
सौभाग्यवटी १ गो०	
मकर १ रत्ती	चन्द्रामृत १ गो०
लवङ्गादि २ "	
प्रवाल १ "	शृंग्यादि १ माशा
मुक्ता १ "	नरसार १ रत्ती
भीमसेनी ½ "	
(नागरमोथा रस मिश्रीसे)	मधु से

रातको नींदके लिये पूर्वोक्त दवा ही चालू रखा।

२३-८-४६ हालत ठीक, ज्वर सुबह ९८ सायं १००।

२४-८-४६ हालत ठीक, ज्वर भी कल जैसा ही।

२५-८-४६ ज्वर ९८ ऊपरमें ९९

२६-८-४६ कल जैसा ही रहा, नींद कम आई इसलिये नींदकी दवा रातको २ वार देनी पड़ी।

२७-८-४६ मुखमें कुछ छालेके माफिक अनुभव करने लगी। प्यास तथा पेटमें कुछ जलन भी प्रतीत हुई, खांसी साधारण, छातीमें कफ बिल्कुल नहीं तब जलवाली खानेके लिये ॥ दी गई तथा अनारका रस ‌‌‌‌— दिया।

२८-८-४६ और सब हालत ठीक थी, परन्तु मुखमें छाला होनेसे फल रस लेनेमें कष्ट होता था तथा ज्वर भी प्रातः ९७। सायं ९८॥। हुआ था तब दवा परिवर्तन की।

प्रातः सायं	म० रा०
चन्दनादि लौह ३ रत्ती	लवङ्गादि २ गो०
मुक्ता १ रत्ती	सिद्ध प्राणेश्वर १ "
अर्जुनाभ्रक १ रत्ती	
भीमसेनी ३ "	
मधु से	नागरमोथारस मधु से

२९-८-४६ सुवह १ टट्टी बंधा हुआ और ज्वर ९७ था, खानेके लिये छटपटाने लगी, तब ड- दूध वार्लीमें मिलानेको कहा तथा छीना जल दोपहरमें ड= दिलवाया अनारका रस दो वार दिलवाया, सायं ज्वर ९८ तक हुआ रातको नींदको दवा भी बन्द कर दी गयी।

३०-८-४६ हालत बिल्कुल ठीक।

३१-८-४६ बिल्कुल ठीक।

१-९-४६ भूखके कारण छट पटाती थी तब पथ्य जो चालू था वही रखा तथा शाक जूस ड- दिया सायं काल तवियत बहुत प्रसन्न थी ज्वर भी दिन भरमें ९७ रहा।

२-९-४६ परवलका भरता दिया गया

३-९-४६ फुलकेका पपड़ी दिया गया। इस तरहसे रुग्णा २१ दिवस का शीताङ्गोपद्रव युक्त मोतीझरा भोगकर बिल्कुल ठीक हो गई।

ऐसे २ बहुत-से हजारों रोगी मेरे इलाजमें आये तथा अब भी अस्पतालमें तथा बाहर बने ही रहते हैं। भगवान् धन्वन्तरी की कृपासे तथा कविराज श्री ज्योतिर्मय सेनजी तथा परमादरणीय गुरुवर्य आयुर्वेद मार्तन्ड श्री यादवजी महाराजके आशीर्वादसे मेरे को इस भयंकर रोगकी चिकित्सामें अच्छा अनुभव हुआ। अतः वैद्यगण भी परीक्षा करके देखें।

मंथर ज्वर एवं गर्दन तोड़युक्त रोगी

रोगी नाम कृष्णा देवी, उम्र १४, पिताका नाम रामनाथ जी गोयनका, यहांका पता सेन्ट्रल एवन्यू नं० २८८।

यह लोग मद्रास के रहने वाले थे। कुछ दिन पूर्व ही यहां कलकत्तेमें आये थे। कुछ दिन पहलेसे ही कृष्णाको अम्लपित्तकी बीमारी थी। इसलिये इसके पिताने मुझको बुलाकर दिखलाया था, उस समय इसको ३ रोजसे टट्टी बिल्कुल नहीं हुआ था। खट्टी डकार आती थी। शिरमें बहु दर्द हो रहा था। मैंने इसको देखकर औषधि व्यवस्था पत्र लिख दिया और चला आया। इन्होंने दवाई नहीं मँगवाई। उसी रोज सायंकाल इसको उल्टी टट्टी होने लग गये, तब डाक्टरको बुलाकर इलाज चालू कर दिया तथा टट्टी एक्जामिन भी कराया, जिसमें कोलराके कृमी भी निकले। टट्टी उल्टी बन्द हो गया, परन्तु ज्वर हो गया, डाक्टर ने इन्जेक्सन देकर ज्वर उतार दिया तथा दूसरे रोज खानेको पथ्य में खिचड़ी दी, उसी दिन फिर ज्वर हो गया तथा फिर उल्टी भी होने लग गई, तब मेरेको बुलाया। मै देखने गया तब निम्न लिखित हालत थी।

ज्वर मुंहमें १०५, बगलमें १०३, टट्टी ५-६ पतली होती थी। उल्टी भी कभी २ होती थी। कुछ खांसी भी थी। शिरमें बहुत दर्द था। तब मैंने निम्न लिखित दवा चालू की।

ता० ४-४-४५ प्रातः	सायं	म०	रा०
सौभाग्यवटी	१ गो०	लवङ्गादि	२
लवङ्गादि	२ रत्ती	महागन्धक	२
प्रवाल	१ रत्ती	जहरमोहरा खताई	१
नागरमोथा रस मिश्री से		अजवाईन अर्क [illegible]	

ता० ५-४-४५ सुबह देखने गया तो पूछनेसे पता लगा कि रातको टट्टी ३ हुई ज्वर रात भर १०५ ही रहा सम्पूर्ण शरीरमें दर्द हो गया जी बहुत घबराता था कभी कभी वमन भी होती थी।

ता० ६-४-४५ टट्टी बिल्कुल नहीं हुआ परन्तु वमन उसी तरहसे होता था, इसलिये पित्तान्तकवटो चूसनेके लिये दी जिससे वमन दिनमें कलकी वजाय आज कम हुई, गलेपर सफेद फुन्सिया भी दिखने लगी, कुछ कुछ प्रलाप करने लग गई, ज्वर उसी तरह रहा, तब कविराज हिरण्यमय सेनको राय लेनेके लिये बुलाया। उनको भी अच्छी तरहसे समझमें नहीं आया तब कविराज श्री ज्योतिर्मय सेनजीको बुलाया उन्होंने पूरे हाल चाल सुने तथा बहुत देर तक बैठकर अच्छी तरहसे देखकर औषध परिवर्तन किया।

ता० ७-४-४५ प्रातः सायं

प्रातः सायं		म०. रा०
ज्वर संहार	२ रत्ती	वज्रक्षार १ माशा
रामवाण	१ गो०	जलसे
प्रवाल	१ रत्ती	
रास्ना तेजवल गोक्षुर सोंठ के क्वाथ मधुसे		

ता० ८-४-४५ हालत कल जैसी ही रही।

ता० ९-४-४५ तन्द्राधिक्य नाड़ी दुर्बल याने १३० प्रलाप तथा वमन अधिक हुआ ज्वर भी बगलमें १०२। मुंहमें १०४ रहा।

ता० १०-४-४५ कविराजजी को तथा उनके पुत्र हिरण्यमयजी को फिर बुलाया। वे आये और रोगीको देखकर बोले केश बहुत टेढ़ा है। गर्दन तोड़ और मोतीझरा दोनोंका मिश्रण है। इसलिये औषध परिवर्तन करना पड़ेगा तब उनकी रायसे औषध निम्नलिखित परिवर्तन किया।

प्रातः		सायं	
कृष्ण चतुर्मुख	१ रत्ती	रसराज	३ रत्ती
मुक्ता	१ रत्ती	ज्वरसंहार	२ रत्ती
प्रवाल	१ रत्ती	प्रवाल	१ रत्ती
मृगमद	½	मगमद	½
भीमसेनी	½	काथ से	
मुस्तकादि गणके काथ से			

म० रा० वज्रक्षार जलसे

पित्तान्तकवटी चूसनेको गर्दनपर तथा पृष्ठवंशपर महामाष तैल की मालिश तथा माषकलाईको दूधमें औटाकर सेक किया। पेशाब कम होता था डा० नलनीरञ्जन सेन भी देखनेको आया था उसने खून परीक्षाके लिये कहा तथा १ इन्जेक्सन ग्लुकोज २५ शी० हैक्षामीन मिलाकर देनेको कहा, और दिलवाया गया दवा खानेकी आयुर्वेदिक ही चलती रही।

ता० ११-४-४५ को उपरोक्त दवाके सेवनसे गर्दनकी वेदना शान्त हो गई, परन्तु दुर्बलता अधिक, तथा कुछ छातीमें कफकी आवाज सुनाई दी। ज्वर मुँहमें प्रातः ६६ में आया, तब अमृत बिन्दू १ खु० दो गई जिससे घन्टे भर बाद ज्वर १०१ हो गया। छाती पर धत्तूरादि घृतकी मालिश करवाई तथा निस्सारणार्थ अष्टाङ्गावलेह चाटने को दिया। सायंकाल ज्वर फिर १०३ हो गया प्रलाप शान्त रहा।

ता० १२-४-४५ हालत पूर्ववत। खानेको जल बार्ली दी गई।

ता० १३-४-४५ रातको नींद अच्छी आई कमजोरीका अनुभव करने लगी।

ता० १४-४-४५ ज्वर प्रातः ६८ सायं ६६ और सब हालत ठीक दवा पूर्ववत चालू रखी। रातको नींद भी अच्छी आयी परन्तु उल्टी कभी २ होती थी।

ता० १५-४-४५ हालत कल जैसी ही रही।

ता० १६-४-४५ हालत ठीक।

ता० १७-४-४५ हालत ठीक।

ता० १८-४-४५ को कविराजजीको मैंने फिर बुलाया तब उपद्रव सब शान्त थे सिर्फ शरीरमें कमजोरी के लक्षण विशेष दिखाई देते थे। इसको पहिले भी अग्निमान्द्यकी बीमारी थी। इसलिये इसको रक्तवृद्धिके लिये फिर औषध परिवर्तन किया।

प्रातः सायं		म० रा०
मकरध्वज	१ रत्ती	आग्निमुख चूर्ण
नवायस	२ ,,	जलमें
मुक्ता	$\frac{1}{2}$,,	
अर्जुनाभ्रक	१ ,,	
मधुमें		

१९-४-४५ हालत ठीक है। पथ्यमें कुछ बार्लीमें दूध मिलाकर दिया तथा फलका रस भी बढ़ाया गया।

२५-४-४५ पथ्यमें शाक यूष दोनों समय दिया।

२६-४-४५ परबल का भरता दिया।

२७-४-४५ फुलकाकी पपड़ी परवल सागसे दिया गया

२८-४-४५ पथ्य जच गया। दवा यही १ मास तक चालू रखी। रोगी बिल्कुल स्वस्थ हो गया।

नोट:—इस रोगीको देखनेके लिये मैं दिनमें ४ बार तथा हिरण्यमय सेन जी १ बार बड़े कविराज जी १ बार आते थे। हेक्सामिन, ग्लूकोज २५ शीशी इञ्जेक्सन १० रोज तक दिया गया था तथा रक्त परीक्षा भी रोज होती थी, परन्तु कभी भी रक्त परीक्षामें टाईफाइडके जर्मस नहीं निकले, जिस दिन पथ्य दिया उसी दिन टाईफाइड निकला। यह है रक्त परी-

क्षामें विश्वास करने का फल। डा० नलिरंजन सेनको भी निदानमें कविराजोंसे हार माननी पड़ी। लड़कीका पिता रामनाथजी गोइनका डाक्टरोंका परम भक्त था परन्तु लड़कीको माता तथा बाबू मदनलालजी डालमियां आयुर्वदके परम भक्त थे, तभी यह इलाज कविराजोंके द्वारा ही हुआ। ऐसे केश बहुत मुश्किलसे ही ठीक होते हैं। भगवान् धन्वन्तरीको कृपा तथा कविराज ज्योतिर्म्मयजीका अनुभव दोनों ही की कृपासे रुग्णा बिल्कुल निरोग हो गई। रामनाथजी गोइनकाको उस दिनके बाद हो आयुर्वेदमें भक्ति हुई, नहीं तो वह वैद्योंसे बहुत नफरत करता था। अब जब भी कोई बीमारी होती है तब ही कविराजी इलाज ही करवाता है।

मन्थरज्वरा क्रान्त रोगी

रोगीका नाम बाबूलाल जातो अग्र० ग्राम सीकर यहांका पता २० नं० चोरबगान, सेवाराम कालूराम भर्ती, ३ ७ ४२ रोग मन्थर ज्वर।

इसको ७, ८ रोजसे घर पर ज्वर होता था। ता० ३-७-४२ को यहां अस्पतालमें सुबह १०—२० पर भर्ती हुआ। उस समय ज्वर १०१ था टट्टी ५, ६ पतला होता था। छातीमें कफ तथा वेदना थी, खांसी आती थी। जी बहुत घबराता था। प्यास थी। प्रवेश के समय निम्न दवा चालूकी गई।

प्रातः साय		म० रा०
आनन्द भैरव	१ गो०	लवङ्गादि
लवङ्गादि	२ रत्ती	सिद्ध प्राणेश्वर
प्रवाल	१ ”	अर्क सोफसे
मुक्ता	१ ”	
भीमसेनी	½ ”	
नागरमोथा रस मधुमें		

छाती पर पुरातन घृतकी मालिश तालीशादि चन्द्रामृतका अवलेह मधुसे बार २ चाटनेको दिया। पथ्यमें जलवाली तथा लवङ्ग श्रृत जल पीनेको दिया गया। टट्टी पेशावके लिये सोते २ ही करनेको बोला। १ घरका आदमी भी पासमें रहा सायंकाल ज्वर ऊपरमें १०३ तक बढ़ा।

४-७-४२ हालत पूर्ववत

५-७-४२ हालत पूर्ववत

७-७-४२ हालत पूर्ववत्

८ ७ ४२ नींद बिल्कुल नहीं आई कुछ प्रलाप शुरू हो गया। इसलिये रातको ८ बजे बृ० चिन्तामणो २ रत्ती प्रस्वप्नार्कसे देनेको बोला था और रातको इस दवासे २-३ घन्टे नींद आई॥

९-७-४२ सुबह अचानक पसीना आकर ज्वर गिर गया याने ९६ व ९७ हो गया। तब जल्दी ही

मकर ध्वज	१ रत्ती
प्रवाल	१ "
मुक्ता	१ "
अर्जुनाभ्रक	१ "
मृगमद	१ "

का संमिश्रण कर पानरस मधुसे दिया जिससे कुछ हार्टमें ताकत आई, परन्तु ज्वर नहीं बढ़ा। तब मृगमदासव १ खुराक दी, तब ज्वर ९८ में हुआ। दिन भर ३-३ घन्टासे यही दवा चालू रखी, तब ज्वर सायं काल फिर १०२ हो गया। रातको कल वाली दवाई नींदके लिये दी। रातको ३ घण्टे नींद भी आई।

१०-७-४२ सुबह देखने गया तब मालूम हुवा की कफकी वृद्धि हो गई। श्वास संख्या भी ३४ थी नाड़ी गति १३० थी तब दवा फिर परिवर्तन किया।

प्रातः सायं		म० रा०	
कस्तूरी भैरव	१ गो०	स्वल्फ लवंगादि	२ रत्ती
वृ० लवङ्गादि	२ रत्ती	महागन्धक	२ ”
मुक्ता	१ ”	अर्जुनाभ्रक	१ ”
प्रवाल	१ ”	मकर	१ ”
भीमसेनी	१ ”		
मोथा रस मधुमें		अजवाइन अर्क जलमें	

पेटपर कुछ आध्मान था दारुषट्क लेपको व्यवस्थाकी सायंकाल ज्वर १०३ हो गया। स्वेदका अवरोध हो गया कुछ प्रलाप अधिक होने लग गया तब रातको :—

चतुर्भुज रस १ रत्ती ताल छाड़ारस मधुसे दिलवाया।

११-७-४२ सुबह ज्वर १०१ था परन्तु प्रलाप बहुत करता था। रात भर नींद नहीं आई टट्टी बिल्कुल नहीं हुई तथा पेशाब भी नहीं हुआ पेटपर भारीपन था, तब शिरके बाल कटवाकर पुराना घृत पानका रस मिलाकर लगवाया पेटपर बज्रक्षार, आयाम काञ्जिकमें मिलाकर पट्टी भिगोकर रखा जिससे २ घन्टा बाद खुलासा २ पेशाब हुये। सायंकाल ज्वर १०४ हो गया, प्रलापमें ही मारना, पीटना, दौड़ना, शुरू कर दिया तब शिर पर बर्फ की थैली लगवाई जिससे कुछ शान्ति मिली। दवा कलवाला ही चालू रखा।

१२-७-४२ हालत कल जैसे ही रही

१३-७-४२ हालत पूर्ववत।

१४-७-४२ हालत पूर्ववत

१५-७-४२ कफ निकलने लगा, प्रलाप भी कम हो गया तथा ज्वर भी प्रातः १०० हुआ सायं १०२ हुआ। टट्टी बिल्कुल नहीं हुआ। पेशाब ५ हुये।

१६-७-४२ हालत सुधरने लगगई ज्वर प्रातः ९९ सायं १०१।

१७-७-४२ ज्वर प्रातः ९८॥ में सायं १००॥ भूख जोरसे लग आई इसलिये चिल्लाना शुरू कर दिया।

१८-७-४२ भूखके मारे फिर प्रलापकी तरह रोना शुरू कर दिया तब मोसम्मी का रस ऽ– दिया, थोड़ा छीना जल भी दिया जिससे कुछ शान्त होकर २ घंटे तक नींद आई।

१९-७-४२ तबियत ठीक रहीं तब अनारका रस और बढाया।

२०-७-४२ ज्वर प्रातः ९७ सायं ९८ उपद्रव सर्व शान्त पथ्यमें बार्ली में दूध मिलाकर दिया गया।

२३-७-४२ शाकयूषादिसे पथ्य चालू किया।

२४-७-४२ दवा पुरानी हटाकर निम्नलिखित चालू की। टट्टी ग्लेसरीनकी बत्तीसे ही लगानी पड़ी।

प्रातः सायं	म० रा०
मकर	चित्रकादि बटी
नवायस	
मुक्ता	
मधु से	

इस तरह से यह रोगी २७ दिनमें ठीक हुआ।

इस रोगीको अस्पतालमें जब तक अच्छी तरह से ताकत नहीं आई तब तक रखा गया। बिल्कुल स्वस्थ हो गया तब ही छुट्टी दी।

मन्थर ज्वर चिकित्सा

रोगीनाम सत्यनारायण, जाति गौड़ ब्राह्मण, उम्र १४ यहांका, पता ४७ नं० बड़तल्ला स्ट्रीट शंकरलाल मिश्र भर्ती ता० २६ ७ ४५

इसको ७-८ रोजसे घरपर ज्वर निरन्तर रहता था। यहां अस्पताल में ता० २६ ७-४५ को दिनमें १० बजे भर्ती हुआ तब निम्नलिखित लक्षण थे। ज्वर १० डिग्री, टट्टी पतला होता था खांसी बहुत आती थी प्यास अधिक थी तथा तन्द्रा थी। तब प्रारम्भमें दवा यह चालू की।

प्रातः सायं		म० रा०	
ज्वरसंहार	२ रत्ती	चन्द्रामृत	१ गो०
लक्ष्मीनारायण रस	१ "	शृंग्यादि	६ रत्ती
प्रवाल	१ "	मधु से	
तुलसी रस मधुसे			

छातीमें पुरातन घृतकी मालिस। पथ्यमें जलवार्ली ≤)॥ यह व्यवस्था की गई। सायंकाल ज्वर १०२॥ तक बढ़ा।

२७-७-४५ प्रातः ज्वर १०० सायं ज्वर १०२॥

२८-७-४५ हालत कल जैसी ही रही परन्तु कुछ प्रलाप शुरू हो गया, नींद बिल्कुल नहीं आई।

२९-७-४५ ज्वर प्रातः १०२ सायं १०३॥ हो गया। हृदयमें दुर्बलता, श्वासको गति ज्यादा, प्रलाप टट्टी ४-५ हुये तब दवा परिवर्तन की गई। याने चालू दवा ३-३ घन्टाके हेरफेरसे दी गई तथा रातको वृ० वातचिन्तामणि १ खु० प्रस्वप्नार्कसे दी गई।

३०-७-४७ रातको कुछ नींद आई सुबह ज्वर १०१ तथा साय १०३ तक बढ़ा परन्तु खांसी प्रलाप वैसे ही रहा। खांसीके लिये अष्टाङ्गावलेह बार २ में मधुसे चाटनेको दिया।

१-८-४५ ज्वर प्रातः १००॥ सायं १०४

प्रलाप बहुत विशेष बढ़ गया मारना, पीटना, उठ २ कर भागना मुंहसे काटना आदि उपद्रव जोरसे हो गये। दोनों फेफड़ोंमें कफ व्याप्त हो गया कर्करायन शब्द सुनाई देता था। नाड़ीकी गति १३० श्वास गति ४० हो गई—तब औषध बदलना पड़ा।

प्रातः सायं	म० रा०
चतुर्भुज १ रत्ती	शृंग्यादि
लवङ्गादि २ रत्ती	शृंग
तालछाड़ा रस मधुसे	टेकण
	पिप्पली
	पाना रस मधुसे

अवलेह मालिस पूर्ववत चालू रखो।

२-८-४५ अवस्था पूर्ववत रही। कफ बहुत हो गया। प्रलाप बढ़ता ही गया। श्वासगति ५० हो गई नाड़ी १३० रही। प्रलाप इतना भयंकर हो गया कि तमाम वार्डके अस्पताल के रोगी रातभर नहीं सो सके ४ आदमियोंके पकड़ने पर भी काबूमें नहीं आता था। तब शिरपर बर्फकी थैली रखवाई, दवाईमें भी चतुर्भुजके साथ रसराज १ रत्ती मिलाकर तगरादि क्वाथके अनुपानसे दिया जिससे प्रलाप कुछ कम हुआ।

३-८-४५	अवस्था पूर्ववत	ज्वर प्रातः	१०१	सायं	१०३
४-८-४५	अवस्था कल जैसी ही रही	,,	१००॥	,,	१०२
५-८-४५	पूर्ववत	,,	९९	,,	१०३
६ ,,	,,	,,	१०१	,,	१०३
७			१०१	,,	१०२॥
८	,,	,,	९७	हो गया।	

९ पसीना बहुत आया हाथ पैर ठन्डे हो गये नाड़ी बहुत कम-

जोर श्वासगति ५० हो गई टट्टी २ पतला हुआ तब औषध फिर परिवर्तन करना पड़ा।

नं० १

मकरध्वज	१	रत्ती
प्रवाल	१	,,
अर्जुनाभ्र	१	,,
मृगमद	½	,,
मुक्ता	१	,,
भीमसेनी	½	,,

पानरस मधुमें

नं० २

कस्तूरीभूषण	१	रत्ती
प्रवाल	१	,,
टंकण	१	,,
पिच्छ	१	,,

३-३ घन्टाके हेरफेरसे दशमूलार्जुन अर्क के अनुपानसे दिया गया।

बीच बीचमें मृगमदासव ४० बूंद जलमें मिलाकर दिया गया जिससे सायंकाल ५ बजे ज्वर फिर १०२ हो गया रातको। बृ० वात-चिन्तामणि २ रत्ती जटामांसी फान्टके साथ दी गई।

१०-८-४५ प्रातः ज्वर फिर ९७ हो गया तब दवा कलवाली ही चालू रखी सायं ज्वर ऊपरमें १०० हुआ।

११-८-४५ ज्वर प्रातः ९८ सायं ९९ और हाल सब बदस्तूर प्रलापमें कोई परिवर्तन नहीं हुआ।

१२-८-४५ ज्वर प्रातः ९८ परन्तु अतिसार बढ़ गया प्रलाप भी वैसे ही रहा तब औषध फिर बदलना पड़ा श्वासकी गति भी ३० हो गई नाड़ी १२० रही हाथ पैर ठन्डे रहे।

प्रातः सायं

मकरध्वज	१	रत्ती
३ सर्वांगसुन्दर	१	,,
लवङ्गादि	१	,,
प्रवाल	१	,,
मुक्ता	१	,,
मृगमद	½	,,
भीमसेनी	½	,,

(जायफललवङ्ग मिश्रीजलसे)

म० रा०

कृष्ण चतुर्मुख	१	रत्ती
चन्द्रामृत	१	गो०

सिर्प वासक से नींदके लिये

बृ० वातचिन्तामणि पोटी० सोमा० मिलाकर दी गई

शिरपर पुरातन घृत पान रसके साथ मिलाकर मालिसकी तथा ऊपरसे बर्फकी थैली भी रखी।

१३-८-४५ ज्वर प्रातः ९८ सायं १०० और सब हालत कल जैसी ही रही।

१४-८-४५ ज्वर प्रातः ९७ सायं १०० और सब हालत कल जैसी ही टट्टी २ हुये।

१५-८-४५ ज्वर प्रातः ९७ सायं ९७ टट्टी रात दिनमें १० हुआ। प्रलाप शान्त नहीं हुआ तब शिरपर नोलोत्पलादि लेप कराया रातको बर्फ चालू रखी। इस तरहसे २१-८-४५ तक यही दवा चालू रखी तथा बीमारीका क्रम भी उसी तरह चालू रहा तब कृष्ण चतुर्मुखको हटाकर सन्निपात भैरव रस किया गया। तथा शिरपर घृतकुमारी स्वरसकी मालिस कराई जिससे कुछ ज्ञान बढ़ने लगा। टट्टी अभीतक ८-१० आतो ही रही प्रलाप शांत नहीं हुआ दांत पीसने लगा। पथ्यमें जलवार्ली तथा मिश्री जल देते थे बमन कर देता था तब म० रा० की दवा हटाकर लवंगादि सिद्ध प्राणेश्वर कृमि मुग्दूगर रस अर्क सोंफ अर्क पुदीना अजवाइनके अनुपानसे दिया। प्रातः सायंकी दवाका अनुपान भी वेलगिर्य्यादि क्वाथ किया गया इस तरहसे २१-८-४५ से १२-९-४५ तक यही दवा चालू रखा तब सब उपद्रव शान्त हो गये ज्वर तो इतने समयमें नीचेमें ९५ ऊपरमें ९७ तक ही रहा टट्टी कम हो गये परन्तु दस्त बिल्कुल नहीं मिटे तब रोगीकी हालत बहुत कमजोर समझकर बकरीका दूधवार्ली में मिलाकर अल्पमात्रासे चालू किया गया तथा पथ्यमें भी केलाका झोल ही सर्व प्रथम दिया इस तरह बहुत चेष्टा करनेपर यह रोगी ५१ दिनमें एकदम निरोग होकर अपने घर चला गया।

मन्थर ज्वराक्रान्तरोगी

रोगीका नाम लाजपत उम्र १५ जाती वैश्य

यहांका पता १० नं० ढाकापट्टी सूरजभान चन्द्रभान

इसको ६ दिनसे घर पर ही बिमारी हुआ था। डा० अमिय कुमार चटर्जीका इलाज चलता था। ६ दिन बाद मुझको भी बुलाकर दिखाया। उस समय ज्वर १०५ डिग्री था। टट्टी ८—७ रोज होती थी। खांसी, प्यास, उल्टी, जीघबराता था। घरवालोंको भी बहुत चिन्ता हो रही थी। तब उन्होंने इलाज मुझको ही करने के लिये कहा और मैंने निम्नलिखित औषध व्यवस्था चालू की।

ता० ६-६-४५

प्रातः सायं	म० रा०
सौभाग्यवटो १ गोली	लवङ्गादि १ गोली
लवङ्गादि १ गो०	सिद्धप्राणेश्वर १ गो० १ खु०
प्रवाल १ रत्ती १ पु०	अर्क सोफसे
नागरमोथा रस	
मिश्रीसे।	

ता० १०-६-४५

प्रताः सायं	म० रा०
सौभाग्य वटी १ गो०	मकरध्वज १ रत्ती
लवङ्गादि २ रत्ती	उ० सर्वांग सुन्दर २ ,,
मुक्ता १ ,,	लवङ्गादि १ ,,
प्रवाल १ ,,	अजवायनअर्क जलसे
नागर मोथारस मधुमें	

चन्द्रामृत ४ गो० टंकण १ रत्ती मधुसे बार २ चाटनेको दिया गया। पीनेके लिये लवङ्ग शृतजल पथ्यमें जलबार्ली ३।

११-६-४५ ज्वर प्रातः १०३ सायं १०४ और हालत वैसेकी वैसी टट्टी ६ हुए।

१२-६-४५ हालत पूर्ववत्

१३-६-४५ हालत पूर्ववत्

१४-६-४५ कल जैसी ही

१५-६-४५ पेटमें, शिरमें, पैरोंमें वेदना, पेशाब कम हुआ रात्रिको निद्रा नहीं आई। खांसी बढ़ गई तथा जुखाम फिर से हो गया; इससे गलेमें टॉन्सिल बढ़ गया। जिससे खांसी हो गई, खांसीके कारण १ मिनट भी शान्ति नहीं मिलती थी। इसलिये दवा फिर बदलना पड़ा यानि सौभाग्यवटीके जगह कस्तूरी भैरव दिया तथा तालीशादिचूर्ण चन्द्रामृतका अव-लेह मधुमें बार २ चाटनेको दिया।

१६ ६ ४५ हालत कल जैसी रही। ज्वर प्रातः १०२ सायं १०३ रहा। पानी पीनेमें कष्ट होने लगा तब गरम पानीमें नमक डालकर कुल्ला करवाया। धस्तूरादि घृतका मालिश छाती पर करवाया। टट्टी ७-८ बार पतला ही होता था।

१७ ६ ४५ कल जैसा ही रहा

१८ ६ ४५ कल जैसा ही रहा

१९ ६ ४५ को भी वैसा ही पेट पर आध्मान हो गया तथा शूल भी चलने लगी। तब घरवाले घबराये और बोले किसी की रायकी जरूरत समझें तो बुलावें। तब कविराज श्रीज्यो-तिर्मयसेनको बुलाया और उन्होंने देखकर निम्न लिखित व्यवस्था चालूकी।

नं० १	नं० २
प्रातः सायं	म० रा०
ज्वर संहार ३ रत्ती	वज्रक्षार
राम बाण १ गोली	अजवायन अर्क जलमें
मुक्ता १ र०	३-३ घंटेके हेर फेरसे दवा
प्रवाल १ र०	दिलवाई।
भीमसेनी ½ रत्ती	

षडङ्ग पानीय क्वाथसे

पेट पर आध्मान शमनार्थ रांधनो (मकोय बीज, अजवाइन हींग =) भरकी पोटली बनाकर गरम करके सेक कराया। दिनमें ज्वर १०१ रहा था। रातको १०४ रहा।

२० ६ ४५ टट्टी ५—६ हुआ वेदना कम ज्वर प्रातः १०३ १२ बजे १०१ सायं १०४ रातको फिर १०२ रहा। इस तरहसे दिनमें २ बार घटा बढ़ी रही। २० ६ ४५—२४-६ ४५ तक यही दवा रखी गई। २४ ता० को पेटमें से २ कृमि गुदाके रास्ते टट्टीके साथ निकले, जिससे पेटका आध्मान मिट गया। पेशाब ५ ६ बार होने लग गया। परन्तु तन्द्रा बढ़ गई बहुत हिलाने डुलानेसे ज्ञान होता था। तब कविराजजी फिर आये और दवामें फिर उनकी रायसे परिवर्तन किया।

प्रातः सायं		म० रा०	
कस्तूरी भैरव	१ रत्ती	लवङ्गादि	१ रत्ती
लवङ्गादि	१ ,,	महागन्धक	२ ,,
मुक्ता	१ ,,	मकरध्वज	१ ,,
प्रवाल	१ ,,	अर्जुनाभ्र	१ ,,
भीमसेनी	½ ,,	भीमसेनी	१ ,,
निर्गुन्डीस्वरस मधुमें		अजवायन अर्क जलमें	

और सब व्यवस्था वैसीकी वैसी ही रखी।

२४-६-४५ से ३० ६ ४५ तक औषध व्यवस्था समान ही रखो हालतमें भी कोई तरहक परिवर्तन नहीं हुआ।

ता० १-७-४५ को रातको ६ वजे चतुर्भुज रस १ रत्ती। ताल छाड़ा स्वरस मधुसे दिया।

४-७-४५ तन्द्रामें कुछ कमी हुई ज्वर दिनमें २ बार घटता बढ़ता था टट्टी बिल्कुल नहीं हुई।

५-७-४५ हालत पूर्ववत्।

६-७-४५ „

७-७-४५ अचानक पसीना आकर ज्वर कम हो गया एतदर्थ मृत्संजोवनी सुरामृगमदासव मिलाकर दिया ज्वर फिर बढ़ गया याने ९९ से १०१ हो गया परन्तु टट्टी फिर पतला हुआ जिसके साथमें कुछ लालिमा दिखलाई दी।

८-७-४५ टट्टी रक्तका बहुत जोरसे हुआ ज्वर भी उतरकर ९७ में आ गया पसीना आकर शरीर ठन्डा हो गया तब घरवाले बहुत घबराये कविराज जीको बुलाने गये तब कविराजजी खुद बीमार थे। आ नहीं सके तब २-३ डाक्टरोंको भी बुलवाया वे लोग भी देखकर घबरा गये और केशको नहीं सम्हाला तब मैंने घरवालोंको धीरज बंधवाया और दवा चालू सब बन्द करके दूसरी दवाका बन्दोवस्त किया जिससे बहुत अच्छी सफलता मिली दवा निम्नलिखित दी गई।

औषध व्यवसाय

प्रातः सायं		म० रा०	
शोणितार्गल रस	१ गो०	मकरध्वज	१ रत्ती
मुक्ता	१ रत्ती	जवाहिरमोहरा	१ रत्ती
प्रवाल	१ ,,	खूनयोग	१ मा०
भीमसेनी	१ ,,	कर्पूररस	१ रत्ती
कहरवा	४ ,,	वासक स्वरस मिश्रीसे	
आयापान स्वरस मिश्रीसे			

पेटपर बर्फकी थैली रखवाई तथा शु० स्फटिक चूर्णको ठन्डे पानीमें मिलाकर केथेटर रबड़ नलके द्वारा गुदाके रास्तेसे पेटमें पहुंचाया।

९-७-४५ ज्वर ९९ हो गया परन्तु रातभर टट्टी कोई नहीं हुयी पेशाब खुलासा होता था इस तरहसे इस रोगीको ता० ९-७-४५ से ता० १४-७-४५ तक इसी दवापर रखा।

१५-७-४५ रोगीकी हालत बिल्कुल ठीक ज्वर भी प्रातः ९८ में, सायं ९९ में ही रहता था उपद्रव सब शान्त थे।

१६-७-४५ पथ्यमें बकरीका दूध ≶—जलवाली मिलाकर दिया हालत ठीक

१७-७-४५ हालत सब ठीक ग्लेसरीनकी बत्ती लगाकर टट्टी कराई जिससे १ गांठवाली टट्टी हुई रक्त बिल्कुल नहीं आया ज्वर अभी तक होता था।

१८-५ ४५ ज्वर शमनार्थ औषध परिवर्तन करना पड़ा

प्रातः सायं	म० रा०
बृ० सर्वज्वर हरलौह १रत्ती	वज्रक्षार
मुक्ता १ रत्ती	अर्क सुदर्शन
प्रवाल १ ,,	
हारसिंगार पत्तारस मधुमें	

दूध धीरे २ बढ़ाते गये तथा अनार मौसमीका रस भी चालू किया गया। इस तरहसे ता० '८ ७ ४५ को ता० २५ ७ ४५ तक इसी दवाको चालू रखा गया। इसके बीच में ज्वर भी बिलकुल उतर गया।

२७ ७ ४५ से पथ्य चालू कर दिया।

इस तरह इस रोगोकी चिकित्सामें ५१ दिन लगे बीचमें इसने फिर कुपथ्य कर लिया जिससे फिर ज्वर हो गया था। इसलिये इसको इतना समय लगा।

मन्थरज्वरमें दी जानेवाली औषधियोंका विवरण

संजीवनी वटी

विडङ्गं नागरं कृष्णा पथ्यामलक विभीतिकौ।
वचा गुडूची भल्लातं सविषं चात्रयोजयेत्॥
एतानि सम भागानि गोमूत्रणैव पेषयेत्।
गुञ्जाभा गुटिका कार्या दद्यादार्द्रकजै रसैः॥
एकामजीर्णे गुल्मेषु द्वेविसूच्यांञ्च दापयेत्।
तिस्रः स्युः सर्पदंष्ट्रेषु चतस्रः सान्निपातके॥
वटी संजीवनी नाम्ना संजीवयति मानवम्।

रसयोग

वायविडङ्ग, सोंठ, पीपल छोटी, हरड़ छाल, आमला, बहेड़ा वच, गिलोय, शुद्धभिलावा, शु० बछनाग, सम भाग लेकर बारीक चूर्ण करके ताजी गिलोय और बछनागको २ ३ बार गोमूत्रमें घोटकर अन्य चीजें मिलावें तथा अच्छी तरहसे घोटकर १-१ रत्ती की गोली बनाकर रख छोड़े। इसमेंसे एक गोली अदरख रसके साथ अजीर्ण और गुल्ममें देवे। हैजेमें २ गोली और सर्प काटने पर ३

गोली सन्निपातमें ४ गोलियोंकी मात्रा देनेसे मनुष्यको जीवन दान देती है। संजीवनीमें इतनी विशेषता क्यों है? उत्तर—इसमें वत्सनाभ विष मिलता है। वत्सनाभमें उष्ण, स्वेदल और ज्वरघ्न गुण होनेसे भीतर बढ़ा हुआ दोष पसीना द्वारा एवं मूत्र द्वारा बाहर निकल जाता है; आमका शोषण होता है। इस कारणसे अजीर्णादि रोग दूर हो जाते हैं। एवं स्थावर जंगमादि विष एक दूसरेके प्रतिद्वन्दि होते हैं इसलिये विष निर्मित इस औषधि द्वारा सर्प विषका शमन हो जाता है। विसूचीकामें वमन और अतिसार द्वारा जलीयांश अधिक निकल जानेके अतिरिक्त कोष्ठके भीतर उष्णता बढ़ जानेके कारण प्रायः मूत्रोत्पत्ति नहीं होती। इसके सेवनसे पेशाब लानेका कार्य हो जाता है। यह मूत्रल गुण भी बच्छनाग के कारण ही होता है। बछनाग मिलावा वच, त्रिकटुका संमिश्रण होनेसे इस गुटिकामें दीपन पाचन वातश्लेष्म हर गुण हो जाते हैं। अतः यही वटी आम कफका शोषण करके शूल तथा अजीर्णको मिटा देती है। तथा अग्निको प्रदीप्त करती है। इस प्रयोगमें जो त्रिफला वायविडङ्ग, गिलोय, गोमूत्रका संयोग है उसमें त्रिफला रुचिकर और मल शोधक। वायविडंग जन्तुघ्न और गिलोय त्रिदोषघ्न और गोमूत्र अग्नि दीपक मल मूत्र शोधक कफघ्न है। इस तरहसे साधारण द्रव्यों द्वारा निर्मित होते हुए भी यह वटी दिव्य प्रभावशाली सिद्ध हुई। इसको हृद्दौर्बल्यावस्थामें नहीं देवे।

लक्ष्मी नारायण रसः

शुद्ध गन्धक मेतच्च टंकणं विष हिङ्गुलम्।
रोहिण्यतिविषा कृष्णा वत्सकाभ्रक सैन्धवम्॥
एतानि सम भागानि खल्वमध्ये विनिः क्षिपेत्।
दन्तिद्रावैः फलद्रावै र्मर्दयेच्च दिनत्रयम्॥

बल्लद्वयां वटीं कृत्वा आर्द्रकस्य जलैर्ददेत।
दुष्टज्वरे सन्निपाते विसूच्यां विषमज्वरे
अतिसारे ग्रहण्याश्च रक्तामे मेह शूलजित्।
सूतिका वात दोषाश्च लंकेश मिव राघव॥

शु० हिंगलु, अभ्रक भस्म, शु० गन्धक, सुहागा, शु० बछनाग निर्गुण्डीबीज, अतीश, पीपल, कुड़ाछाल, सैन्धव नमक, प्रत्येक समभाग लेकर दन्तीमूल क्वाथ त्रिफला क्वाथकी ३-३ भावना देकर १-१ रत्तीकी गोली बना लेवे।

उपयोग १ २ गोली अदरख रस मधुसे देवे।

यह रस दुष्ट ज्वर, सन्निपात, विसूचिका, विषम ज्वर, अतिसार, ग्रहणी, रक्तातिसार, प्रमेह, शूल, सूतिका रोग वातव्याधि, बालकोंके धनुष वात रोगको दूर करता है। कभी-कभी लक्ष्मी नारायण रसके देनेसे अतिप्रस्वेद होता है। इस कारणसे डर पैदा हो जाता है। ऐसे समय प्रवाल भस्म मुक्ताभस्मका संयोग कर देना चाहिये। इस रसका कार्य विशेषतः आंन्त्रकृत्, और प्लीहा, रस, रक्त, मांस, त्वचा पर होता है। यह पित्तशमनके किये उत्तम योग है।

लक्ष्मीविलासरस रसयोगसागर

पलंकृष्णाभ्र चूर्णस्य तदर्धौ रसगन्धकौ।
तदर्धचन्द्रसंज्ञस्य जाती कोष फले तथा॥
वृद्धदारकबीजञ्च बीजं धत्तूरकस्य च।
त्रैलोक्यविजयाबीजं विदारीमूल मेव च॥
नारायणी तथा नागवला चातिवलातथा।
बीजं गोक्षुरकस्यापि नैचुलं बीज मेव च॥

एतेषां कार्षिकं चूर्णं पर्णपत्र रसं पुनः ।
निष्पिष्य वटिका कार्या त्रिगुञ्जाफलमानतः ॥
निहन्ति सन्निपातोत्थान् गदान्घोराश्चतुर्विधान् ।
वातोत्थान् पैत्तिकांश्चैव नास्त्यत्र नियमः क्वचित् ॥

अभ्रक भस्म २ तो०, शु० पारद २ तो०, शु० गन्धक २ तो०, कपूर १ तो०, जायफल १ तो०, जावित्री १ तो०, विधायराबीज १ तो०, धतूर बीज १ तो०, गांजेका बीज १ तो०, विदारीकन्द १ तो०, शतावरी १ तो०, नागवला १ तो०, अतिवला १ तो०, गोखरू १ तो०, जलवेत १ निर्माण विधि पहले पारे और गन्धककी कज्जली करके अभ्रक मिलावे तथा काष्ठोषधियोंको कुटवा कर कपड़ छान चूर्ण करके मिला देवें। फिर नागर पानके रसमें १२ घन्टा खरल करके १-१ रत्तीकी गोली बना लेवें मात्रा १-२ गोली दिनमें ३ समय दूध दही, सुरा या अन्य रोगानुसार अनुपानसे प्रयोग करे। वह सब प्रकारके सन्निपातको तथा १८ तरहके कुष्ट २० प्रमेह नासूर दुष्टव्रण, गुदाके रोग, गल रोग, अन्त्रवृद्धि, दारुण अतिसार आमवात, जिह्वास्तम्भ, गलग्रह, उरो रोग, कर्ण नासिका, मुख, कान, नाक, नेत्र, खांसो, पीनस, राजयक्ष्मा, अर्श, मोटापन, कुक्षोशूल, शिर.शूल, प्रसूता रोग, मकल शूल आदि रोगोंको ध्वजभंगको नष्ट करता है। यह आयुर्वेदीय रसोंमें एक प्रसिद्ध औषधि है। यह उत्तम हृदयोत्तेजक है। जिस तरह ब्राण्डी हृदयमें उत्तेजना पैदा करती है और बादमेंअसर उतरनेपर जैसा अवसाद करती है। उस तरह इस रसके सेवनसे जो उत्तेजना होती है वह अवसादकताको प्राप्त नहीं होती है इसमें और ब्राण्डीमें यही विशेषता है।

इस औषधसे नाड़ी सुधरनेके बाद दीर्घ कालतक सुधरी ही रहती है। न्युमोनिया और श्लैष्मिक रोगोंमें निर्बलता सम्बन्धी संशय होने पर इस रसका प्रयोग करनेसे उत्तम कार्य होता है। आवश्यकतानुसार

इस रसका सेवन करानेसे कासश्वास ज्वराधिक्य, फुप्फुसावरण प्रदाह, नाड़ी और हृदयका स्पन्दन, अधिक वेदना इत्यादिक विकार दूर हो जाते हैं। मन्थर ज्वरमें हृदयकी क्षीणता, सर्वाङ्गशूल, भ्रम, प्रलाप, मोह. शुष्ककास आदि लक्षण हो, अथवा ज्वरकी मियांद पूरी होनेपर भी रोग वैसाका वैसा रहे तो, इसके सेवनसे थोड़े ही समयमें स्वस्थ हो जाता है, वातश्लेष्म ज्वरमें इस दवासे बहुत ही अच्छा फायदा होता है। हृदयकी अनियमित गति होनेसे व्याकुलता हो जाती है श्वासावरोधसा प्रतीत होता है तथा हाथ पेर ठन्डे नाड़ी मन्द क्षीण, सर्वाङ्गमें विशेषतः कपालपर प्रस्वेद आदि लक्षण हो जाते हैं। ऐसी अवस्थामें भी इस रसके सेवनसे बहुत हो फायदा होता है। इस रसका उपयोग विशेषतः वात कफ प्रधान दोषवाली बीमारियोंपर हृदावरण, धमनियोंमें शिराओंमें फुप्फुस और फुप्फुसावरण इन सबपर होता है।

कस्तूरी भैरव (बृहत्)

मृगमदशशिसूर्या धातकी शूकशिम्बि।
रजतकनक मुक्ता विद्रुमं लौह पाठे॥
कृमिरिपुघन विश्वा वारितालाभ्र धात्री।
रविदल रमपिष्टं भैरवःकादिपूर्वः॥
कस्तूरी भैरवः ख्यातः सर्वज्वरविनाशनः।
आर्द्र कस्यरसैःपेयो विषम ज्वरनाशनः॥
द्वन्द्वजान्भौतिकान्वापि ज्वरान्कामादि सम्भवान्।
आभिचारिक कृतांश्चैव तथा शत्रुकृतान् पुनः॥
विल्वचूर्णैर्जीरकाभ्यां मधुना सहपानतः।
आमातिसारं ग्रहणीं ज्वरातीसार मेव च॥

अग्निदीप्ति करः शान्तः कास रोगनिकृन्तनः ।
क्षपयेत् भक्षणादेव मेहरोगं हलीमकम् ॥
जीर्णज्वरं नूतनं वा द्विकालीनश्वसन्ततम् ।
आक्षेपकं भौतिकंवापि हन्ति सर्वान्विशेषतः ॥
ऐकाहिकं द्वयाहिकं वा त्र्याहिकं चतुराहिकम् ।
पाञ्चाहिकं वा षाष्ठाहं पाक्षिकं मासिकं पुनः ॥
सर्वान्ज्वरान्निहन्त्याशुभक्षणादार्द्रक द्रवैः ।

रसयोगसागर

कस्तूरी १ तो०, कपूर १ तो०, ताम्र भस्म, १ तो०, धायफूल १ तो०, कौछबीज १ तो०, चान्दी भस्म १ तो०, मुक्ता भस्म १ तो०, प्रवालभस्म १ तो०, लौहभस्म १ तो०, पाठा १ तो०, विडङ्ग १ तो०, नागरमोथा १ सोंठ १ तो०, सुगन्धवाला १ तो०, हरिताल १ तो०, अभ्रक १ तो०, आंवला १ तो० ।

निर्माण विधि ये सब समान भाग लेकर कूटनेवाली चीजोंको कूट कपड़छान करके खरलमें डालकर आकके पके हुये पत्तोंके रससे २-३ रोज मर्दन करके १-२ रत्तीकी गोली बनाकर रख लेवें। अदरख रसके साथ सेवन करानेसे सब प्रकारके ज्वर दूर हो जाते हैं । जीरा, बील और मधुके साथ देनेसे आमातिसार संग्रहणी और ज्वरातिसारको दूर करता है । अग्निको दीप्तकर खांसी, प्रमेह, हलीमक, जीर्णज्वर सतत नवज्वर आक्षेपादि सब ज्वरोंको नष्ट करता है । यह ज्वरको तरुणावस्थामें आमदोष पाचनार्थ और ज्वर शमनके लिये दिया जाता है। इस रस के सेवनसे १४ दिनका प्रलापक सन्निपात तथा २१ दिनका मोतीझरा आदि त्रिदोषजनित बीमारियोंमें रोगीकी शक्ति कायम रहती है और दोष पाचन होकर स्वतः ही ज्वर चला जाता है। जिन रोगियोंको

जीवनकी आशा छूट गई हो; ऐसे मोतीझराके अनेक रोगी इस औषधिके सेवनसे सुधर गये हैं। यह रस सन्निपातमें प्रलाप, शीतावस्था निद्रानाश या वातकोपको दबानेमें श्रेष्ठ कार्य करता है। प्रसूती जन्यज्वर, धनुर्वात, कम्प, श्वास, कास और हृदयावरोधको दूर करता है, हृदयको मजबूत बनाता है।

सौभाग्यवटी

सौभाग्यामृतजीरपञ्चलवण व्योषाभयाऽक्षामलाः ;
निश्चन्द्राभ्रकशुद्धगन्धकरसानेकीकृतान्भावयेत्।
निर्गुण्डीयुगभृंगराजक वृषाऽपामार्गपत्रोल्लसत्
प्रत्येकस्वरसेन सिद्धगुटिका हन्ति त्रिदोषोदयम्॥
येषांशीतमतीव देह मखिलं स्वेद द्रवार्द्रीकृतम्
निद्राघोरतरां समस्त करण व्यामोह मुग्धंमनः॥
शूलश्वास वलास कास सहितं मूर्च्छाऽरुचितृड्ज्वरं।
तेषां वै परिहृत्यमृत्युवदनात्प्रत्यानयेज्जीवनम्॥

भूना सुहागा, शु० बच्छनाग, जीरा, पांचो नमक, सोंठ, मिर्च, पीपल, हरड़, बहेड़ा, आमला, अभ्रक भस्म, शु० गन्धक, शु० पारा, समभाग लेकर कज्जलीको तैयार करके एक साथ मिलाकर निर्गुन्डी, जल भंगरा, अड़ूसा अपामार्ग स्वरसमें १-१ दिन मर्दन कर ५-५ रत्तीकी गोली बनाकर रख छोड़ें। उचित अनुपानसे प्रयोग करनेसे पूर्वरूप सन्निपात, शूल, कफ, कास, मूर्च्छा, अरुचि, तृषा और ज्वरको यह नष्ट करताहै। गई हुई चेतना फिर आ जाती है।

चतुर्भुज रसः

मृत्सूतस्य भागौद्वौ भागैकं हेम भस्मकम्।
शिला कस्तूरिकातालं प्रत्येकं हेम तुल्यकम्॥

सर्वं खल्वतले क्षिप्त्वा कन्यया मर्दयेद्दिनम् ।
एरण्ड पत्रैरावेष्ट्य धान्य गर्भे दिनत्रयम् ॥
संस्थाप्यचतदुद्धृत्य सर्व रोगेषु योजयेत् ।
एतद्रसायनवरं त्रिफला मधुमर्दितम् ॥
तद्यथाग्नि बलं खादेत् वली पलित नाशनम् ।
अपस्मारे ज्वरेकासे शोषे मन्दानले क्षये ॥
हस्तकम्पे शिरः कम्पे गात्र कम्पे विशेषतः ।
वात पित्त समुत्थाश्च कफजान्नाशयेद्ध्रुवम् ॥
सर्वौषधिप्रयोगैर्ये व्याधयोनप्रसाधिताः ।
कर्मभिः पञ्चभिश्चैव मन्त्रौषधि प्रयोगतः ॥
सर्वास्तान्नाशयत्याशु वृक्षमिन्द्राशनिर्यथा ।
चतुर्भुजरसो नाम महेशेन प्रकाशितः ॥

रस सिन्दूर, २ तो०, सुवर्ण भस्म १ तो०, शु० मैनशील १ तो०, कस्तूरी १ तो०, शु० हरिताल १ तो०, सबकोषबारीक पीसकर घृतकुमारी रससे मर्दन करे फिर गोला बनाकर एरण्डके पत्तोंमें अच्छी तरहसे लपेटकर धान्यराशीमें तीन रोज तक रख देवे। बादमें निकालकर तीन तीन रत्तीकी गोली बनावें। इसमेंसे ३ रत्ती त्रिफलाजल मधुके साथ खानेसे वलि पलित, अपस्मार, ज्वर, खांसी, श्वास शोष, मन्दाग्नि, कफ, हाथ पैर शिरका कांपना, वातज कफज रोग नष्ट हो जाते हैं। जो रोग बहुतसी दवाओंके सेवनसे पञ्चकर्मसे और मन्त्रौषधियोंके प्रयोग से नष्ट न हुये हों उन रोगोंको यह रस ऐसे नष्ट करता जैसे वृक्षोंको नष्ट करती है।

महागन्धक (उ० सर्वाङ्ग सुन्दर)

रसगन्धकयोः कर्ष ग्राह्यमेकं सुशोधितम् ।
ततः कज्जलिकां कृत्वा मृदुपाकेन साधयेत् ॥
जात्या फलं तथा कोशो लवङ्गारिष्ट पत्रके ।
एतेषां कर्णमात्रंहि तोयेन सह मर्दयेत् ॥
मुक्तागृहे ततः स्थाप्य पुट पाकेन साधयेत् ।
गुञ्जाषट्क प्रमाणेन तोयेन सह भक्षयेत् ॥
महागन्धक मेतद्धि सर्वातीसार नाशनम् ।
दुर्वारं ग्रहणी रोगं जयेच्चैव प्रवाहिकाम् ॥

भैषज्य रत्नावली

द्रव्य और निर्माण विधि - शु० पारद, शु० गन्धक, जायफल, जावित्री लौंग, और नीमकी ताजी पत्ती, प्रत्येक समभाग। प्रथम पारे गन्धककी कज्जली करके उसको घी से चुपड़ी हुई लोहेकी कड़छीमें रखकर कोयलेको मन्दी आंचपर कज्जली सब पिघल जाय इतनी गरम करके नीचे उतारकर रख ले ठन्डी होनेपर निकाल कर खरलमें डाले और साफ की हुई नीमकी पत्ती डालकर खूब मर्दन करे। पीछे अन्य द्रव्योंका कपड़ेसे छाना हुआ चूर्ण डालकर जलसे ६ घन्टातक मर्दन करे। पीछे गोला बनाकर २ सीपोंमें रखकर कपड़ मिट्टीकर के पुटपाक विधिसे पकावे, तैयार होनेपर २-३ रत्तीकी गोली बना लेवें।

मात्रा १-२ गोली अनुपान जल, मीठे अनारका रस, तण्डुलोदक, नागरमोथा स्वरससे अथवा अतिसारहर क्वाथसे देवे।

गुण और उपयोग—यह उत्तम, पाचन, दीपन और ग्राही योग है। अतिसार, ज्वरातिसार, ग्रहणी, प्रवाहिका रोगोंमें इससे बहुत ही अच्छा फायदा होता है। इसको लाखों रोगियोंपर परीक्षा करके देखा गया है।

सिद्ध प्राणेश्वरो रसः

गन्धेशाभ्रं पृथग्वेद भागमन्यच्च भागिकम् ।
स्वर्जिटंक यवक्षारः पञ्चैव लवणानिच ॥
वराव्योषेन्द्र वीजानि द्विजीराग्नि यमानिका ।
सहिङ्गु वीजसारश्च शतपुष्पा सुचूर्णिताः ॥
वल्लकं भक्षयेदस्य नागवल्ली दलैर्युतम् ।
उष्णोदका नुपानश्च दद्यात्त्र पलत्रयम् ॥
ज्वरातिसारे ऽतिसृतौ केवलेवा ज्वरेऽपिच ।
घोरे त्रिदोषजे रोगे ग्रहण्यामसृगामये ॥
वातरोगेच शूलेच शूलेच परिणामजे ।
सिद्धः प्राणेश्वरः सूतः प्राणिनांप्राणदायकः ॥

शु० गन्धक ४ तो०, शु० पारद ४ तो०, अभ्रक भस्म ४ तो०, सज्जीक्षार १ तो०, शु० सुहागा १ तो०, यवक्षार १ तो०, पांचों नमक मिलित ५ तोला, त्रिफला ३ तो०, त्रिकटु ३ तो०, इन्द्रजौ १ तो०, सफेद जीरा १ तो०, कालाजीरा १ तो०, चित्रकमूल १ तो०, अजवाईन १ तो०, शु० हिंगु १ तो०, वायविडङ्ग १ तो०, सौंफ १ तो० ।

निर्माण विधि—प्रथम पारद गन्धककी कज्जली बनाकर अभ्रकभस्म मिला देवे। बादमें अन्य द्रव्योंका कपड़ छान किया हुआ चूर्ण मिलाकर जलमें मर्दन करके २-२ रत्तीको गोली बनाकर सुखा देवे।

मात्रा १ वटी

अनुपान-पान रससे या गरम जलसे प्रयोग करे। गुण और उपयोग-ज्वरातिसार, अतिसार, ज्वर सन्निपातातिसार, ग्रहणी रोग, रक्तातिसार परिणामज शूल अथवा शूलमें अच्छा फायदा होता है।

मकरध्वज (चन्द्रोदय) रस

पलं मृदु स्वर्णदलं रसेन्द्रात् पलाष्टकं षोडश गन्धकस्य,
शोणैः सुकार्पासभवप्रसूनैर्दिनं विमर्द्याथ कुमारिकाद्भिः ।
सत्काचकुम्भे निहतं सुगाढे मृत्कर्पटैस्तद्दिवसत्रयञ्च,
पचेत् क्रमाग्नौ सिकताख्य यन्त्रे ततोरसः पल्लवरागरम्यः ॥

तलस्थ स्वर्ण भागः स्यादेकष्टौ मकरध्वजात् ।
तथैवभाग देयाः स्यु लवङ्गात् केशरस्तथा ॥
जातिफलाच्च कर्पूरा देकस्तु मृगनाभितः।
श्लक्ष्ण पिष्टो रसोनाम जायते मकरध्वजः॥
वल्लं वल्लं द्वयं वाथ ताम्बुली दलसंयुतम् ।
भक्षयेन्मधुरस्निग्धं कटुकाम्ल विवर्जितम् ॥
करोत्याग्नि वलंपुंसां जरा व्याधि विनाशनः ।
मेधायुकान्ति जननो मकरध्वज संज्ञकः ॥

द्रव्य और निर्माण विधि -शु० पारद ३२ तोला सोनेके तबक ४ तोला लेवे । प्रथम पारदको खरलमें डाल उसमें सोनेके वर्क एक एक करके मिलाता जावे, फिर नीबूके रसमें एक दिन मर्दन करे। दूसरे दिन उसको गरम जलसे धोकर शुद्ध गन्धक ६४ तोला या ३२ तोला मिलाकर कज्जली करे। पीछे एक दिन लाल फूलोंवाली कपासके फूलोंके स्वरस में तथा ग्वार पाठेके रसमें एक दिन मर्दन करके सुखा लेवे। पीछे एक अच्छी आतशी शीशीको या समतलवाली काले रंगकी भाण्डी जिसमें आती है उस शीशीमें ७ मुल्तानी मट्टीमें कपड़ा मिलाकर याने कपड़ मिट्टी करके सुखाकर कज्जली भर देवे। बादमें लोहेकी या मट्टीकी मजबूत नांद या घड़ेमें शीशीके गले तक

भर चूल्हेपर चढ़ा देवे और नीचे क्रमसे मन्द मध्य और तीक्ष्ण अग्नि दे। इस क्रियामें प्रथम गन्धक ऊपर आने लगेगा। गन्धक गलेमें जमकर शीशीका मुखबन्द न हो जाय, इसलिये लोहेकी सलाईको गरम करके शीशीके अन्दर गले तक फिराता रहे। जब सब गन्धक जल जाय तब शीशीके मुखपर खड़िया मिट्टी या मुल्तानी मिट्टीकी डाट बनाकर लगा देवे और ऊपरसे गुड़ या शहदमें मिला हुआ चूना लगा दे पीछे १२ घन्टेतक तीव्र अग्नि दे। बादमें नया लकड़ी देना बन्द कर दे और आपसे आप ठन्डा हो जाय तब शीशीको निकालकर कपड़ मिट्टी को हटा, शीशीके मध्य भागमें मिट्टीके तेलमें भिगोई हुई सूतलीको लपेटकर दियसलाई लगादे और जलनेपर ठन्डे पानीका छींटा देकर तोड़ दे। पीछे शीशीके गलेमें लगे हुये मकरध्वजको सावधानीसे निकाल ले और तलभागमें बचे हुये सोनेको भस्म क्रियासे भस्म बनाकर काममें लावे। इस रसको चन्द्रोदय रस कहते हैं।

सूचना शीशीमें औषधि तीसरे हिस्सेसे आधे भागमें रहे उतनी ही भरे। ज्यादा भरनेसे उफान आकर कभी कभी औषध निकल जाता है। कज्जली सुखाकर ही डाले गीली औषधिसे शीशी फूटनेका भय रहता है। लकड़ी बबूलकी सूखी हुई रखें इसके बनानेमें ५) मन लकड़ी लगती है पहले दिन १) मन दूसरे दिन १॥) मन तीसरे दिन २॥) मन यह साधारण अनुमान है।

शलाकासे बार २ में तलस्थ द्रव्यको न चलानेसे पाकमें विलम्ब होता है। औषध पाकमें जल्दबाजी नहीं करे इससे गुणमें न्यूनता आती है। औषधि पाकका निर्णय करनेके लिये तप्तशलाकाको चलाकर बाहर निकाल कर तुरन्त सूंघना चाहिये। यदि गन्धककी गन्ध बिल्कुल न आती हो समझ लेना कि औषधि पाक हो गया है। दूसरी विधि पहिचाननेकी यह है—औषध पके जानेपर तप्तशलाका बाहर निकालने पर लाल अग्निकी लपट निकलती है। गन्धक रहनेपर नीले रंगकी

झपट निकलती है। पाक होते ही डाट लगा देवें अन्यथा पारद उड़ जायगा। कोयलेमें पकाई हुई दवामें गुण न्यून रहता है।

सेवन विधि

चन्द्रोदय ४ तो०, कपूर भीमसेनी ४ तो०, को खरलमें पीसकर बादमें जायफल ३ मा०, समुद्रशोष, ३ मा०, विधायरा बीज ३ माशा, लौंग ३ माशा, कस्तूरी ३ मा०, मिलाकर पीसकर शीशीमें रख लेवे।

मात्रा—मिश्रणकी १-३ रत्ती प्रातः अथवा सायं २ वार मधुमें मिलाकर चाटे या पानरस मधुमें देवे अथवा गोली बनाकर खावें ऊपर से दूध पीवे। ज्वरादि रोगोंमें हृदयपौष्टिक देना हो तो आधेसे एक रत्ती तक योग्य अनुपानके साथ देवे।

उपयोग—यह पूर्ण चन्द्रोदय रस हृदयपौष्टिक, वाजीकरण, रसायन बल्य रक्तप्रसादक, जन्तुघ्न, सेन्द्रिय विषशामक और योगवाही है। राजयक्ष्मा, कफ, वायु प्रकोप जन्यव्याधियोंमें और शुक्रकी निर्बलतामें अत्यन्त लाभदायक है। वीर्यस्राव, स्वप्नदोष, धातुक्षीणता, मानसिक कमजोरी, नपुंसकता, हृदयकी कमजोरी, जीर्णज्वर, क्षय, कास, श्वास, विषविकार, मन्दाग्नि, अपस्मार आदि रोगों बहुत शीघ्र ही दूर करनेकी क्षमता रखता है और आयुको बढ़ाता है। इस रसको रतिकालमें सेवन किया जावे तो मदोन्मत्त स्त्रियोंके गर्वको चूर्ण कर देता है। इसके सेवनके समय घृत ओटाया हुआ दूध, मांस रस उड़द, अथवा मावेके बने पदार्थ पथ्य है। स्वर्णघटित औषधियां और स्वर्णभस्म हृदयको ताकत देती हैं और रक्तको निर्विष बनाती हैं। सुवर्णयोगवाही होता है इसलिये राजयक्ष्मा प्रभृति कृमिजन्य रोगोंमें इससे बहुत ही अच्छा फायदा होता है। केवल राजयक्ष्माका संशय होते ही इसका सेवन करायां जाय तो निःसन्देह फायदा होता है।

ब्राह्मी वटी

ब्राह्मी १ तो०, जायफल १ तो०, जावित्री १ तो०, लवङ्ग १ तो०, कूठ १ तो०, स्याहजीरा १ तो०, पीपल १ तो०, अगर १ तो०, दालचीनी १ तो०, असगन्ध १ तो०, अकरकरा १ तो०, धनिया १ तो०, वंशलोचन १ तो०, इलायची छो० १ तो०, शंखाहुली १ तो०, सौंफ १ तो०, श्वेतचन्दन १ तो०, केशर १ तो०, कस्तूरी १ तो०, प्रवाल १ तो०, अम्बर १ तोला, मोती १ तो०, चुन्नी १ तोला, अभ्रकभस्म १ तोला, चन्द्रोदय १ तोला।

इन सबको समान भाग लेकर काष्ठौषधियोंका कपडछान चूर्ण बनालेवें। खरलमें डालकर अन्य सब औषधि मिलाकर ब्राह्मीस्वरस या काथकी ३ भावना देकर चनेके बराबर गोली बनालेवें।

मात्रा—१ से २ गोली उचित अनुपानके साथ

उपयोग--मोतीझरे के उपद्रव कारणोंमें जैसे बैचेनी, प्रलाप, अतिसार, उदर शूल आदि लक्षण हों तथा हृदयमें कमजोरी हो उस समय देनेसे हृदय और मस्तिष्ककी रक्षा करती है। वात प्रधान, कफ प्रधान सन्निपातमें दोषोंके पचनेमें सहायता पहुंचाती है।

हेमगर्भ रस

रसस्य भागाश्चत्वार स्तावन्तः कनकस्यच।
तयोश्च पिष्टिकां कृत्वा गन्धोद्वादश भागिकः॥
कुर्यात् कज्जलिकां तेषां मुक्ताभागाश्च षोडशः॥
चतुर्विंशश्च शङ्खस्य भागैकं टङ्कणस्यच।
एकत्र मर्दयेत् सर्वं पक्वनिम्बुकजै रसैः।

मुद्रांदत्वा ततो वैद्यः पचेल्लवण यन्त्रके ॥
पिष्ट्वा गुञ्जो द्वयन्मानं दद्या द्व्याज्य संयुतम् ।
कासे श्वासे क्षये जीर्णज्वरे ग्रहणिकागदे ॥
अपच्यांच प्रयोक्तव्यो रसोयं हेमगर्भक ।

सिद्धयोग संग्रहात्

द्रव्य और निर्माण विधि

शु० पारद ४ तोला लेकर खरलमें डाल देवें और ४ तोला सोनेके वर्क लेकर १-१ करके पारदमें मिलाता जावे और घोटता जावे। जब सब वर्क मिल जावें तब उसमें १२ तोला शु० आमला सार गन्धक मिलाकर कज्जली करे फिर उसमें १६ तोला अच्छे बसरा मोतीका चूर्ण तथा शंखका चूर्ण कपड़छान किया हुआ २४ तोला, शु० सुहागा १ तोला मिलाकर कागजी नीबूके रसमें मर्दन करके गोला बनावे, गोला सूखने पर २ सकोरेमें रखकर सन्धि बन्द करके ऊपर ७ कपड़ मिट्टी लगाकर सुखा लेवे। बाद मजबूत घड़ेमें नीचे २ अङ्गुल नमक बिछाकर ऊपर सम्पुटित सकोरा रख देवे, ऊपर फिर नमकसे घड़ाभर देवें ऊपरसे सकोरासे मुँह बन्द करके कपड़ मिट्टी से मजबूत कर देवें। बादमें घड़ेको चुल्हेपर चढ़ाकर ३ रात दिन तक मध्यम अग्नि दे। स्वांग शीतल होनेपर घड़ेसे सकोरा निकालकर कपड़ मिट्टी हटाकर गोला निकाल लें। जब सब द्रव्य पककर कुछ गुलाबी रंग लिये श्वेत वर्णका हो गया हो तो उसको खरलमें पीसकर काममें लावे, अगर श्यामवर्णका हो तो १ दिन फिर पकावे।

मात्रा १ रत्ती

उपयोग—खांसी, श्वास क्षय, जीर्ण ज्वर, ग्रहणी, अपची, हृदोर्बल्यमें प्रयोग करे। प्रायः हिरण्य गर्भ पोट्टली रससे जो कार्य होता है वही इस हेमगर्भ रससे भी हो जाता है।

वातकुलान्तक रस

मृगनाभिः शिवानाग केशरं कलिबृक्षजम् ।
पारदो गन्धको जातीफल मेला लवङ्गकम् ॥
प्रत्येकं कार्षिकं चैव श्लक्ष्णचूर्णा निकारयेत् ।
ब्राह्मी रसेन सम्मर्द्य वटी कुर्य्याद् द्विरक्तिकाम् ॥
अपस्मारे महाघोरे मूर्च्छा रोगेच शस्यते ।
वातजान् सर्व रोगांश्च हन्याद्वात कुलान्तकः ॥

द्रव्य निर्माण विधि

कस्तूरी १ तोला, बड़ी हरड़ छाल १ तोला, नागकेशर १ तोला, बहेड़ाछाल १ तोला, शु० पारद १ तोला, शु० गन्धक १ तोला, जायफल १ तोला, छोटी इलायची १ तोला, लौंग १ तोला। पहिले पारागन्धक की कज्जली करके उसमें कस्तूरी मिलाकर तथा अन्य औषधियोंका चूर्ण मिलाकर ब्राह्मी स्वरससे १ दिन तक मर्दन करके २-२ रत्तीकी गोली बनाकर छायामें सुखा लेवें।

मात्रा अनुपान १ गोली दिनमें ३-४ बार ब्राह्मी, शंखाहुली लौंग और जटामांसीके क्वाथके अनुपानसे देवें।

उपयोग - अपस्मार, मूर्च्छा, हिष्टीरिया, आक्षेप आदि वात रोगोंमें प्रयोग करें।

बृ० सर्वज्वरहर लौहम्

पारदं गन्धकञ्चैव ताम्रमभ्रञ्च माक्षिकम् ।
हिरण्यं तारतालञ्च कर्ष मेकं पृथक्-पृथक् ॥
कान्तलौहं पलंदेयं सर्वमेकी कृतम् शुभम् ।
वक्ष्यमाणौषधै र्भाव्यं प्रत्येकं दिन सप्तमम् ॥

कारवेल्ल रसैर्वापि दशमूलरसेनच ।
पर्पटस्याश्च कषायेण त्रिफला क्काथ केनवा ॥
गुडूच्याः स्वरसेनैव निर्गुण्ड्याः स्वरसैस्तथा ।
पुनर्नवाऽर्द्र काम्भोभि र्भावना परिकीर्तिता ॥
रक्तिकादि क्रमेणैव वटिकां कारयेद्भिषक् ।
पिप्पलिगुड़संयुक्ता वटिका ज्वरनाशिनी ॥
ज्वरमष्टविधं हन्ति जीर्णज्वर हरं तथा ।
वारिदोषोद्भवं चैव नानादोषोद्भवन्तथा ॥
सततादि ज्वरं हन्ति साध्यासाध्य मथापिवां
क्षयोद्भवञ्च धातुस्थं कामशोकभवस्तथा ॥
भूतावेश भवञ्चैव त्रिदोष जनितन्तथा ।
अभिघातज्वरश्चैव तथाभिचारसम्भवम् ॥
अभिन्यासं महाघोरं विषमंत्र्याहिकन्तथा ॥
शीतपूर्वं दाह पूर्वं त्रिदोषं विषम ज्वरम् ॥
प्रलेपक ज्वरं घोरमर्धनारीश्वरन्तथा ।
प्लीह ज्वरं तथा कासं चातुर्थिक विपर्ययम् ।
पान्डुरोगं कामलाञ्च अग्निमान्द्यं महा गदम् ॥
एतान्सर्वान्निहन्त्याशु पक्षार्धेन न संशय ।
शाल्यन्नं तक्र सहितं भोजयेद्विड् संयुतम् ॥
ककार पूर्वकं सर्वं वर्जनीयं न संशयः ।
मैंथुनं वर्जयेत्तावद्यावन्नो बलवान्भवेत् ॥
सर्वज्वरहरलोहं दुर्लभं परिकीर्तितम् ॥

द्रव्य और निर्माण विधि—

शु० पारद १ तो०, शु० गन्धक १ तो०, ताम्र भस्म १ तो०, अभ्रक भस्म १ तो०, सोनामाक्षीकभस्म १ तो०, सुवर्ण भस्म १ तो०, रजतभस्म १ तो०, रसमाणिक्य १ तो०, कान्तलौह भस्म ४ तोला। इन सबको मिलाकर खरलमें डालकर नील वर्णकी कज्जली तैयार करे। फिर करेला स्वरस, दशमूलकाथ, पित्तपापड़ाकाथ, त्रिफलाकाथ, गिलोय स्वरस, पान स्वरस, मकोय स्वरस, निर्गुन्डी, पुनर्नवा स्वरसौंकी ७-७ भावना देवे। फिर १-१ रत्तीकी गोलियां बनाकर सुखाकर रख छोड़े। इसमेंसे १-१ गोली गुड़ पीपल चूर्णके अनुपानसे देनेसे ८ प्रकारके ज्वर, जलदोषोत्थ ज्वर, सततादि विषम ज्वर, साध्य अथवा असाध्य, क्षयज, धातुस्थ, कामज, शोकज, भूतावेशज, सन्निपातज, अभिघातज, अभिचारज, असाध्यअभिन्यास, शीतपूर्व दाहपूर्व, प्रलेपक, अर्ध नारी-ज्वर, प्लीहज-ज्वर चातुर्थिक विपर्य्यय, इत्यादि समस्त ज्वर, कास, पाण्डु, कामला मन्दाग्नि, इन सबको ७ दिनमें यह नष्ट करता है। भूख लगनेपर चावल छाछसं चरनमक देवे। ककारादिगण वर्जन करे। जबतक पूर्णतया शक्ति न आवे तबतक मैथुन न करे।

शोणितार्गलरस

कान्तलौह भस्म ½ तो०, अभ्रक भस्म ½ तो०, रसोत, १ तो०, शु० फिटकिरी ¾ तो०, लालचन्दन १ तो०, स्वर्णगौरिक १ तो०, रससिन्दूर १ तो०, लाक्षा ½ तो०, बबूलपत्र स्वरसके साथ पीसकर २-२ रत्तीकी गोली बना लेवें।

उपयोग रक्तातिसार, रक्तार्श, रक्तपित्त रक्त प्रदरमें उचित अनुपान के साथ प्रयोग करे।

सूचना—आरम्भमें केवल शृतशीत जलपर ही रखना चाहिये। प्रारम्भमें अन्नपर रखनेसे ज्वर बढ़नेपर निर्मलता नहीं आती। इतना ही

नहीं ज्वर उतरने पर अशक्ति भी ज्यादा दिन नहीं रहती। दोषपाचन होनेपर दोपहरको फलोंका रस याने अनार मोसम्मीका रस तथा प्रातः सायं गायका दूध तुलसीपत्र डालकर गरम किया हुआ मिश्रो मिलाकर पिलावें। यदि किसीको दूध अनुकूल न पड़ता हो तो छाछ पिला सकते हैं परन्तु अन्न नहीं देना चाहिये। अन्न खिलानेसे शक्ति क्षय अधिक होता जाता है। अन्न खानेवाले रोगी ज्वर उतरनेपर भी बहुत दिनों तक बलवान नहीं हो सकते, फिर भी अगर कोई रोगी अन्न खाये बगैर नहीं रह सकता हो तो बाजरेका दलिया दे सकते हैं। अगर बाजरा खाना पसन्द न हो तो धानकी लाही और कूटूकी लाही अल्पमात्रामें दे सकते हैं। यदि बाजरेका आटा देना हो तो रोज ताजा पिसवाकर ही देवे।

मकान, वस्त्र, दांत, होठ, और मुंहको साफ करना चाहिये। शय्या कोमल रखे २ या तीसरे सप्ताहमें गरम जलसे शरीरको पोंछना चाहिये। विरेचन ज्वर उतारनेवाली तेज औषध आन्त्रगतिवर्धक कुचलादि औषधि और अन्नमें भोजनका उपयोग इस बीमारीमें जहां तक हो नहीं करना चाहिये।

ऐलोपैथिक चिकित्सा

डाक्टर लोग इस रोगमें पहिले क्लोरीन मिक्सचरका उपयोग करते थे जिसकी विधि यह है २० ग्रेन पोसासियस क्लोरेट (Potas-Chlorate) को एक बारह औन्सकी नीली स्पोर्ट बोतलमें डालकर इसमें ४ ड्राम ला० हाइड्रो क्लोरिक एसिड् मिला देना चाहिये। बोतलको गरमपानीमें रखना चाहिये, जिससे क्लोरिन गैस बन जाय। फिर ३० ग्रेन कुना-ईन सल्फेटको १२ औंस पानीमें मिलाकर थोड़ा थोड़ा करके बोतलमें डालते जाना चाहिये और हिलाते रहना चाहिये। इसको अन्धेरेमें रखना चाहिये इसमेंसे १-१ खुराक ३-३ घन्टाके अन्तरसे देनी चाहिये

इससे आंते साफ हो जाती हैं रोगका संक्रमण भी नष्ट हो जाता है। आजकल डाक्टरोंने यह नुसखा देना बन्द कर दिया सिर्फ टाईफाइड फाज नामक एक दवा बंगाल केमिकल ने निकाली है। उसीको प्रारम्भमें देते हैं फिर लक्षण जैसा देखते हैं वैसी ही चिकित्सा करते हैं इनके यहां इस बीमारीको खास कोई दवा नहीं हैं फिर भी चेष्टा करते हैं।

प्रायः डाक्टरोंमें निम्न औषधियां प्रयुक्त की जाती हैं।

१ सल्फा ग्वानीडीन (Sulphaguinadine)
२ वैक्टीरिया फाज (Bacteria Phose)
३ ग्लुकोज डी० (Glucose D.)
४ केल्शीयम ओक्षाइड सनडोज (Calcium Oxide Sandoz)
५ हैक्षामिन (Hexamine)
६ रिडोक्षन (Redoxon)
७ टिंचर डिजोटलिस आदि समयानुसार दी जाती हैं।

आजकल २ औषधियोंका और नया आविष्कार किया गया है, जैसे १ आर्योमाइसीन, क्लोरोमाइसिटोन। आजकल डाक्टर लोग इसका प्रचार बहुत बढ़ा रहे हैं। प्रायः मैंने भी इसका फलाफल देखा है कि यह औषधि इस रोगमें ज्वरको बहुत शीघ्र ही कम कर देती है लेकिन मियादको कम कर देनेकी इसमें ताकत नहीं है। समय जितना लगता है उतना ही लगता है।

हिमाङ्गावस्थामें	अनिद्रामें
कोरमिन (Coramin)	पोटास ब्रोमाईड (Potas Bromide)
ऐड्रीनलीन (Adrenaline)	ल्युमिनाल (Luminal)

ब्रान्डीका प्रयोग अधिकतर किया जाता है, दुर्बलता बढ़नेपर सैला-इनका प्रयोग भी करते हैं, इससे कोई विशेष फायदा देखा नहीं गया। वैसे तो आजकलके डाक्टर मरनासन्न रोगीके लिये यमराज रूप ही हैं,

जबतक १ श्वास भी बाकी रहता है तबतक इन्जेक्सनोंकी भरमार ही रखते हैं।

युनानि चिकित्सा

खूबकला २ माशा

मुनक्का ५ दाना

बनप्सा ३ माशा

गिलोय १ माशा

तुलसी पत्र १० नग

विधि—आधा पाव जलमें ओटाकर चतुर्थांश बाकी रहने पर मधु मिलाकर प्रातः सायं कच्छपपृष्ठास्थि चूर्ण ४ रत्तीके साथमें पिलानेसे मन्थर ज्वरमें फायदा होता है।

होमियो पैथिक चिकित्सा

आन्त्रिक ज्वरकी प्रथमा वस्थामें प्रायः ब्रायोनिया, जेलसियम आदि औषधियां व्यवहारमें ली जाती है। इसके बाद उत्तरोत्तर रोगके लक्षण बढ़ने पर लक्षणोंके सदृश औषधका प्रयोग किया जाता है। इस बिमारीमें प्रायः दो तरहकी अवस्था होती है। (१) कोई छटपटाता है। (२) कोई चुपचाप स्थिर भावसे पड़ा रहता है।

छटपटानेपर—आर्सेनिक, वैप्टिसिया, रसटक्स दिया जाता है।

स्थिर भावसे पड़े रहने पर—आर्निका, ब्रायोनिया, जेलसिमियम, एसिड म्यूर, एसिड नाईट्रिक, एसिड फास, कार्बोबेज आदि औषधियां दी जाती है तथा मस्तिष्कादि दोष होनेपर बेलाडोना, हायोसियामस, ओपियम, स्टैमोनियम, हैलिबोरस, लैकेसिस, प्रभृति दी जाती है।

अन्त्र प्रदाह, कोलाइटिस (COLITIS)

यह रोग भी मन्थर ज्वर (टाइफायड) के साथ सम्बन्ध रखने वाला है। प्रायः मन्थर ज्वरकी मियाद खत्म होने पर भी इस रोगका सम्बन्ध होनेसे ज्वर बहुत दिवस पर्य्यन्त बना रहता है। अतः इसकी पहिचानकी भी अत्यन्त आवश्यकता है। आयुर्वेदमें इस रोगका कोई विवरण नहीं मिलता है। एलोपैथिक वाले भी इसको परीक्षा मूत्र परीक्षा द्वारा करते हैं। अतः वैद्योंकी जानकारीके लिये ऐलोपैथिक पुस्तकों द्वारा संग्रहीतकर इस रोगके विषयमें कुछ विवरण लिखना उचित समझकर लिख रहा हूं। वैद्य बन्धुओं को चाहिये कि इस प्रकरणको अवश्य देखें।

विवरण—इसका संस्कृत नाम अन्त्र प्रदाह है। जब छोटी आंतोंमें प्रदाह होता है, तब उसको इङ्गलिशमें एण्टेराइटिस कहते हैं, परन्तु जब छोटी आंतकी श्लेष्मिक झिल्ली (म्युकसमेम्ब्रेन का प्रदाह हो जाता है, तब उसको कैटरल एण्टेराईटिस कहते हैं; और जब श्लेष्मिक झिल्ली अथवा उसके साथकी आतोंके अन्य आवरणोंमें प्रदाह हो जाता है, तो उसको फ्लेगमोनसएन्टेराइटिस कहते हैं। बृहदन्त्रके प्रदाहका नाम कोलाइटिस (C' LITI) है। यह बीमारी रक्तातिसार आमातिसारसे बिल्कुल अलग ही है।

लघु अन्त्र श्लेष्मिक आवरणप्रदाह (कैटरल एण्टराइटिस)

यह रोग सभी समय सभी ऋतुओंमें हो जाता है, लेकिन प्रायः छोटे बच्चोंको ही अधिकतर होता है। एक बार आरोग्य होनेपर भी पुनरावर्तक होनेकी सम्भावना रहती है। यह दो श्रेणियोंमें विभक्त है; एक नवीनावस्था दूसरा प्राचीनावस्था।

नवीनावस्थाको इङ्गलिशमें (एक्यूट फार्म) कहते हैं। इसकी भी दो श्रेणी होती हैं। (१) प्राथमिक (२) द्वितीयावस्था।

निदान

यह रोग मिथ्याहार विहार, गरिष्ठ भोजन, तीक्ष्णरेचनसे तथा सर्दीके लगनेसे, पेटको कब्जियतसे, एका-एक ऋतु परिवर्तन, ग्रीष्म ऋतुजन्य अतिसार, बहुत दिनोंका अभ्यस्त पीनेका पानी एका-एक बदल देनेसे, आंतोंमें अतिपित्त संचित होकर आंतोमें दोष पैदा होनेसे, अथवा आंतोंमें कठिन मलावरोधके कारण तथा पेटमें कृमि संचित होनेसे, क्रोधादिक स्नायुओंकी उत्तेजनादि कारणोंसे इसकी उत्पत्ति होती है। हिस्टीरिया ग्रस्त स्त्रियोंको भी कभी-कभी यह रोग हो जाता है। इस अवस्थाको प्राइमरी एक्यूट फार्मके नामसे कहते हैं।

दूसरा कारण यह है कि जिन मनुष्योंको क्षय, क्षत, कैन्सर जनितक्षत, अन्त्रवृद्धि और अन्त्रावरक झिल्लीका प्रदाह (पेरेटोना-इटिस) सिरोलिस लिवर (यकृतकी क्षीणता) फुफ्फुस रोग, हृद्रोग, रक्त संचार क्रियाकी गड़बड़ी, सूतिका रोग, इन्फ्लुएन्जा, टाइफाइड, कालेरा, आमातिसार, विषाक्त ज्वर (पाइमिया) आदि बीमारियोंके कारण एन्टेराइटिस होता है।

अगर कोई मनुष्य अग्निसे जल जाता है तो किसी किसीको डियोडिनमका प्रदाह हो जाता है उसको डियोडिनाइटिस द्वादश अंगुल अन्त्रका प्रदाह कहते हैं। इसके होनेसे श्लेष्मिक कलामें घाव हो जाता है।

लक्षण

इस रोगके होनेपर नाभीके चारों तरफ उदरमें शूलकी तरह वेदना होने लगती है। यह वेदना दबाने पर कभी घटती है कभी बढ़ती है तथा अतिसरण होता है। दिनमें ३-४ बारसे २०-२५ बार तक टट्टी हुआ करती है। टट्टीमें भूरा, पीला, हरा, पित्तयुक्त रंग होता है। मलद्वारकी चमड़ी गल जाती है। पेटपर आध्मान

हो जाता है, तथा पेटमें गड़गड़ाहट भी रहती है, जिह्वा मैली सूखी रहती है, तृषा लगती है, क्षुधाका नाश हो जाता है, कभी २ नाड़ी कमजोर पड़ जाती है, नाड़ीकी गति तीव्र रहती है, बमन भी होता है।

उग्रावस्थामें अधिक परिमाणमें बमन-अतिसार होते हैं, पेशियोंमें ऐंठन होती है और तृषाधिक हो जाती है। ज्वर १०२ डिग्री या उससे अधिक भी हो जाता है, तथा दुर्बलताके कारण मुखाकृति बदल जाती है। अथवा शीताङ्ग हो जाता है।

इस बीमारीमें अतिसार पेटका दोष प्रायः रहता है। परन्तु लघुअन्त्रके ऊपरी भागमें प्रदाह होनेपर बहुधा पतले दस्त नहीं होते हैं। बड़ी आंतके नीचेके अंशमें और मलान्त्रमें प्रदाह होनेपर मलके साथ रक्तमिश्रित आम आती है, तथा मलोत्सर्गके समय पेटमें भयंकर वेदना भी होती है, परन्तु मलोत्सर्गके बाद स्वतः ही शान्त हो जाती है। अगर लघु अन्त्रकी श्लेष्मिक कलामें प्रदाह हो जाय तो कला फूल जाती है, उससे पित्तके आने जानेका रास्ता अवरुद्ध हो जाता है, तब कामलाके लक्षण दिखाई देने लगते हैं और अन्त्र स्थानमें अकड़न तथा खिचावयुक्त वेदना होने लगती है। यहांपर अतिसारके बदले कब्ज हो जाता है। इस बीमारीमें विशेष लक्षण माथेके पीछेकी तरफ एक प्रकारकी वेदना होने लगती है। इससे यदि कभी पेटमें दोष हो जाता है, तो मलके साथ रक्तयुक्त आम भी रहती है, मलोत्सर्गके समय आमाजीर्णकी तरह ऐंठनयुक्त शूलका दर्द होता है, पेटमें वायु अवरुद्ध हो जाता है। बच्चोंको यह रोग होनेपर ज्वर, पेटपर आध्मान, मुखपाक, दुर्बलता, तन्द्रा इत्यादि लक्षण हो जाते हैं।

लघुअन्त्र प्रदाहकी द्वितीयावस्थामें लक्षण

इसके लक्षण बहुत कुछ मूल रोगोंके उपसर्गों और लक्षणोंके ऊपर निर्भर करते हैं, परन्तु अधिकांश रोगोंमें प्रबल अतिसार रहता है।

प्राचीनावस्थाके लक्षण

नया रोग आरोग्य हो जानेके बाद बहुधा बीमारी पुराना आकार धारण कर लेती है, तब पेटमें शूलकी तरह चुभनेवाली वेदना होती है, पेट फूल जाता है, अनियमित ज्वर तथा बीच-बीचमें पतले दस्त आते हैं। कभी कभी दस्त न आकर डिस्पेप्सिया अग्निमान्द्य हो जाता है लेकिन क्षुधानाश नहीं होता. दिन प्रतिदिन मानसिक दुर्बलता बढ़ती जाती है तथा रोगी रक्तहीन हो जाता है।

बृहदन्त्र प्रदाह, ऐक्यूट कोलाइटिस (ACUTE COLITIS)

इस रोगमें कोलन अर्थात् बड़ी आंतका नवीन प्रदाह हो जाता है, इसीलिये इसको कोलाइटिस (बृहदन्त्र प्रदाह) कहते हैं। इसके लक्षणों में तथा रक्तामाशय डिसेण्ट्री) के लक्षणोंके साथ बहुत कुछ समानता रहती है इसलिये एकाएक देखनेपर या रोगीकी अवस्था सुननेपर अधिकांश समय रक्तामाशयका भ्रम हो जाता है। परन्तु यथार्थमें ऐसी बात नहीं है, कोलाइटिस और रक्तामाशय दोनों पृथक पृथक रोग है।

लक्षण

इस रोगमें दस्त रक्त और आंव मिले हुये जल्दी जल्दी आते हैं तथा आंव और रक्तका परिमाण भी अधिक रहता है। एंठनी शूल और बड़ी आंतके ऊपर असह्य वेदना आदि लक्षण होते हैं।

बृदन्त्र प्रदाहमें प्राथमिक लक्षण

अधिकतर यह रोग स्वतः ही उत्पन्न होता है। रोगका आक्रमण अकस्मात् होता है, जिससे दस्त जल्दी जल्दी आने लगते हैं, प्रथम दस्तमें मल निकलता है, पश्चात केवल आंवके दस्त ही आने लगते हैं, तथा कभी ताजा रक्त ही आता है। कभी आंवरक्त मिले दस्त आया करते हैं, उदरमें असह्य वेदना और मरोड़ा रहता है, एक बार मलोत्सर्ग

के बाद दूसरी बार मलोत्सर्गके समय भी कुछ कुछ वेदना रहती है। निम्नगामी बृहदन्त्र (डिसेण्डिङ्ग कोलन) के ऊपर उदरके बाईं तरफ बहुत स्पर्शासहिष्णुता और वेदना रहती है, इससे जीभपर मैलापन भी आ जाता है। कठिन अवस्था होनेपर ज्वर १०४ डिग्री तक हो जाता है, तापमानके अनुसार नाड़ीकी गति तेज होती है आक्रमणावस्थामें तथा अन्य भी किसी समय वमन भी होता है। रोगका प्रबल रूप होनेपर कभी कभी शीताङ्ग भी हो जाता है।

भावी फल

यह बीमारी आराम हो जाती है, परन्तु कड़ी बीमारीमें बहुधा तीन दिनमें ही मृत्यु हो जाती है, किसी किसीको बहुत धीरे धीरे आराम हो जाता है लेकिन आराम होनेमें कई महीने लग जाते हैं, तथा किसी किसीको पुनरावर्तक रोग हो जाता है। अथवा किसी किसीको पुराना आकार (क्रानिक फार्म) धारण कर लेता है, तब रोगी को बहुत दिनोंतक कष्ट भोगना पड़ता है।

जीर्णावस्था होनेपर लक्षण

जीर्ण रूप धारण करनेपर सिग्मायड प्लेक्सरमें हर समय एक तरह की भड़कन रहती है, पेट थलथुला हो जाता है और कोलन (बड़ी आंतमें दर्द रहता है, मलोत्सर्ग प्रतिदिन २-३ बारसे लेकर आठ दस बार तक होता है, कभी कभी २-१ दिन तक कब्ज फिर २-४ रोज तक पतले दस्त भी हुआ करते हैं, कभी दस्तके साथ आंव और रक्त मिला रहता है, कभी आंव रक्त पृथक ही निकलते हैं। पाचन क्रियामें विशेष गड़बड़ नहीं होती, रोगी क्रमशः दुर्बल होता जाता है और मानसिक कमजोरी आ जाती है।

अन्यान्य रोगोंसे प्रभेद जाननेके लक्षण

मन्थर ज्वरमें त्वचापर दाने निकलते हैं और दाहिने तलपेटमें दर्द रहता है ; पेरिटोनाइटिस-अन्त्रावरक कला प्रदाहमें पेटके स्पर्शसे वेदना

बढ़ती है और कब्ज रहता है। अन्त्र शूलके दर्दमें क्षणभरमें वेदना कम होती है और क्षण भरमें बढ़ती है, ज्वर नहीं होता है। आमाजीर्ण डिसेन्ट्रीमें कराहना, शूलसहित अतिसारका वेग अधिक रहता है, और आंव और रक्त मिश्रित दस्त आते हैं, पर मात्रा मलकी अल्प रहती है।

कोलाइटिसमें—आंव और रक्तका परिमाण बहुत अधिक रहता है, आमाजीर्णमें इतना आंव और रक्त नहीं रहता, उसके मलका परिमाण भी थोड़ा रहता है। एण्टेराइटिसमें मलका परिमाण अधिक या अपेक्षाकृत अधिक रहता है, नाभिके चारों तरफ दर्द रहता है।

रोगाक्रान्त आंतोंमें लक्षणोंका भेद

लघु अन्त्रपर रोगका आक्रमण होनेपर शूलकी तरह वेदना होती है, पेटके चारों तरफ अकड़नका दर्द रहता है, तथा दस्त भी जल्दी जल्दी आते हैं, परन्तु पेटपर हर समय आध्मान रहता है। दस्तका रंग पोला, भूरा या हरे रंगका होता है ; साथमें कच्चा पदार्थ भी मिला रहता है, कभी कभी अल्प मात्रामें आंव तथा रक्त भी रहता है।

बृहदन्त्रपर रोगका आक्रमण होनेपर मलोत्सर्गके समय ऐंठन और वेदना होती है, आंतपर स्पर्श करनेसे वेदना होती है तथा जल्दी जल्दी मलोत्सर्ग होता है, मलके साथ रक्त आंवका परिमाण भी अत्यधिक रहता है, यहां तक कितनी ही बार मल बिल्कुल ही नहीं रहता है।

चिकित्सा और पथ्य

इस रोगमें पूर्ण रूपसे विश्रामकी आवश्यकता है, रोगीको हर समय बिछानेपर सोते रहना चाहिये। रोगकी उग्रावस्थामें लंघन कराना ही श्रेयस्कर है। प्यास रोकनेके लिये बरफके टूकड़े चूसनेको दिये जायँ तो अच्छा फायदा होता है। आयुर्वेदमें तृषा शान्त्यर्थ षेडङ्ग पानीय श्रृत जल दिया जाता है। कठिन वस्तुका अंश अगर पेटमें सञ्चित

हो गया हो तो प्रथम एरण्ड स्नेहका जुलाब देकर निकाल देना चाहिये। इसके बाद साबू, बार्ली, आरारोट, बीदाना रस, दूध, गीला भात आदि खानेको दिया जा सकता है। उदरस्थित वेदना शान्त्यर्थ उष्ण सेककी व्यवस्था करनी चाहिये। सेकके बाद पेटको रूईसे बांध देना चाहिये। रोगमें न्यूनता होनेपर उपरोक्त पथ्य हल्की मात्रामें देना उचित है।

मलद्वारमें अत्यधिक जलन हो तो गुदाके भीतर बरफ जल या टूकड़ा रखनेसे फायदा होता है।

प्राचीनावस्थामें दूध ही प्रधान पथ्य है।

औषध

साधारण अतिसारमें तथा आमातिसारमें जिन औषधियोंका प्रयोग किया जाता है, इन उपरोक्त बीमारियोंमें भी ठीक उन्हीं सब औषधियोंके द्वारा ही फायदा हुआ करता है। आयुर्वेदमें इसकी चिकित्साका पृथक कोई विधान नहीं हैं। मेरी चिकित्सामें इस रोगसे ग्रसित बहुतसे रोगी आये उनकी मैंने अतिसारोक्त चिकित्सा पद्धतिसे ही चिकित्साकी जिससे बहुतसे रोगी आरोग्य हुये उनमेंसे कुछेकके उदाहरण आपके समक्ष लिख रहा हूं कृपया आप लोग भी परीक्षा करके देखें।

रोगी नाम राधेश्याम, उम्र १२, जाति अग्र०,

यहांका पता—कालीकृष्ण टैगोर स्ट्रीट, नं० १० बालमुकुन्दजी।

इसको ३५ रोजसे मियादी ज्वर था। प्रातःकाल ज्वर १०१ सायंकाल १०४ डिग्री तक बढ़ता था, प्रलाप, कम्प, आध्मान, उदरशूल, मूत्रकृच्छ्रादि उपद्रव थे। चिकित्सा डा० गोपाल बाबूकी चल रही थी कोई फायदा नहीं हुआ तब मेरेको भी बुलाकर दिखलाया गया। मैंने जब रोगीको देखा तब उपरोक्त लक्षण थे, तब निम्नलिखित औषध चालू की।

ता० ९-९-४७ प्रातः	सायं	म०
रसराज रस १ रत्ती	कस्तूरी भैरव १	चन्द्रप्रभा १ गो०
प्रबाल १ रत्ती	प्रबाल १	यवक्षार ३ रत्ती
ज्वर संहार १ रत्ती	मुक्ता १	गोक्षुर क्काथसे
तुलसीरस मधुसे १पु०	भीमसेनी १	
	पानरस मधुसे	

रातको सोते समय	वज्रक्षार बार बारमें जलमें
चतुर्भुज १ रत्ती	मिलाकर देनेके लिये कहा
तालछाड़ा रस मंधुसे	पथ्यमें दूधवाली, मिश्री जल।

पेटपर दारुषट्क लेप दिलवाया।

ता० १०-९-४७ हालत पूर्ववत्

ता० ११-९-४६ हालत कुछ ठीक रही, प्रलाप कम हो गया तथा ज्वर भी कम रहा, पेटका आध्मान बिल्कुल ठीक हो गया, १ दस्त भी हुआ, लेकिन मूत्र बहुत कम मात्रामें होता था।

ता० १३-९-५० को सायंकाल देखने गया और रोगीके दिन भरके हालत पूछे तो पता चला कि २ रोज तक ज्वर ऊपरमें १०२ डिग्री तक बढ़ा था तथा नीचेमें ९९ तक हुआ था, लेकिन पेशाब बहुत कम हुआ और पेशाबमें जलन भी होती है तथा आज ज्वर भी १०४ डिग्री हो गया तब मैंने घरवालोंको कहा कि कल सुबहके पेशाबको लेकर लेबोरेटरामें भेजकर परीक्षा करवा लीजिये। टाइफाइड का दोष ठीक है कुछ कोलाइका सन्देह होता है। अस्तु सुबहका पेशाब शुद्ध शीशीमें भर कर लेबोरेटरीमें भेज दिया वहांसे कल्चरकी रिपोर्ट २ रोज बाद आई जिसमें कोलाइके कीटाणु मिले तब फिर औषध परिवर्तन करनी पड़ी।

प्रातः सायं	म० रा०
चन्द्रप्रभा १ गोली	वङ्गक्षार ६ रत्ती
वीरतर्वादिगणके क्राथसे	शु० शिलाजीत १ रत्ती
	गोक्षुर अर्कसे

इस औषधके ३ रोज तक सेवन करानेसे रोगीको पेशाब बहुत अधिक होने लग गया जिससे ५-६ रोजमें ही रोगी बिल्कुल स्वस्थ हो गया, पथ्य चालू कर दिया।

द्वितीय रोगी

रोगी नाम कमला, उम्र १३, जाति माहेश्वरी,
यहांका पता केवलरामजी १८ नं० बांसतल्ला स्ट्रीट।

इस लड़की को ६ दिवससे ज्वर १०४, पेटमें भयंकर वेदना, आम रक्तयुक्त अतिसार, शिरःशूल, बमनादि लक्षण थे। डाक्टर रविन्द्रनाथ बाबूका इलाज हो रहा था। ७-८ रोज तक चिकित्सा करने पर भी कोई फायदा नहीं हुआ तब लड़कीके पिता केवलरामजी मेरे पास आये और मुझको बुलाकर घरपर ले गये और रुग्णाको दिखलाया। मैंने जब इसको देखा तब निम्नलिखित लक्षण थे। ज्वर प्रातःकाल ७ बजे १०२ डिग्री, बमन, अतिसार पेटमें आध्मान सहित भयंकर वेदना, शिरःशूल आदि लक्षण थे। तब मैंने सर्वप्रथम निम्नलिखित औषध व्यवस्था चालू की।

ता० २०-७-५०	म० रा०	
प्रातः सायं	रामवाण	
आनन्द भैरव १ गो०	दाड़िम चतुः सम	पेटपर दारुषट्क
लवङ्गादि २ गो०	अमृत धारा ३ बूंद	लेप लगवाया
रसादि वटी १ रत्ती	अर्कसौंफ १ औंस	
१ पु०	अनुपानसे	
नागरमोथारस मधुसे		

पथ्यमें जलवार्ली, आरा रोटका पानी, मिश्री शृत जल दिया। सायंकाल ६ बजे लड़कीका पिता मेरे पास फिर आया और कहा कि ज्वर दोपहरमें १०३ हुआ, टट्टी २० हुये तथा बमन भी ४ बार हुआ, पेटमें बहुत वेदना है। तब मैंने रातको एक खुराक धान्य पंचक क्वाथ की दी और कहा कि २ नम्बर औषध जो रातको ८ बजे अमृतधाराके अनुपानसे देनेका है वह इस क्वाथके अनुपानसे दे देना और पेटपर गरम जलका सेक भी दे देना।

ता० २१ ७-५० को सुबह ७ बजे मैं घरपर देखने गया तब रातके हालत घरवालोंसे पूछे तो पता लगा कि रातको नींद बिल्कुल नहीं आई तथा और लक्षण भी सब वैसेके वैसे ही रहे कोई भी फायदा नहीं है रात्रि भर दर्दके कारण चिल्लाती थी। पसीना भी आता था मैंने भी रुग्णाकी हालत देखी तब ज्वर १०२॥ था तथा और लक्षण कल जैसे ही थे तब औषध पुनः परिवर्तन किया।

प्रातः सायं	म० रा०
शूलवज्रिणी १ गो०	रामबाण १ गोली
शंख भस्म १ रत्ती	सञ्जीवनी वटी १ गो०
बराटिका भस्म १ रत्ती १ खु०	ज़हर मोहरा खताई
पोदीनादि क्वाथसे	नागरमोथारस ।)
	अजवाइन अर्क =) के साथ

पेटपर मकोय बीज ≈– अजवाईन ≤– हींग =) को जलमें पीसकर गरम करके लेप २-२ घण्टा पर करानेको दिया सायंकाल ७ बजे केवल रामजी फिर आये और दिन भरके हालत कहे कि आज बमन दो बार हुआ, टट्टी ३ बार हुई, ज्वर १०३ हुआ, रात्रीसे दिनमें कुछ फायदा है। कल प्रातःकाल आप देखनेके लिए जल्दी ही आ जाइये। अस्तु

ता० २२-७-५० को सुबह देखनेके लिये गया और रात्रिकी व्यवस्था घरवालोंसे पूछी तो कहा कि रात्रीसे पेटमें दर्द कुछ कम रहा, टट्टी

२ बार हुई, वमन नहीं हुआ, कुछ समयके लिये निद्रा भी आई तब मने चालू दवा ही चालू रखी इस तरह ३ दिवस पर्यन्त इसी दवाको चालू रखा।

ता० २४-७-५० का फिर देखनेके लिये गया तब मालूम हुआ कि टट्टी उल्टी तो नहीं हुई लेकिन पेटमें दर्द आज रात्रिको अत्यधिक रहा, जिससे रात भर निद्रा नहीं आई तब औषधि फिर परिवर्तन किया।

नं० प्रातः	नं० २
धात्री लौह २ रत्ती	रामबाण १ गोली
शूलहरण योग १ गोली	यवक्षार ४ रत्ती
शंखभस्म १ रत्ती	अजवाईन अर्क एवं सौंफ अर्कके
धान्यपंचक क्वाथसे	अनुपानसे

उपरोक्त दवाका समिश्रण ३-३ घन्टाके हेरफेर से चालू किया। तथा लेप वगैरहकी व्यवस्था पूर्ववत चालू रखी। सायंकाल लड़कीके पिता मेरे पास आये और बोले कि आज दिनमें तबीयत बहुत अच्छी रही, टट्टी भी २ बार हुई, पेटमें दर्द भी बहुत कम है। २ घन्टा निद्रा भी आई पेशाब चार बार हुआ। आप सुबह देखनेके लिये जरूर आइयेगा।

ता० २५-७ ५० को सुबह देखनेको गया। तब खबर मिली कि लड़कीको ३ घन्टा निंद्रा आई, वेदना कम रही; टट्टी भी २ बार आमयुक्त हुई, औषध कलवाली ही चालू रखी।

ता० २६-७-५० हालत बहुत ठीक रही।

ता०-२७-७-५० ज्वर प्रातः ९८ में सायंकाल १००, अन्य उपद्रव शान्ति रहे।

ता० २८-७ ५० ज्वर प्रातः ९७ में सायंकाल १००, वेदना बिल्कुल शान्त, २ टट्टी भी बन्धी हुई काले रङ्गकी हुई।

ता० २६-७-५० ज्वर प्रातः ६७ में सायं ६६ डिग्री तक हुआ।

ता० ३०-७-५० ज्वर बढ़ा नहीं हालत ठीक पथ्य चालू कर दिया।

इस रोगमें उपयोगमें आई हुई औषधियोंका विवरण।

वीरतर्वादि गण

वीरतरुर्वृक्षवन्दा काशः सहचर त्रयम्।
कुशद्वयं नलोगुन्द्रा बकपुष्पोऽग्निमन्थकः॥
मूर्वापाषाण भेदश्च स्योनाको गोक्षुरस्तथा।
अपामार्गश्च कमलं ब्राह्मी चेति गणोवरः॥
वीरतर्वाविरित्युक्तः शर्कराश्मरि कृच्छ्रहा।
मूत्राघातं वायुरोगान्नाशयेन्निखिलानपि॥

खस, पियावांसा २ प्रकारका कुरंड, दर्भमूल, वंदाक, पटेरा, नरसल, कांसमूल, पारवान भेद, अरनीछाल, मूर्वा, गुन्दणो, अकसफेद, गज-पीपल, सोनापाठा, गोखरू, चिरचिटा कमललाल, ब्राह्मी। इन सब का क्वाथ विधिसे क्वाथ बनाकर उपयोगमें लावें।

अथवा इसकी औषधियां न मिल सके तो तृणपञ्च मूलका उपयोग करे।

तृणपंचमूल

कुशकाशनलदर्भ काण्डेक्षुका इति तृण संज्ञकः॥
मूत्रदोषविकारश्च रक्तपित्तं तथैवच।
अन्त्यः प्रयुक्तः क्षीरेण शीघ्रमेव विनाशयेत्।

भावार्थ कुशा, कांस, नरसल, इक्षुमूल, तण्डुलमूल, या सर (पानी) की मूल, इनको तृण पञ्चमूल कहते हैं।

यह तृणपञ्चमूल दूधके संग देनेसे मूत्रदोषीय विकार और रक्तपित्त नष्ट हो जाता है।

पोदीनादि क्वाथ

पोदीना, सोंठ, अजवाईन, सौंफ, इलायची छोटी, यवहरीतकी, को समान भाग लेकर क्वाथ विधिसे तैयार करे और मिश्रीका प्रक्षेप देकर सेवन करावे।

धान्य पञ्चक क्वाथ

धान्य बालक बिल्वाब्द नागरैः साधितं जलम्।
आम शूलहरं ग्राहि दीपनं पाचनं परम्॥

भावार्थ—धनियां, नागरमोथ, बेलगिरी, सोंठ, नेत्रबाला इनको समान भाग लेकर क्वाथ विधिसे क्वाथ तैयार कर उपयोगमें लावें।

गुण उपयोग— यह धान्यपञ्चक क्वाथ आमशूलको नष्ट करनेवाला, ग्राहि, दीपन, पाचन करनेवाला है।

शूलवज्रिणीवटी

रसगन्धक लोहानां पलार्द्धेन समन्वितम्।
त्रिफलारामठं शुल्वं शटी त्रिकटु टङ्कणम्॥
पत्रं त्वगेला तालीशं जातीफल लवङ्गके।
यमानी जीरकं धान्यं प्रत्येकं कर्ष सम्मितम्॥
माषैका वटिका कार्या छागी दुग्धेन वापुनः।
एकैका भक्षिता चेयं वटिका शूलवज्रिणी॥
शूलमष्टविधं हन्ति प्लीह गुल्मोदरं तथा।
अम्लपित्तामवातश्च पाण्डुत्वं कामलां तथा॥
शोथं गलग्रहं वृद्धिं श्लीपद स भगन्दरम्।
वृद्ध बालकरी चैव मन्दाग्निरपिदीपनी॥

भावार्थ शु० पारा और शु० गन्धक, लोहभस्म २-२ तोला, त्रिफला,

शु० हींग, ताम्रभस्म, कचूर, त्रिकटु, शु० सुहागा, पत्रज, तज, इलायची, तालीसपत्र, जायफल, लौंग, अजवाइन, जीरा, और धनियां १-१ तोला लेकर बारीक चूर्ण करके पारे गन्धककी नीलवर्ण कज्जलीमें मिलाय बकरीके दूधमें १-२ दिन मर्दनकर १-१ माशेकी गोलियां बनाकर रख छोड़े।

उपयोग—इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानके साथ देनेसे ८ प्रकारके शूल, प्लीहा, गुल्म, उदररोग, अम्लपित्त, आमवात, पाण्डु, कामला, शोथ, गलग्रह, सब प्रकारकी वृद्धि, श्लीपद, भगन्दर, मन्दाग्नि, इन सबको नष्ट करती है।

ऐलोपैथिक चिकित्सा

पाश्चात्य चिकित्सक इस रोगमें हैक्सामिन, यूरोट्रोपिन ग्लूकोज, यूरिनवेक्षिन तैयार करके देते हैं।

होमियोपैथिक चिकित्सा

एक्यूट एण्टेराइटिसमें – एकोनाइट, ऐलो, ऐसिडवेञ्जो, एण्टिम क्रूड, इथूजा, एपिस, अर्जन्ट-नाइट्री, आर्स, वेल, कार्वो, कैमो, चायना, कोलोसिन्थ, क्रोटोन, इपिकाक, आइटिस, जेलापा, जैट्रोफा, मैगकार्व, मर्कुरियस, नक्स, फास, इत्यादि दिया करते हैं।

क्रानिक फार्म (पुरानी बीमारीमें—ग्रे फाइटिस, लाइको, सल्फर सल्फ्युरिक एसिड, कूप्रम, सिकेली, और केम्फर आदि देते हैं।

जिह्वक सन्निपात लक्षणम्

श्वसन कास परिताप विह्वल कठिन कण्टक वृतातिजिह्वकः।
वधिर मूकवल हानि लक्षणो भवति कष्टतर साध्य जिह्वकः॥

जिस ज्वरमें श्वास, खांसी, अधिकतर संताप हो, जीभ अत्यन्त कठिन कांटोसे आच्छादित हो जावे, तथा अत्यन्त मूकता, कानोंमें बहरापन, बलका नाश हो, उस रोगको जिह्वक सन्निपात कहते हैं यह एकदम कष्ट साध्य है।

आयुर्वेद मतसे चिकित्सा

किराततिक्ताकुलकृत्कुलिञ्ज कर्चूर कृष्णा कटुतैल युक्तः ।
अम्लद्रव संशमयेद्रसज्ञा दोषान्स्तुतो दाशरथिर्यथात्र ॥

यह किरातादि—चिरायता, अकरकरा, कुलिंजन, कचूर, पीपल इनका चूर्ण बनाकर सरसोंके तैलमें मिलाकर, फिर इसमें बिजोरेका रस डालकर मुखमें धारण करनेसे जिस प्रकार स्तुति करनेसे भगवान् श्री रामचन्द्रजी जन्मजन्मान्तरके पापोंको नष्ट कर देते हैं उसी प्रकार यह ऊपर लिखित औषधियों द्वारा निर्मित कवल जिह्वक सन्निपातको नष्ट कर देता है।

अथवा वाणीको शुद्ध करनेके लिये—बेलकी जड़, कूठ, शंखाहूली, सहद, ब्राह्मीस्वरस, इनका सेवन करे।

अथवा इस रोगमें क्षुद्रादि या विश्वादि क्वाथको पीनेके लिये देनेसे भी जिह्वक सन्निपात ठीक हो जाता है।

क्षुद्रादि क्वाथ

क्षुद्रानागर पुष्कराऽमृतलता ब्राह्मीवचासुगता ।
भार्गीवासक यासतोय सुरसा क्वाथो जयेज्जिह्वकम् ॥

कंटकारी, सोंठ, पोहकरमूल, गिलोय, बच, गंधपलासी, भारंगी, अडूसा, जवांसा, सुगन्धवाला, तुलसी, इनका क्वाथ जिह्वकको नष्ट करता है।

विश्वादि क्वाथ

विश्वात्रम विभावरी युगवरा वत्सादनी वारिद ।
व्याघ्रीनिम्ब पटोल पुष्कर जटारुग्दारुभिर्वाकृतः ॥

सोंठ, पित्तपापड़ा, हल्दी, दारुहल्दी, त्रिफला, गिलोय, नागरमोथा, कंटकारी, नीमछाल, पटोलपत्र, पोहकरमूल, बालछड़, कूठ, देवदारु, इनका क्वाथ भी जिह्वक सन्निपातको नष्ट करता है।

घर्षण चिकित्सा

घर्षेज्जिह्वां जडां सिन्धुत्र्यूषणैः साम्लवेतसैः ।

अगर जिह्वा अत्यन्त खरदरी कांटेवाली हो गई हो तो सोंठ, मिर्च, पीपल, अमलवेत, इनका चूर्ण बनाकर जीभपर बारम्बार घीसे इससे जिह्वाका खरदरापन मिट जाता है। अगर इस सन्निपातमें वाणीमें दोष आगया हो तब निम्नलिखित कल्याणावलेहको घृतमें मिलाकर बार बार चटावें।

कल्याणावलेह

हल्दी, बच, कूठ, पीपल, सोंठ, जीरा, अजवाइन, मुलैठी, सैन्धव नमक इन सबको समान भाग लेकर चूर्ण बनाकर सेवन करनेसे स्वरविकृति नष्ट हो जाती है। इस रोगमें कवल ग्रहका ही विशेष महत्व शास्त्रकारोंने लिखा है। अतः उसकी विधि भी लिखता हूं।

गण्डूषकवल प्रति सारण विधि

सुखं सञ्चार्य्यते यातु मात्रा साकवलेस्मृता ।
असञ्चार्य्यातु या मात्रा गण्डूषः सम्प्रकीर्त्तितः ॥

इस रोगमें नानाप्रकारकी औषधियोंके रसोंका, तथा तैलादिकों का गण्डूष, कवल, प्रतिसारणादिका सेवन कराया जाता है। गण्डूष और कवलकी औषधि मुंखमें धारणकी जाती हैं, और प्रतिसारणसे जीभ पर घर्षण किया जाता है। इनमें मुंहको पूर्णतया औषधि द्रव्यसे भर देनेका नाम गण्डूष है, और सुख पूर्वक मुँहमें भरी हुई औषधिको घुमा सके उतनी मात्रा वालेका नाम कवल है। गण्डूषमें दूध, क्राथ, तैलादि द्रव पदार्थोंका ही प्रयोग किया जाता है, और कवलग्रहमें विशेषतः औषधिके कल्कका ही उपयोग होता है।

गण्डूष भेदाः

चतुर्विधः स्याद्गण्डूषः स्नेहनः शमनस्तथा शोधनो रोपणश्चैवः

कुल्ला ४ चार प्रकारका है। स्नेहन, चिकनाहट करने वाला, शमन शान्त करने वाला, शोधन (स्वच्छ) करने वाला, रोपण स्वच्छ करके भरने वाला ; वातकी अधिकता होतो स्निग्ध, पित्तशमनार्थ शमन, (कफ शमनार्थ) शोधन, व्रणके लिये रोपण।

कवल भेदाः

इसी प्रकार कवलके भी चार भेद हैं। स्नेही, प्रसादी, शोधी और रोपणी। वात रोगमें स्निग्ध और उष्ण द्रव्योंसे स्नेही कवल, तथा पित्त रोगमें मधुर और शीतल द्रव्योंसे प्रसादी कवल दिया जाता है, इसी तरह व्रणके रोपण करनेमें कषाय, तिक्त, मधुर, कटु उष्ण इन औषधियोंसे रोपणी कवल दिया जाता है।

गण्डूष कवलौषधमानम्

दद्याद्द्रवेषु चूर्णश्च गण्डूषे कोलमात्रकम्।
कर्ष प्रमाणः कल्कश्च कवले दीयते बुधैः॥

गण्डूषके द्रवमें कल्क ½ तोला डालना चाहिये, और कवलमें १ तोला डालना चाहिये।

कवल धारण विधि

मनुष्यको उचित है कि एकाग्र मन और उन्नत शरीर होकर कवल को उस समय तक धारण करे जबतक कपोल, नासिकाके श्रोत और नेत्र जलसे परिपूर्ण न हो जाय ऐसा होनेपर धारण किये हुये कवलको निकाल दे और फिर दूसरी बार कवल ग्रहण करे। परन्तु कवल क्रिया करनेके पूर्व कंठ, कपोल, ललाट इन अङ्गोंको संहित और मृदित कर लेना चाहिये।

वातशमनार्थ तिलकल्क, तिल तैल, दूध और जल मिलाकर कुल्ले करावे। पित्तशमनार्थ घृत, दुग्ध मिश्री, तिल शहद मिलाकर कुल्ले करावे। विषविकार या क्षारीय दोषमें—तिल, नीलकमल, घृत, चीनी, दूध, मधु इनका कुल्ला करावे।

कफ शमनार्थ त्रिकटु, वच, सरसों, हरड़ छाल, इनके चूर्णको मिला कर तैल, कांजी, मदिरा, मूत्र, क्षार, शहद, इनमेंसे किसी एकके साथ नमक मिलाकर गरम करके मुखमें धारण कर कुल्ला करावे।

शुद्ध कवलके लक्षण

व्याधिका दूर होना, प्रसन्नता, मुख शुद्धि, शरीरमें हल्कापन और इन्द्रियोंमें प्रसन्नतादि लक्षण शुद्ध कवलमें होते है।

हीनयोग अथवा अतियोगमें निम्न लक्षण होते हैं—भारीपन, कफकी अधिकता, रसस्वाद के समय ज्ञानाभाव हीन योगसे हो जाते हैं। अतियोगसे मुखपाक, शोष, तृषा, अरुचि और क्लम ये लक्षण हो जाते हैं।

सूचना—यह उपरोक्त क्रिया ५ वर्षसे कम उम्रवालेको, अतिवृद्ध, को नहीं करानो चाहिये।

शोधनीय कवलसे भी अतियोग जैसे ही लक्षण हो जाया करते हैं। इसलिये यहांपर भी तिल, नीलकमल वाला योग जो पीछे लिखा गया है उसीका प्रयोग करनेसे क्षारादिसे जले हुये मुखका दाह नष्ट हो जाता है। यह गन्डूष कवल धारण विधि विस्तारपूर्वक लिख दी गई है।

प्रति सारण क्रिया वैद्य अपनी बुद्धिसे विवेचना करके करे। इसके भी चार भेद होते हैं। जैसे कल्क, रसक्रिया, मधु और चूर्ण। इनमेंसे यथायोग्य मुखरोगमें अङ्गुलीके अग्र भागसे प्रतिसारण लगावे इसमें भी कवलकी तरह ही योग अतियोगके लक्षण होते हैं, तथा जो जो व्याधियां कवल धारणसे शान्त होती हैं वे ही प्रतिसारणसे भी शान्त होती हैं। इसपर मनुष्यको दोष नाशक और अनभिष्यन्दि पथ्य सेवन करना चाहिये।

यदि सविषान्न भोजन जीभ पर पहुंच जाता है तब जिह्वा पत्थर अथवा अष्ठीला रोगके समान अकड़ जाती है और रसका ज्ञान नहीं होता है, जिह्वामें पीड़ा और दाह होने लगता है। ओर कफ भी बढ़ जाता है—ऐसा होनेपर भाफ प्रकरणमें जो सिरीषादि लेप कहा है सो करे अथवा धायके फूल, हरड़ छाल, जामुनकी गुठली, इनको शहदमें मिलाकर लगावे। या अंकोलकी जड़ तथा सातलाकी छाल अथवा सिरसके बीजोंको शहदमें मिलाकर जिह्वापर लगावे।

अथाभिन्यास सन्निपात लक्षणम्

दोषास्तीव्रतरा भवन्ति बलिनः सर्वेऽपि यत्रज्वरे।
मोहोऽतीव विचेष्टता बिकलता श्वासो भृशं मूकता ॥
दाहश्चिकण माननञ्च दहनो मन्दो वलस्य क्षयः।
सोऽभिन्यास इति प्रकीर्तित इह प्राज्ञैर्भिषग्भिः पुरा ॥

भावार्थ—जिस सन्निपात ज्वरमें सम्पूर्ण दोष कुपित होकर बेहोशी संज्ञानाश, श्वासाधिक्य, मूकता (गूंगापन), दाह, मुखपर चिकनापन, अग्निमन्द, बलहानी आदि लक्षण करदेते हैं, उस रोगको अभिन्यास ज्वर कहते हैं।

अभिन्यास चिकित्सा

अभिन्यास और सन्यासकी चिकित्सा समान रूपसे ही की जाती है, अतः वैद्य बन्धुओंको चाहिये कि इसी प्रकरणमें आगे सन्यासकी चिकित्सा लिखी जावेगी उसीके अनुसार इस रोगकी चिकित्सा करे। प्रायः इस रोगमें मैंने निम्नलिखित औषधियोंसे फायदा हुआ देखा है।

कारव्यादि काथ, द्वात्रिंशदाख्य काथ, योगराज काथ, शृंग्यादि काथ, अर्कादि क्वाथ, अष्टादशाङ्ग क्वाथ, तथा सूचिका भरण रस, समीरपन्नग रस सन्निपात दावानल रस आदि औषधियां प्रयोगमें

लाई जाती है; तथा नस्यमें संज्ञाप्रबोध रसः संज्ञा प्रबोध प्रधमन नस्यसे भी अच्छा फायदा होता है।

शृंग्यादि क्वाथ

शृंगी भार्ङ्ग्यभयाजाजी कणाभूनिम्ब पर्पटः।
देवदारू बचाकुष्ठयास कट्फल नागरैः॥
मुस्त धान्यकतिक्तेन्द्रयव पाठा हरेणुभिः।
हस्तिपिप्पल्यपामार्ग पिप्पलीमूल चित्रकैः॥
विशालारग्वधोरिष्ट शटीवाकुचिका फलैः।
विडंगरजनी दार्वी यवानी द्वय संयुतैः॥
समांशैर्विहितः क्वाथो हिंग्वार्द्रक रसान्वितः।
अभिन्यास ज्वरं घोरं हन्ति तन्द्राश्च तत्क्षणात्।

भावार्थ—काकड़ासिंगी, भारङ्गी, हरड़, जीरा, पीपल, चिरायता, पित्तपापड़ा, देवदारु, वच, कूठ, जवांसा, कायफल, सोंठ, नागर मोथ, धनियां, कुटकी, इन्द्रजौ, पाढल, रेणुका बीज, गजपीपल, चिरचीटा, पीपलामूल, चीता, इन्द्रायन, अमलतास, नीम, कचूर, बाबची, बायबिडंग, हल्दी, दारूहल्दी, अजवाईन, इनका क्वाथ बना कर उसमें हींग और अदरखका रस मिलाकर पीनेसे शीघ्र ही अभिन्यास ज्वर, तन्द्रासे आक्रान्त रोगी आरोग्य हो जाते हैं।

कारव्यादि क्वाथ—कालाजीरा, पुष्करमूल, एरन्डमूल, त्रायमाण, सोंठ, गिलोय, दशमूल, कचूर, काकड़ासिंगी, जवांसा, भारंगी, पुनर्नवा, इन द्वादश औषधियोंको समभाग लेकर ५ गुने गोमूत्रमें मिला क्वाथकर पिलानेसे सब नाड़ियोंकी शुद्धि होकर घोर अभिन्यास ज्वर शान्त हो जाता है।

योगराज क्वाथ

नागरं धान्यकंभार्गी पद्मकं रक्त चन्दनम् ।
पटोल पिचुमन्दश्च त्रिफला मधुकं बला ॥
शर्करा कटुका मुस्तं गजाह्वा व्याधिघातकः ।
किरात तिक्तममृता दशमूली निदिग्धिका ॥
योगराजो निहंत्येष सन्निपातं त्रिकोल्वणम् ।
सन्निपात समुत्थानं मृत्युमप्यागतं जयेत् ॥

भावार्थ—सोंठ, धनीयां, भारंङ्गी, पद्माख, लालचन्दन, पटोलपत्र, नीमछाल, त्रिफला, मुलेहटी, खरटी, मिश्री, कुटकी, नागरमोथा, गजपीपल, अमलताश, चिरायता, गिलोय, दशमूल, और कटेरी इनका क्वाथ त्रिदोपोल्वण सन्निपातको नष्ट करता है और सन्निपातसे उत्पन्न हुई मृत्युको भी जीत लेता है।

अर्कादि क्वाथ

भास्वन्मूलं जीरकव्योष भार्ङ्गी । व्याघ्रीशुण्ठी पुष्करं गोजलेन ॥
सिद्धं मद्यः शीत गात्रार्तिमोह । श्वासश्लेष्मो द्रं ककासान्निहंति ॥

आककी जड़, जीरा, मिर्च, पीपल, भारङ्गी, कटेरी, सोंठ, पोहकरमूल, इनको गोमूत्रमें पकाकर सेवन करनेसे तत्काल ही शीताङ्ग, मोह, श्वास, कास, कफकी अधिकता और खांसी नष्ट हो जाती है। अष्टादशाङ्ग क्वाथ, सूचिका भरण रस, समीरपन्नग रसादिकका विवरण पीछेके प्रकरणोंमें लिखा जा चुका है। अतः वहीं पर देखलेवें।

सन्निपात दावानल रसः

तालकं नागवङ्ग ढ्ढ हरवीर्यश्च टङ्कणम् ।
त्रिक्षारं पञ्चलवणं गरलं पार्वती शिला ॥

एतानि समभागानि निम्बुनीरेण मर्दयेत् ॥
पाचितं बालुकायन्त्रे दिनैकं तीव्र बह्निना ॥
स्वागंशीतलमुध्दत्य शिखिच्छागाहिपित्तकैः ।
भावितं माषमात्रञ्च दातव्यं दोष नाशनम् ॥
सन्निपातन्निहन्त्याशु दध्यन्नं पथ्यमाचरेत् ।
दावानल रसः ख्यातो बीतिहोत्र प्रकाशितः ॥

भावार्थ—शु० हरिताल, नाग और बंगभस्म, शु० पारा, शु० सुहागा, तीनोंक्षार, पांचो नमक, सर्पविष, शु० गन्धक; शु० मैनशिल, सब समभाग लेकर हरिताल पारा गन्धक मैनशिलकी नील वर्ण कज्जलीकर अन्य सब औषधियोंको मिलाकर निम्बूके रसमें १-२ दिन मर्दनकर गोला बनाय शराब सम्पुटमें बन्द कर ६-७ कपड़ मिट्टी देकर अच्छी तरहसे सूखनेपर बालुका यन्त्रमें बन्दकर चार प्रहरकी कड़ी आंच दे। स्वांग शीतल होनेपर मोर, बकरा, और सांपके पित्तोंसे १-१ भावना देकर उड़द बराबर गोलियें बनाकर रख छोड़ें। इनमेंसे १-१ समयोचितानुपानके साथ देनेसे यह तमाम सन्निपातोंको नष्ट करता है। मूर्च्छा जगनेपर अत्यन्त भूख लगे तो दही भात खानेको देवे। इस प्रयोगसे अभिन्यासमें अच्छा फायदा होता है। कविराज श्री ज्योतिर्मयसेनजीके औषधालयमें यह औषध तैयार की जाती थी। उनके यहांसे मँगवाकर मैंने भी कितने ही रोगियोंको खिलाई इससे अच्छा फायदा होता है। कविराजजी प्रायः इस रसको अभिन्यास, सन्यास रोगमें प्रयुक्त करते थे।

संज्ञा प्रबोध प्रधमनम्

वचारसोनकटुकं सैन्धवं बृहती फलम् ।
रुद्राक्षं मधुसारञ्चफलं सामुद्रिकं मतम् ॥

गन्धेशौ समभागानि ह्यर्कक्षीरेण भावयेत् ।
भावयेन्मीन पित्तेन त्रिवारं चूर्णयेत्ततः ॥
धमनं कथितं श्रेष्ठं सन्निपाते सुदारुणे ।
कफोल्वणे तीव्रवाते अपस्मारे हलीमके ॥
शिरोरोगे नेत्ररोगे कर्णरोगे विधानतः ।
ध्मापयेद्घ्राणछिद्राभ्यांसञ्ज्ञा करणमुत्तमम् ॥

भावार्थ—वच, लशुन, कुटकी, सेन्धव नमक, भटकटैयाफल, रुद्राक्ष, मुलहठी, समुद्रफल, पारा और गन्धक समभाग लेकर बारीक चूर्णकर कज्जलीमें मिलाय आकके दूध और मछली पित्तकी ३-३ भावनाएँ देकर सुखाकर बारीक चूर्णकर रख छोड़े।

उपयोग—भयंकर कफोल्वण सन्निपात, तीव्रज्वर, अपस्मार, हलीमक, शिरोरोग, नेत्ररोग कर्णरोग इनमें इसका नस्य देनेसे चेतना प्राप्त होती है।

ऐलोपेथिक, होमियोपेथिक में इस रोगकी कोई अव्यर्थ औषध नहीं है, आजकल पाश्चात्यचिकित्सक इस रोगमें पेनिसिलीन, स्टेप्टोमाईसीन का प्रयोग करते हैं। लेकिन फायदा होता है यह बात कहीं पर भी देखनेमें नहीं आई। आयुर्वेद मतसे भी यह रोग बिलकुल असाध्य है तथापि कभी कभी कोई रोगी उपरोक्त चिकित्सासे ठीक हो जाता है।

॥ इति सन्निपात ज्वर चिकित्सा समाप्तम् ॥

संन्यास सन्निपात ज्वर लक्षणम्

अतिसरति वमति कूजति गात्राण्यभितश्चिरं नरः क्षिपति ।
सन्यास सन्निपाते प्रलपत्युग्राक्षि मन्डलो भवति ॥

भावार्थ—जिस मनुष्यको सन्यास नामक सन्निपात ज्वर होता है, वहरोगी अतिसार बमन युक्त होकर बार २ अङ्गोको इधर-उधर पटकता रहता है तथा प्रलाप करता है। उसके नेत्र मन्डल अत्यन्त उग्र हो जाते हैं। यह सामान्य लक्षण बताये हैं।

संन्यास सम्प्राप्ति पूर्वक विशेष लक्षण

इस रोगके आक्रमण तीन रूपमें होते हैं।

(१) रोगी बेहोश होकर जमीनमें गिर पड़ता है। इसकी शारीरिक मानसिक तमाम चेष्टायें नष्ट हो जाती हैं। देखनेसे मालुम देता है कि रोगी गाढ़ निद्रामें सो रहा है। इस रोगीका चेहरा तमतमाया हुआ एवं श्वास कष्टसे आता है। नाड़ी भारी और मन्द होती है। आंखोंकी पुतलियां फैली हुई होती है। मुंह एक पार्श्व को तरफ झुक जाता है। बार २ में आक्षेप होता है। यदि सहसा आक्षेप शुरू हो जाय तो बृक रोगकी आशंका करनी चाहिये।

(२) जब रोगका दूसरे रूपमें आक्रमण होता है तब रोग होनेके पूर्व ही रोगीको सूचना दे देता है। जैसे—भ्रम, मूर्च्छा, घबराहट, शिरमें पीड़ा हृदौर्बल्य, शिरमें खिचाहटका अनुभव गरमीका अनुभव, मलावरोध, मूत्रमें गंदलापन, विचारोंमें स्थिरता, वाक् शक्तिका ह्रास, चेहरेपर सुर्खी, रक्तश्राव, आंखोंमें अन्धेरापन, एक वस्तुकी दो वस्तु दिखलाई देना, हाथोंमें ढीलापन, स्मरण शक्तिका लोप होना तथा पाण्डु वर्ण हो जाता है। इस रूपमें जब आक्रमण होता है तब सर्व लक्षण मूर्च्छासे मिलते हैं। शास्त्रकारोंने इस रोगको मूर्च्छान्तर्गत माना है।

(३) इस रोगका तृतीय आक्रमण पक्षाघात रूपमें होता है। किसीको एक पार्श्वमें पक्षाघात हो जाता है, किसीको एक अङ्गमें याने एक हाथमें या एक पैरमें होता है। पक्षाघात होने पर रुग्णका अङ्ग क्रिया हीन होकर निर्जीव हो जाता है। तीव्र रूपमें मुंहपर आक्रमण होने पर मुंह एक तरफ मुड़ जाता है। वाक् शक्ति नष्ट हो जाती है। जिह्वा स्तम्भ हो जाती है। या जिह्वा टेढ़ी हो जाती है। इसलिये इशारोंसे ही जरूरत की वस्तुएँ मांगता है, चेहरेकी कान्ति नष्ट हो जाती है। प्रथम दोनों आक्रमणोंके समय रोगके पूर्वही भावी व्याधिकी सूचना मिल जाती है। यथा श्वास पूरा न लेकर बीचमें से ही बाहर फेंक देना। मुंहसे फेनयुक्त लालश्राव होने लगता है, हन्वस्थि जकड़ जाती है। निगलनेमें कष्ट होता है, मुंहमें पानी डालने पर ओष्ठोंके द्वारा बाहर आ जाता है। चेहरेका रङ्ग लाल पीले रङ्गका हो जाता है। आँखे सुस्त अलसायी सफेद हो जाती हैं।

तथा पुतली संकुचित हो जाती हैं। अङ्ग क्रिया रहित कठोर हो जाते हैं। बीच २ में कभी-कभी किसी-किसी रोगीको आक्षेप सर्वाङ्गमें या एक पार्श्वमें होने लगते हैं। तथा हाथ पैर ठन्डे रहते हैं। पसीना बहुत आता है। दस्तकी कब्जी रहती है या बिगर प्रवाहणके आपसे मल निकल जाता है। मूत्र अच्छी तरहसे होता है या जब तक वस्तीमें पूरा पेशाब नहीं भरता तब तक नहीं होता है। नाड़ी प्रथम मन्द पीछे तेज भरी हुई होती है। यदि नाड़ीकी गति नीचेमें ६० तक ऊपरमें १२० तक हो जाय तो अवस्था चिन्ता जनक समझी जाती है। तापमानमें थोड़ा-सा अन्तर आना उत्तम है। यदि ज्यादा अन्तर हो जाय तो भयकारी है। इस रोगका आक्रमण २-३ घन्टेसे लेकर कुछ दिनो तक रहता है। जितनी ज्यादा देर तक रहता है उतना ही कष्ट दायक है। यह रोग धीरे-धीरे

अच्छा होता है, या आधा अच्छा होता है या बिल्कुल ही अच्छा नहीं होता। संज्ञा हीन होकर मृत्यु हो जाती है। यह रोग ५ वर्षसे ऊपरको आयु वाले पुरुषोंको स्त्रियोंकी अपेक्षा अधिकतर होता है।

जैसे शास्त्रमें लिखा है

वाग्देह मनसां चेष्टा माक्षिप्यति बला मलाः।
सन्यसन्त्य वलं जन्तु प्राणायतन माश्रिताः॥
सनासन्यास सन्यस्तः काष्ठीभूत मृतोपमः।
प्राणैर्विमुच्यते शीघ्रं भुक्त्वा सद्यः फलां क्रियाम्॥

भावार्थ जब हृदयमें रहने वाले अत्यन्त बलवान कुपित दोष प्राणायतनरूप हृदयमें वाक्शक्ति देह शक्ति मानसिक शक्तिको नष्टकरके दुर्बल मनुष्यको मूर्छित कर देते हैं, उस रोगको सन्यास रोग कहते हैं। इस रोगसे ग्रसित मनुष्य क्रियाहीन मृतकके समान हो जाता है।

यह रोग कैसे पुरुषोंको होता है।

जिनकी ग्रीवा मोटी होती है, छाती बड़ी होती है, कफ प्रकृति वालेको शरीर जिसका दृढ़ होता है, जिसके वंश परम्परासे दुबलता हो, जो ज्यादा भोजन पान करने वाला हो, जिसको लगातार गठीयाकी बीमारी चलती हो, जिसको कब्जियतकी बीमारी हो या यकृत रोग वृक्करोग पान्डुरोगोंसे पीड़ित ऐसे उपरोक्त पुरुषोंके मस्तिष्कमें रक्तसंचय होकर अथवा जिसको मानसिक आघात हो गया हो, ऐसेको तथा जिसकी कामेच्छा हो या पेटमें ज्यादा गर्मी पैदा हो गई हो अथवा किसीको रक्तश्राव होता हो उसको तथा अतिसार वमनके एक साथ रोकनेसे तंग कपड़ा पहिनने वालेको भी तथा इस रोगके आक्रमण साधारणतः रक्त श्रावके होनेपर होता है। यह श्राव त्वचाके पृष्टपर हो अथवा मस्तिष्कमें हुआ हो मुख्य कारण इस रोगका रक्तवाहनियोंके फटनेसे रक्तके जमनेका है। दूसरा कारण मस्तिष्कमें पानी भर जाना है। इसलिये इस रोग ग्रसित रोगीके निदानके समय निम्नलिखित रोगोंसे तारतम्य कराना

चाहिये। जैसे—साधारण मूर्च्छा, मद्यजन्यमूर्च्छा अफीम विषजन्य मूर्च्छा, अपस्मार आदिसे।

मूर्छा वात प्रकृतिवाले पुरुषोंको या स्त्रियोंमें होती है और नाड़ीका ज्ञान ठीक प्रकारसे होता रहता है और ज्ञान भो जल्दी ही हो जाता है।

मद्य जन्य मूर्च्छामें रोगीके मुंहसे मद्यकी दुर्गन्ध आती है आंख की पुतलियाँ समान रहती है, जबकि सन्यासमें १ पुतली संकुचित और दूसरी विकसित रहती है। तथा इसमें हल्ला गुल्लासे रोगीको जगा सकते हैं परन्तु सन्यासमें नहीं जागता है।

अफीम जन्य मूर्च्छामें रोगीके मुंहसे अफीमकी गन्ध आती है वमनमें भी अफोमकी गन्ध आती है। अफीमके रोगीको शिरपर शीत उपचारकर तथा हिला डुलाकर जगा सकते हैं, परन्तु फिरसे बेहोश हो जाता है। सन्यासके रोगीको पिन चुभाकर भी जगाने की चेष्टा करेंगे तो भी जगेगा नहीं काटनेवाले अंगोंको खींचकर ही रह जावेगा। अफीमवाले रोगीको चुभानेका कुछ भी अनुभव नहीं होता। सन्यास प्रायः मोटे या पतले रोगियोंमें होता है। सन्यासका आक्रमण सहसा होता है। अफीमका आक्रमण धीरे धीरे बढ़ता है।

अपस्माराक्रमणमें रोगीको आंखे ऊपरकी पलकोंमें चली जाती है सिर्फ सफेद भाग दिखलाई देता है। आक्रमणके समय रोगीके मुंहसे आवाज निकलती है। साथमें झाग आजाते हैं। सन्यासमें ऐसे कोई भी लक्षण नहीं होते।

सन्यास चिकित्सा

शास्त्रमें सन्यासको भी मूर्च्छान्तर्गत ही माना है। परन्तु मूर्च्छा और उन्माद दोषोंके वेग खत्म होनेपर अपने आप ही शान्त हो जाते हैं। किन्तु सन्यास एक ऐसा रोग है जो औषधि सेवनके बिना शान्त होता ही नहीं।

जैसे और भी लिखा है

प्रभूतदोषस्तमसोतिरेकात्सम्मूर्च्छितो नैवविबुध्यते यः
सन्यस्तसंज्ञः सहि दुश्चिकित्स्योनगोभिषग्भिः परिकीर्त्तितोऽसौ

भावार्थ—अधिक दोषोंवाला मनुष्य तमोगुणकी अधिकतासे मूर्छित होकर पीछे जागृत नहीं हो उस रोगको वैद्य लोग सन्यास कहते हैं। और इसकी चिकित्सा अत्यन्त कठिन बतलाई है। फिर भी चेष्टा करनेसे कोई २ रोगी आराम हो जाता है।

अञ्जनान्य व पीडाश्च धूमाः प्रधमनानिच
सूचिभिस्तोदनं शस्तं दाहपीड़ानखान्तरे

सन्यास रोगसे पीड़ित रोगीको चेतना करानेके लिये सर्वप्रथम अंजन लगाना चाहिये। या मूर्च्छानाशक औषधियोंका स्वरस निकालकर नासिकामें निचोड़ना चाहियें या तीक्ष्ण औषधियों द्वारा धूम देवे। या दो मुखवाली नलिका में औषध चूर्णको भरकर मुखसे फूँक मारकर चढ़ावे। या अङ्गोमें सूई चुभाकर ज्ञान करावे। या नखूनोंपर अग्नि द्वारा दहन क्रिया करे। अथवा बालोंको एवं रोमोंको उखाड़े। या दाँतोंसे कटवावे। या कौंछकी फलीको घिसे। इन सब क्रियाओंमेंसे जो भी उचित समझे जल्दी से जल्दी ही करें अगर यह उपरोक्त क्रियायें सर्व व्यर्थ हो जाय तो औषधव्यवस्था करे मेरे पास इस रोगसे आक्रान्त कुछ रोगी आये उनकी मैने जो चिकित्सा करी वह मेरा अनुभव आपलोगोंके सामने लिख रहा हूं।

शिरीषाद्यञ्जनम्

शिरीषबीजगोमूत्र कृष्णामरिच सैन्धवैः
अञ्जनंस्यात्प्रबोधाय सरसोन शिलावचैः

भावार्थ—शिरीषबीज, पीपल, कालीमिर्च, सैन्धव नमक, लशुन, मनः शिला वच इन सबको समान भाग लेकर बारीक चूर्ण बनावे और गौमूत्रमें मर्दनकर धूपमें सुखाकर अंजन बना लेवे इसको सलाईसे आंखमें लगानेसे संज्ञा प्राप्ति होती है।

सैन्धवादिनस्यम्

सैन्धवं श्वेतमरिचं सर्षपं कुष्ठमेव च
वस्तमूत्रेण सम्पिष्य नस्यं तन्द्रा निवारणम् ।

सैन्धव नमक, सफेद मिर्च, सफेद सरसों, कूठ इनको बकरेके मूत्रमें पीसकर नस्य देनेसे शीघ्रही सन्निपातज-तन्द्रा नष्ट हो जाती है।

मधूकसारादि नस्यम्

मधूकसार सिन्धूत्थ वचोषण कणाः समाः ।
श्लक्ष्णं पिष्ट्वाम्भसा नस्यं कुर्यात्संज्ञा प्रबोधनम्

महुआ छाल, सैन्धव नमक, वच, कालीमीर्च, पिपल, इन सर्वको समान भाग लेकर बारीक कपड़ छान चूर्णको गरम जलमें मिलाकर नस्य कर्म करनेसे शीघ्र ही चेतना आ जाती हैं।

नस्यगुणाः-नस्येन रोगाः शाम्यन्ति नराणा मूर्ध्व जत्रजा ।

नस्य कर्म करनेसे जत्रु से ऊपरके सर्व रोग नष्ट हो जाते हैं। नस्यके तीन लक्षण है।

नस्ये त्रीण्युपदिष्टानि लक्षणानि प्रयोगतः ।
शुद्धहीनातिसंज्ञान विशेषाच्छास्त्र चिन्तकैः ॥

शास्त्रके जानने वालोंने नस्यके तीन लक्षण बतलाये हैं। जैसे शुद्धलक्षण, हीन शुद्धिलक्षण, अतिशुद्धि लक्षण। शिरका हल्कापन, स्रोतोंकी शुद्धि, व्याधिका दूर होना, चित्त और इन्द्रियोंका प्रफुल्लित होना यह शिरकी शुद्धिके शुद्धि लक्षण हैं।

हीन शुद्धिके लक्षण

खुजली, लिबलापन, स्रोतोंमें (नाक कान आंख मुख) में भारीपन, कफप्रवृत्ति, शिरमें भारीपन ये सब लक्षणहीन शुद्धिके हैं।

अति शुद्धिके लक्षण

मस्तिष्कसे चिकनाई आना, वातकी वृद्धि, इन्द्रियोंमें शिथिलता, सिरमें खालीपन प्रतीत होना तथा कठोरताका अनुभव करना यह अति शुद्धिके लक्षण हैं। नस्यकर्म करनेके बाद भी अगर चेतना न बढ़े तो अवपीड़न क्रिया करनी चाहिये।

अवपीड़नका विधान

अवपीड़स्तु शिरोविरेचन वदभिष्यन्दिसर्पदष्टविसंज्ञेभ्यो-दद्यात् शिरोविरेचन द्रव्याणामन्यतममवपीड्यावपिष्य चेता-विकारकृमिविषाभिपन्नानां चूर्ण प्रधमेत्।

भावार्थ शिरोविरेचनके समान ही अभिष्यन्दि, सांपके काटे हुयेको तथा बेहोशको अवपीड़न कर्म करावे। तथा शिरोविरेचन करानेवाले द्रव्योंमेंसे सहजनेका स्वरस अथवा सहजनेका बीज, नीला थोथाको पीसकर शिरोविरेचन देवें अथवा गोमूत्रमें वायविडङ्ग पीसकर अवपीड़न कर अथवा सिरसका रस, मूलीफलका रस या वच पीपलका अव-पीड़न करे। गोंदीकी छाल, अथवा मेढासिंगीकी छाल, इनकी बत्ती बनाकर धूमपानमें उपयुक्त करे। प्रधमन क्रियाके लिये कायफलका चूर्ण नकछिंकनीके चूर्णका प्रयोग करे। इस रोगमें काम आनेवाले आयु-र्वेदीय औषधियोंके नाम—कूलवधूरस, वैताल रस, ब्रह्मरन्ध्ररस, सूचिका भरण रस, श्रीप्रताप लंकेश्वर रस, श्वासकुठार रस, चतुर्भुज रस, दशमूल काथ, अष्टादशाङ्ग काथ, अभयादि काथ।

उदाहरण रूप रोगी

रोगीका नाम केशवदेव, उम्र ५० जाति गौड़, देश जयपुर, बराकड़-से सं० १९४६ में आया, इसको बहुत दिनोंसे संग्रहणीको बीमारी थी शरीरसे बहुत कमजोर था यह अस्पतालमें आकर सुबह ६ बजे भर्ती किया गया रास्तेमें इसको टट्टी बहुत लगती थी। इसलिये १ डाक्टरकी दवा साथमें लाया था जिसमेंसे ३ खु० रास्तेमें खाई थी। अस्पतालमें

आया तब बेहोश था पेटपर आध्मान तथा नाड़ी बहुत दुर्बल थी, शिरपर तथा पैरोंमें पसीना आकर ठन्डे हो रहे थे एक अङ्गमें आक्षेप होता था, आंखोंमें एक आंखकी १ कनीनिका संकुचित थी, एक विकसित थी, इस अवस्थाको देखकर हमने समझ लिया कि इसको सन्यास हो गया है। हालत बिल्कुल खराब है, घरवालोंने कहा कि अस्पतालमें आनेकी इसकी अत्युग्र इच्छा थी रातको अच्छी तरहसे था। परन्तु न जाने दवा खानेके बाद अचानक मूर्च्छित हो गया। कितनी ही जगानेकी चेष्टा की लेकिन कुछ सुनता ही नहीं है अब ऐसी हालतमें न हम वापिस जा सकते हैं। आप ही ईश्वरकी जगह हैं इलाज कीजिये, भाग्य होगा तो जी जायगा नहीं तो किस्सा खतम है ही। मैंने उनको धीरज बंधाया और इलाज चालू किया।

नं० १—प्रातः सायं	म० रा०
श्रीप्रतापलंकेश्वर रस	चन्द्रप्रभा
दशमूल क्वाथसे	वज्रक्षार
	अजवाइन अर्क जलसे

तथा सर्वप्रथम शिरोषाद्यञ्जन, आंखोंमें लगानेका आदेश दिया हाथ पैरोंमें शंठी चूर्णकी मालिश कराई, तथा शिरपर दशाङ्ग लेप ठन्डे गुलाबजलमें मिलाकर पट्टी लगवाई। तथा पेटपर दारुषटक् लेप लगवाया यह क्रिया चालू की गई। २ रोज तक यह क्रम चालू रखा परन्तु कोई भी तरहका फायदा नजर नहीं आया। फिर औषध परिवर्तन किया।

प्रातः	सायं	रातको
प्रताप लंकेश्वर	वेतालरस	बृ० वातचिन्तामणि
अदरखरस मधुसे	दशमूल क्वाथसे	अभयादि क्वाथसे
म० वज्रक्षार ६ रत्ती		
मकर० १ रत्ती		
अर्क मकोयसे		

मधूकसारादि नस्य दिया सिर पेटकी व्यवस्था पूर्ववत चालू रखी। दवा मुँहसे बहुत मुश्किलसे खिलाते थे इस तरह यह क्रम २ रोज तक चालू रखा, १टट्टी हुयी जिसमें एक कृमी निकला आंखोंकी पुतलियां कुछ घूमने लगी परन्तु संज्ञा नहीं हुई तब श्वास कुठारका नस्य दिया जिससे २-३ छींक आई परन्तु फिर भी ज्ञान नहीं हुआ। इस तरह इसका नस्य दिनमें २-३ बार दिया लेकिन कोई फायदा नहीं हुआ। तब मधूक-सारादि नस्य दिया जिससे कुछ २ आंख खोलने लगा परन्तु अच्छी तरह दवा नहीं खाता था। अतः वायविडङ्ग गोमूत्रमें पीसकर अवपीड़न कर्म किया जिससे उसको कुछ ज्ञान हुआ। आवाज देनेसे आंख खोलने लगा और जल भी पीने लग गया इस तरहसे ७ रोज तक उपरोक्त व्यवस्था करनेसे यह रोगी बिल्कुल स्वस्थ हो गया। और बादमें इसको पर्पटीका साधन कराया जिससे बिल्कुल स्वस्थ होकर अस्पतालका गुणगान करता हुआ अपने घर चला गया। दूसरा रोगी एक भागलपुरसे आया था उसको २ मास पूर्व देशमें अलवरमें मन्थर-ज्वरकी बीमारी हुई थी। उसके बाद वहांसे ठीक होकर भागलपुर आ गया था वहां इसकी स्त्री क्षयाक्रान्त होकर मर गई थी। उसी कारणसे इसके मनमें बहुत दुःख हुआ। बादमें कमजोर हालतमें ही जयपुर कांग्रेस देखने चला गया वहांपर इसको ठण्ढ लगकर छातीमें तथा शिरमें दर्द हो गया। वहांसे यह फिर वापिस भागलपुर आ गया। लेकिन वहांपर बहुतसे इलाज कराये कोई फायदा नहीं हुआ, तब इसको यहां कलकत्ते अस्पतालमें लाकर आयुर्वेद बिभागमें भर्ती किया। तब मैंने इसकी निम्नलिखित अवस्था देखी।

रोगी नाम मूलचन्द, उम्र २२, गौड़, देशमें अलवर
भर्ती ता० ३-४-४७

भर्ती हुआ उस समय ज्वर ९९ में था शरीरसे बहुत कमजोर था, भूख नहीं लगती थी खांसी आती थी शिरमें बहुत दर्द था। शिरका

दर्द गर्दनसे उठकर आता था ज्वर प्रातः ९९ सायं १०१—१०२ तक हो जाता था। प्रायः क्षयके लक्षण दिखलाई देते थे प्रथम हमने उसको निम्नलिखित औषध चालूकी

प्रातः	म०	सायं०	रातको
सार्वभौमरस	चन्द्रामृत	ना० लक्ष्मीविलास	रसराज
पानरसमधुमें	वासावलेहसे	पान रस मधुसे	दुग्धसे

ता० ३-४-४७ ता० ५-४-४७ तक यही दवा चालू रखी परन्तु ता० ५ को सुबह जब मैंने देखा तो बोला कि मेरे शिरमें बहुत दर्द है गला घुट रहा है आंखोंके सामने अन्धेरी सी आती है। खानेकी इच्छा नहीं है, खांसी बहुत आती है, जिससे कफके साथ कुछ रक्त भी आता है। तब मैंने कहाकि चिन्तामत करो समय लगेगा तुम अच्छे हो जावोगे लेकिन् वह जीवनसे निराश हो गया था। इसलिये कुछ दवामें अश्रद्धा करता था। अस्तु उसी रातको उसके शिरमें वेदना बढ़ गई। और भूल बकने लगगया, तन्द्राभी आने लग गई। तब मेरेको देखने फिर बुलाया तब मैंने शिरपर दशाङ्गलेप कर दिया तथा कट्फलका नस्य भी दिया। परन्तु कुछभी फायदा नहीं हुवा। और अचानक मूर्च्छा हो गई, घरवाले फिर दौड़कर मेरे पास क्वार्टरपर आये, मैंने जाकर देखातो मालुम हुआ कि इसको तो सन्यास हो गया है। मैंने इसको बहुत हिलाया डुलाया, आवाज दी परन्तु बिल्कुल चेतना नहीं हुई। कम्पाउन्डरको दवा बतलायी लेकिन् वह किसी भी तरहसे निगलने नहीं सका, मैंने भी दवा खिलाने की बहुत चेष्टाकी परन्तु गलेमेसे दवा नीचे उतरती ही नहीं थी। तब श्वास कुठारका नस्यदिया उससे भी कुछ नहीं हुआ, तब शिरीषाद्यञ्जन आंखोंमें लगाया उससे भी कोई फायदा नहीं हुआ, धूम अवपीड़न प्रधमन आदि क्रियायेंकी लेकिन कुछ भी फल नहीं हुआ तब ब्रह्मरन्ध्रस्थलका मस्तकपर बाल हटाकर सूचीकाग्र भागसे प्रयोग किया इसके प्रयोगसे आधे घन्टे बाद ही ज्ञान हो गया। मुंहसे जल पीने

लग गया अपनी सर्व शिकायत भी बतला दी एक ही बारके प्रयोगसे सन्यास बिल्कुल अच्छा हो गया पथ्यमें दूध दिया गया। शरीरमें जलन लग गई तब गरम पानीमें यूडीकोलन डालकर सब शरीरपोंछा शरीरमें दाह बहुत अधिक थी। इसलिये ३ रोज तक ३-४ बार जलसे अर्धस्नान कराना पड़ा। ऐसेही झूंझुणूंमें भी एक रोगीको सन्यास हो गया था तब वैद्य प्यारेलालजीने विषवटिका प्रयोग कराया था। उससे बहुत फायदा हुआ था उनसे मैंने पूछा कि यह विषवटी कहांका नुसखा है। तो उन्होंने बतलाया कि सूचिकाभरण रसको ही हम विषवटी कहते हैं। उन्होंने मेरे सामने ही इसवटीको बनाया इसमें काले सर्पका विष पड़ता है। वह बहुत सावधानीसे संग्रह किया जाता है इसको निर्म्माण विधि आगे लिखी जावेगी।

इसरोगमें अनुभव की गई औषधियोंके नुसखे

ब्रह्मरंध्ररसः

रसाभ्रगंधकं तालं हिंगुलं मरिचं तथा।
टंकणं सैन्धवोपेतं सर्वांशममृतं तथा॥
सर्वपाद समोपेतं महिषी पित्तमर्दितम्।
ब्रह्मरन्ध्रे प्रयोक्तव्यं सन्यास ज्ञान विभ्रमे॥
सहस्र कलशैः स्नानंलेपनं चन्दनादिभिः।
इक्षुमुद्‍गरसं भोज्यं तक्र भक्तमथेप्सितम्

भावार्थ शु० पारद, शु० गन्धक, शु० हरिताल, शु० हिङ्गुल, अभ्रक-भस्म, मरिच, भूनासुहागा, सैन्धव नमक, सर्व समभाग लेकर इन सबके बराबर शु० वत्सनाभ मिलाकर खरलमें डालकर भैंसेका पित्त उपरोक्त द्रव्योंसे चतुर्थांश ¼ डालकर मर्दन करे। सूखनेपर शीशीमें रख छोड़े। इसमेंसे सन्यास और ज्ञानविभ्रम सन्निपातमें ब्रह्मरन्ध्रके ऊपरसे बाल हटाकर पछनालगाकर मसले तो अवश्य फायदा हो जाता है चेतना

होनेपर जलनका अनुभव हो तो पथ्यमें दूध मिश्री जल, ईख स्वरस देवे, चन्दनादि शीतल द्रव्योंका लेपनकरे तथा ठण्डे जलसे शरीरको दिनमें २-३ बार पोछ देवें।

सूचिका भरण रस

रसं सर्पविषं नाभि धत्तूर रस मर्दितम्।
सूचिकाग्रेण दातव्यं सन्निपात कुलान्तकम्॥

रस सिन्दूर, सर्पविष, कस्तूरी समभागलेकर धतूरेके पत्तेके स्वरसमें १-२ दिन मर्दन कर रख छोड़े। इसमें सूईके अग्रभागमेंसे याने ३/२ रत्ती लेकर खानेको तथा शिरमें पछना लगाकर रक्तमें मिश्रणकरनेसे घोर सन्निपात याने सन्यास रोग निवृत्त हो जाता है।

—इस योगमें जो सर्पविष पड़ता है वही एक खास वस्तु है। उसका संग्रह करना आशान काम नहीं है। कालवेलिया लोग जो सर्पविष वेचते हैं वह नकली चीज है असली लेना हो तो निम्नलिखित विधिसे लेवे।

विधि—काले सर्पको जंगलसे पकड़कर मँगवाये और एकान्त स्थान में ले जाकर उसकी पूंछको अच्छी तरहसे पैरसे दबा लेवे। और फनको बायें हाथसे पकड़कर उसको क्रोधित करें। जब वह खूब क्रोधित हो जावे और काटनेकी चेष्टा करें तब उसके मुँहके पास ताड़ का पंखा या खजूरका पंखाको कटवावे। इस तरहसे सर्प विष पंखेके ऊपर आ जावे तो उसको पंखेसे तेल द्वारा धोकर उतार लेवें। और काममें लेवे। इस प्रकारसे लिया हुआ ही विष काम देता है। सपेरा लोग जो बिक्री करते हैं वह केवल मांसका टुकड़ा है। उसमें विष नहीं है। सर्प जबतक क्रोध नहीं करेगा विष नहीं निकलेगा जैसे सुश्रुत में भी लिखा है।

शुक्रवत् सर्वसर्पाणां विषं सर्वशरीरगम्
क्रुद्धानामेति चाङ्गेभ्यः शुक्रं निमर्थनादिव।

जैसे वीर्य सम्पूर्ण देहमें व्यापक है उसी तरह सर्पोंके भी सम्पूर्ण शरीरमें विष व्याप्त रहता है। परन्तु जब वे क्रोधित होते हैं तब ही शुक्रकी तरह, जैसे स्त्रीके साथ आलिंगन करनेसे वीर्य निकलता है उसी तरह सर्पोंके काटनेसे विष निकलता है। विना काटे सर्प विष नहीं उगलते।

सूचिकाभरणरस जनित विदाहे शीतोपचारः

रसजनित विदाहे शीततोयाभिषेको।
मलयजघनसारालेपनंमन्द वातः॥
तरुणदधिसिताढ्यं नारिकेली फलाम्भोः॥
मधुर शिशिरपानं शीतमन्यच्च शस्तम्

भावार्थ—पित्तादि सर्पविषादिभिर्भावित रस सेवनकाले यदि विदाहाद्यःस्युस्तदाशीत जलेनाभिषेकार्यः। चन्दन कर्पूरादीनां तनुः लेपस्तथा ताल नलिनी पत्रादिभिर्व्यजनं, पथ्यार्थे दधिशर्करं, नारिकेलाम्बु, अन्यच्च यद्द्रव्यं मधुर शीतञ्च तद्यात् यादिति।

कुलवधू रसः

शुद्धसूतं मृतं नागं मृतं ताम्रं मनःशिला।
तुत्थकं तुल्य तुल्यांशं दिनमेकं विमर्दयेत्॥
रसश्चैवोत्तरवारुण्या श्चणमात्रा वटीकृता।
सन्निपातं निहन्त्याशु नस्य मात्रेण दारुणम्॥
एषा कुलवधूर्नाम जलैः घृष्ट्वा प्रदापयेत्।

भावार्थ शु० पारद १ तो०, नागभस्म १ तो०, ताम्रभस्म १ तो०, शु० मनःशिला १ तो०, शु० तुत्थ १ तो०। इन सबको खरलमें डालकर इन्द्रायणके स्वरसमें मर्दन कर चणेके बराबर गोली बना लेवे। इसमें

से जरूरतके समय १ गोली जलमें घिसकर नस्यमें देवे। इसके द्वारा शीघ्र ही सन्निपातज मूर्च्छाका नाश होता है।

श्री प्रतापलंकेश्वरो रसः

अपामार्गस्यमूलानां चूर्णंचित्रकमूलजैः।
वल्कलैर्मर्दयित्वाऽथरसं वस्त्रेणगालयेत् ॥

तेनसूतसमं गंधमभ्रकं पारदं विषम्।
टंकणंतालकञ्चैव मर्दयेद्दिनसप्तकम् ॥

त्रिदिनं मुसलीकंदैर्भावयेद्घर्मरक्षितम्।
मूषाश्च गोस्तनाकारामापूर्योपरि ढक्कयेत् ॥

सप्तभिर्मृत्तिका वस्त्रै र्वेष्टयित्वा पुटल्लघु।
रसतुल्यं लोहवङ्ग रजतंताम्रकंतथा।

मधूक सार जलदं रेणुकं गुग्गुलं शिलाम्।
चाम्पेयश्च समांशं स्याद्भागार्धशोधितं विषम् ॥

तत्सर्वं मर्दयेत् खल्वे भावयेद्वृषनीरतः।
आतपे सप्तधातीव्रे मर्दये द्वटिकाद्वयम् ॥

कटुत्रयकषायेण कनकस्य रसेनच।
फलत्रय कषायेण मुनिपुष्प रसेनच ॥

समुद्रफल नीरेण विजया पत्र वारिणा।
चित्रकस्य कषायेण ज्वालामुख्यारसेनच ॥

प्रत्येकं सप्तधाभाव्यं तद्वत्पित्तैश्चपञ्चभिः।
सर्वस्य समभागेन विषेण परिधूपयेत् ॥

विमर्द्य भक्षयित्वाच रक्षयेत्कूपिकोदरे ।
गुञ्जैकं वह्नि चूर्णेन शृङ्गवेर रसेनवा ॥
दद्याच्च रोगिणे तीव्रमौढ्यविस्मृतशान्तये ।
क्षुरेण तालुमाहृत्य घर्षयेदार्द्र नीरतः ॥
नोद्घाट्यन्ते यदादन्तास्तदा कुर्यादसुंविधिम् ।
सेचयेन्मंत्रविद्वैद्यो वारिकुम्भशतैर्नरम् ॥
दद्याद्वातेषुसर्वेषु सिन्धुजैः सहवह्निभिः ।
दद्यात्कणामाक्षिकाभ्यां कनकाह्वयपाण्डुषु ॥
तत्तद्रोगानुपानेन सर्वरोगेषुयोजयेत् ।
अयं प्रतापलंकेशः सन्निपात हरः परः ॥

भावार्थ अपामार्ग(चिड़चिटा) की जड़के चूर्णको चित्रकमूलके स्वरस या काथसे मर्दन कर कल्क बनावे, फिर इसकी बराबर शु० पारद डालकर ४ प्रहर मर्दन कर इसमें शु० गन्धक, अभ्रक भस्म, शु० हिंगलु, वछनाग, शु० सुहागा, शु० हरिताल पारेके बराबर बराबर लेकर ७ रोजतक मर्दन करे। फिर धूपमें खरल रखकर सफेद मूसलीके स्वरस में ३ रोज तक मर्दन करे। इसके बाद इन सब द्रव्योंको गोस्तना कार मूषामें भरकर ७ कपड़ मिट्टी लगाकर सुखाकर लघु पुटकी आंच देवे। स्वांग शीतल होनेपर निकालकर लोहभस्म, वंगभस्म, रजतभस्म, ताम्र-भस्म, महुये का सार, नागरमोथ, रेणुका, गूगल, मैनशिल, चम्पाके फूल, ये प्रत्येक पारेके बराबर, पारेसे आधा वछनाग लेकर इसके स्वरस या काथसे ७ भावनायें देकर कड़ी धूपमें २ घन्टे तक रखे। फिर त्रिकटु, धत्तूरा, समुद्रफल, भांग, चित्रकमूल, ज्वालामुखी इनमें प्रत्येकके यथा-सम्भव स्वरस या काथोंसे ७-७ भावना देकर पञ्चपित्तोंकी १-१ भावना देकर रख छोड़े।

उपयोग इसमेंसे १-१ रत्तीकी मात्रा चित्रकमूल चूर्ण या अदरखरस के साथ देनेसे तीव्रसन्यास और विस्मृति रोग नष्ट होते हैं। यदि खानेसे दवा काम न करे तो तालु प्रदेशमें छुरेसे पाछ लगाकर अदरख रसमें दवाको मिलाकर उस जगह मर्दन करनेसे होश आ जाता है। यदि इतने पर भी होश न आवे तो मन्त्रवित्‌के द्वारा १०० घड़ोंकी मस्तक पर धारा दें। पथ्यमें यथेष्ट भोजन दे। वात रोगमें वात हर योगराजादि चित्रक मूलके साथ देव। कामला पाण्डु रोगमें तथा क्षयमें पीपल चूर्ण शहदसे दे। तत्तद्रोग हरानुपानसे यह समस्त रोगों को दूर करता है। सन्निपात रोगकी यह खास औषध है श्वासकुठार रस, वैताल रस, चतुर्भुज रस अन्य प्रकरणमें लिख दिये गये हैं।

परिशिष्ट भाग

गर्दनतोड़ ज्वर

आयुर्वेदमें क्रकच सन्निपात, डाक्टरीमें मनिञ्जाइटिस, सैरिब्रो-स्पाइनल फीवर, कोई वैद्य इसको भुग्न-नेत्र सन्निपात मानते हैं सिद्धान्त निदानकार आक्षेप ज्वर कहते हैं। कितनेक वैद्य इसको शीर्षावरण प्रदाहके नामसे कहते हैं। इसके भेदका क्या कारण है ?

उत्तर—आयुर्वेदमें इसको इस कारणसे क्रकच सन्निपात माना है कि इस सन्निपातमें वायु अधिक रहती है पित्त हीन रहता है। कफ मध्यम रहता है। अतः इसके निम्न लक्षण हैं।

भावमिश्र कथितलक्षण

प्रवृद्धि हीन मध्यैस्तु वातपित्त कफैश्चयः।
तेनरोगास्तएवोक्ता यथादोष वलाश्रयाः॥
प्रलापयालसम्मोहाः कम्पमूर्च्छा रतिभ्रमाः।
मन्यास्तम्भेनमृत्युः स्यात्तत्राप्येतद्विशेषतः॥
भिषग्भिः संन्निपातोऽयं क्रकचः सम्प्रकीर्तितः॥

भावार्थ—अधिक वातहीन पित्त, मध्यकफ वाले सन्निपातमें तत्तद् दोषोंके बलानुसार कम्प, दाह, और भारीपन होते हैं। फिर भी इस रोगमें यह विशेषता है कि इसमें प्रलाप, थकावट, बेहोशी कम्प मूर्च्छा मन्याका जकड़ना आदि लक्षण होकर मृत्यु हो जाती है। इससे इसको क्रकच सन्निपात कहते हैं। हिन्दीमें इसको गर्दन तोड़ ज्वर कहते हैं। कभी २ यह रोग जनपदोध्वंस संक्रामक रोग बन जाता है। कहीं २ पर इस रोगमें नेत्र खुले हुये तथा भौंहे टेढ़ी देखकर भुग्ननेत्र भी कहते हैं। परन्तु उनका यह कथन बिल्कुल निरर्थक है। क्योंकि इसमें मुख्य विकृति मस्तिकावरण और सुषम्नामें ही होती है। जिससे आक्षेप, वमन, गर्दनका जकड़ना अतिसार, स्नायुसंकोच आदि लक्षण हुआ करते हैं। इसलिये भुग्न-नेत्रकहना उचित नहीं है। कोई वैद्य इसको आक्षेप ज्वर कहते हैं। परन्तु मैंने ऐसे रोगी भी देखे हैं जिनको आक्षेप नहीं हुआ है और यह रोग हो गया और ऐसे रोगी भी देखे हैं जिनको भयंकर आक्षेप होकर उपरोक्त रोग हुआ है। आक्षेप रोगमें सिर्फ वायुकी ही प्रधानता रहती है। क्रकचमें तीनों दोष रहते हैं। इसलिये मेरी समझमें तो क्रकच मानना ही श्रेष्ठ है।

यद्यपि प्राचीन ग्रन्थोमें इसका विशेष विवरण पञ्च लक्षणी निदानमें नहीं मिलता है, सिर्फ आक्षेपकके नामसे सिद्धान्त निदान में मिलता है, तथापि कुछ भैषज्य रत्नावलीमें भी लिखा है। उसीका आधार लेकर अथवा इस रोगसे पीड़ित बहुतसे रोगी मेरी चिकित्सामें आये हैं। उनके द्वारा जो मुझको प्रत्यक्ष ज्ञान हुआ है उसका आधार लेकर लिख रहा हूं। कृपया उचितानुचित लिखा भी गया हो तो वैद्यबन्धु क्षमा करके उसके सुधारनेका कष्ट करेंगें।

शीर्षाम्बुवृद्धिः (मस्तिष्कावरण प्रदाह)

सुरातिपानादति शैत्यतश्चाप्यसात्म्यभोज्याच्च दुरम्बुपानात्।

वायोः प्रदोषाद् भिघाततश्च तथान्त्रमध्ये क्रिमिसम्भवाच्च ॥
शिरः स्थितः स्नेहवृतौक्रमेण सञ्चीयते तत्र प्रभूतमम्बु ।
शीर्षाम्बुरोगः कथितो भिषग्भि र्भवत्यसौ कृच्छ्रतरोपचारः ॥

अति मद्यपानसे अति शीतसे, प्रकृति विरुद्ध भोजनके करनेसे, दूषित जल पीनेसे, वायुके दोषसे, चोटसे, पेटमें कृमि पैदा होनेसे, शिरस्थित स्नेहच्छद कलामें प्रभूत जलसंञ्चित हो जाता है। इसलिये इस रोगको "शीर्षाम्बु" रोग कहते हैं।

बाल्येच प्रायशो रोगो विविधाहित सेवनात् ।
दन्तोद्भेदे शिशूनांवै बाहुल्ये नाभिजायते ॥

यह रोग बालकोंको मिथ्या आहार विहारके सेवनसे तथा दांत निकलनेके समय भी हो जाता है।

पूर्वरूपम्

जिह्वावृताऽति निद्रत्वं दौर्बल्यं गाढ़विट्कता ।
पूतिनिः श्वासता चास्मिन् भवन्त्यग्रे भविष्यति ॥

इस रोगके होनेसे पहिले जिह्वा मैली हो जाती है। पुरुषको अस्वस्थताका अनुभव होने लगता है तथा मल गाढ़ा श्वासमें दुर्गन्धि आती है।

रूप

शिरसो वेदनातीव्रा कृष्णविट्त्वाल्पमूत्रते ।
श्रोत्रे नेत्रे च तैक्ष्ण्यं स्यान्नाड़ी वेगवति भवेत् ॥

त्वचिरौक्ष्योष्णता-च्छर्दिः विषमाच कनीनिका ।
विवर्ण मुखताचैव निद्रायां द्विज घर्षणम् ॥
कन्डुरोष्ठस्य नाशाघ्रा राक्षोपो रक्तनेत्रता ।
पक्षाघातः प्रलापश्च शीर्षाम्बुगद लक्षणम ॥

जिस रोगमें शिरमें तीव्र वेदना हो, टट्टी कालेरङ्ग की आती हो, मूत्र कम होता हो, कान आंखमें तीक्ष्णता हो नाड़ीकी गति ज्वर वेगसे तेजहो, त्वचा रुक्ष गरम हो गई हो, वमन होती हो, कनी-निका (कालामानसिया) विषम हो गया हो, सोते समय दांत कटकटाता हो, ओष्ठोंपर खुजली हो, नासिकासे फुंकारता हो, आंखे लाल हो गई हों, तथा प्रलाप, पक्षाघात, गर्दनमें वेदना होती हो, ऐसे लक्षण वाले रोगको गदनतोड़ कहते हैं।

इस रोगमें दो अवस्था होती हैं। (१) साधारण रोग (२) तीव्र रोग। साधारण रोगमें ज्वर ऊपरमें १०२ डिग्री तक नीचेमें ९९ तक होता है। तीव्रावस्थामें ज्वर १०६ तक ऊपरमें नीचेमें १०२ तक रहता है। कभी २ टाइफाईडके माफिक पिड़िकायें भी किसी २ रोगीको निकलती है और उससे कुछ ज्वरमें न्यूनता भी आ जाती है। रोगी कुछ स्वस्थताका अनुभव भी करता है। परन्तु फिर तीव्र लक्षण हो जाते हैं। तथा किसीको अतिसार भी हो जाता है। तीव्र रोगमें ज्वरको अपेक्षा नाड़ीकी गति अनियमित रहती है। डाक्टरी मतसे रक्तमें श्वेताणुओंकी संख्या बहुत बढ़ जाती है।

विशेष परिक्षाद्वारा लक्षण

(१) रोगीको सीधा लेटाकर दोनों पैर सीधा रखवाकर एक पैरको मोड़नेसे दूसरा पैर स्वतः मुड़ जाता है।

(२) रोगीको सीधा सुलाकर गर्दनके नीचे हाथ लगाकर आगेकी तरफ झुकानेसे पैर भी स्वतः ही मुड़ जाते हैं।

(३) रोगीका एक पैर दूसरे पैरपर रखवा कर पर नीचे लटकाया हो, इस तरह अथवा पलंगपर बंठाकर फिर रोगीके घुटनेके पास ताड़न करने से पैर स्वतः आगेकी तरफ चला जाता है। अथवा बिल्कुल आक्षेप नहीं होता इस चिह्नको डाक्टरीमें नी-जर्क (knee jork) संज्ञा की हैं।

डाक्टर लोग इसकी परीक्षा तीसरी या चौथी पृष्ठवंशकी कशेरुकाके बीचमें सूची डालकर तरल पदार्थ निकालकर करते हैं। उसमें उनके हिसाबसे उसी तरलमें इसके कीटाणु मिलते हैं। वैसे यह रोग जब संक्रामक रूपसे फैल जाता है तब उपरोक्त लक्षणोंको देखकर भी आसानीसे निदान हो सकता है। तीव्र लक्षणोंमें फुफ्फुसावरण शोथ सन्धि स्थानोंमें पूययुक्त शोथ भी हो जाता है। प्रायः आंखोंमें कनी-निओंकी सञ्चालन क्रिया बिल्कुल स्थिर हो जाती है। या बड़ी हो जाती हैं।

असाध्य लक्षण यह रोग छोटे बालकोंको तथा वृद्धोंके लिये अत्यन्त ही घातक है। तीव्र रोग होनेपर १-३ ७ दिनमें ही कष्ट भोग कर रोगी यमालयको चला जाता है। पूर्णरूपसे परिचर्य्या होनेसे तथा रोगका निदान जल्दी हो जानेसे भाग्यशाली रोगी बच भी जाता है। डाक्टरोंके निदानमें तथा आयुर्वेदके निदानमें यही फर्क रहता है कि उनका कथन है कि मनुष्यके मस्तिष्कमें १० औंस तरल पदार्थ रहता है। उसके बढ़नेसे ही यह बीमारी होती है। मैंने बहुतसे डाक्टरोंसे पूछा कि क्या तरल द्रव्य छोटे बच्चेकों, युवा पुरुषको तथा वृद्धोंमें एक ही प्रमाणसे रहता है, या कम बेशी रहता है, तो उनका यही उत्तर मिला कि हां सबमें ही समान भावसे रहता है। उनका यह कथन अनर्गल है कारण मनुष्यमें हरेक पदार्थ उम्र तथा आहारके हिसाबको लेकर ही घटते बढ़ते हैं फिर यही एक ऐसी क्या चीज है जो जन्मसे लेकर मृत्यु पर्यन्त समान ही रहे। हमारा आयुर्वेद-शास्त्र इस बीमारीमें तरल वृद्धि को न मानकर वायु द्वारा दूषित मानता है।

इसीकी चिकित्सा करनेमें सफलता भी देखी गई है। मैंने बहुतसे ऐसे भी रोगी देखे जिनको विस्रावण क्रिया द्वारा ३-४ बार तरल निकाल भी लिया गया परन्तु फिर भी रोगी मर गये। और ऐसे भी बहुतसे रोगी देखे हैं जिनको सेक, लेप, और औषधि सेवनके द्वारा ही बिगर तरल निकाले ही फायदा हो गया है। अतः इस बीमारीमें जहांतक हो सके डाक्टरी चिकित्सासे दूर रहनेमें ही श्रेय है। क्योंकि प्रथम तो डाक्टरी चिकित्सा अत्यन्त व्ययसाध्य है। दूसरे फिर इसमें शस्त्र द्वारा जो विस्रावण क्रिया की जाती हैं उसमें भी रोगीको भयंकर कष्ट होता है। अतः उस कष्टमय जीवनसे तो मृत्यु ही अच्छी है। मेरे पास इस रोगसे ग्रस्त बहुतसे रोगी आये उनका इलाज जिस विधिसे कविराज श्री ज्योतिर्मयजीके निर्देशानुसार मैंने करके सफलता प्राप्तकी है। वही अनुभव मैं आप लोगोंके समक्ष रख रहा हूं आप लोग भी रोगियोंके हितार्थ इस चिकित्सा शैलीको अपनावें

MENINGITIS मेनिञ्जाइटिस का पाश्चात्य ढङ्गसे विशद रूपसे वर्णन

हमारे शरीरके भीतरी प्रधान-प्रधान यन्त्र परस्परमें रगड़ न खा जाय, इसलिये उनको बचानेके लिये उनके ऊपर एक आवरण चढ़ा रहता है। उसके नाम भी अलग-अलग ही हैं। जैसे फुफ्फुसावरण-प्लुरा; हृत्पिण्डका आवरण-पेरिकार्डियम, आंतोंका आवरण-पेरिटोनियम, इसी तरह मस्तिष्कावरणको मेनिन्जेस (Meniges) कहते हैं। मेनिन्जेसका प्रदाह ही मेनिञ्जाइटिस है।

यह रोग दो प्रकारका होता है—सिम्पुल और ट्यूबरक्यूलर।

सिम्पुल—साधारणतः मस्तकमें आघात, मस्तिष्क मेंक्षत उपदंशजनित अस्थिक्षत, कानकाक्षत, मुंहका विसर्प, टाइफाइड (सन्निपातिक ज्वर) चेचक, निमोनिया, ब्रांको-निमोनिया, नवीन वातरोग, पुराना

चर्मरोग, सर्दी-गर्मी, अंशुघात, मानसिक चिन्ताओंके कारणसे मेनिन्जाइटिस होता है।

"सिम्पल मेनिञ्जाइटिसके" अवस्था भेदसे लक्षण

प्रथमावस्था—जाड़ा लगकर अथवा कभी जाड़ा न लगकर ज्वर हो जाता है। अगर रोगी शिशु होता है तो अङ्गोंमें अकड़न सरमें भयङ्कर वेदना सहित ज्वर १०३-१०४ डिग्रीतक हो जाता है, इसमें नाड़ी तेज और भारी रहती है, आंखे लाल, प्रलाप, बेचैनी, मुंहकी पेसियोंका कांपना, आंखकी पुतलियोंका चक्करखाना, ग्रीवाकी पेशियोंमें खींचाव, ग्रीवा कड़ी हो जाती है, हाथ पैरोंमें कम्पन होता है, पलके मिचने लगती है, आंखोंकी पुतलियां संकुचित हो जाती है, या विस्तृत हो जाती हैं या इनमें विषमता आ जाती है, जिह्वा मैली, वमन, कब्ज, आदि लक्षण होते हैं, यह अवस्था १ से १२-१४ दिवस पर्यन्त रहती है।

द्वितीयावस्था—ऊपरी लक्षणोंके बाद प्रलाप घट जाता है तथा सन्यासावस्था हो जाती है नाड़ीकी गति असमान, और मन्द सविराम हो जाती है, आंखोंकी पुतली फैली (dilated) रहती है, तथा आंखे अर्धनिमिलित रहती हैं, दांत कटकटाता रहता है, बिछावन नोचता रहता है, श्वासोच्छ्वास क्रिया अनियमित और मन्द हो जाती है श्वास कष्टसे लेता रहता है।

तृतीयावस्था—रोगी निश्चेष्ट हो जाता है, आंखोंकी पुतलियां बहुत बड़ी हो जाती है— अनजानमें टट्टी पेशाब करने लगता है अथवा टट्टी पेशाब बन्द ही हो जाते हैं, सर्वाङ्गमें ठन्डा पसीना होने लगता है। चेहरा विकृत हो जाता है जिह्वा, ओष्ठपर मैल जम जाता है, ग्रीवा खिंच जाती है, ग्रीवामें कड़ापन और पक्षाघात यह इस रोगका प्रधान लक्षण है।

नाड़ी—पहिले कठोर और तीव्र कभी मन्द और विषम होती है, परन्तु इतनी होनेपरभो गति सविराम होही जाती है। इस तृतीयावस्थामें ही रोगीकी मृत्यु होती है, मृत्युके पूर्व अचानक ज्वर अत्यन्त बढ़ जाता है, याने १०६-१०७ डिगरी तक हो जाता है, फिर एकाएक उतरकर ६६-६७ डिगरी तक हो जात है, नाड़ी सूतकी तरह महीन और शरीर ठण्ढा पड़ जाता है। और इसके बाद मृत्यु हो जातीहै। इस बीमारीमें बीचबीचमें रोगी कुछ स्वस्थ होता सा दिखाई देताहै-परन्तु बादमें फिर उपद्रव बढ़ने लगतेहैं। और रोगी असाध्य हो जाता है।

टियुबर्क्युलर मेनिञ्जाइटिस
TUBERCULAR MENINGITIS

यह रोग अधकितर २ से ६ बर्षके बच्चोंको अथवा गरोबोंके बच्चोंको ही ज्यादा होतहै। इस रोगके कारण शीतला, हुपिंग कफ, मस्तिष्क आघात, मानसिक उत्तेजना आदिहैं।

पूर्वरूप—बच्चेका शरीर दुबल होता जाता है। स्वभाव चिड़चिड़ा रहता है, खेलनेकी इच्छा नहीं करता, चेहरेका रंग बदल जाता है। बेचैनी, नींद न आना, भूख न लगना, टट्टीसाफ न होना, अङ्गप्रत्यङ्गोमें कमजोरी प्रतीत होना आदि लक्षण हो जाते हैं।

(१) प्रथमावस्था - उपरोक्त लक्षण २-३ सप्ताह तक रहते हैं, इसके बाद ज्वर, सिरदर्द, ग्रीवामें खिचावट, वमनादि लक्षण दिखाई देते हैं। वमन होना इसबीमारीका प्रधान लक्षण है, कनपटीमें दर्द इस वजहसे बच्चा सरको दबाकर रखताहै, डर जानेकी तरह रह रह कर अत्यन्त जोरसे चिल्लाताहै और रोताहै. ज्वर पहिले कम और क्रमशः १०२-१०३ डिगरी तक बढ़ जाताहै, नाड़ी मोटी, तेज और अनियमित रहती है, बच्चा सोनेकी चेष्टा करता है' पर सोने नहीं सक्ता है, केवल तकिये पर सिर हिलाता है, इस अवस्थाको स्टेज आफ इरिटेसन कहते हैं। इसके बाद स्टेज आफ डिप्रेसन आती है

(२) द्वितीयावस्था—यह अवस्था १० दिवसके बाद मस्तिष्क कोषमें रस स्रावके कारण वमन होना बन्द होजाता है, ज्ञान घट जाता है, प्रलाप भी कम करने लगता है, मलोत्सर्गका अवरोध, पेटमें तनाव, ज्वर कम, नाड़ी कोमल और समान रहती है, ग्रीवा जोरोंसे खिची रहती है, पीठमें भी खिचावट रहती है, रोगी टेढा सोता है, ग्रीवामें इतनी वेदना होती है कि स्पर्श सहन नहीं होता, आंखकी पुतली फैली रहती हैं, दांत पीसता है, आंखे आधीमुंदी रहती है प्रश्वास दीर्घ रहता हैं, पदार्थ निगलनेमें कष्ट होता है, पाखाना बहुत चिकना, लसदार और बदबूदार होता है। ओठ, मुंह जीभ में छाले हो जाते हैं, पेशाब कम होता है, पेटमें आध्मान हो जाता है इस अवस्थाको स्टेज आफ डिप्रेशन कहते हैं।

(३) तृतीयावस्था "स्टेज आफ पैरालेसिस"

यह इस रोगकी अन्तिम अवस्था है। इस समय सभी लक्षण बढ़ जाते हैं और घोर तर अवस्था धारण कर लेते हैं, ज्वर फिर बढ़ जाता है, नाड़ी अत्यन्त तेज, क्षीण और सविराम रहती है, रोगी निःसंज्ञ हो जाता है, ग्रीवा, पीठ, हनु, तथा अन्य अवयवोंमें अकड़न तथा एकदम पक्षाघात हो जाता है। आंखोंके भीतर सफेद अंश का ही अधिक भाग दिखाई देता है, कभी आंख लाल भी हो जाती है, नाड़ी पतली हो जाती है ज्वर ९४-९३ डिग्री तक उतर जाता है। या १०८-११० डिग्री तक चढ़ जाता है। अन्तमें श्वासबन्द, खींचन या हार्ट-फेल होकर मर जाता है। रोगकी अवधि १० से ३० दिवस तक की है।

भावीफल

यह सांघातिक रोग प्रायः आरोग्य नहीं होता अगर रोगका आक्रमण धीरे-धीरे होता है, तो चिकित्सा हो सकती है। परन्तु एकाएक आक्रमण होनेपर जीवनकी आशा नहीं रहती।

सेरिब्रो-स्पाइनैल मेनिञ्जाइटिस

(मस्तिष्क मेरुमज्जा प्रदाह)

(CEREBRO SPINAL MENINGITIS)

इसको सेरिब्रो स्पाइनल फीवर, इसलिये कहते हैं कि यह भी पूर्वोक्त स्पाइनल मेनिञ्जाइटिसकी तरह एक सांघातिक बीमारी है, यह रोग होनेपर भी रोगीको जीवनकी आशा नहीं रहती। यह रोग संक्रामक होनेसे देशव्यापी होता है। लेकिन स्पाइनल मेनिञ्जाइटिस उतना नहीं फैलता।

लक्षण—इस रोगका आक्रमण भी अकस्मात होता है। आक्रमण के पूर्व कम्प, और शीत लगता है। रोगीके सिरमें वेदना होती है इसलिये अज्ञान होकर पड़ जाता है। इसमें पित्तकी वमन होती है रोगी छटपटाता बहुत है, इसके बाद ज्वर हो जाता है। आंखको पुतली संकुचित हो जातो है। २-३ दिनके बाद सिरका दर्द ग्रीवा और पृष्ठके भूभाग तक फलता चला जाता है। जिससे रोगोका सिर अपने आप ही पोछेका मुड़ जाता है।

२-३ दिवस बाद ही धनुर्वातकी तरह अकड़न दिखायी देती है। त्वचाका स्पर्श करनेसे ही रोगी असह्य पीड़ाका अनुभव करने लगता है। तथा प्रलाप भो करने लगता है। इसके बाद संन्यासावस्था या अर्ध चेतनावस्था आ जातो है। कभी कभी पक्षाघात भी हो जाता है। इस रोगक्रान्त रोगीका आंखोंसे देखना तथा कानोंसे सुनना भी बन्द हो जाता है, भूख, प्यास का भो ज्ञान नहीं रहता, दस्तकी कब्ज रहती है मूत्र भो अल्पमात्रामें ही होता है, प्लीहा वृद्धि हो जाती है, किसी-किसीको वमन भो होती है।

भावी फल

यदि पांचसे सात दिवसके भीतर सिर दर्द, वमन, ग्रोवा और पोठ का कड़ापनका भाव धीरे धीरे घट जावे तोरोगी स्वस्थ हो जाता है

नहीं तो अन्धा, बहिरा. गूंगा हो जाता है, या रोग उग्र रूप धारण करके रोगीको मार देता है।

गर्दन तोड़ क्रकच सन्निपात चिकित्सा

सब प्रथम इसरोगकेलिये स्वच्छताकी विशेष आवश्यक्ता है। याने मकान आतुरालय स्वच्छ सुन्दर हवादार जिसमें धूप अच्छी तरहसे आती हो ऐसा होना चाहिये तथा रोगीके काममें आने वाले वस्त्रादि सर्व धुले हुये स्वच्छ रहने चाहिये। चिकित्साके भी पादत्रय सर्वांग पूर्ण होने चाहिये। इतना प्रबन्ध होनेपर ही भाग्यवान रोगी अवश्य इस आयुर्वेदीय चिकित्सासे आरोग्य होजाता है ऐसा मेरा दृढ़ विश्वास "ज्वरादौलंघनं प्रोक्तम्" इस वचनके आधारसे सर्व प्रथम लंघन करावे तथा पीने केलिये केवल श्रृत शीत जल ही देवें। अगर मलावरोध हो तो उसको दूर करनेका प्रबन्ध करना उचित है

लाक्षणिक चिकित्सा

गर्दन अड़कने पर गुग्गुल घटित औषधियोंका प्रयोग वातनाशक काथके अनुपानसे करावें। तथा महानारायण तैल महामाष तैल आदि वातहर तेलोंकी मालिस कराकर उड़दका स्नेह युक्त सेक देना चाहिये।

ज्वरका वेग अधिक हो तो कम करनेके लिये ज्वर संहार, मृत्युञ्जय, आदि औषधियोंका व्यवस्था करनी चाहिये

तीव्रआक्षेप हो तो—रसराजरस' बृ० वातचिन्तामणि रस, चिन्तामणिचतुर्मुख, कृष्ण चतुर्मुख, वातविध्वंसन रस, वातगजांकुश, आदि वातहारी रसोंका प्रयोग करना चाहिये।

कमरमें गर्दनमें शिरमें दर्द हो तो वातनाशक तेलोंका मालिस करा कर शिरपर मावेका सेक तथा पांचो मगजोंको दूधमें पिसाकर गरम करके बंधवावे। गर्दन पर पीठमें वेदना अधिक हो तो शाल्वण स्वेद, शंकर स्वेद, वातहर उपनाह, माषकलाईको दूध मिश्रित तैलमें पकाकर

लेपकरावे या स्वेद देवे। या वाष्प यन्त्र द्वारा प्रसारिणी, दश मूलका स्वेद देवें या वेरीकी लकड़ी तालकी लकड़ीकी अग्नि बनाकर उसका सेक लग वावें।

अगर मूर्च्छा हो गई हो तब वहांपर जलौका पातन क्रिया करे।

अगर वमन अरुचि निद्रानाश प्रलाप हो तो-शिरपर शीत क्रिया करे वमनकी अरुचिकी शान्ति के लिये जहर मोहरा खताई रसादि-बटीका प्रयोग करे। निद्रा नहीं आती हो तो दशमूलासव, द्राक्षा-सव निद्रायुक्त कुमदेश्वर आदि औषधियोंका प्रयोग करे हम लोग इस रोगमें रसराज, वृहत् वातचिन्तामणि. चिन्तामणि चतु-मुख कृष्णचतुर्मुख, चतुर्भुज रस, वह्निभास्कररस, मकरध्वज, समीर-पन्नगरस, वातविध्वंसनरस वृ० योगराजगूगल, चन्द्रप्रभा, मुस्तकादि काथ, सलिलशोषण चूर्ण, दशमूल काथ, कुंकुमादिघृत, महानारायण तैल, महामाष तैल आदि औषधियोंका प्रयोग करते हैं। प्रसंगानुसार चिकित्सा क्रम आपके सामने आयेगा सो निगह कर लेवें।

रोगीनाम आत्मप्रकाश उम्र ८ जाति अग्र० डालमिया रोग गर्दनतोड़

जयपुर राज्यान्तर्गत चिड़ावा निवासी सेठ जोहरमलजी डालमियां को बहुत दिनोंसे स्नायुदौर्वल्यकी बीमारी थी अतः आबोहवा बदलनेके लिये वे सकुटुम्ब चिड़ावा गये थे साथ मैं भी था ८ मास वहां रहकर हमलोग वापिस कलकत्ता आ रहे थे रास्तेमें २ रोजके लिये देहलीमें रायल होटलमें ठहरे थे। एक दिन ठहरनेके बाद दूसरे रोज हमलोगों ने साईनबोर्ड देखा ; जिसमें लिखा था कि गर्दनतोड़के बीमारको फौरन वार्डमें भर्ती कर दो। यह पढ़कर मैंने सेठसे कहा कि देहलीमें गर्दन-तोड़का बीमारी फैल रहा है अतः अपनेको यहांसे जल्दी ही चलना चाहिये। मेरे कथनको मानकर सेठजी वहांसे उसी दिन चल दिये और बनारस पहुंच गये। वहां दूसरे रोज ही शिवरात्रिका व्रत था इसलिये हम सबने उपवास किया चि० आत्मप्रकाशने भी उपवास

किया सायंकाल भोजनके समय फाफर (कुट) के आटेका हलुआ पूरी साग खाया। दूसरे रोज हमलोग गङ्गास्नानके लिये गये साथमें आत्मप्रकाश भी था। वैसे भी स्नानका उसको बहुत शौक था परन्तु जिस दिन स्नान करनेसे इन्कार कर दिया और बोला कि मेरा जी घबराता है सिरमें दर्द है। अतः मैं घर जाऊंगा वहांसे वह तथा उसका पिता दोनों डालमियां धर्मशालामें आ गये। मैं पीछे पूजाके निमित्त ठहर गया। घन्टेभर बाद आया तो मालूम हुआ कि आत्म-प्रकाशको ज्वर १०३ डिग्री हो गया है। मैं उसको देखने उसके कमरे में गया तो वह सो रहा था उसको जगाया तो फिर तन्द्रासी आ गई मैंने सिरपर युडीकोलनकी पट्टी लगवा दी तथा पीनेको शृतशीत जल की व्यवस्था की तथा लंघनका आदेश दिया। सेठजीके एकही लड़का होनेकी वजहसे बहुत घबराये दवाके लिये बार २ में कहा कि इसका ज्वर शीघ्र ही उतारनेकी दवा दो। मैंने कहा कि ज्वरका अभीतक पूरा निदान नहीं हुआ है। आज दिनभर दवा नहीं दूंगा। परन्तु उनका ज्यादा आग्रह देखकर वहांके ही प्र० चिकित्सक वैद्यराज पं० दुर्गाप्रसादजी शास्त्रीको बुलाया उन्होंने भी दवाके लिये निषेध कर दिया तथा लंघनका ही आदेश दिया। लेकिन उसी रातको इसकी माताने ५। गरम दूध रोगीको पिला दिया जिससे रातको ही १ बजे प्रलाप करने लग गया। तब मेरेको बुलाया। तब मैंने देखकर लवङ्ग जलसे २ गोली सञ्जीवनीवटी की दी। इससे उसको नींद आ गई। सुबह ७ बजे मैं इसके कमरेमें उसको देखने गया तो सो रहा था। सेठजीने कहा कि सो रहा है जागनेसे तुमको बुला लेवेंगे। थोड़ी देर बाद ही उठ गया और शौचादिक क्रियायें की। मेरे बिना देखे ही उसको चाय बिस्कुट खिला दी गई।

और ताश खेलने लगगये, २० मिनट बादही मेरे पास नौकर आया कि जल्दी चलो सेठ बुलारहे हैं आत्मको न जाने क्या हो गया

है। मैं झट दौड़कर वहां पहुंचा तो क्या देखता हूं कि, आत्मको मूर्च्छा हो रही है नाड़ी गतिका अनुभव नहीं हो रहा है, सम्पूर्ण शरीर स्वेदार्द्र हो रहा है आंखें ऊपरको चढ़रही है, ज्वर ९६ में हैं, पेटपर कुछ आध्मान है। तब मैंने शीघ्रही मकर १ रत्ती प्रवाल १ रत्ती अर्जुनाभ्र ½ रत्ती मृगमद् ½ रत्ती भीमसेनी ¼ रत्ती मिश्रण करके लवङ्ग जलसे १पुड़िया दी परन्तु कोई फायदा नहीं हुआ फिर दूसरी दी फिर भी कोई फायदा नहीं हुआ तब तीसरी दी गई। जिससे ज्वर बढ़ गया परन्तु ऊपरमें १०५ तक चढ़ गया। तब उसी समय डाक्टर सुरेन बाबू जो मारवाड़ी अस्पताल बनारसमें ही डाक्टर थे आगये। उनको पूरा हाल चाल कहा तब उन्होंने रोगीको देखकर कहा कि इसको मलेरिया ज्वर ही है। किसी किसीको ज्वर बढ़ने केसमय ऐसा उपद्रव हुआ करता है। शिर पर बर्फ लगवाया तथा डाया फूटिक मिक्चर लिखकर चलेगये। थोड़ी देर बाद मिक्चर आगया चालू करदिया गया १ खुराक देनेके बाद प्रलाप शुरू होगया जो इतने जोरसे कर रहा था कि दुतल्लेकी आवाज नीचे सड़कपर सुनरही थी। जिससे बाहरके रास्ते चलने वाले भी सुनकर रोगीके पास आकर पूछने लगे, कितनेही आदमी भूतबाधा बतलाने लगगये तथा तान्त्रिकोंको भी बुलाया गया परन्तु प्रलापमें बिल्कुल कमी नहीं हुई। डाक्टरी खुराक ३ घन्टे बाद दूसरी फिर दी गई उससे ज्वर उतरनें लगगया लेकिन पसीना बहुत आनेसे नाड़ी भी कम जोर मालूम देने लगी। तब डाक्टरी इलाज बन्द किया और फिर आयुर्वेदिक इलाज ही चालू किया गया इतनेमें ही वहांके प्रसिद्ध वैद्य पं० सुखदेवजी आगयेउनकी रायसे उनका पेटेन्ट औषध जो कि वीरभद्र रसके नामसे था दिया गया। वैसे देखने केलिये बनारसके जितने भी वैद्य थे उन सबको तथा डाक्टरोंको बुलाया गया परन्तु किसीसे भी निदान नहीं हुआ। तब मैंने फिर सेठको कहा कि मेरे को तो गर्दन तोड़ ज्वर जँचता है। वहांके डाक्टर वैद्य इस बातको मानते नहीं

हैं; इसलिये कलकत्ते से किसी अच्छे कविराजको या डाक्टरको बुलवाइये। अस्तु उसी समय कलकत्ते टेलीफोन किया गया। दूसरे रोज ही प्रातः काल डाक्टर इन्दु भूषण एम० बी० बनारस पहुंचा और रोगीकी हालत देखकर उसने उसको मैनिञ्जाईटिस् कायम किया और तत्काल ही नम्बर पञ्चर भी किया। जिससे रोगीको फौरन ही शान्ति मिल गई और रोगी सोगया। डाक्टरी इलाजसे हमलोगों को बहुत ही आशातीत लाभ नजर आया। रोगी भी अब अच्छी तरहसे बातचीत करने लग गया लेकिन शिरका दर्द तथा गर्दनकी वेदना अभी भी शान्त नहीं हुई थी। पञ्चर करके डाक्टरने उसी रास्तेसे मैनेङ्गाकोक सिरमका एक इञ्जेकशन भी दिया था। पथ्यमें सोर्फग्लुकोज वाटर रेक्टम याने गुदाके रास्तेसे एक एक बून्द २४ घन्टे चढ़ाया था। इस तरह २ दिन तक रोगीकी हालत ठीक रही ज्वर भी प्रातः १०० तथा सायं १०२ से ऊपर नहीं बढा, प्रलाप बिल्कुल शान्त था। डाक्टर साहब भी तथा घर वाले भी बहुत खुश थे। तीसरे रोज ६ बजे सुबह मैंने देखा तो मेरेको नाड़ीमें वायुकी गति का अनुभव हुआ तब मैने डाक्टर साहबको सूचनादी कि आज मेरे को कुछ वायुकी अधिकता जँचती है। शायद फिर बीमारी बढ़ न जावें

डाक्टर साहबको यह कथन पसन्द नहीं आया लेकिन् सायंकाल ३ बजे ही ज्वर फिर १०४ हो गया तब डाक्टर साहबने सोडाबाईकार्ब ½ औंस बर्फमें मिलाकर गुदाद्वारसे पेटमें केथेटर डालकर धीरे २ चढ़ाया और शिर पर बर्फ रखवाया जिससे ज्वर कुछ कम हुआ परन्तु प्रलाप फिर जोरसे चालू हो गया और रातभर डाक्टर साहबको जागना पड़ा; सुबह ही डाक्टर साहब घबरा गये और बोले कि मैं तो आज ही जाऊंगा पटनासे बुलावा आया है। डाक्टर साहब यहां ५००) रुपया रोज में आये थे, सेठने कहा कि आप जावे नहीं, ५००) सौकी जगह ७००) १०००) ले लीजिये, लेकिन डाक्टर साहबकी हिम्मत

नहीं पड़ी और वे बिल्कुल रहनेके लिये नट गये। तब सेठने पूछा कि हमलोग अब क्या करें किसको बुलावें। डाक्टर साहबने कहा कि क्या तो कलकत्तेसे बी० सी० रायको या डीनाह्वाईटको बुलवा लेवें। मै अपना प्रिस्क्रिप्सन चार्ट बनाकर रख देता हूं, वे आवें तब दिखला देना डाक्टर साहब चले गये, उसी रोज डा० बी० सी० राय कलकत्तेसे रवाने होकर सुबह १० बजे बनारस पहुंच गये और रोगीको देखा तथा दवाका प्रिस्किप्सन भी देखा, चालू व्यवस्था रखकर होटलमें चले गये। दोपहरमें फिर आये तब मैंने डाक्टर साहबसे प्रार्थना की कि आप यहां कितने दिन ठहरने सकेंगे, तो वे बोले कि मैं आज ही रातको चला जाऊँगा रोगीके इलाजमें अभी बहुत समय लगेगा। तब मैंने उनको कहा कि अगर यह रोगी कलकत्ता ले जाने लायक हो तो वहां ले चलने से बहुत सुविधा हो जाय, उन्होंने मंजूर कर लिया। और उसी रातको डाक्टर साहबके साथ हमलोग रोगीको साथ लेकर कलकत्तेके लिये रवाना हो गये। रास्तेमें धर्मशालासे निकलते ही रोगीको फिर ज्ञान हो गया और कलकत्ते आनन्द पूवक पहुंच गये। २घन्टे बाद यहांके प्रसिद्ध डाक्टर सब बुलाये गये और राय मिलाकर इलाज चालू किया गया, तथा शामको फिर नम्बरपञ्चर किया गया जिसमेंसे तरल द्रव्य लेकर लेबोरेटरीमें परीक्षार्थ भेज दिया गया। परीक्षामें मैनिञ्जाइटिसके कीटाणु पाये गये, इस तरह २० रोजतक इलाज ऐलोपैथिक चलता रहा पथ्यमें सिर्फ ग्लूकोजका पानी ही रेक्टमसे चढ़ाया जाता था। इस तरह इस इलाजमें चार बार पञ्चर क्रियासे तरल निकाला गया और कोई भी तरहका परिवर्तन नहीं हुआ। तब एक रोज रोगीके पिताने डा०बी०सी० रायको कहा कि इतना रोजसे आपका इलाज हो रहा है परन्तु कोई फायदा नजर नहीं आ रहा है। इसलिये अगर आपकी राय हो तो कविराजीका इलाज कराकर देखें। इसपर डाक्टर साहब हँसे और बोले कि कविराज लोग सईस हैं, वे इस रोगका क्या इलाज कर सकते हैं।

उनके ये शब्द सुनकर मेरेको बहुत ही दुःख हुआ तब मैंने उनसे कहा कि आपका कहना ठीक है। समय आनेपर आपको दिखला दिया जायगा कि हमलोग सईस हैं या आप लोग। रातको ही रोगीकी हालत बिगड़ गई तब वहांकी परिचारिकाने आकर हम लोगोंको सूचना दी, हम लोगोंने डाक्टरोंके यहां फोन किये परन्तु कोई जवाब नहीं मिला। आखिर मोटर द्वारा सूचना भेजी गई। डाक्टर साहब खुद नहीं आये और फोन द्वारा ही नर्सको आदेश दिया कि अमुक दवा दे दो। नर्सने सब दवा दे दी लेकिन फायदा कुछ नहीं हुआ तब नर्सने मेरेको कहा कि हम अपना सब दवा दे चुके लेकिन रोगीका हालत बिगड़ता ही जाता है। अगर हो सके तो कविराजी दवा जल्दी दो। मैंने भीतर आकर रोगीकी हालत देखी जो उस समय निम्नोक्त थी, ज्वर १०३, श्वासगति ५२, नाड़ी गति १५०। पेटपर अफारा, हाथ पैरोंमें ठन्डापन, कंठमें कुछ कफकी आवाज, गर्दन पीछेकी तरफ विशेष खिंची जाती थी, पानी पीने में कष्ट होता था, संज्ञा बिल्कुल नष्ट हो गई थी। याने अभिन्यासके लक्षण हो गये थे उसी समय मैंने १ खु० बृ० कस्तूरी भैरव पानरस मधु से दिया जिससे कुछ सुभिस्ता याने पल्सरेट कुछ कम १४० हुआ तब २ घन्टे बाद १ खुराक फिर दी, सुबह ८ बजे डाक्टर लोग आ गये और रोगीको देखकर नर्ससे पूछा कि रातको क्या गोलमाल हुआ था। तब नर्सने रातके सब हालात सुनाये तथा दवा जो दी गई वह सब बतलाई तथा उसका रिजल्ट भी बतलाया। बादमें मैंने जो दवा दी उसका नतीजा भी बतलाया। तब डाक्टर साहब बहुत बिगड़े और बोले कि हमारी दवासे कुछ फायदा नहीं हुआ और आपकी दवासे हुआ यह बात हम नहीं मानते। तब मैंने कहा कि अगर आपको हमारी दवामें विश्वास नहीं है तो कोई हर्ज नहीं है। १ घन्टे बाद हमारी दवाका असर चला जायगा तब आप लोग बन्दोबस्त कर लेना। यह सुनकर डाक्टर लोग घड़ीसे टाईम मिलाकर चले गये। पीछेसे सेठसे बात

हुई तब सेठ बोला डाक्टर लोग तुमसे नाराज हो गये हैं १ घन्टे बाद ही वापिस आवेंगे अगर तबतक तुम्हारी दवाका असर न हटेगा तो यह बी० सी० राय है, यहां प्रेक्टिसतक बन्द कर देगा। मैंने कहा ठीक है, देखा जायगा। अस्तु एक घन्टे बाद ही डाक्टर साहब आ गये और भगवानने भी मेरी रक्षा की दवाका असर उतर गया हालत फिर रात की तरह ही खराब हो गई। डाक्टर साहबने कागज लेकर १ इन्जेक्सन लिखा और जल्दी मंगवानेके लिये मोटर भेजी। इन्जेक्सन आगया डाक्टर साहबने अपने ही हाथसे लगाया, १० मिनट तक असरकी प्रतीक्षामें बैठे रहे जब असर नहीं देखा तब दूसराइंजेक्सन दिया गया, फिर १५ मिनट तक प्रतीक्षा की आखिर हताश होकर कविराजी इलाज के लिये कहकर चले गये। घरवाले घबराये तब मैंने उनको शान्त्वना दी और इलाज अपने हाथमें ले लिया। सर्वप्रथम धन्वन्तरि भगवानसे प्रार्थना करके रसराज २ रत्ती १ खुराक लवङ्ग काथसे दी और देते ही शीघ्र ही असर हुआ, हालत कुछ सुधरी इतनेमें ही सेठजीके सम्बन्धी राधाकृष्णजी बागला आ गये और उनकी रायसे कविराज शिवनाथ सेनको बुलाया गया। उन्होंने आकर व्यवस्था पत्र लिखवाया परन्तु मेरेको वह नहीं जँचा तब कबिराज श्री ज्योतिर्मय सेनको बुलाया उन्होंने जा रोगीके लिये औषध व्यवस्था की वह निम्न प्रकार है।

नं० १ ७ बजे रसराज २ रत्ती काकमाची स्वरस मधुसे

नं० ३-११ बजे चन्द्रप्रभा १ गो० यवक्षार ६ रत्ती, १पु० गोक्षुर अर्कसे

३ बजे नं० २ दवा, काथसे

५ बजे फिर नं० ३ दवा गोक्षुर अर्कसे

नं० २-६ बजे मकर १ रत्ती प्रवाल १ रत्ती, अजु नाभ्रक १र० मुक्ता १ रत्ती, मृगमद ½ भीमसेनो १ रत्ती इनकासमिश्रणसे मुस्तकादि काथसे

१ बजे फिर नम्बर १ रसराज २ रत्ती काकमाचीस्वरससे।

नं० ४ ७ बजे रातको चतुर्भुज रस १ रत्ती जटामांसी दुरालभा गोक्षुर फान्टसे दिया	इसी तरहसे उपरोक्त हेर- फेरसे रात दिन औषधि चालू की

शिरपर—पुरातन घृतकी मालिश कराई तथा आयाम कांजीककी पट्टी लगवाई जो हर समय रखी रहती थी। पेटपर आध्मान निवारणार्थ दारुषट्क लेप दिया।

गर्दनपर—महामाष तैलकी मालीश कराकर माष कलाईको दूधमें पकाकर सेक चालू किया।

इस तरह इस व्यवस्थाको तीन दिन तक चालू रखो। इस दवाके चालू रखनेके बाद नाड़ीकी गति ११० हो गई। श्वास ३५ हो गया, ज्वर भी प्रातः १०० सायं १०२ हो गया। परन्तु ज्ञान शक्ति बिल्कुल नहीं बढ़ी; तथा पेटका आध्मान भी कम नहीं हुआ, तब पेटपर उन्होंने नरसार कल्मी शोराको पुरातन घृतमें मिलाकर लेप कराया, परन्तु फिर भी अफारा कम नहीं हुआ और पेट ज्यादा फूल गया तब मोती लाला राधाकृष्णके बगीचेमेंसे तालाबके भीतर मूषाकर्णी जिसको बँगलामें पाना कहते हैं, उसको मंगवाकर पेटपर लेप कराया। इस लेपके लगानेसे पेशाब बहुत हुआ तथा टट्टी भी ३-४ पतली हुई, जिसमें २ कृमी एक बिनालके बराबर निकले। उनके निकलते ही पेटका आध्मान मिट गया।

पाना (मूषाकर्णीकी पहचान)

यह पुराने कच्चे तालाबोंमें जलके ऊपर रहने वाला एक वृक्ष होता है। इसके पत्ते चूहेकेकानकी तरह उभरे हुये रहते हैं तथा जड़ भी चूहेकी पूंछकी तरह उसीके समान होती है, जो जलमें अधर लटकती रहती है। जमीनसे उसका स्पर्श नहीं होता है। इसके

हरेक पत्तेमें नीचे इसकी जड़ होती है। शालीग्राम निघन्टुमें इसका वर्णन इस प्रकार दिया है।

मूषा कर्ण्या खुपर्णीच वृष पर्ण्याखुकर्णिका।
भूमीचरी द्रवन्ती च शम्बरी भूधरा प्रपा॥

इसके इतने संस्कृतमें नाम है। हिन्दीमें मूसाकानी, बँग० उदिरकानी, पाना, मराठी उंदरकानी, भोपनी गुज० उंदरकमी, अंग्रे० अजानुल फार पुना० शरदम्, कहते हैं।

अस्याः गुणा

आखुकर्णी कटुस्तिक्ता कषायाशीतला लघुः।
त्रिपाके कटुका मूत्र कफामय कृमिप्रणुत्॥

मूषाकानी—चरपरी, कड़वी कषैली, शीतल, पचनेमें हल्की, मूत्र रोग, कफ रोग, औरकृमी रोगको नष्ट करने वाली है।

इस रोगीको देखनेके लिये कविराजजी दिनमें चार बार आते थे। मैं हर समय रहता था। रातको वैद्य कृष्णदत्तजी तथा वैद्य गुलाब चन्द्रजी सम्हालते थे। अस्तु कवीराजजी सुबह ७ बजे आये तब उन्होंने कहा कि और हालत कलसे ठीक है। परन्तु ज्ञान शक्तिके लिये विचारणीय प्रश्न है। मैंने तब प्रार्थनाकी कि मेरी समझमें तो जोंक लगवानेसे ज्ञान शक्तिमें फायदा हो सकता है। कविराजजीने भी अनुमति दी और मैंने सुश्रुत मतानुसार जोंक लेकर ७ जोंक शिरके चारो तरफ लगा दी। जोंकका वर्णन डाक्टरीमें नहीं है। आयुर्वेदकी सुश्रुत संहितामें इसका बहुत अच्छा वर्णन दिया है। अतः जोंकका उपचार करते समय पूरी विधि देखकर ही उपचार करना चाहिये।

जोंक लगानेकी विधि

नृपाढ्य स्थविर भीरु दुर्बल नारी सुकुमाराणा मनुग्रहार्थम् परम सुकुमारोऽयम् शोणितावसेचनोऽपायोऽभिहितो जलौकसः। तत्र

वातपित्त कफ दुष्ट शोणितं यथा संख्यं शृंग जलौकालाबुभि रवसेचयेत स्निग्ध शीत रुक्षत्वात् सर्वाणि सर्वेण वैवां।

भावार्थ—राजा, धनवान, बालक, वृद्ध, डरपोक, दुर्बल, स्त्री, और भी जो अत्यन्त सुकुमार हैं उनपर दया करके जोंक लगा-दुष्ट रुधिरको निकाल देना चाहिये। यही एक सुन्दर उपाय है। क्योंकि इस क्रिया द्वारा रक्त निकालनेसे किसी भी तरहका कष्ट नहीं होता है। वात दूषित रक्तको सींगी लगाकर निकालें। पित्त दूषित रक्तको जोंक द्वारा कफ दूषित रक्तको तुम्बी द्वारा निकाले। अन्यच्च स्निग्ध शीत रुक्ष होनेसे वात पित्त कफ इन तीनोंमेंसे किसीके द्वारा बिगड़े रक्तको सींगी तुम्बी जोंक इनमेंसे चाहिये जिसके द्वारा ही निकाल सकते हैं अथ जलायुका वक्ष्ययन्ते जलमासा-मायुरिति जलायुका जलमासामोक इति जलौकसः। जो जलके बिना जीवन धारण नहीं रख सकती उसे जलायुका कहते हैं॥ जल ही है स्थान जिसका उसको जलौकस कहते हैं।

जोकोंका भेद

ताद्वादशताषां सविषाषट् तावत्य एव निर्विषाः :

जोंक १२ तरहकी होती हैं; उनमें छः सविषा और छः निर्विषाः तत्र सविषाओंके नाम यह हैं? कृष्णा जो काले रङ्ग वाली और बड़े मस्तक वाली होती है, जो बर्मी मछलीके समान लम्बी छिन्न और कुछ ऊंची कूख वाली होती है, उसको कर्बूरा कहते हैं। बड़े२ बालों वाली बड़ी पसली जिसका मुख काला हो उसको अलगर्दा ही कहते हैं। इन्द्र धनुषके समान चित्र विचित्र रेखाओं युक्त हो उसको इन्द्र-युधा कहते हैं। कुछ काली कुछ पीली चित्र विचित्र फूलोंके समान उसको सामुद्रिका कहते हैं। बैलके अन्डकोसोंके समान नीचेके हिस्सेमें २ की तरह हो जिसका मुंह बहुत छोटा हो उसको गो चन्दना कहते हैं। सविषाके काटनेसे दंश स्थानमें सूजन और खुजली

चलती है। मूर्छा, ज्वर, दाह, वमन, मद,कम्पन, ये लक्षण हो जाते हैं। इन्द्रायुधानसे काटा हुआ रोगी आसाध्य होता है। यहां विष नाशक औषधिको खिलाना लेप करना तथा नस्य देना चाहिये।

निर्विष जोकोंके भेद

कपिला, पिङ्गला शङ्कुमुखी मूषिका पुण्डरीक मुखी सावरिकाचेति। इसतरह ये भी छः तरहकी है। पहिचान

कपिलाके लक्षण—जिसके दोनों पार्श्वभाग मैनसिलके रंगसे रंगे हुये के माफिक हों। तथा जिसकी पीठ चिकणी मूँगके समान हरी हो उसको कपिला कहते हैं।

पिंगला-चित्रविचित्र रंगवाली शीघ्रचलने वाली होती है।

शङ्कुमुखी—जिसका रंग यकृत् खण्डके समान हो जो शीघ्रपीने वाली जिस कबडा और पैना मुख होता है।

मूषिका—इसका रंग और आकृति चूहेके समान होती है और दुर्गन्ध भी आती है

पुंडरीक मुखी—इसका रंग हरे मूंगके समान होता है।

सावरिका—१८ अंगुल लम्बी होती है तथा सचिक्कण कमलके पत्तेके समान रंग वाली होती है। यह जोंक मनुष्योंके लगाने लायक नहीं होती है सिर्फ पशुओंको ही लगाई जाती है।

निर्विष जोकोंका प्राप्तिस्थान

यवन देश जैसे ईरान, तूरान अफगानिस्तान पाठ्य देश इन्द्रप्रस्थ पश्चिमाश्रित देश, सह्यस्थान् नर्मदाके किनारेके देश सह्यचारि पर्वत की घाटी स्थित देशमें, ये निर्विष जोक होती है उपरोक्त देशोंमें होने वाली जोंकोके शरीर बहुत बड़े २ होते हैं ये बहुत बलवान शीघ्र रक्त पीने वाली होती है। तथा निर्विषज्यादा खानेवाली होती है।

सविषोंका उत्पत्ति स्थान

सविष मछली कीट (सर्प) मेढ़क आदिके मूत्र और मलके संयोग से उत्पन्न होने वाली तथा सड़े हुये गन्दे जलमें रहने वाली सविषा होती है।

निर्विषाओंका उत्पत्ति स्थान

श्वेत कमल नील कमल, पीत कमल, कमोदनी आदि जिस जलमें हों उसमेंसे पैदा होनी वाली तथा निर्मल जलमें रहने वाली जोंक निर्विषा होती है।

त्याज्य जोंक

जिनका शरीर बीचमेंसे ऊंचा हो जैसा जौका दाना होता है। जो किसी व्याधिसे पीड़ित हो, मोटी हो मन्द चेष्टावारो रक्त पीनेमें असमर्थ हो तथा कम पीनेवाली हो उसको त्याग देवे।

जोंक लगानेकी विधि

जिस रोगीको जोंक लगानी हो उसको बैठादे या सुलादे। जिस स्थानपर लगानी हो उस स्थानको गोबर मिट्टी चूनासे धुलाई करदे। स्थानपर घाव नहीं रहनी चाहिये। फिर जोंकोको गिले कपड़ेसे पकड़ कर हल्दी घोले हुये पानीमें कुछ देरतक छोड़ देवें। जब उनकी सुद्धी हो जाय तब निर्दिष्ट वेदना स्थानपर लगाकर सफेद वस्त्रसे ढांक देवें। परन्तु उसके मुखको खुला ही रखे अगर जोंक उस स्थानको नहीं पकड़ती हो तो १ बुंद दूधको या रक्तकी डालकर फिर जोंक लगावे। अगर फिर भी न पकड़े तो स्थानको जरा शस्त्रसे कुर्चदे और फिर लगावे। जो ऐसा करनेपर भी न पकड़े तो उस जोंकको छोड़ दे और दूसरी लगावे।

जोंक लगनेके लक्षण

जब जोंक लगजाती है तब घोड़ेके खुरके समान मुखको करके कन्धा को ऊंचा करलेती है। तब समझना चाहिये कि जोंक रक्त पान कर रही है। पीते समय वस्त्रसे ढांक दो और थोड़ा २ जल उसपर डालते रहो। दंशस्थानमें पीड़ा खुजली हो तो समझलें कि शुद्ध रक्त पा रही है। तब उसको छुड़ा देना चाहिये। अगर नहीं छोड़े तो सेंधा

नमक पीसकर उसके मुखपर डालदे। इस उपायसे शीघ्रही छोड़ देगी। रक्तकी न्यूनाधिक प्रवाहकी परीक्षा करके दंशस्थानको ठण्डे जलसे साफ करके मधु लगाकर पट्टी बान्ध दे।

अस्तु हमने ७ जोंक लगाई जिससे कुछ ज्ञान शक्ति बढ़ी यानें पहिले दवा वगैरह देनेमें बहुत कष्ट होता था। परन्तु जोंक लगानेके बाद आवाज देनेपर दवाई पानी आसानीसे खाने लग गया। परन्तु गर्दन अभी तक सीधी नहीं होती थी इसलिये महामाष तैल धत्तूरादि घृत मिलाकर मालिस कराई तथा उपरसे ताड़के पत्तोंकी अग्नि जलाकर सेक किया इस तरह ३ रोज तक मालिस सेक करनेसे कुछ गर्दन सीधी होने लगी। तथापि पूरी ठीक न होनेकी वजहसे दशमूल काकमाची अयन्ती पत्ताको वाष्पयन्त्रमें डालकर नलिकाद्वारा भफारा दिया जिससे कडापनमें बहुत फायदा हुआ, इसको ७ रोज तक चालू रखा। तथा कुछ औषध भी परिवर्तनको, वह इस प्रकार है।

७ बजे प्रातः सायं
नं०—१ रसराज १ रत्ती
प्रवाल १ र०
अर्जुनाभ्रक १ र०
मृगमद ½ र०
भीमसेनो ½ र०
काकमाची जटामासी
दुरालभा गोक्षुर काथमें,

नं० २—३ घन्टे बाद कृष्ण चतुर्मुख काकमाची स्वरससे।
नं० ३—३ घन्टे बाद चन्द्रप्रभा वज्रक्षार जलमें।
नं० १—इसके ३ घन्टे बाद
रातको
नं० ४ वृ० वातचिन्तामणि रस प्रस्वप्राकसे

इस दवाको ३ गोक्षुर रोजतक चालू रखा जिससे नाड़ीकी गतिभी ११० हो गई श्वास गति ३० हो गई तथा गर्दन सीधी करने लगगया लेकिन् आंख खोलकर देखता नहीं था तथा कुछ प्रलाप भी करता था, खांसी भी कुछ आती थी, पानी निगलनेमें कष्टका अनुभव करने लगा जिससे अनुमान हुआ कि सर्दीके कारण गलेमें सूजन हो गया एतदर्थ दवा फिर बदलना पड़ा।

प्रातः	सायं	मध्याह्न	रात्रको
नारदीय लक्ष्मी-विलास पानरस मधुसे	कस्तूरी भैरव पानरस मधुसे	खदिरवटी मधुसे	कृष्णचतुर्मुख त्रालआह्न रससे

उसरोज सायंकाल हनुमतप्रशादजी सराफ आये और उन्होंने रायदी कि ऐसे केश हमारे यहां मारवाड़ी अस्पतालमें बहुत आया करते हैं। जिनका इलाज डा० मन्नाबाबू ही करते हैं उनको बुलाकर दिखला लेना चाहिये। उनके कहनेसे उसी समय फोन करके मन्नाबाबूको बुलाया। उसने देखकर निदान किया कि टोन्सिल बढ़ गया है एतदर्थ उसने वोरोफेक्ष गलेमें पेन्ट किया जिससे रोगीको बहुत कष्ट हुआ और ३-४ बार वमन हुआ। वमनको देखकर डाक्टरी इलाज वन्द कर दिया गया। और गुलबनप्सा और भांगको बकरीके दूधमें पीसकर पुरातन घृतमें सेककर गलेमें बांधा इसके २-३ बार बांधनेसे ही गलेकी सूजन बिल्कुल मिट गई। अस्तु इतने रोजतक केवल लंघनपर ही रखा गया था। अब जलबार्ली चालू कर दी गई। बीच २ में कभी कोई उपद्रव उठता था तब ही घरवाले सोनेका दान करते थे परन्तु मस्तक क्रिया पूरी तरहसे ठीक नहीं हुई थी इसलिये शिरपर चन्दनादि निलोत्पलादि लेप भी किया एक रात तो इतना चिल्लाया कि रातभर किसीको भी न सोने दिया और न खुद सोया तब सुबह शतधौत घृत की मालिश की जिससे उसका प्रलाप बिल्कुल शान्त हो गया। अब सब उपद्रव शान्त हो गये सिर्फ ज्वर अभी भी होता था। अतः औषध परिवर्तन कर दिया।

प्रातः सायं	म० रा०	
ज्वरसंहार ३ रत्ती	चन्द्रप्रभा	इस दवाके प्रयोग
प्रवाल १ रत्ती	वज्रक्षार	से ज्वर भी हटकर
मुक्ता १ रत्ती	अर्क मकोयसे	जाने प्रातः ९८ सायं
अर्जुनाभ्रक १ रत्ती	शयनकाले	१०० रहने लगा
भीमसेनी ½ रत्ती	वृ० वातचिन्तामणि	पथ्यमें थोड़ा २
तुलसी स्वरस मधुसे	जटामांस्यादि फान्टसे	बकरीका दूध चालू
		किया गया।

इस दवाको ४ रोज तक चलाया ज्वर फिर भी ६८-६६ में ही रहता था। उसका कारण देखनेसे पता लगा कि कुछ लीवर बढ़ गया इसीसे ज्वर होता है। अतः उपरोक्त दवा सब हटा दी गई तथा नई व्यवस्था की।

प्रातः सायं
यकृदरि लौह
मधुसे
म०रा० अग्निमुख चूर्ण
जलसे

दूधके ५१॥ चढ़ जानेपर मुद्गयूष वगैरह से धीरे २ पथ्य चालू कर दिया इस तरह इसको फिरसे बैठना उठना चलना बोलना आदि सिखाया गया। भगवानकी कृपासे यह बिल्कुल स्वस्थ हो गया

इस इलाजके बाद और भी शहरमें बहुतसे बीमार थे वे सब डाक्टरी इलाजोंको छोड़कर कविराजजीके द्वारा ही आयुर्वेदिक चिकित्सासे ठीक हुये। सन्निपात रोगके वे अद्भुत चिकित्सक थे, आज जो मारवाड़ी समाजमें हम लोगोंके द्वारा भयंकरसे भयंकर सन्निपातोंका इलाज हो रहा है यह स्वर्गीय कविराज श्री ज्योतिर्मयजीकी कृपाका फल है। कविराजजी इस रोगको मन्यास्तम्भान्तर्गत ही मानते थे इसलिये मुस्तकादि क्वाथको अधिकतया देते थे। डाक्टर लोग इस रोगमें भी कई भेद मानते हैं मेनिञ्जाइटिस ट्यूबरल्कोसिस मैनेञ्जाइटिस। सेरेब्रोस्फाइनल फीवर।

ट्यूबर क्लोसिस मेनिञ्जाइटिस रोगी

रोगीनाम मदनलाल, उम्र ६, जाति ब्रा०, कलकत्ता।

इसको प्रथम आमातिसारका बीमारी हुई २-३ रोज बाद ज्वर भी होने लग गया, ज्वर प्रातः ६६ सायंकाल १०१ तक होता था, टट्टी १०-१३ प्रतिदिन आमयुक्त होता था। उस समय डाक्टरी इलाज शुरू किया गया, ७-८ रोजतक डाक्टरका इलाज रहा जिससे कोई फायदा नहीं हुआ वमन और शिरमें दर्द और बढ़ गया तब मेरेको बुलाया मैंने निम्नलिखित इलाज चालू किया।

प्रातः सायं	म० रा०
आनन्द भैरव	लवङ्गादि २ गोली
लवङ्गादि	सिद्ध प्राणेश्वर १ ,,
धान्य पंचक क्वाथ मिश्रीसे	अर्क सोंफ अजवाईन

यह दवा रोज चलनेके बाद ज्वर सुबह ६८ में, शामको ६६, तक हो गया परन्तु टट्टी अभी भी ५-६ होती थी शिर दर्दके लिये भी कहता रहता था, उल्टी अभी भी चालू थी, तब दवा फिर बदलनी पड़ी पथ्यमें जलवाली मोसम्मी तथा अनाररस दिया गया।

प्रातः सायं	म० रा०
उ० सर्वाङ्ग	रसादि वटी १
लवङ्गादि	जहरमोहरा १ रत्ती
बालसुधा (जहरमोहरा)	पिच्छ भस्म १ रत्ती
नागरमोथा रस मिश्रीसे	लवङ्ग मिश्री जायफल जलसे

इसको ः रोज तक चलाया जिससे वमन भी बन्द हो गई तथा टट्टी भी बन्द हो गई, १४ वं रोज सायंकाल ज्वर ६७ में होगया, शिरमें दर्द भी कम बताता था और कोई उपद्रव नहीं दिखाई दिये सिर्फ पसीना आता था। तब मैंने जाकर देखा तो नाड़ी गति ६० थी, हार्ट भी ठीक था, परन्तु ज्वरकी कमी देखकर मैंने १खुरा० मृत्सञ्जीवनी सुराहकीदी तथा एक घन्टे बाद हार्टको ताकतके लिये मकर ½ रत्ती अर्जुनाभ्र १ रत्ती प्रबाल १ रत्ती मृगमद ½ रत्ती १ पु० बनाकर दी और कह दिया कि पानरस मधुसे दे देना अगर पसीना बन्द न हो तो १० बजे १ पुड़िया मकर-योग और दे देना उसी रातको अचानक १ बजे आक्षेप शुरू हो गया। जिससे घरवाले घबराये और मेरेको बुलाया। मैं जब गया तब साथमें डाक्टर हरि सिंहजी वृन्दाको भी ले गया। तथा रोगीके पास पहिलेसे भी २ वैद्य याने वैद्य श्री निवासजी तथा वैद्य गुलाब चन्द्रजी बैठे थे। उनसे बात चीत हुई

और रोगीको हमने देखा तब निम्न लिखित हालत थी। ज्वर १०० तथा आक्षेप ५-१० मीनटसे आ रहे थे। कण्ठमें कफ रुककर घर-घराहटकी आवाज हो रही थी। शिर पर पसीना था, नाड़ी गति भी पूरी समझमें नहीं आ रही थी। वैद्य गुलाब चन्द्रजीने मेरे जानेके पहिले अदरखरस मधु दिया था। श्वासकी आवाजको देखकर न्युमोनिया मालूम हुआ। इसलिये हम लोगोंने एक खुराक वृ० कस्तूरी भैरव रसका पानरस मधुसे दिलवाया; जिससे कफकी आवाज बन्द हो गई तथा कमेड़ा भी २ घन्टे तक नहीं आया। २ घन्टे बाद फिर आक्षेपका दोष हुआ जिससे फिर कण्ठमें कफको आवाज आने लगी। तब फिर रसराज १ रत्ती लवङ्ग जलसे दिया—१ इन्जेक्सन डाक्टर वृन्दा साहबने भी कोरामिनका दिया; जिससे फिर २ घन्टेके लिये शान्ति रही परन्तु बिल्कुल नहीं। तब फिर निम्न दवा दी, नं० १ में कस्तूरो भैरव पान रस मधुसे २ नं० रस राज १ रत्ती दशमूल क्वाथसे ३-३ घन्टेके हेर फेरसे चलाया। तथा सुबह ७ बजे डाक्टर विश्वनाथ बनर्जी आये उन्होंने न्युमिनल २ ग्रेनकी १ खुराक जलमें दी जिससे ८ घन्टे तक कमेड़ा नहीं आया। रातको फिर शुरू हो गया तब १ खुराक न्युमिनल फिर दिया गया जिससे फिर आक्षेप ६-७ घन्टातक नहीं आया। इस तरह २ रोज बीत गये परन्तु रक्त परीक्षा करानेपर भी निदान नहीं हुआ। तब अचानक मेरी समझ में आया ता मैने पैरोंकी तथा गर्दनको परीक्षाकी तब ज्ञान हुआ कि यह गर्दन तोड़ ही सकता है। तब मैने अपने निदानकी पुष्टिके लिये वैद्यराज पं० कृष्णदत्तजीको बुलाया तब उन्होंने भी गर्दन तोड़ ही निश्चय किया तब दवा निम्नलिखित चालू की।

६ बजे १ नं०—रस राज
जटामांसी जवासा क्वाथसे
८ बजे नं० २ २ घन्टेबाद कृष्ण
चतुर्मुख
पान रस मधुमें
१० बजे नं० ३
चन्द्रप्रभा वज्रक्षार अर्क मकोयसे
१२ बजे न्युमिनल जलसे
३ बजे नं० १ रसराज क्वाथसे
५ बजे चन्द्र प्रभा वज्रक्षार
८ बजे नं० ४ वृ० वातचिन्तामणि
प्रस्व प्रार्कसे

रातको ११ बजे फिर
न्युमिनल
रातको ३ बजे चतुर्भुज १
रत्ती तालछाड़ा रस मधुमें
दिनमें पानी पीनेमें कष्ट
होता था इसलिये ग्लुकोज
हैक्सामिन का इन्जेक्सन
भी दिया गया दूसरे
रोज भी वही हालत
रही तथा दवा भी वही
चालू रही; किसी तरहका
फायदा नहीं दिखाई दिया

तब २-३ डाक्टरोंको और बुलाया गया तथा दोनों तरहकी दवा चालू की गई।

डाक्टरोंने राय दी कि दिनमें ४-४ घन्टासे सल्फाडाईजिन जलमें चलना चाहिये। तथा पेन्सिलिन ४-४ घन्टासे चलना चाहिये। डाक्टर वृन्दा साहबने तथा मैंने दोनों ही ने साथमें इलाज चालू किया।

७ बजे रस राज क्वाथसे
९ बजे सल्फा
११ बजे चन्द्रप्रभा वज्रक्षार
अर्क मकोइसे
१ बजे सल्फा०
३ बजे वृ० चिन्तामणी चतुर्मुख
प्रस्व प्रार्कसे

५ बजे सल्फाडा०
६ चन्द्रप्रभा वज्रक्षार
अर्क मकोय
रातको ११ बजे वृ० वात
चिन्तामणी प्रस्व प्रार्कसे
किसी टाइममें आक्षेप
होनेपर न्युमिनाल भी
देना पड़ता था।

ज्वर घटनेपर कोरामिन देते थे। पेन्सलिन ३-३ घन्टासे चलता था। सायंकाल डा० विश्वनाथ बनर्जी आये। उन्होंने पेन्सिलिन ३-३ घन्टासे बन्द करके २४ घन्टा वाला देनेको कहा तथा मँगाकर दे भी दिया। २ रोज यह दवा चलनेपर आक्षेप बन्द हो गया। ज्वर भी प्रातः १०१ सायं १०३ तक रहा। श्वास गति ३४ पसीना बन्द पानी पीने लगा, परन्तु काली पुतली स्थिर ही रही। तब डा० डीना ह्वाइट बुलाये गये। उन्होंने डा० विन्दा साहबको कहा कि खानेकी दवा ठीक है। पेन्सिलिन इन्जेक्सन बन्द करके स्टेप्टो माइसिन २ टाइम दिजिये। और रक्त परीक्षा कराइये तथा नम्बर पञ्चर भी किजिये। अस्तु उसी रोज डा० सुरेन बाबूको बुलाया और नम्बर पञ्चर किया गया तथा तरलकी परीक्षा भी कराई गई, जिसमें ट्यूबरक्लोसिस मैनिञ्जाइटिस पोजिटिव आया। दवा पूर्ववत चालू रखी, इन्जेक्सन भी चालू रहे। परन्तु १ मास पर्यन्त भी चिकित्सा करनेपर कोई फायदा नहीं हुआ। तब अंग्रेजी दवा बन्द करके सिर्फ आयुर्वेदीक इलाज ही किया गया उस समय वैद्यराज हरिवक्षजी जोशी, श्री निवासजी खेड़वाल गुलाबचन्द्रजी तथा मै चारोंने मिलाकर इलाज निम्नलिखित चालू किया।

प्रातः सायं
बृ० वातचिन्तामणि
रास्नासप्तक क्वाथ मधुसे
म० रा०
पञ्चामृत लोहगुगुल
जलमें
महामाष तैलकी मालिस
तथा उड़दका सेक कराया
गया।

आक्षेपके कारण १ हाथ तथा १ पैर बिल्कुल सूने पक्षाघातकी तरह हो गये थे। इसलिये उनपर भी मालिश सेक कराया। शिरपर पुरातन घृतकी मालिश कराकर पांचो मगज पीसकर लगाये इस दवासे बहुत-कुछ फायदा दिखाई दिया; परन्तु ज्ञान नहीं हुआ।

तब कविराज विमला नन्दजीको बुलाकर भी रायली उन्होंने भी यही दवा चालू रखे। बीचमें २ बार कविराज सुशील कुमार सेनको बुलाकर दिखाया था। उन्होंने कुनाइन इन्जेक्सनकी राय दी थी। २ इन्जेक्सन भी दिये गये थे। ज्ञान न होनेकी वजहसे इलाज आयुर्वेदिक बन्दकर दिया गया उसीकी जगह होमियो पैथिक डा० एस० के० दासको बुलाकर इलाज चालू किया गया। ७ रोज इलाज चालू रहा ८ रोजमें फिर आक्षेप शुरू हो गये। बहुत चेष्टा करनेपर भी नहीं रूके तब फिर डाक्टर आनिल कृष्णदेको बुलाकर उसका इलाज चालू किया परन्तु २ मास पर्यन्त यह रोगी भोग भोगकर संसारसे चला गया। इसलिये मेरा यही कहना है कि मेनिञ्जाइटिस रोगि फिर भी ठीक हो जाता है। लेकिन ट्यूबरक्लोसिस मेनिञ्जाइटिस बिल्कुल असाध्य होता है।

प्रयुक्त औषधियोंकी निर्म्माण विधि

(कृष्णाचतुर्मुखः)

रसगन्धक लौहाभ्रं समं सूताङ्घ्रि हेमच।
सर्वं खल्वतले क्षिप्त्वा कन्या स्वरस मर्दितम्॥
त्रिफला सुरसा ब्राह्मी रसैश्चानु विमर्दयेत्।
एरण्ड पत्रैरावेष्ट्य धान्य राशौ दिनत्रयम्॥
संस्थाप्य च तदुधृत्य त्रिफलारस संयुतम्।
तद्यथाग्नि बलं खादेद्वलीपलित नाशनम्॥
पौष्टिकं बल्यमायुष्यं पुत्र प्रसव कारकम्।
क्षयमेकादशविधं कास पंच विधं तथा॥
कुष्ठमेकादशविधं पाण्डु रोगान् प्रमेहकान्।
शूलं श्वासश्च हिक्काश्च मन्दाग्निश्चाम्लपित्तकम्॥

अपस्मारं महोन्मादं सवर्शांसि त्वगामयान् ।
क्रमेण शीलितं हन्ति वृक्षमिन्द्राशनिर्यथा ॥
जगताश्चहितार्थाय चतुर्मुख मुखोदितः

भवार्थ—शु० पारा शु० गन्धक, लोहभस्म, अभ्रकभस्म, ये सब सम भाग और पारेसे चतुर्थांश स्वण भष्म लेकर सबकी कज्जली बनाकर घीकुआंर, त्रिफला, तुलसी और ब्राह्मी इनके रसोमें क्रमशः एक एक रोज मर्दनकर गोला बनाकर एरण्डके पत्तोमें लपेटकर सूतसे बांधकर धान्य राशिमें तीन दिवस पर्य्यन्त रखकर निकाल लेवे। फिर इसको त्रिफला जल मधुके साथ सेवन करावे, अथवा घृत मधुके साथ उचित मात्रासे सेवन करनेसे बली, पलित, निर्बलता, दौर्बल्य, एकादश लक्षण युक्त क्षय, पांच प्रकारका कास, क्षुद्र कुष्ठ, पाण्डु, प्रमेह, शूल, श्वास, हिक्का, मन्दाग्नि, अम्लपित्त, भयंकर उन्माद, बबासीर, चर्मरोग, सर्व नष्ट हो जाते हैं।

वह्नि भास्कर रसः

सुवर्णमभ्रं वैक्रान्तं रजतं शाणमानकम् ।
लौहं रसं गन्धकञ्च माक्षिकं कर्ष सम्मितम् ॥
रक्तचित्रकतोयेन तथा ब्राह्मया रसेनच ।
त्रिसत्पकृत्वः सम्भाव्य कुर्य्याद्वल्लमितावटी ॥
रसोऽयं सर्वथा हन्ति मस्तिष्कोदक माशुच ।
अन्यांश्च शिरसो रोगान्वह्निस्तृणगणानिव ॥
वह्निवद्भासते यस्माद्वीर्येणैव रसोत्तमः ।
ख्यातः पृथ्वीतले तस्मादाख्यया वह्नि भास्करः ॥

भावार्थ—सुवर्ण, अभ्रक, वैक्रान्त, और रजत इनकी भस्में ४-४ माशे, लोहभष्म, शु० पारा, गन्धक, माक्षिक भस्म १-१ तोला, लेकर

नीलवर्ण कज्जलीकर रक्तचित्रक और ब्राह्मीके रससे २१-२१ भाव नायें देकर ३-३ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े, इनमेंसे १-१ गोली समयोचितऽनुपानके साथ देनेसे मस्तिष्कमें सञ्चित जल (मेनिञ्जा-इटिश) और भी नाना प्रकारके शिरो रोग नष्ट हो जाते हैं।

वातविध्वंसन रसः

रसगन्धं विषंचैव ताम्रं लोहं ममाक्षिकम्।
एतत्सर्वं समं योज्यं त्रिषंच द्विगुणं भवेत् ॥
जैपालं तालकञ्चैव रसेन सहयोजयेत्।
त्र्यूषणञ्च समं योज्यं सर्वमेकत्र कारयेत् ॥
निर्गुण्डी सूरणद्रावै र्भानोश्च पयशस्तथा।
तर्क्वारी भृङ्ग राजश्च ततो धत्तूर कस्यच ॥
भावना खलु दातव्या सप्त सप्त क्रमादितः।
द्विगुञ्जं भक्षयेत् प्रातर्मरीचैश्च समन्वितम् ॥
जानु जंघा कटीस्थूल पाद गुल्फौष्ठ शीर्षकम्।
मन्यास्तम्भं बाहुभवं त्रिकस्तम्भंच पादजम् ॥
अधो भागे च ये वाताः सर्वांगे विचरन्ति ये।
सर्वान्वाताञ्जयेदाशु दैत्यं नारायणो यथा ॥

भावार्थ—शु० पारा, शु० गन्धक, ताम्र, लोहभस्म, सुवर्णमाक्षिक भस्म, १-१ भाग शु० बच्छनाभ २ भाग, शु० जमालगोटा और शु० हरिताल १-१ भाग त्रिकटु चूर्ण सबके बराबर लेकर बारीक चूर्णकर पारे गन्धककी नीलवर्ण कज्जलीमें मिलाय निर्गुण्डी, आकका दूध, तर्कारी, भंगरा, जमीकन्द, धतूरा इनके यथा सम्भव स्वरस अथवा काथसे ७-७ भावनायें देकर २-२ रत्तीकी गोलियां बनाकर रख-

छोड़े इसमेंसे १-१ गोली प्रातः कालमें ७ अथवा २१ कालीमिर्चोंके चूर्णके साथ लेनेसे जानु, जंघा, कमर, पैर, गुल्फ, ओष्ठ और शिर-सम्बन्धी रोग, मन्यास्तम्भ, हनुस्तम्भ, त्रिकस्तम्भ, अधोभाग गतवात नष्ट हो जाता है।

बृहत् योगराज गुग्गुलुः

त्रिकटु त्रिफला पाठा शाताह्वा रजनीद्वयम्।
अजमोदा वचाहिङ्गु हपुषा हस्ति पिप्पली॥
उपकुञ्चिका शरी धान्यं बिडं सौवर्चलन्तथा।
सैन्धवं पिप्पलीमूलं त्वगेला पत्रकेशरम्॥
फणिज्झकञ्च लौहञ्च सर्जकञ्च त्रिकण्टकम्।
रास्नाचाऽतिविषा शुण्ठी यवक्षाराम्लवेतसम्॥
चित्रकं पुस्कश्चव्यं वृक्षाम्लं दाड़िमं रुबुः।
अश्वगन्धा त्रिबृहन्ती बदरं देवदारु च।
हरिद्रा कटुका मूर्वा त्रायमाणा दुरालभा।
विडङ्गं मृतबंगश्च यमानीवासकोऽभ्रकम्॥
एतानि समभागानि श्लक्ष्ण चूर्णानि कारयेत्।
शोधितं गुग्गुलश्चैव सर्वचूर्ण समं नयेत्॥
घृतेन कुट्टयित्वा च स्निग्धे भाण्डे निधापयेत्।
रसवातेन ये भग्नाः कटिभग्नाश्च ये जनाः॥
एकांगं शुष्यते येषां कुष्ठं वाऽपि क्षतोत्तरम्।
पादौ बिस्तारितौ येषां येषां वा गृध्रसिग्रहः॥

सन्धिवातं क्रोष्टुशीर्षं वातं सर्व शरीरगम् ।
अशीतिं वातजान्रोगां श्चत्वारिंशच्च पैत्तिकान् ॥
विंशतिं श्लैष्मिकांश्चैव हन्त्यवश्यं न संशयः ।
अयं बृहद्योगराजगुग्गुलुः सर्ववातहा ॥

भावार्थ-त्रिकटु, त्रिफला, पाठा, सोंफ, हल्दी, दारुहल्दी, अजमोद वच, भुनीहींग, हाऊबेर, गजपीपल, कालाजीरी, मगरेला, कचूर, धनियां, विडनमक, संचलनमक, सैन्धव, पीपलामूल, तज, इलायची पत्रज, केशर, मरूवा, लोहभस्म, राल, गोखरू, रास्ना, अतीस, सोंठ, यवक्षार, अमलवेत, चित्रक, पोहकरमूल चव्य, कोकम, अनारदाना, एरंडमूल, असगन्ध, निशोत, दन्तीमूल, बेरकी छाल, देवदारू, हल्दी, कुटकी, मरोड़फली, त्रायमाण, जवांसा, विडंग, बंगभष्म, अजवाइन, अड़ूसा, अभ्रक भस्म, ये समभाग लेकर ऊखलमें शु० गुगूलको डालकर गोघृत देकर द्रव होने तक कुटवाकर चूर्णको थोड़ा थोड़ा चूर्ण मिलाकर फिर कुटवावें जब तककी गोलीबनने लायक न हो जावे। बहुतसे वैद्य इसको करते समय एक लक्ष चोट गिनकर लगवाते हैं इससे इसमें गुणोंकी बृद्धि हो जाती है। तैयार होनेपर चिकने भांड़में रख छोड़े। इसमेंसे १-२ मासा लेकर उचित अनुपानके साथ देनेसे आमवात, एकाङ्गशोष, कुष्ठ, उरःक्षत, खञ्जता, गृध्रसी, सन्निपात, क्रोष्टुशीर्ष, सर्वाङ्गवात, ८० वातज रोग, और २० कफ रोगोंको यह नष्ट कर देता है।

चिन्तामणिचतुर्मुखः ॥

विशुद्धं रससिन्दूरं तदर्धं लौहमभ्रकम् ।
तदर्धंकनकं खल्वे कन्यास्वरसमर्दितम् ॥
एरण्डपत्रैरावेष्ट्य धान्यराशौ निधापयेत् ।
त्रिदिनान्ते समुद्धृत्य सर्वरोगेषु योजयेत् ॥

एतद्रसायनवरं त्रिफलामधुसंयुतम् ।
तद्यथाग्निबलं खादेद्वलीपलितनाशनम् ॥
अपस्मारं महोन्मादं रोगान् वात समुद्भवान् ।
क्रमेण शीलितं हन्ति वृक्षमिन्द्राशनिर्यथा ॥

भावार्थ—उत्तम विधिसे तैयार किया हुवा रससिन्दुर ४ तोला लोहभस्म, २ तोला, अभ्रकभस्म २ तोला, स्वर्णभस्म, १ तोला इनसबको खरलमें डालकर घृतकुमारी रसमें ३ रोजतक मर्दनकरे, फिर गोला बनाकर एरण्डके पत्तोंको लपेटकर ३ रोजतक धान्यकी राशीमें रखदेवें, बादमें निकालकर २-२ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछड़े।

उपयोग

इसको त्रिफला क्वाथ मधुके अनुपानसे अथवा समयोचित अनुपानसे सेवन करनेसे अपस्मार, सन्यासादि वायुसम्बन्धी हर तरहके रोग नष्ट हो जाते हैं।

सलिलशोषणं चूर्णम् ।

रसभस्म यवक्षारं पीतमूलीं त्रुटिं तथा ।
भार्गीं त्रिजातकं पथ्या तथाचैवेन्द्रवारुणीम् ॥
समांशेन समादाय पयसा गुञ्जयुग्मकम् ।
शिरसोऽम्बुहरणं चैतच्चूर्णं सलिलशोषणम् ॥

भावार्थ-रससिन्दुर, रेवन्द चीनी, इलायजी, भार्गी, दालचीनि, बड़ी इलायची, पत्रज, हरड़ छाल, इन्द्रायणकीजड़, इन सबको समान-भाग लेकर चूर्णबनालेवे। इसमेसे २ रत्ती मात्रा दूधके अनुपासे सेवन करेनेर मस्तिष्काम्बुका शोषण हो जाता है।

क्वाथमाह

मुस्तकादि क्वाथ

मुस्द पर्पट कोशीर देवदारु महौषधम् ।
त्रिफला धन्वयासश्च नीलीकम्पिल्लकं त्रिवृत ॥
किराततिक्तकं पाठा बला कटुकरोहिणी ।
मधुकं पिप्पली मूलं मुस्ताद्योगण उच्यते ॥
अष्टादशाङ्गमुदिमेतद्वा सन्निपातनुत् ।
पित्तोत्तरे सन्निपाते हितंचोक्तं मनीषिभि : ॥
मन्यास्तम्भे उरोघाते उरः पार्श्वशिरो ग्रहे ।

भावार्थ—नागर मोथा, पित्त पापड़ा, खस, देवदारु, सोंठ, त्रिफला, जवांसा, नीलझिन्टी, कमीला, निशोथ, चिरायता, पाठा, खरेंटी मूल, कुटकी, मुलेहटी, पीपलामूल इन सबको मिलाकर मुस्तादि गण तैयार होता है।

उपयोग—इन उपरोक्त औषधियोंको समान भाग लेकर यव कूट करके क्वाथ बना लेवे। उपरोक्त रसादिकोंके साथ इसका प्रयोग करनेसे गर्दन तोड़ (मेनिञ्जाइटिस) रोगमें अच्छा फायदा होता है, यह मेरा प्रत्यक्ष अनुभव है।

अन्य चिकित्सा

पञ्चमूली कृतः क्वाथो दशमूली कृतोऽथवा ।
रुक्षः स्वेद स्तथा नस्यं मन्यास्तम्भे प्रशस्यते ॥

भावार्थ—पञ्चमूलका क्वाथ अथवा दशमूलका क्वाथ देनेसे भी फायदा होता है। अथवा रूक्षस्वेद नस्य भी इस रोगमें हित-कर हैं।

महामाष तैलम्

माषक्वाथे बलाक्वाथे रास्नाया दशमूलजे।
यवकोल कुलत्थानां छागमांस भवेत्पृथक् ॥
प्रस्थे तैलस्य च प्रस्थं क्षीरं दत्वा चतुर्गुणम्।
रास्नात्म गुप्तासिन्धुत्थ शताह्वैरण्ड मुस्तकैः ॥
जीवनीयबला व्योषैः पचेदक्ष समैर्भिषक् ।
हस्तकम्पे शिरः कम्पे बाहुशोषेऽपबाहुके।
बाधिर्ये कर्णशूले च कर्णनादेच दारुणे।
विश्वाच्यामर्दिते कुब्जे गृध्रस्यामपतानके ॥
वस्त्यभ्यञ्जन पानेषु नावने च प्रयोजयेत्।
माषतैल मिदं श्रेष्ठमूर्ध्वजत्रुगदपहम् ॥

निर्माण विधि—माष कलाई ऽ१ क्वाथार्थ जल ऽ८ अवशिष्ट ऽ२ बलामूल ऽ१ क्वाथार्थ जल ऽ८ अवशिष्ट ऽ१ इसी प्रकार रास्ना, दशमूल, यव, बदरी फल—कुलथी मिलित ऽ१, जल क्वाथार्थ ऽ८ अवशिष्ट ऽ२ छागमांस ऽ१ क्वाथार्थ जल, ऽ८ अवशिष्ट ऽ२ तिलतैल ऽ१ दुग्ध ऽ४ कल्क द्रव्य रास्ना १ तोला, कौंछ १ तोला, सैन्धव नमक १ तोला, सुलफाबीज १ तोला, एरण्डमूल १ तोला, नागर मोथ १ तोला, जीवनीयगण तथा बलामूल १ तोला, सोंठ १ तो० काली मीर्च १ तोला पीपल १ तोला, इन सबको लोहेकी कड़ाहीमें डालकर विधिपूर्वक पाचन करे। इस तैलको वस्तिमें तथा पीनेमें, नस्यमें प्रयोग करनेसे, मालिश करनेसे हाथोंकी कम्पन शिरकम्प, बाहुशोष, अपबाहुक, बधिरता, कर्णशूल, कर्णनाद, विश्वाची, अर्दित, कुब्जवात, गृध्रसी, अपतानकादि रोग नष्ट हो जाते हैं। कोई इसको माषप्रस्थ तैलके नामसे भी कहते हैं। यह तैल ऊर्ध्वजत्रुगत रोगोंको नष्ट करनेमें अत्यन्त ही श्रेष्ठ है।

(मध्यमनारायण तैलम्)

अश्वगन्धा बला विल्वं पाटला बृहती द्वयम् ।
श्वदंष्ट्रातिबला निम्बः श्योनाकश्च पुनर्नवा ॥
प्रसारिणी चाग्निमन्थः कुर्याद्दशपलं पृथक् ।
चतुर्द्रोणे जले पक्त्वा पादशेषं शृतं नयेत् ॥
तैलाढकेन संयोज्य शतावर्या रसाढकम् ।
प्रक्षिपेत्तत्रगोक्षीरं ततस्तैलाच्चतुर्गुणम् ॥
पृथकपलमितैः कल्कैर्द्रव्यैरेभिः पचेद्भिषक् ।
वचाचन्दन कुष्ठैलामांसी शैलेय सैन्धवैः ॥
अश्वगन्धाबलारास्ना शतपुष्पेन्द्र दारुभिः ।
पर्णी चतुष्टयेनैव तगरेण प्रसाधयेत् ॥
तत्तैलं भोजनेऽभ्यङ्गे पानेबस्तौ च योजयेत ।
पक्षाघातं हनुस्तम्भं मन्यास्तम्भं गलग्रहम् ॥
कुब्जत्वं बधिरत्वंच गतिभंगं कटीग्रहम् ।
गात्रशोषेन्द्रिय ध्वंसं शुक्रनाशं ज्वरं क्षयान् ॥
अन्त्रवृद्धिं कुरण्डश्च दन्तरोगं शिरोग्रहम् ।
पार्श्वशूलश्च पंगुत्वं बुद्धिनाशश्च गृध्रसीम् ॥
अन्यांश्च विविधान्वातान्हरेत्सर्वांग संश्रयान् ।
अस्या प्रभावाद्वन्ध्यापि नारी पुत्रं प्रसूयते ॥
यथा नारायणोदेवो दुष्टदैत्यविनाशनः ।
तथेदं वातरोगाणां नाशनं तैलमुत्तमम् ॥

निर्माण विधि

असगन्ध, खरेंटी, बेलगिरी, पाढ़ल, बड़ीकटेरी, कटेरी, गोखरू, कंघी, नीम, अरलु, सांटी (पुनर्नवा) प्रसारिणी (खींप) अरनी ये प्रत्येक औषधि ४०-४० तोला लेकर कूटकर चार द्रोण जलमें पकावे और चतुर्थांश शेष रखकर छान लेवे, फिर कढ़ाईमें तिल तैल ১४ चार सेर, सतावरीका स्वरस ১४ चार सेर, गोदुग्ध ১२० सेर, क्वाथीय जल ১२० सेर डाले, तथा कल्कार्थ वच, लालचन्दन, कूठ, इलायची, बालछड़, छाड़ छड़ीला, सैन्धव नमक, असगन्ध, खरेंटी, रासना, सोया, देवदारु, शालपर्णी, पृष्ठपर्णी, मुग्दपर्णी, माषपर्णी, और तगर इन प्रत्येक औषधियों का कल्क ४-४ चार चार तोले डालकर इस तैलको उत्तम रीतिसे तैयार करे।

उपयोग इस तैलको भोजनमें, मालिसमें, वस्ति प्रयोगमें, और पीनेमें प्रयोग करनेसे पक्षाघात (लकवा) हनुस्तम्भ, मन्यास्तम्भ, गलरोग (कुब्ज, बधिरता, गतिभंग, कमरका दर्द, गात्रशोष, इन्द्रियध्वंस, वीर्यदोष ज्वर, क्षय, अन्त्र वृद्धि, कुरंड, दन्तरोग, शिरोरोग, पार्श्वशूल पंगुरोग, बुद्धिनाश, गृध्रसी आदि समस्त वातजनित रोग नष्ट हो जाते हैं। यह तैल अपने प्रभावसे वन्ध्याको भी पुत्र देता है जिस प्रकार नारायण भगवान दैत्योंका नाश करते हैं उसी प्रकार यह तैल समस्त वात व्याधियोंको नष्ट करता है।

एलोपैथिक चिकित्सा

पाश्चात्य चिकित्सकगण इस रोगमें आज १५ साल पूर्व मैंनेञ्जो कोकशिरम नामक इन्जेक्सनका प्रयोग किया करते थे। लेकिन आजकल वह प्रणाली उठ गई, उसके स्थानपर सल्फा ग्रुप (Sulpha drugs) का ही प्रचार अधिक तया बढ़ रहा है। उनका कथन है कि जैसे ही रोगका सन्देह हो बिना किसी प्रायोगिक परीक्षा किये हुये ही सल्फा पिरिडीन या सल्फाथियाजोलका प्रयोग

मात्रा निश्चित करके शीघ्रातिशीघ्र चालू कर देना चाहिये, तभी सफलता प्राप्त होनेकी सम्भावना होगी। औषधि हर ४ चार घन्टे पर देना चाहिये। यदि इसके प्रयोगसे वमन होने लगे तो गोंद या वमन नाशक औषधिमें मिलाकर देवें, या इसका तरल भाग लेकर अन्तर्पेशीवेध द्वारा सूची वेधन करावे। अत्यधिक ग्रीवास्तम्भ होनेपर औषधिको जलमें मिलाकर आमशयिक नलिका द्वारा पेटमें पहुंचाना चाहिये। अत्यधिक शिरः शूल होनेपर कटिवेधकी भी आवश्यकता होती हैं। अन्यथा नहीं होती। कुछ समय से तो पेनिसिलीन नामक औषधिने सल्फा ग्रुपको भी दूर हटवा दिया है। प्रायः आज कल इसीका व्यवहार होता है। क्षयज मस्तिकावरण प्रदाहमें तो स्टेप्टो माइसीनका ही प्रयोग किया करते हैं।

एवं व्याधिर्यदा योगै र्नयाच्छान्तिं भिषक्तदा।
लघुहस्तस्त्रिकूर्चेन शीर्षस्थमम्बु निर्हरेत् ॥

होमियो पैथिक चिकित्सा

एकोनाइट, एलायेन्थस, एमोनकार्ब, एपिसवेल, ब्रायोनियां, कार्बोलिक एसिड, साइक्यूटा, मिमिसिफ्यूगा, क्रोटेलस, कूप्रम, ग्लोइन, हायोसियामस, हेली बोरस, कैलीब्रोम, लैकनेथिन्स, ल्पम्बम, स्ट्रैमोनियम, सल्फर, वेरेट विरिडी, जिंकमादि, औषधियोंकी आवश्यकता होती है। उपरोक्त औषधियोंकी अपेक्षा जिंकबोम, जिंक सल्फ, जिंकमेट और आर्जेण्ट नाइट्रिकम यह चार औषधियां अच्छा फायदा करती है।

ट्यूबरक्यूलर मेनेञ्जाटिसमें—एपिसकेल, कैलेकेरिया-आयोड, साइक्यूटा, आयोडिन, आयडो फार्म, लाइको पोडियम।

मस्तिकमें विकृति दिखाई देनेपर—बेलाडोना, हायोसियामस,

प्रायोनिया, ओपियकम, कक्यूलस कूप्रम, और जिङ्कादिक आवश्य कता होती है।

पथ्य

रोगीका माथा एकदम मुड़वादेना चाहिये, या केश खूब हल्के कटवादेने चाहिये, गर्दनपर लगातार बरफके वेगका प्रयोग करे, क्यों कि रोगी वेदनाके कारण बहुत छटपटाया करता है। अतः बरफके प्रयोगसे कुछशान्तिका अनुभव होता है। माथेके पीछे ग्रीवापर राईका पलस्तर देनेपर बहुत बार वेदना घटजाती है।

आयुर्वेदमें एतदर्थ आयाम कांजिककी पट्टी लगवाया करते हैं पीनेके लिये गरम करके ठण्ढा किया हुआ जल देना चाहिये। आहारमें जलबार्ली, साबू, छीनाजल, ग्लूकोज, मिश्रित जल प्रभृति पथ्य हैं। फलोंमें बेदाना, अङ्गूर, संतरा, मोसम्बीका, रस भी दिया जासक्ता है।

रोगीको स्वच्छ कमरेमें रखना चाहिये और रोगीकी आंखोंको रोशनी से बचना चाहिये, हवाका अवागमन बराबर रहना चाहिये। रोगीका माथा तकियेपर ऊंचाकरके रखना ही उचित है। पेटमें मल संचय न होने पावे ऐसी व्यवस्था रखनी चाहिये।

कालाज्वर KALA-AZAR

यदाऽसौधातुसंलीनः काले काले पुनर्भवम् ।
अग्नौमन्दे बलेहीने क्षीयमाणस्य देहिनः ॥
मपाण्डु शोथ वैवर्ण्यः प्लीहोदर युतो भवेत् ।
दुश्चिकित्स्यतमो घोरस्तदा कालज्वराभिधः ॥

इति सिद्धान्तनिदा०

सततक नामका विषमज्वर जब धातुओंमें लीन हो जाता है तब ज्वर बार बार आने लगता है, कभी एकान्तरा रूपसे कभी दिनमें २ बार भी आजाता है, इसलिये इसमें शरीरका रंग पीला पड़ जाता है, हाथ पैर मुखपर शोथ हो जाता है, तथा किसी किसीको पेटपर भी शोथ होजाता है। शरीरका रंग विकृत होजाता है। प्लीहा बढ़कर उदरको आच्छादित कर लेती है किसीके लीवर (यकृत) भी बढ़ जाता है, रोगी प्रतिदिन क्षीण होता जाता है, इसीलिये इसको कालाज्वर कहते हैं। यह कष्टसाध्य व्याधि है। यह ज्वर आसाम, बंगाल, उड़ीसा बिहारमें अधिकतया पाया जाता है। तथा शीतकालमें प्रायः अधिक होता है और २५ वर्षकी आयुवाले मनुष्यको विशेष करके होता है। आयुर्वेदमें इसका विशेष वर्णन कालाज्वर बोलकर नहीं मिलता है। प्रारम्भमें यह दिनमें तथा रात्रिमें २ बार शीत पूर्वक आता है, फिर कुछ समय केलिये छूट जाता है, फिर २-३ बार आक्रमण करता हुआ स्थायी ठहर जाता है तब शरीरका रंग काला पड़ जाता है इसीलिये इसको कालाज्वर नामसे पुकारते हैं।

उपद्रव—

इसमें किसीको अतिसार होकर मसूढ़ोंसे या नाकसे बार बार रक्त गिरने लगता है, किसी किसीको गालोंका मांस फूलकर पूय पैदा होजाती है, किसी किसीको न्युमोनियां, प्लूरसी, क्षय, प्रवाहिका भी हो जाते हैं, तब रोगी असाध्य हो जाता है।

डाक्टरी मतसे निदान

इस ज्वरको कालाजार लिश्मनियाशिस कहते हैं।

इस रोगको डाक्टरी वाले कीटाणु जन्य मानते हैं। उनका कथन है कि यह रोग खटमलों द्वारा ही फैलता है। इसके कीटाणुओंकी परीक्षा डा० लोश्मनने की है उनका कहना है कि मलेरियाके कीटाणुओंकी तरह खटमल भी अपना विष मनुष्यमें प्रवेश करके कालाज्वरको पैदा करने वाले कीटाणु बना देते हैं। इससे अस्थि, मज्जा, प्लीहा, यकृत, फुफ्फुस, आंत, अण्डकोषोंमें इनका प्रवेश हो जाता है। इसके प्रवेश होनेसे यकृत प्लीहा भी बढ़ जाते हैं। किसी किसीको इन कीटाणुओं द्वारा आंत्रिक क्षय भी हो जाता है।

लक्षण—इस रोगमें मुंहका रङ्ग पीला पड़ जाता है, अग्नि मन्द हो जाती है, शरीरमें दुबलापन हो जाता है। रक्तमें रक्ताणु और श्वेताणुओंकी संख्या न्यून हो जाती है। हाथ, पैर, मुंखमें शोथ आ जाता है। प्लीहा ज्यादा बढ़ जाती है। यकृत भी कुछ बढ़ जाता है, शरीरका रङ्ग काला पड़ जाता है, तथा ज्वर अनिश्चित काल तक आता रहता है। पसीना अधिक आता है। मुंहपर प्रातः काल शोथ प्रतीत होता है। सायंकाल उतर जाता है। शाखास्थियोंमें पीड़ा या शूल होता है। ज्वर बहुत वेग पूर्वक आता है।

रोगके पहिचाननेकी विधि

इस रोगको सहज ही में पहिचानना मुश्किल है। कारण पहिले यह ज्वर विषम ज्वरकी तरह आता है। फिर उतरकर मियादिकी तरह ठहर जाता है। तेज ज्वर रोकने वाली या उतारने वाली औषधि देनेपर भी नहीं उतरता है। कालान्तरमें यकृत, प्लीहा बढ़ जानेपर भी रक्त परीक्षाके द्वारा ही परीक्षा होती है अन्यथा नहीं। रक्त-परीक्षा भी सिरामें से रक्त निकालकर ही की जावेगी तो, इस

रोगके कीटाणु मिलते हैं। अङ्गुलीसे रक्त निकालकर यदि परीक्षा की जायगी, तो वह व्यर्थ होगी। हमारे यहां रक्त परीक्षाविधि नहीं है। आज-कलके नये विज्ञानमें ही यह परीक्षा लिखी है। अतः वह भी मैं संक्षेपमें इसी प्रकरणमें चिकित्साके बाद लिखूंगा।

आयुर्वेद मतसे चिकित्सा

इस रोगीको स्वच्छस्थानमें रखे तथा स्वच्छवस्त्रादि बिछाने ओढ़नेको दें, पथ्यमें विषम ज्वरमें जो पथ्य दिया जाता है वही दे। जल शृत शीत देवे, सर्व प्रथम पाचन क्रियाके द्वारा दोषको पचावे एतर्थ मृत्युञ्जय रस, लक्ष्मी नारायण रस, त्रिभुवनकीर्ति रस, ब्रह्म-क्षार, शिवक्षारपाचन, नवायस लौह, रत्नगिरी रस, ज्वर मुरारी, ज्वर केशरी आदि औषधियां प्रयोगमें लावें। जब काला ज्वरका पक्का निर्णय हो जाय, तब कालमेघ नवायस, यकृत् प्लीहारी वटी, प्लीहान्तक पाचन, श्रीकृष्ण चूर्ण, आदिके द्वारा चिकित्सा करें। मेरे पास अस्पतालमें इस रोगसे ग्रस्त बहुतसे रोगी आये, उनका जिन औषधियोंसे उपकार हुआ उसका कुछ विवरण लिखता हूं।

रोगीका नाम गुलाबचन्द, उम्र, २५ वर्ष गौड़ ब्राह्मण, देश राम-गढ़, भर्ती २-३-४८ को सुबह ८ बजे हुआ उस समय ज्वर १०५ था, दस्तकी कब्जी थी, वमन बहुत होती थी, तब इसको निम्नलिखित औषध चालूकी गई।

प्रातः सायं	म० रा०	पित्तान्तक वटी
ज्वर संहार २ रत्ती	रसादि वटी २ गो०	चूसनेको दी गई
ताल १ „	जहरमोहरा खताई १ रत्ती	षडङ्ग पानीय जल पीनेको
अमृता सत्व १ „	प्रवालपिष्टी १ रत्ती	पथ्ममें जलबाली
तुलसीरस मधुसे १पु०	लवङ्गमिश्री जलमें	बेदाना रस

सायंकाल ज्वर १०३ डिगरी हुआ, तब शिरपर दशाङ्ग लेप दिया। रातको सोते समय सौंफादिक चूर्ण गर्म जलसे दिया गया।

ता० ३-३-४८ को सुबह ज्वर ९९ में हो गया तबीयत खुश था, सायं काल ३ बजे जाड़ा लगकर ज्वर फिर १०४ हो गया, तब शिरपर बर्फ लगाई गई, तब रातको ही ज्वर हल्का हो गया। प्रातः काल ९७ में हो गया, तब हमारे यहांका ज्वराकुश ३-३ घन्टासे दिया गया। सायं काल ज्वर बिल्कुल नहीं हुआ, इस तरह ३ रोज तक ज्वरांकुश ही चालू रखा गया। ज्वर छूट गया तब पथ्य दे दिया गया। ४-५ रोज बाद छुट्टी दे दिया। १० रोज बाद घरपर फिर ज्वर आ गया तब उपरोक्त औषध दी, जिससे फिर ठीक हो गया देश चला गया। वहां फिर इसको इसी तरह २-३ बार ज्वर आया। वहांके ही वैद्यने इलाज किया। कमजोरी विशेष आ गई, तब वहां ही एक वैद्यने मूसलीपाक बनाकर दे दिया, जिसको खाते हुए ही कलकत्ता पहुंच गया यहां आया तब उसको जोरका ज्वर आ गया। तब फिर अस्पतालमें लाये और ता०५-३-४९ को भर्ती कर दिया। जब मैंने इसको देखा तो मालुम हुआ कि इसको काला ज्वर हो गया है, तब मैने रक्त परीक्षा कराई जिसमें काला ज्वर निकला, तब निम्नलिखित दवा चालू की।

प्रातः	सायं	म० रा०
पु० विषमज्वरान्तक	जयमंगलरस १ र०	वज्रक्षार
लौह १ रत्ती	भर्जित जीरक २ र०	अमृतारिष्टसे
कालाजीरा २ ,,	क्षुद्रादिक्वाथ मधुसे	
।		

यह दवा १ हप्ते तक चालू रखी गई परन्तु कुछ भी फायदा नहीं हुआ तब दवा दूसरी परीवर्तन की गई।

प्रातः सायं	म० रा०	पथ्यमें दूधवाली
यकृत प्लीहारीवटी	वज्रक्षार	मौसम्बी बेदानेका
प्लोहान्तकपाचनसे	अर्कसुदर्शनसे	रस दिया।

जिससे टट्टी २-३ होती थी। ज्वर भी नीचेमें ९८ में, सायंकाल १०१ रहता था। पहिले दिनमें ज्वर २ बार चढ़ता उतरता था, अब एक बार ही घटता बढ़ता था। इस तरह इस दवाको ७ रोज तक चलाया परन्तु ज्वर विल्कुल नहीं घटा। रोगीके लीवर तिल्ली बढ़े हुये थे। जिससे कभी-कभी पेटमें दर्द भी हो जाता था। इसलिये गोमूत्रका सेक किया गया। जिससे ज्वर कुछ कम होगया। प्रातः ९७ सायं ९८॥ रहा, पथ्य भी चालू किया गया। ३ रोज बाद ज्वर फिर जोरसे आने लग गया। सब दवा फिर बदली किया गया।

प्रातः सायं	म० रा०	
वधमानपिप्पली	सुदर्शन चूर्ण	पथ्यमें केवल दूध दिया गया

उससे दूध ५२ पीने लगगया ज्वर भी फिर कम होगया, शोथ भी उतर गया, चेहरेपर भी कुछ कान्ति दिखलाई दी, यह प्रयोग १ पिप्पलसे चालू कियागया ७-८ रोजतो इसने निभाया परन्तु बादमें फिर रोटी २ चिल्लाने लगगया; तब प्रयोगको उतारना पड़ा और रोटी खानेको दी जिसके देनेसे २ रोज बाद फिर ज्वर आ गया। उसको बहुत समझाया कि अन्न बन्द रखो जिससे बहुत जल्दी ही ठीक होजावोगे। लेकिन वह माना नही। तब फिर औषध बदली की।

प्रातः	सायं	म० रा०
श्रीकृष्ण चूर्ण पेटेन्ट १ रत्ती प्लीहान्तक पाचनसे।	कालमेघ नवायस ३ रत्ती हार श्रृंगारपत्ता रस मधुमें,	शंखद्राव ३ बून्द जलमें

पथ्यमें दूध वार्ली बेदाना, मोसम्बीका रस व फुलका साग इसदवाको चार रोज चलानेके बाद ज्वर कम होता चलागया १५ रोजमें बिल्कुल ठीक होकर घर चला गया।

दूसरा रोगी

नाम राधादेवी उम्र १५ वैश्य यहांका पता १५ नं० नलनी सेट रोड

यह घरपर एक माससे बीमारथी अस्पतालमें २५-४-४६ को आकर भर्ती हुई उस समय मैं यहां नहीं था। वैद्यप्यारे लालजी डी०आई० एम०एस० तथा वैद्यसतीश चन्द्र आयुर्वेदाचार्यने इसका इलाज चालू किया, मैं जब २०-५-४६ को देशसे वापिस आया तो देखा कि पुराने व्यवस्था पत्रमें ज्वरकी तमाम औषधियां लिखी पड़ी थो। इन दोनोंने तथा कविराज सुशील कुमारजीने इस रुग्णापर बहुत ही परिश्रम किया था। परन्तु ज्वर कभी १-२ दिन छूट जाता था कभी वापिस चढ आता था इस तरहसे १ मास पर्य्यन्त इसका इलाज होता रहा परन्तु कोई भी फायदा नहीं हुआ। मैंने जब इसको देखा तब निम्नलिखित लक्षण थे ज्वर प्रातः कभी ६८ में कभी १००। कभी सायंकाल १०३ कभी १०१ पेटमें भयंकर दर्द रहता था। लीवर तिल्ली दोनों बढ़े हुये थे शरीरक. रंग पीला पड़गया था। रक्त परीक्षा इन्होने पहिले ही करली थी जिसमें काला ज्वर ही निकला था। टट्टीकी कब्ज रहती थी कभी टट्टी २-४ लग जाते उसदिन ज्वर हल्का रहता था। नहीं तो तेज होजाता था। दवामें भी जयमंगल रस, पु० विषम ज्वरांक, मृत्युञ्जय. ज्वरसंहार, ज्वरांकुश, वृ० सर्वज्वरहरलौह ज्वरमुरारी, ज्वरकेशरी, सुदर्शन चूर्ण, गोदन्ती, प्लीहान्तक वटी, प्लीहान्तक पाचन, अमृतारिष्ट कालमेघनवायस, दास्यादि पाचन, पंचतिक्त कषाय, संशमनी वटी, वसन्तमालती, आदि सबदवाईयां दी गई थी। परन्तु कोई भी फायदा नहीं हुआ, हमलोग नुसखा बदलते २ थक गये तब इसके घरवालोंसे कहना पड़ा कि हमको इसकी आंतमें क्षत प्रतीत होता है। इसलिये अगर आपलोग कहना माने तो वर्धमान पिप्पली प्रयोग चालू करा देवें पथ्यमें केवल दूध ही दिया जायगा उन्होने स्वीकार करलिया तब निम्न-लिखित व्यवस्था की गई।

प्रातः सायं	१२ बजे	रातको ८ बजे
छोटीपीपल पीसकर १-१से	शिलाजत्वादि लौह	लघुपूर्णचन्द्ररस
चालूकी	दूधसे	दूधसे
१ घन्टे बाद	सायं ४ बजे	
मृगांक रस १ रत्ती	वसन्तमालती १ रत्ती	
सितोपलादि १ मा	सितोपलादि १ मा	
अमृतासत्व १ रत्ती	मधुमें १ पु०	
मधुमें		

पेटपर दशांङ्ग लेप लगाया इसतहर इस प्रयोग को २० रोजतक निरन्तर चालूरखा गया तब ज्वर सुबह ६७ में सायं ६८॥ में हुआ इस तरह इसरोगी को पीपल २० तक बढ़ाई जिससे १॥ महीनेमें बिल्कुल ठीक होकर पथ्यलेकर अपने घरचली गई। यह रोग महाहो कष्ट साध्य है। इसरोगसे ईश्वर बचावे।

जयमंगल रसः

हिङ्गुल सम्भवं सूतं गन्धकं टंकणं तथा।
ताम्रं वङ्गं माक्षिकञ्च सैन्धवं मरिचन्तथा॥
समं सर्वं समाहृत्य द्विगुणं स्वर्णभस्मकम्।
तदर्धंकान्त लौहञ्च रौप्यभस्मापितत्समम्॥
एतत्सर्वं विचूर्ण्याथ भावयेत्कनकद्रवैः।
शेफालिदलजैश्चापि दशमूल रसेनच॥
किराततिक्तक क्वाथैस्त्रिवारं भावयेत्सुधीः।
भावयित्वा ततः कार्या गुञ्जाद्वय मितावटी॥
अनुपानं प्रयोक्तव्यं जीरकं मधुसंयुतम्।
जीर्ण ज्वरं महाघोरं चिरकाल समुत्थितम्॥

ज्वर मष्टविधं हन्ति साध्यासाध्यमथापिवा ।
पृथक्दोषाश्च विविधान्समस्तान्विषमज्वरान् ।
मेदोगतं मांसगतमस्थिमज्ज गतन्तथा ।
अन्तर्गतं महाघोरं वहिः स्थंच विशेषतः ॥
नाना दोषोद्भवश्चैव ज्वरं शुक्रगतन्तथा ।
निखिलं ज्वर नामानं हन्ति श्री शिवशासनात् ॥
जयमंगलरस नामायं रसः श्री शिवनिर्मितः ।
वलपुष्टि करश्चैव सर्वरोग निवहणः ॥

रसयोगसागर०

भावार्थ—शु० पारा, शु० गन्धक, शु० सुहागा, ताम्रभस्म, वङ्गभस्म, स्वर्णमाक्षिकभस्म, सैन्धवनमक, कालीमिर्च, यह सर्व १-१ तोला इन सबसे दूनी १६ स्वर्णभस्म, कान्तालोहभस्म ८ तोला रजतभस्म ८ तो० इन सबको खरलमें कज्जलीके साथमें डालकर धतूरास्वरस, हारशृंगारस्वरस, दशमूलक्वाथ, चिरायताक्वाथकी, ३-३ भावना देकर २-२ रत्तीकी गोली वनावे। इसमेंसे १-१ गोली जीरा और मधुके साथ देनेसे बहुत दिनका जीर्णज्वर, आठ प्रकारके साध्या-साध्य ज्वर, अथवा त्रिदोष ज्वर, नाना प्रकारके विषमज्वर, धातु गतज्वर, अन्तर्वेगज्वर, बहिर्वेगज्वर, इन सब प्रकारके ज्वरोंको यह जयमङ्गल नामका रस नष्ट करता है। तथा बल पुष्टिको बढ़ाता है। यह ज्वरको नाश करने वाला बहुतही उत्तम रस है। इसके सेवनसे पुराना २—३ माससे आनेवाला विषमज्वर तथा जो गरम उपचार शीत उपचारसे भी वढ़ जाता हो तथा जो ज्वर लीवर, प्लीहाका आश्रय लेकर ठहर रहा हो ऐसे ज्वरोंको नाश करनेमें यह अद्वितीय रस है। इस रसके सेवनसे आंतमें रहे हुये ज्वर पैदा

करने वाले कीटाणु तथा सेन्द्रिय विषभी नष्टहो जाता है। यह भीतरी अथवा ऊपरी दाहको शमन करता है, कफको नाश करता है, मनको प्रसन्न रखता है, अग्निको प्रदीप्त करता है, तथा शरीरको आरोग्य करता है। राजयक्ष्मा जसे भयंकर रोगोंमें ज्वरकी तीव्रता में निर्बलता तथा व्याकुलता बढ़ गई हो उस समय अन्य स्वर्णघटित औषधिका प्रयोग भयप्रद माना जाता है। लेकिन इस रसके प्रयोगमें किसी प्रकारकी हिच-किचाहटकी दरकार नहीं निर्भयता पूर्वक दे सकते हैं। अन्य ज्वरघ्न औषधियोंमें प्राय: वत्सनाभविष रहता है अत: उनके द्वारा हृद्दौर्बल्य हो जाता है। इसके सेवनसे क्षयको पैदा करने वाले कीटाणु नष्ट हो जाते हैं, तथा शारीरिक उष्माभी मर्यादित हो जाती है। आगन्तुक ज्वरमें भी इससे अच्छा फायदा होता है। इस रसको श्रीशिवने निर्माण किया है। अत: इसका प्रयोग करते समय शंकर भगवानका ध्यान करके देनेसे बहुत शीघ्रही फल प्राप्ति होती है। इस जय मंगलरसमें द्विगुणं स्वर्णभस्मकम् ऐसा पाठ लिखा है। इसलिये बहुतसे वैद्य पारद १ तोलासे द्विगुण यानी २ तोला स्वर्ण लेते हैं। परन्तु शास्त्रमें समं सर्वं समाहृत्य द्विगुणं स्वर्णभस्म कम्। इस हिसाबसे सम्मिलित द्रव्योंसे द्विगुण स्वर्ण भस्म होना चाहिये। लेकिन इसमें खर्चा बहुत पड़ता है हरेक साधारण वैद्य इसको बनाने में असमर्थ रहेगा अत: उचित समझ करें। शास्त्र विधिमें तो १६ तोला स्वर्णभस्सही होनी चाहिये।

पु० विषमज्वरान्तकलौहम्।

हिङ्गूल सम्भवंसूतं गन्धकेन सुकज्जलीम्।
रसपर्पटीवत्पाच्यं सूतांघ्रिहेम भस्मकम्॥

लोहं ताम्रमभ्रकञ्चरसस्य द्विगुणंक्षिपेत् ।
बङ्गञ्चैव प्रवालञ्च समांश्च विनिःक्षिपेत् ॥
मुक्ताशंखं शुक्तिभस्म रस पादिकमेवच ।
मुक्तागृहेच संस्थाप्य पुटपाकेन साधयेत् ॥
भक्षयेत्प्रात रूत्थाय द्विगुञ्जाफल मानतः ।
अनुपानं प्रयोक्तव्यं कणाहिङ्गु ससैन्धनम् ॥
ज्वरमष्टविधं हन्ति वातपित्तकफोद्भवम् ।
प्लीहानं यकृतंगुल्मं साध्यासाध्यमथापिवा ॥
सततंसन्ततान्यश्चत्र्याहिकंचतुराह्निकम् ।
कामला पांण्डुरागश्च शोथं मन्दमरोचकम् ॥
ग्रहणिमामदोषञ्चकासंश्वासं च दारुणम् ।
मूत्रकृच्छातिसारञ्च नाशयेदविकल्पतः ॥

भावार्थ—पारद ४ तो० गन्धक ४तो० नीलवर्णकी कज्जलीकर रसपर्पटी की तरह पर्पटी बनावे। फिर सुवर्णभस्म १ तोला, लोहभस्म, ८ तो० *ताम्र ८ तो०। इसकी जगह रजतभस्म डालें तो वमन होनेका भय* नहीं रहता। अभ्रकभस्म ८ तो०, बङ्गभस्म २ तो०, प्रवालभस्म २ तो०, मातोभस्म १ तो०, शंखभस्म १ तो०, सींपभस्म १ तो०, इन सबको कज्जलीके साथ घोटकर मोतीकी सीपमें बन्दकर ३-४ कपड़ मिट्टी देकर पुटपाक विधिसे स्वेदित कर रख छोड़ें। इसमेंसे १ रत्ती या २ रत्तीकी मात्रा पिप्पलीचूर्ण हींग सैन्धव नमकके साथ देनेसे वातपित, कफजन्य ८प्रकारके ज्वर, प्लीहा,यकृत, गुल्मसन्तत और सतत,त्र्याहिक, चातुर्थिक, कामला, पाण्डु, शोथ, प्रमेह, अरुचि, ग्रहणी, आमदोष, कास, भयङ्करश्वास, मूत्रकृच्छ, अतिसार

आदिक बीमारीयोंको यह पु० विषमज्वरान्तकलोह नष्ट करता है। इसमें किसी तरहका संशय नहीं है।

शिलाजित्वादिलौह

शिलाजतुमधु व्योषं ताप्यं लोहरजस्तथा।
क्षीरेणलेहितस्याशु क्षयः क्षयमवाप्नुयात् ॥

भावार्थ—शु० शिलाजीत, मधु, त्रिकटु, स्वर्णमाक्षिकभस्म और लोहभस्म इन सबको समान भाग लेकर खरलमें डाल १-२ प्रहर घोटकर छोड़े। इसमें से उचित मात्रा रोगीके बलाबलको देखकर दूधके साथ सेवन करावे इससे क्षयरोगकी निवृत्ति होती है तथा पाण्डु, शोथ, अरुचि, वमन, यकृत, मांसार्बुद आदि रोग नष्ट हो जाते हैं। अनेक दिनों तक शीतज्वर आनेके कारण पाण्डुता आनेपर शास्त्रकारोंने लौहभस्म युक्त औषधि देनेका विधान बतलाया है। जैसे त्रिफला मण्डूर, नवायसलौह, धातृलौह, मण्डूरवटी आदि हैं। इस औषधिमें शिलाजीत मिला हुआ है इसलिये यह मूत्रमें रहने वाले क्षार शरीरमें जो संचित होकर अनेक प्रकारके रोग उत्पन्न कर देते हैं, उन सबको फौरन ही निकाल देता है। शिलाजीत मूत्रल, आमदोषको पाचन करने वाला रक्तदोष नाशक शरीरमें संचित अद्भुत क्षारोंको मूत्र मार्ग द्वारा श्राव करने वाली सेन्द्रिय औषधि है।

मृगाङ्करसः

रसभस्म स्वर्णभस्म पृथङ्निष्कं प्रकल्पयेत्।
शंखगन्धक मुक्तानां द्वौ-द्वौ निष्कौच चूर्णितम् ॥
मुक्तापादं वराटानां रसपादश्च टंकणम्।
वरारसेन क्वाथेन मर्दयेत्प्रहरत्रयम् ॥

तग्द्रोलकं विशोष्याऽथ भाण्डलवण पूरिते ।
पचेद्याम चतुष्कञ्च मृगाङ्कोऽयम रसोत्तमः ॥
राजरोगनिवृत्यर्थं चतुर्गुंजामितं बुधैः ।

रसयोगसा०

भावार्थ विधि पारद भस्म १ तोला, स्वर्ण भस्म १तोला, शंख भस्म २ तोला, मोती भस्म, २ तोला, गन्धक २ तोला, कौड़ी भस्म ३/४ तोला, भर्जित टंकण ३/४ तोला, सबको खरलमें डालकर कज्जली बना त्रिफला स्वरस या क्वाथमें तीन पहर तक मर्दन करके गोला बनावे और इसको शराब सम्पुटमें रखकर कपड़ मिट्टी ३-४ लगा देवे। सूखनेपर लवण यन्त्रमें रखकर चार पहरकी मन्द अग्नि देवें। स्वांग-शीतल होनेपर शरावमेंसे निकालकर रख छोड़ें। मात्रा १-रत्ती से ४ रत्ती तक घृतके अनुपानसे देनेसे राजयक्ष्मा रोगको नष्ट करता है।

उपयोग--यह मृगाङ्क रस नाना प्रकारके उपद्रव सहित क्षय ज्वर, गुल्म, विद्रधि, मन्दाग्नि, स्वरभेद, कास, अरुचि, मूर्च्छा, भ्रम, कामला आदि रोगोंको सत्वर ही नष्ट करता है। तथा क्षय जनित बाधाओंको दूर करके मस्तिष्कमें शान्ति लाता है। इसके सेवनसे निद्रा भी अच्छी आती है। मानसिक घबराहट भी दूर होती है। शरीरमें शक्ति बढ़ती है, इस तरह यह रसायन शीघ्र ही मनुष्यको आरोग्यकर देता है। इसके सेवनके समय पौष्टिक पादार्थ घृत, दूध मलाईका सेवन अधिक मात्रामें करना चाहिये, और विदाही पदार्थोंका तथा स्त्रीका त्यागकर देना चाहिये।

प्लीहान्तक चूर्ण

शु० नोसादर ८ तोला, काला नमक १ तोला, सोना गेरू १ तो०, को मिलाकर चूर्णकर लेव।

मात्रा उपयोग ४ से ८ रत्ती तक दिनमें २ बार ठन्डे जलसे सेवन करावे। इसके सेवनसे यकृत, प्लीहा, उदर रोग, शोथ, मूत्र-दोष आदि बिमारियाँ तथा कालाज्वर जल्दो ही ठीक हो जाता है।

प्लीहान्तक क्वाथ

शरपुंखा १ तोला, हरीतकी छाल १ तोला, गिलोय १ तोला, वासक छाल १ तोला, चिरायता १ तोला, तृणपञ्चमूल १ तोला, कुटकी १ तोला इन सबको मिलाकर कूटकर क्वाथ विधिसे क्वाथ तैयार कर लेवें, इससे प्लीहाजनित ज्वर शीघ्रही आराम होता है।

प्लीहिनतालपुष्पक्षारः

तालपुष्पोद्भवः क्षारः सगुड़ः प्लीहनाशनः

ताल जटाक्षारको गुड़के साथ सेवन करनेसे प्लीहा रोग नष्ट होता है।

पिप्पली वर्धमानम्

शास्त्रमें पिप्पली वर्धमान प्रयोगकी विधिमें लिखा है कि पिप्पली प्रयोग तीन प्रकारका होता है उत्तम, मध्यम, अधम, जैसे—

दश पिप्पलिकः श्रेष्ठो मध्यमः षट् प्रकीर्तितः
यस्त्रि पिप्पलि पर्य्यन्तः प्रयोगः सोऽवरः स्मृतः ॥

परन्तु इस समयके मनुष्य बहुत कमजोर हैं। इसमें १० पिप्पलीकी तो बात ही क्या, ३ पिप्लीका प्रयोग भी सहन करनेकी शक्ति नहीं रखते हैं। इसलिये मैंने कालाज्वरके रोगीको १ पिप्पलीसे प्रारम्भ करके १० तक बढ़ाई थी, और १०-१० पिप्पली १० रोज तक लगातार दी, फिर २१ वें दिनसे फिर १-१ करके घटाया था। इस साधारण प्रयोगमें ही यह रुग्णा ऽ४ दूध पीती थी, फिर भी गर्मी २ बहुत पुकारती थी। इसलिये मेरी समझमें कमजोर कोमल प्रकृति वाले रोगीको शास्त्र विधिसे न देकर १-२-३ इस क्रमसे देना भी अच्छा

फायदा करता है। अगर १० पिप्पली वाला प्रयोग ही कराना हो तो १० पिप्पलीकी जगह १० दाने लेकर कराना ही उत्तम है; या गुड़ पिप्पली ही देवे तो इसके सेवनसे भी बहुत-से रोगी आरोग्य होते हैं।

रक्ताभिषरण क्रिया तथा आधुनिक परीक्षा विधि।

रक्त किसे कहते हैं

सखल्वाप्यां रसः भुक्त मार्गस्थैःस्रोतोभिराकृष्यमाणः यकृत्प्लीहानौ प्राप्य रागमुपैति। रक्तसंज्ञां चान्तरं लभते।

प्रत्यक्ष शारीरम्

भवति चात्र

रञ्जितास्तेजसात्वापः शरीरस्थेन देहिनाम्।
अव्यापन्ना प्रसन्नेन रक्त मित्यभिधीयते॥

मनुष्य जब भोज्य, पेय, चोस्य, लेह्य, आहारोंको खाता है, तब उससे बना हुआ रस यकृत् प्लीहामें पहुंचकर रक्त बन जाता है। इसी रक्तके द्वारा सम्पूर्ण शरीरकी पुष्टि होती है। यह रक्त शिरसे लेकर पैरके नख-तक छोटे बड़े सर्व अङ्गोंमें दौड़ता रहता है। जिस स्थानमें इसकी गमनक्रियाका संचार नहीं होता है वह स्थान निर्बल या संज्ञा हीन मृतः प्राय होजाता है। इसलिये इसको जीवनाधार मानते हैं। जैसा प्रत्यक्ष शारीरमें भी लीखा है।

रक्तंनाम—सकलधातु प्रीणनः सारशरीरस्य रसएव रञ्ज-कारव्येन पित्तेन विपरणमितः तस्यच संग्रह प्ररणास्थानं हृदयं तद्धि हृदयादेव धमनीरनुप्रविश्य कृत्स्नं शरीर मह अहस्त-र्पयति धारयति जीवयति यापयचित मलिनी भूतश्च ततू शिराभिभि प्रविशति हृदयमेव पुनः शुध्यर्थं फुफ्फुस गमनाय।

रक्त शरीरमें रातदिन अनवरत गतिसे घूमता रहता है। इसकी संचालन क्रिया जिसदिन बच्चा होतेही भूमिपर आकर प्रथम श्वांस लेता है तबसे अन्तिम श्वांसतक चालू रहती है। श्वासके साथ ही हृदयगत मांसपेशियाँ भी संकुचित होने लगती हैं। जिससे फेफड़े अपना श्वास प्रवासका कार्यचालू करने लग जाते हैं और हृदय अपना पम्पिङ्गका काम चालूकर देता है। मातासे पृथक् होतेही हृदय बालकको स्वतन्त्र जीवन देना प्रारम्भ करता है जो मृत्यु पर्यन्त रहता है। इसी तरह हृदय भी रक्तको फेंकते समय संकुचित होता है और ग्रहण करते समय विकसित होता है। इस तरह संकोच और विकासके समय जो तरङ्ग धमनियोंमें स्पन्दनके रूपमें होती है उसीके द्वारा वैद्य लोग वात, पित्त, कफादि दोषोंकी पहिचान करते हैं। जैसे नाड़ीपरीक्षामें लिखा है कि धमनी जीव साक्षिणी तत्त्वेष्टया दुःखं सुखं ज्ञेयं कायस्य पण्डितैः। पुराने अनुभवी वैद्य केवल धमनी परीक्षासे ही रोगका निदान कर लेते थे। ऐसी किम्वदन्ति चली आती है। डाक्टर लोग दोषकी गतिको नहीं पहिचानते हैं। उनके यहां सिर्फ गणनाही कीजाती है। उनके मतसे युवा और स्वस्थ पुरुषका स्पन्दन १ मिनटमें ७५-से-८० तक होता है। बच्चोंमें अधिक होता है रोगहोनेके कारण गति और संख्यामें फर्क आ जाता है। मूलस्थूल रूपसे एक ही महा धमनी सम्पूर्ण शरीरमें फैली हुई है। जिस प्रकार एकही वृक्षकी जड़, शाखा, प्रशाखा, पत्त आदि भेद हैं, उसी तरह इस धमनीके भी कितने ही रूप होते हैं। इन धमनियों द्वारा ही रक्त सम्पूर्ण शरीरको शोधन करता हुआ तथा शरीरके सम्पूर्ण भागोंमें चक्कर करता हुआ जहां जहां जिस अवयवोंको खुराक पहुंचाता है वहांसे उनके मलोंको अपनेमें मिलाता हुआ शरीरसे बाहर निकालने वाले अवयवोंमें पहुचा देता है वहांसे यह मल रूप नाना रकमका होकर बाहर आता है। जैसे त्वचासे पसीनेके रूपमे प्रश्वाससे दूषित वायुके रूपमें, वृक्कसे मूत्रके रूपमें बाहर निकल जाता

है। इसी प्रकारसे यह रक्त हमारे शरीरकी शुद्धि भी करता रहता है। इसके अलावा रक्तका काम शरीरमें उष्णता देनेका है। यदि किसी कारणवश रक्तकी गति रुक जाती है तो शरीर ठन्डा पड़ जाता है। विशेषतः बृद्धावस्थामें या तीव्र रोगके कारण रक्त संचार मन्द पड़ जाता है तब पांव और हाथोंकी अङ्गुलियोंके अग्र भागमें शून्यता या ठन्डापन हो जाता है यह अवस्था तीव्ररोगाक्रान्त रोगीके लिये भयप्रद मानी जाती है।

रक्तकी रचना—जब कभी कटनेसे जो रक्त निकलता है, तो वह जलकी तरह पतला होता। परन्तु बाहरकी हवा लगनेसे जल्दी ही जम जाता है। जमनेके बाद इसमें दो भाग दिखलाई देते हैं। एक गाढ़ा दूसरा जलरूप, इस जमे हुये भागको ही अणुवीक्षण यन्त्रकी सहायतासे देखनेपर इसमें बहुतसी वस्तुयें दिखलाई देती हैं जैसे कुछ तन्तु कुछ जाल बिछा हुआ तथा इसमें लम्वे लम्वे कणसे कुछ लाल रंगके, कुछ श्वेत रंगके होते हैं। इन कणोंको 'रक्ताणु" श्वेताणु" कहते हैं। रक्ताणु शरीरकी पुष्टि करते हैं। श्वेताणु शोधन। श्वेताणुओंके द्वाराही शरीरको हानि पहुंचाने वाले पदार्थ इसमें धुलकर बहते २ मल निस्सारक अवयवोंके द्वारा वाहर निकाले जाते हैं। स्वस्थ शरीरमें रक्ताणुओंकी संख्या श्वेताणुओंसे अधिक रहती है। इनका आकार गोल तथा दोनों तरफसे पिचका रहता है। श्वेताणु रंगमें श्वेत रक्ताणुओंसे बड़े होते हैं।

रोग होनेपर इनकी संख्यामें परिवर्तन होजाता है। श्वेताणुओं की वृद्धि होनेपर शरीर पोला रक्तहीन दिखलाई देता है। जैसा कि मैलेरिया या काला आजार रोगमें। इनके अलावा रक्तमें कई प्रकारके नमक (साल्ट) भी पाये जाते हैं जैसे चूना, मगनेसिया सोड़ा आदि इस लिये रक्तमें नमकका स्वाद रहता है इसकी प्रतिक्रिया भी क्षारीय होती है। इन रक्ताणुओंमें एक वस्तु और रहती है जिसको थ्रोबोजिन

कहते हैं यह नहीं कहा जासक्ता कि पहिले सेही वहां उपस्थित रहती है या प्रवाहके समय थ्रोविन निकलती है। उसी समय रक्त कणों और कटे हुये भागसे एक दूसरी वस्तु निकलती है। जिसको थ्रोंबो-काइनेज कहते हैं।

इन दोनोंके मिलनेसे थ्रोविन बन जाती है। रक्तमें एक वस्तु और होती है जिसका फाईब्रिजन कहते हैं। याने जब कैलशि-यम लवनोंकी उपस्थितिमें थ्रोविन और फाइब्रिजन दोनों मिलते हैं। तो फाइब्रिन बन जाता है। यह फाइब्रिन और रक्तकण मिलकर रक्तका जमा हुआ भाग बना देते हैं। इस तरह रक्त जमकर कटे हुए स्थानका मुंह बन्द कर देता है, जिससे रक्त बहना बन्द हो जाता है।

शरीरमें जो रोगको पैदा करने वाले जीवाणु पहुंचते हैं, वे केवल रोगको ही पैदा नहीं करते हैं किन्तु कुछ विष भी पैदा करते हैं। रक्त इन विषोंका भी नाश करता है। इनको नष्ट करनेके लिये रक्त ही एक ऐसी वस्तु बनाता है, जो विषोंके बिल्कुल प्रतिकूल होती है। जैसे--शास्त्रोंमें लिखा है कि "विषस्य विषमौषधम" के अनुसार रक्त उन विषोंको विषके द्वारा ही नाशकर देता है। आजकलके विज्ञाना-चार्य बहुत-से रोगोंकी इन्जेक्सनके द्वारा जो चिकित्सा करते हैं, उनका भी यही सिद्धान्त है। यदि हमारे शरीरके हरेक अवयवकी सूक्ष्म-दर्शक यन्त्र द्वारा परीक्षाकी जावे तो हरेक अङ्गमें बहुतसे रोगोत्पा-दक जीवाणु पाये जायँगे। हमारे चर्मपर ८० प्रकारके जीवाणु पाये जाते हैं। ऐसी ही गलेमें कमसे कम ६ प्रकारके जीवाणु मिलते हैं। यदि यन्त्र द्वारा फुफ्फुस और गलेमें से निकले हुये मलकी परीक्षाकी जाय तो हममेंसे बहुतोंके शरीरमें जिनका स्वास्थ्य अत्युत्तम है और सर्व तरहसे रोगमुक्त है; राजयक्ष्माके कीटाणु मिलेंगे। यह रोगो-त्पादक जीवाणु सर्वत्र विद्यमान है। फिर भी न जाने क्या कारण है *कि हम इतने भयंकर जीवाणुओंके बीचमें रहते हुये भी इन सबसे*

बचे रहते है, और अपना स्वास्थ्य ठीक रख सकते है। इसका क्या कारण है जो दो मनुष्य समान अवस्थामें रहते हैं, एक रोग ग्रस्त हो जाता और दूसरा स्वस्थ बना रहता है। इसका उत्तर यही है, एक मनुष्यके शरीरमें दूसरेकी अपेक्षा रोगक्षमता शक्ति अधिक है, जिससे रोगोत्पन्न करने वाले जीवोंका विनाश कर सकती है। यह साधारण अनुभव है कि एक मनुष्यको मन्थर ज्वर टाइफाइडका एक वार आक्रमण हो चुका है, उसको सहज ही में दुबारा आक्रमण नहीं होगा। यदि होता है भी तो बहुत हल्का। सम्भव है इस सिद्धान्तके विरुद्ध आज-कल बहुत से उदाहरण मिलते हैं। लेकिन साधारण तया यही देखा जाता है कि इस रोगका एक आक्रमण मनुष्यको फिरसे रोगग्रस्त नहीं होने देता। जब शीतला का टीका लगाते हैं तो उससे भी यही होता है। टीकेसे रोगका आक्रमण नहीं होता; अगर होता भी है तो हल्कासा ही होती है। टीकेद्वारा शरीरमें एक ऐसा प्रति विष पैदा हो जाता है जो रोग उत्पन्न करने वाले जीवाणुओंको अपना काम नहीं करने देता अथवा उनको नष्ट करदेता है। जीवाणुओंसे उत्पन्न होनेवले जितने भी रोग हैं उनके सम्बन्धमें यही सत्य है। उनके लिये जो नाना तरहके इन्जेक्सन दिये जाते हैं, उन सबका प्रयोजन शरीरमें रोगक्षमता स्थापित करना होता है। प्रत्येक रोगको निवारण करनेके लिये विशेष वस्तुएं होती है जो उसी रोगको निवारण कर सकती है।

जो शरीरको रोगसे मुक्त रक्खे ऐसी वस्तुओंको बनाना और शरीरमें क्षमता उत्पन्न करना यह सब काम रक्त हीका है। प्राय: देखा जाता है कि रक्त कैसे २ विचित्र साधनों द्वारा शरीरकी रक्षा करता है। किसी भी अङ्गमें कुछ विकार होनेसे तुरन्त ही अपनी सेनाको प्रतिरोधके लिये दौड़ा देता है। तृणके ढ़ेरमें से सूईका ढूंढ़ निकालना सहज है लेकिन शरीरमें किस स्थानपर रोगोत्पादक

जीवाणुने प्रवेश किया है, यह जानना बहुत कठीन है। किन्तु रक्तके लिये यह एक साधारण-सी बात है। उसको ऐसी खोज करनेमें कुछ भी परिश्रम नहीं होता, क्योंकि यह प्रकृति का सदासे नियम चला आता है कि वह अपनी बनाई हुई वस्तुओंकी अपने आपसे रक्षा करती है। अपनी वस्तुका नाश उससे नहीं देखा जाता। मानव शरीरकी रचनाके समय प्रकृतिको कितना कष्ट उठाना पड़ा। बादमें उसकी रक्षाके लिये प्रकृतको ही कितना चातुर्य्य दिखलाना पड़ा जिससे आश्चर्य होता है। प्रकृतिने इस अद्भुत, असीम अगाध यन्त्रको बड़े परिश्रमके साथ बनाया है। असंख्य प्रयोगके पश्चात यह यन्त्र बन सका है। इन प्रयोगोंकी कथा बड़ी लम्बी-चौड़ी है। बुद्धिमानोंको चाहिये कि वे इसके विषयमें अगर पूरा ज्ञान चाहते हो तो आयुर्वेद शास्त्रको पढ़नेका प्रयत्न करें।

कीटाणु दर्शन-रक्तमें कालाजारके कीटाणु प्रायः एक कयाणुके भीतर या कहीं पर वह्नाकारियोंके भीतर रहते हैं। परन्तु इस रोगमें श्वेत कायाणुओं की संख्या कम होनेके कारण रक्तमें उनका दर्शन होना कठिन होता है। परन्तु यही निम्नलिखित पद्धतियोंसे रक्त परीक्षा की जावे तो उनके मिलनेकी सम्भावना होती है।

(१) प्रोद्दीपक पद्धति—उपयृकको या मिट्टी अजतिरमीका इन्जेक्सन लगाकर पश्चात् रक्त परीक्षा करना।' इससे प्लीहामें इकट्ठे हुए कालाजारके कीटाणु श्वेत कायाणु युक्त परिभ्रमणकारी रक्तमें अधिक संख्यामें आ जाते हैं।

(२) विशिष्ट प्रलेप पद्धति—काचकी पटरीके बीचमें रक्तका गाढ़ा प्रलेप करना या पटरीपर प्रलेप बनाते समय रक्तको फैलाने वाली पटरी रक्त फैलाते समय अवशिष्ट रक्तको एकाएक ऊपरको उठाकर अन्तमें सीधी रेखामें करना। गाढ़े प्रलेपमें या अन्तिम लकीरमें

श्वेताणु अधिक संख्यामें उपस्थित रहते हैं। अतः वहांपर देखनेसे प्रायः कालाजारके कीटाणु कायाणुके भीतर या बहुवर्गारियोंकी भीतर कहींपर बाहर दिखलाई देते हैं।

(३) केन्द्रापसारण—इसमें रोगीके भीतर इन्जेक्शन द्वारा रक्त-५ शी० थीक अन्दाज निकालकर उसके साथ थोड़ा लाके (Loeke)का घोल (सोडियम क्लोराइड ६ धा० पो० क्लोराइड ०/६४ धान्य क्लोराइड ३/१४ धा० सोडियम साइट्रेट १० धा० जल १००० शि० में मिलाकर वह रक्तकेन्द्रापसरित्र नामक यन्त्रमें ७५० प्रति मिनटकी गतिसे कुछ देरतक घुमाया जाता है। उसके पीछे तलछटको पटरीपर फैलाकर लीशमनमें रङ्गकर देखा जाता है।

(४) ज्वरके समयही रक्त परीक्षाके लिये लेना चाहिये।

(५) इस रोगमें प्लीहारसमें कीटाणुओंकी भरमार रहती है। अतः प्लीहासे वेधनके द्वारा प्लीहारस निकालकर उसका परीक्षण करनेसे निदान बहुत आशानीमें विश्वसनीय होता है। लेकिन इस क्रियाको कुशल चिकित्सक ही करे। और आतुरालयमें ही करे। यदि रोगीका रक्तक्षय अधिकहो गया हो रक्तश्राव होताहो शरीरमें शोथहो प्लीहा पांसुलियोंके बाहर न निकली हो ऐसे रोगीको प्लीहा वेधनहीं करे, वेधनकर्मके पूर्व तथा पश्चात् रोगीको (केल्शियम लेक्टेड) खिलाना चाहिये वेधन कर्मके पूर्व ३ घन्टेतक रोगीको कुछभी खानेको नहीं देना चाहिये।

वेधन विधि—

रोगीको पीठके बल विस्तरेपर आरामसे लिटाकर उसके दोनों हाथ शिरके नीचे रखे। दाहिनो तरफ कम्पोण्डरको खड़ाकरे और कहेकी

१ हाथ प्लीहाके नीचे रखो और एक ऊपर रखकर प्लीहाको स्थिर करो चिकित्सक खुद बांई तरफ बैठे और ध्यान रोगीकी तरफ रक्खे। वेधनके लिये अन्तिम पसलीके किनारेके नीचे १ इञ्च प्लीहाकी चौड़ाईका मध्य स्थान उचित रहता है। फिर मजबूत पिचकारी और सुई लेकर विशोधितस्थानमें ऊपर नीचे पार्श्वभागमें प्रविष्ट कर फिर पिचकारीके पिष्टनको २-३ वार ऊपरको खींचकर सूई तुरन्त हटादो। और पिचकारीमें आये हुये प्लीहा रसको काचकी २-३ पटरियोंपर प्रत्येक करके जीम्स या लीशमनके रङ्गसे रंजित करके देखो। डरपोक रोगियोंका वेधन पूर्व उस स्थानको सुन्नकरना उचित है। बच्चोंके वेधनके समय उनको बेहोश करना उत्तम है। वेधन क्रिया करनेके पश्चात स्थानपर कौलोडियन लगाकर या उदुम्बरसारका फोहा लगाकर पट्टीकसकर बांध देवे। और २-३ घन्टेतक विस्तरेपर सुलाया रखे। तथा नाड़ीकी भी पूरी सम्हाल रखे प्रायः वेधनके पश्चात भीतरी रक्त श्रावका बड़ा भारी डर रहता है। नाड़ी परीक्षणसे इसका पता लग जाता है। वेधनके पश्चात तथा पूर्व २-३ घन्टे तक खानेको भी नहीं देना चाहिये। इसी तरह यकृतसे भी रस निकालकर परीक्षाकी जाती है। इसमें रक्तश्रावका डर बहुत कम रहता है वेधनके १-२ घण्टा बादही रोगी चलने-फिरने लायक हो जाता है। इसलिये अभ्यन्तरीय अङ्गगत जीवाणु देखनेकी आवश्यकता होतो प्लीहा वेधकी अपेक्षा यकृत वेधकरना अधिक उचित है। सिर्फ दोष यही है कि प्लीहाकी अपेक्षा यकृत रसमें कीटाणु कम संख्यामें मिलते हैं। वैसे लसिकाग्रन्थीमेंसे और अस्थिमज्जारससे रस निकालकर अथवा त्वचासे रक्त निकालकर भी की जाती है। वैसे इसके सम्मान लक्षण, वाले और भी कितनेक रोग हैं, इसलिये निदानके समय ध्यान पूर्वक कालाजारको पृथक कर लेना चाहिये कुछ रोगोंके लक्षण दिये भी जाते हैं।

लाक्षणिक तुलनात्मक कोष्ठ

काला जार	विषम ज्वर	मन्थर ज्वर
(१) प्रारम्भ में जिह्वा। २-३ सप्ताह तक मैली बादमें साफ	जिह्वा साफ नहीं होती	जिह्वा साफ नहीं होती।
(२) नासासे रक्त श्राव होता है भूख बहुत लगती है।	जिह्वासाफनहीं होती तथाभूखकमलगतीहै हृल्लासवमनेच्छामुख में कड़वापन रहता है।	रक्तश्राव होता है खाने में अरुचि।
(३) मलोत्सर्ग होता है	प्रायः मलावरोध या अतिसार	प्रारम्भमेंमलावरोध दूसरे सप्ताहमें अतिसार आध्मान रक्त श्राव।
(४) कामला धीरे धीरे बढ़ता जाता है	किसी किसी को होता है	प्रायः नहीं होता
(५) ज्वर प्रायः अर्ध विसर्गीदोवार तीनवार रोज चढ़ता उतरता है चार सप्ताहसे अधिक अवधि	तीसरे चौथे दिन या प्रतिदिन आनेवाला विसर्गी या अर्ध विसर्गी	धीरे धीरे बढ़ता है सतत चार सप्ताहमें उतरता है
(६) प्लीहा उत्तरोत्तर धीरे २ कहीं पीड़ायुक्त कम, कठिन।	जल्दी बढ़ती है ज्वर आनेपर घट जाती है और कठिन होती है	बहुत थोड़ी बढ़तीहै मृदु
(७) स्थिति रोगावधिकी दृष्टिसेअच्छीस्वाभाविक लक्षण प्रलापादिकों का अभाव	घातक होनेपर प्रलापादि उपद्रव या बेहोशी।	रोगावधिकी दृष्टि से अधिक खराब निद्रा नाश, प्रलापादि वातिक लक्षण
(८) चेहरा शोथ युक्त पाण्डुवर्ण	सूखा हुआ रक्तवर्ण	सुस्ती
(९) मूत्र स्वाभाविक	गहरे रंगका	अल्पमात्रामें लाल रङ्गका मटियाला।

डाक्टरीमें इस रोगके लिये निम्न लिखित औषधि देते हैं। (युरिया स्टिबमिल एन्टीमनीन टारट्रेट का इञ्जेक्सन दिया जाता है।

ग्रन्थिकज्वर (प्लेग) महामारी

यह एक भयानक संक्रामक रोग है। जिस समय इसका प्रकोप होता है तब गांवके गांव जिलेके जिले इससे खाली होजाते हैं। आयुर्वेदमें इसका विशेष विवरण नहीं मिलता है सिर्फ अग्निरोहिणीके नामसे ही विवेचन किया जाता है। यहां पर शंका होती है कि इतना बड़ा भारी सर्व चिकित्सा शास्त्रोंका आदि अथर्ववेदका उपवेद आयुर्वेद शास्त्र हैं फिर भी उसमें प्लेग जैसी महामारीका वर्णन विशद रूपसे क्यों नहीं मिलता है। उत्तरमें यही निवेदन है कि चरक सुश्रुतादि संहिताओंके निर्म्माण कालमें ऐसे पाप जनित रोग पैदा ही नहीं होते थे उस समयकी जनता पापादि १० निषिद्ध कर्मोसे दूर रहती थी। इसलिये ही ऐसे रोग पैदा हीं नहीं होते थे। अगर होते भी थे तो हरेक घरमें हरेक नगरमें हरेक मन्दिरमें गंगादि पवित्र स्थानोमें यज्ञानुष्ठानादि होते ही रहते थे। इसल्लिये जब कभी भी इन रोगोंके उत्पन्नहोनेका समय उत्पन्न होता था तबही शान्ती हो जाती थी जैसे सुश्रुत संहितामें भी लिखा है।

कदाचिद् व्यापन्ने ष्वपि ऋतुषु कृत्याभि शापरक्षः क्रोधाधर्मैरुप ध्वंसन्ते जनपदाः, विषौपधि पुष्पगन्धेन वायुना उपनीतेन आक्रम्यते यो देशः।

अतः इसको जनपदोध्वंसकारी रोगोंमें ही मानलिया। लक्षण जो अग्नि रोहिणीमें होते हैं वही इस रोगमें होते हैं।

तद्यथा अग्निरोहिणी लक्षण

कक्षा भागेषु ये स्फोटाः जायन्ते मांसदारुणाः।
अन्तर्दाह ज्वरकरा दीप्त पावक सन्निभाः॥
सप्ताहाद्वा दशाहाद्वा पक्षाद्वा घ्नन्ति मानवम्।
तामग्निरोहिणीं विद्यादसाध्यां सान्निपातकीम्॥

भावार्थ—सन्धिस्थानोंमें अत्यन्त दारुण दाह ज्वर करने वाली जलती हुई अग्निके समान जो फोड़े उत्पन्न करती है उसको अग्नि-रोहिणी रोग कहते हैं। यह सन्निपातज रोग है इसमें वायुकी अधिकता वालोकी ७ दिनकी मियाद होती है। पित्तोल्वणवालीको १० दिवसकी अवधि होती है। कफोल्वणकी १५ दिवसकी अवधि होती है। अगर सान्निपातिक होती है तो असाध्य होतो है। प्रथम तीव्र ज्वर १०४-१०५ तक होता है साथमें कम्प भी रहता है, गांठ किसी रोगीको प्रारम्भमें ही निकल आती है किसीको चौथे पांचवे रोज निकलती है। किसीको १ ही गांठ निकल कर रह जाती है, किसीको बहुतसी निकल आती है तथा इस रोगीको हाथ पैरोंमें बहुत फूटनी रहती है अति शिथि-लता, तृषा, प्रलाप, उन्माद, मूर्च्छा, भ्रम, निद्रानाश, शिर पीड़ा, नेत्रोंमें ललाई, अतिसार, मलावरोध, व्याकुलता, मोह, संज्ञानाश, जिह्वाकाली खरदरापन लिये धमनी शिथिल या चंचल आदि लक्षण होते हैं। गांठ निकलनेकी जगह शोथ कभी पहिले कभी पीछे होता है। गांठ पककर फूटनेसे रोगी बच जाता है। अथवा ३-४—७ दिनमें मर जाता है। १० दिनके बाद बहुधा आराम होता देखा गया है।

इसका होनेका सामान्य कारण यह है कि यह रोग मलिनता साथमें एक विस्तर पर बहुत आदमियों के एक साथ सोनेसे, साथमें भोजन करनेसे, गन्दे मकानमें बहुत पुरुषोंके एक साथ निवास करनेसे होता है।

आधुनिक निदान—यह रोग पांच प्रकारका माना गया है। ग्रन्थिक सन्निपात ल्युबोनिक प्लेग (Bubonic plague) (२) कृमी जनित ग्रन्थिक सन्निपात सेप्टिसीमिक प्लेग (Septicimic plague) (३) फुफ्फुस खन्ड ग्रन्थिक सन्निपात (४) सेरीब्रल प्लेग Cerabral plague) (५) गेस्टो इन्टस्टाईनल प्लेग।

समान्य लक्षण

(१) ल्युबोनिक प्लेग—इस प्लेगमें कक्षा, वंक्षण, बगलमें ग्रन्थी निकलती है या ग्रन्थी लसिका ग्रन्थीमें सूजन आकर बन जाती है। आयुर्वेदमें इसको ग्रन्थिक सन्निपात कहते हैं।

(२) सेप्टिसीमक प्लेग—इस प्लेगमें रक्तके अन्दर जहर उत्पन्न हो जाता है। इससे ज्वर तीव्र होता है। आयुर्वेदमें इसको कृमिजन्य ग्रन्थिक सन्निपात कहते हैं।

(३) न्युमोनिक प्लेग—इस रोगमें फेफड़ोंमें सूजन आकर कफ-जन्य लक्षण होते हैं। इसलिये इसको आयुर्वेदमें फुफ्फुस प्रदाहक ग्रन्थिक सन्निपात कहते हैं।

(४) सेरेब्रल प्लेग—इस प्लेगमें तन्द्रा विशेष आती है। इस रोगमें मस्तिष्कके भीतरके आवरणमें शोथ होजाता है। अतः आयु-र्वेदमें इसमको मस्तिष्का वरण प्रदाहक ग्रन्थिक सन्निपात कहते हैं।

(५) गेस्टोइन्टेस्टाईनल प्लेग—इस रोगमें वमन विरेचन अधिक होता है। इसलिये इसको आयुर्वेदमें आन्त्रिक प्रदाहक ग्रन्थिक सन्निपात कहते हैं।

सम्प्राप्ति—इन पांचवोंमें ल्युबोनिक प्लेग (ग्रन्थिक सन्निपात ही महामारीके रूपमें फैलकर देशके-देशके उजाड़ देता है। सर्वप्रथम इस रोगके कारण चूहे होते हैं। बीमार चूहोंपर पिस्सू रहते हैं। वे जब मनुष्योंको काटते हैं, तब इस रोगकी उत्पत्ति होती है। यह पिस्सू जमीनपर, गन्दे बिछोनोमें सोनेवाले पुरुषों पर विशेष आक्र-मण करते हैं। उन्हींके कपड़ोंमें छिपकर एकसे-दूसरे स्थानपर चले जाते हैं। इस तरह पिस्सू ही सर्व जगह इस रोगके प्रचारक हैं। न्युमोनिक प्लेग रोगग्रस्त पुरुषके संसर्ग द्वारा श्वास मार्गसे इसके कीटाणु श्वांस नलिकामें प्रवेशाकर जाते हैं। फिर धीरे २ अपना आधिपत्य जमाकर फेफड़ोंमें रोग पैदाकर देते हैं। इन कीटाणओं

को डाक्टरीमें बेसलिस पेस्टिस नामसे कहते हैं। इस प्लेगका निर्णय रक्त परीक्षा द्वारा सुगमतासे हो सकता है। इस प्लेगका आक्रमण गरीब और धनी सबपर समान रूपसे होता है। ग्रन्थिक प्लेगमें और इसमें यही अन्तर है।

विशेष लक्षण—ग्रन्थिक ज्वरमें प्रारम्भसे ही तीव्र ज्वर ४ रोज तक रहता है। बादमें सन्धि स्थानमें सूजन आकर गांठ निकल आती है। कहीं २ पर पहिले गांठ निकलकर मन्द ज्वर कम्पादि उपद्रव हो जाते हैं तथा किसी २ को बहुतसी गांठें निकल आती हैं। प्रलाप, निद्रानाश, संज्ञाहीन, हाथ पैरमें फूटनी आदि आयुर्वेदोक्त समान लक्षण मिलते हैं।

कृमिजन्य ग्रन्थिक सन्निपात (सेप्टिसिमिक प्लेग) के लक्षण

इस रोगमें कभी २ प्रारम्भमें तीव्र ज्वर उपद्रव सहित होता है। कभी उपद्रव बादमें होते हैं। कहींपर ल्युबोनिक प्लेगके कीटाणु गांठ को पैदा करके रक्तमें प्रवेशकर जाते हैं। तब लसीका ग्रन्थियाँ अधिक नहीं सूजती हैं। तथा किसी २ रोगीको २-३ दिन बाद काले २ चकत्ते सारे शरीरमें हो जाते हैं। उस समय ज्वर १०६ तक बढ़ जाता है। रोगीको बेचेनीयुक्त दाह प्रलाप नेत्र लाल, मूत्रमें रक्त-वर्ण आदि लक्षण हो जाते हैं। इसरोगसे आक्रान्त रोगी ५-७ दिन में ही मृत्युको प्राप्त हो जाता है।

फुफ्फुस खण्ड ग्रन्थिक सन्निपात (न्युमोनिक प्लेग

इस रोगमें पहिले हाथ-पैरोंमें फूटनी शिरमें दर्द, वमन, भ्रम, बेचैनी, दाहादि समान्य लक्षण प्रतीत होते हैं। फिर ज्वर तीव्र हो जाता है तथा खांसी श्वांस, रक्तष्ठीवन फेफड़ोंमें सूजन आदि लक्षण दिखलाई देते हैं। स्टेथिस्कोप द्वारा परीक्षा करनेपर न्युमो-नियांकी आवाज मिलती है। इस रोगमें ग्रन्थि पैदा नहीं होती। किसी २ रोगीके छातीपर सूजन दिखाई देता है। यह रोग अत्यन्त असाध्य होता है।

मस्तिकावरण प्रदाहिक ग्रन्थिक सन्निपात (सेरीब्रल प्लेग)

इस रोगमें ज्वर किसी रोगीको प्रारम्भसे ही १०२ तक बढ़कर मस्तिकावरणमें सूजन पैदाकरके तन्द्रा कर देता है जिससे रोगी बेहोशकी माफिक पड़ा रहता है। आंखोंको रोशनी बर्दास्त नहीं होती है। प्रायः अभिन्यास ज्वरके लक्षण हो जाते है।

आन्त्रिक प्रदाह ग्रन्थिक सन्निपात (गेस्टोइन्टस्टाईनल प्लेग)

इस रोगमें प्रथम ज्वर होता है। फिर पेटमें जलन सहित दर्द होकर वमन, अतिसार, रक्तातिसार हो जाता है। प्यास अधिक लगती है। यह रोग भी असाध्य माना गया है। किसी-किसीको लाल मसूरीकाकी तरह फुंसियां भी निकल आती है।

साध्यासाध्य लक्षण गांठ निकलकर जल्दी ही बैठ जाय या पककर फूट जाय, ज्वरका वेग मन्द पड़ जावे, और भोजनमें रूचि उत्पन्न हो जावे, दस्त बँधा हुआ आने लगे, चेहरेकी कान्ति सुन्दर दिखाई देने लगे तथा १० दिन तक रोगी जीवित रह जावे तो, रोग साध्य समझा जाता है। अन्यथा ज्वर तीव्र रहे, कमजोरी दिन-पर दिन बढ़ती नजर आवे। गांठ पके नहीं, बेहोशी बढ जावे, पेशाब बन्द हो जावे। रक्तश्राव हो तो रोग असाध्य माना जाता है। अन्यत् ज्ञानेन्द्रियशक्ति नष्ट हो जावे या अतिसार हो जावे, तथा रक्त मिश्रित कफ आवे, श्वासका वेग बढ़ जावे तो रोग असाध्य मानं।

प्लेगसे बचनेका उपाय—जिस समय चूहे मरने लगे उस समय उस स्थानको छोड़ देना चाहिये, और सर्व जगह चूना बिछा देना चाहिये। यदि सम्भव हो तो मकानमें हवन करादेना चाहिये। इससे घरकी गांवकी दूषित वायु शुद्ध हो जाती है।

जैसे-सुश्रुत संहितामें भी लिखा है। तत्र स्थानपरित्याग शान्तिकर्म प्रायश्चित मंगल जप होमोपहारेज्याञ्जलि

नमस्कार तपो नियमदया दान दीक्षा भ्युपगम देवता ब्राह्मण गुरुपरैर्भवितव्य मेवं साधु भवति।

अन्य उपाय

सरसोंका तेलका शरीर पर मालिश करके नीमके पते डालकर गरम किये हुए जलसे स्नान करना चाहिये, कपड़ोंमें धूपका धुवां देना चाहिये कपूरको हर समय साथ में रखना चाहिये। स्वच्छ बिछोनेदार ऊँचे पलंगपर हवादार मकानके मंजिल पर सोना चाहिये। रोगीको देख कर या मरे हुये चूहोंको देखकर घबराना नहीं चाहिये। घबराहटसे मानसिक प्लेग भी हो जाता है डाक्टरीमें इस रोगसे बचनेके लिये ऐन्टी प्लेगवेक्सीनका इञ्जेक्सन लगाते हैं। इसके लगानेमें रोगीके अन्दर कृत्रिम निरोधक शक्ति आ जाती है। डाक्टर लोग कार्बोलिक एसिडको विशेष उपयोगमें लेते हैं, उनका यह भी कथन है कि अगर चूहा घरमें मर जाय तो उसको किरासन तेलसे भिगोकर जला देना चाहिये।

चिकित्सा—इस रोगसे पीड़ित रोगीको स्वच्छ मकानमें रखकर ही जैसी हालत हो उसके अनुसारही चिकित्सा करनी चाहिये। आयुर्वेद में इसरोगमें निम्नलिखित औषधियां फायदा करती है अभयादिक्काथ, द्वात्रिंशत्क्काथ, त्रिफलाक्काथ, दशमूलक्काथ, चन्द्रेश्वररस, कस्तूरीभैरवरस मकरध्वज, मल्लभस्म. महामृत्युञ्जयरस, कालकूटरस, संजीवनीबटी, हेमगर्भपोट्टलीरस आदि औषधियां तथा ग्रन्थि नाशक भी कितने ही योग हैं वे भी फायदा करते हैं। सुश्रुत मतसे इसरोगमें सींगी लगाना जोंक लगाना, तथा दाह क्रिया करना अत्यन्त हितकर है। आदिमें जैसे हरेक सन्निपातमें लंघन कराया जाता है वसी तरहसे लंघन कराना हितकर है तथा पीनेके लिये लवङ्ग श्रृतशीतजल या पंचकोल या द्वात्रिंशत्क्काथ द्वारा शृतशीत किया हुआ जल देना चाहिये। दोष पाचन होनेपरही पथ्यमें जवकी सावू वगैरह देने चाहिये। सर्वप्रथम ज्वरकी

तरफ तथा ग्रन्थोकी तरफ विशेष ध्यान देनेकी आवश्यकता है गांठपर लगानेके लिये कितने ही लेप लिखता हूं इनमें जो भी उचित समझें करें।

(१) ग्रन्थीदारणलेप प्रतीसारणीयक्षार ग्रन्थीहरलेप, आदि।

ग्रन्थीदारणलेप चित्रकमूलकक्षार, दन्तीमूल, थूहर आकका, पत्ता, भिलावा, कसीस, गुड़, इनको आकके दूधमें या थोहरके दूधमें पीसकर गरम करके लेप करना चाहिये।

उपयोग—इस लेपसे गलगण्ड, प्लेग तथा अन्य जहरी गांठे शीघ्र ही फूट जाती है। परन्तु यह लेप मर्म स्थान पर नहीं लगाना चाहिये।

(२) ग्रन्थीहरलेप

संखिया १ तो० कुचला १ तो० शृङ्गीविष १ तो० कबूतरकी बींठ १ तो० इन सबको पानीमें पीसकर गरम करके लेप करे तथा ऊपरसे गरम सेक देवे तो यह प्लेगकी गांठको बहुत शीघ्र ही बैठा देता है।

(३) हल्दी चूना मधूमें मिलाकर लेपकरे

(४) प्याजको कूटकर हल्दी मिलाकर गरम करके सेक करे।

(५) भिलावेका तेल लगानेसे भी फायदा होता है

(६) गन्दा बिरोजा ३ तो० मोम १ तो० संखिया ½ तो तिल तेल ६ तो की मरहम बनाकर लगानेसे गांठ बैठ जाती है

विशेष करके इसरोगमें जोंक लगानेसे सींगी लगानेसे दाह क्रिया करनेसे तथा आक दूधसे थोहर दूध लगानेसे अच्छा फायदा होता देखा गया है। रोगके समय वातावरणको शुद्ध करनेके लिये घरमें लोहबान, गुग्गुल, नीमका पत्ता, आमलासारगन्धकको धुवां देनी चाहिये।

सन् १८७५ में मैंने राजपूतानामें बहुत भयंकर प्लेग हुआ था। उस समय कुछ इस रोगसे ग्रसित रोगी देखे उनमेंसे एक रोगी जिस औषध से मेरे सामने ठीक हुआ था उसका विवरण लिख रहा हूँ।

रोगी नाम बनारसीलाल उम्र १३ ब्राह्मण रोग प्लेग ग्राम असरापुर

इसको अचानक सायंकाल ठण्ड लगकर ज्वर १०५ होगया माथेमें दर्द जी मिचलाता था २-३ उल्टी भी हुई हाथ पैरों में बहुत फूटनी थी, प्यास बहुत लगती थी आँखे लाल हो रही थी। उस समय वहां तथा उसके आस पासके गांवोंमें प्लेगकी बीमारी चल रहा था। इसलिये निदानमें किसी तरहकी अशुविधा नहीं हुई फौरन हो पहिचान लिया गया कि इसको प्लेग हो गया है इसको निवासस्थानसे हटा कर अन्य पासके शु० स्थानमें ले गये औषधको व्यवस्था नहीं थी एतदर्थ चिड़ावासे मेरे पिताजीको बुलाया गया। वहां उन्होंने रोगीको देखा यह रोगी हमारे ही घरमें था पिताजीने निम्नलिखित दवाकी व्यवस्था की।

प्रातः सायं	म० रा०
मल्लचन्द्रोदयरस १ रत्ती	मृत्युंजयरस
दशमूलक्वाथ मधुसे	पानरस मधुमें
	पथ्यमें कुछ नहीं

ज्वरके चौथे रोज जंघाकी सन्धिमें १ गांठ निकल आई तब उसको देखकर चूना, हल्दी मधुमें मिलाकर लगाया इस दवाको हो ७ रोजतक चालू रखा गया ज्वर ऊपरमें १०३ नीचेमें १०२ तक ही बना रह गांठ बहुत बढ़ गई लेकिन पक्की नहीं एतदर्थ उन्होंने ग्रन्थीहरलेपका प्रयोग किया जिससे गांठ १० वें रोज फूट गई पीप निकलने लगा तथा ज्वर भी कम हो गया प्रलापादि उपद्रव शान्त हो गये। परन्तु उसके पासही मेरे ताउजी और रहते थे उनपर भी प्लेगका असर हो गया और वे भी बीमार हो गये उनमें भी उपरोक्त लक्षण थे परन्तु १-१ करके ५ गांठ निकली जिसमेंसे चार तो फूट गई लेकिन पांचवी गांठके निकलनेसे उनका शरीरान्त हो गया। तब पिताजी बनारसीको लेकर चिड़ावे आ गये और वहां भी इसको यही दवा खिलाते रहे जिससे वह एक महीने में ठीक हुआ। इसके बादमें उन्होंने कितने ही रोगियोंको जिनके पास लेपकी व्यवस्था नहीं थी उनको ग्रन्थी दारणके लिये आकका दूध तथा

थोहरका दूधका ही लेप कराया खानेको ऊपरवाली औषधि दी जिससे बहुत रोगियोंको फायदा हुआ।

इसरोगमें डा० डी० गोपालुचाल्लूकी हेमाद्रि पानक दवासे भी अच्छा फायदा होता है। ऐसा सुना गया है। यह दवा मद्रासमें मिलती है।

डाक्टरी मतसे चिकित्सा

इस रोगीको विशेष रूपसे उत्तेजित रखना चाहिये। रोगीको रूग्णवायु मण्डलसे निकालकर स्वच्छ वायुमण्डमें लेजाना चाहिये। रोगीको कार्बोलिक लोसनमें रुई भिगोकर सुंघनेको देना चाहिये रोगीको जिस मकानमें धूप अच्छी तरह से आती हो तथा हवाका निकाश हो ऐसेमें रखना चाहिये रोगीके पास भीड़ नहीं रहनी चाहिये। मल मूत्रको जमीनमें गड़वा देना चाहिये। चिकित्सा डाक्टर लोग इस रोगसे बचनेके लिये हाफकिन्स सिरम (Halfkinsh) लगा देते हैं। इससे बहुधा रोग नहीं होता आजकल प्लेग वेक्सिन भी लगाते हैं परन्तु उससे ज्वर बहुत तीव्र होता है रोग होनेपर साईलीनक १-२ बून्द दिया करते हैं। या कार्बोलिकएसिड् भी १-२ बूंद तक जलमें मिलाकर देते हैं। कोई कोई डाक्टर ेक्लराइडीन १-२ बूंद दिनमें ३-४ बार देते हैं। यह उपरोक्त दवायं विष नाशक हैं। इससे अतिरिक्त हृदयको उत्तेजित करनेके लिये।

टिञ्चर सिन्कोना कम्पोझिटा

एमोनिया कार्ब	Ammonia Caib
टि० नक्षवमिका	Tr. Nuxvomica
टि० डिजीटेल्सि	Digitelis
एड्रोनलीन	Adrenaline

का इञ्जेक्शन भी देते हैं।

युनानि चिकित्सा बनप्सा, नीलोफर, चन्दन, कर्पूर इनको गुलाब जलमें पीसकर लेप करना चाहिये। रसोत, गिले अरमानी ममीराका

लेप करना चाहिये पथ्यमें शर्वत अनार शर्वत सेव वीही० खट्टा नीम्बूका शर्वत भी देते हैं। अब हम आयुर्वेदीय औषधियोंके नुसखे जो इस रोगमें काम आते हैं उनकी निर्माण विधि लिखते हैं।

द्वात्रिंशदाख्य क्वाथ

भारंगी' चिरायता, नीमछाल, नागरमोथ, कुटकी. वच, सोंठ, कालीमिर्च, पोपल, वासक फल, इन्द्रायनजड़, रास्ना, अनन्तमूल, पटोल-पत्र, देवदारु, हल्दी, पाठा, अरलूकीछाल, ब्राह्मी, दारुहल्दी, गिलोय, निशोत, अतीश, पुष्करमूल, त्रायमाण, कंटकारी छोटी, बड़ी कंटकारी, इन्द्रजौ, हरड़ छाल, बहेड़ा छाल, आमला, कचूर इन ३२ औषधियोंको समान भाग लेकर जो कूटकरके २ तोला लेकर क्वाथ विधिसे तैयार करा-सेवन करावे।

उपयोग –इस क्वाथके सेवनसे १३ प्रकारके सन्निपात, त्रिदोषज-शूल, हिक्का, श्वास, अर्श, सन्धिवात, अरुचि, उरुस्तम्भ, अन्डवृद्धि, कंठ रोग आदि उपद्रव शान्त हो जाते हैं। तथा सूतिका रोगमें भी अच्छा फायदा करता है। प्राय: हमारे यहां प्रसूताको इसीसे शृत शीत किया हुआ जल पीनेको दिया जाता है।

॥ चण्डेश्वरो रसः ॥

रसंगन्धं विषं ताम्रं मर्दयेदेकयामकम्।
आर्द्रकस्य रसेनैव मर्दयेत्सप्तवारकम् ॥
निर्गुण्ड्याः स्वरसे पश्चान्मर्दयेत्सप्तवारकम्।
गुञ्जार्धमार्द्रक रसैर्दत्वा हन्तिज्वरं क्षणात् ॥
वातजं पित्तजं श्लेष्म द्विदोषज मपिक्षणात्।
सुशीतल जलं स्नाने तृष्णार्ते क्षीर भोजनम् ॥
एतत्समो रसो नास्ति वैद्यानां हृदयङ्गमः।
एष चण्डेश्वरो नाम सर्व ज्वर कुलान्त कृत् ॥

शु० पारा, शु० गन्धक, शु० वत्सनाभ, ताम्रभस्म, इन सर्वको मर्दन करके अदरख रसको ७ भावना देकर सम्भालुके पत्तोंके स्वरसकी ७ भावना देवें तैयार होनेपर ½ रत्ती की गोलियां बनालेवे। अनुपान अदरखका रस मधुमें। इसके सेवनसे वातज, पित्तज कफज, अथवा द्विदोषज सभी प्रकारके ज्वर शीघ्र ही नष्ट होजाते हैं। इसके सेवनके बाद स्नानकी इच्छा हो तो शीतल जलसे स्नान करावे। भूख लगनेपर गायका दूध पिलावें। यह चण्डेश्वर रस वैद्योंके हर समय याद रखनेकी वस्तु है ज्वर नाशक औषधियोंमें यह सर्वोत्तम योग है।

महामृत्युञ्जय रस चिकित्सा तत्त्व प्रदीपसे उद्धृत

शु० मल्ल, शु० हरताल, शु० वच्छनाग, शु० जमाल गोटा ये सर्व १-१ तोला शु० हिंगुल ४ तो०, शु० कत्था ४ तो० इन सर्वको बारीक करके सत्यानाशीके स्वरस १२ घन्टे मर्दन करके ½ रत्तीकी गोली बना लेवे।

मात्रा—दिनमें ३ बार १-१ गोली अदरख रस मधूमें देवे

उपयोग - यह औषध प्लेगको दूर करनेमें अत्यन्त उपयोगी है तथा अन्य कफ प्रधान सन्निपातोंमें भी अच्छा काम करता है। जहां ज्वरका वेग तीक्ष्ण हो साथमें रक्तातीसार हो वहां नहीं देना चाहिये।

मल्लभस्म

शङ्खः पूरित कुक्षिः शतमल्ल युजा दिनेश दुग्धेन।
दन्तावलि पुटसिद्धः श्वासे कासे ज्वरे प्रसिद्धोऽयम्॥

रसयोग सागर

साफ मोटे शंखमें ५ तोला संखिया पीसकर भरदे और ऊपरसे आकका दूध भर आकके पत्तोसे मुंहको ढककर मुल्तानि मिट्टीके साथ कुटी हुई रूईसे मजबूत कपड़मिट्टी करके हांडीमें रखकर गजपुटकी आंचमें जलावे। स्वांग शीतल होनेपर निकाल लेवे। इसमें ½ रत्तीसे १ रत्ती तक उचित अनुपानसे देनेसे प्लेग, श्वास, कास और शीतज्वर

नष्ट होजाता है सोमल तीक्ष्ण और उष्ण वीर्य होनेसे कफ और आमका शमन करता है पित्तकी बृद्धि करता है। तथा रक्ताभिसरण क्रियाको बढ़ाता हैं। शारीरिक विष पैदा करने वाले कीटाणुओंको नष्ट करके भयंकर बीमारीयोंको हरता है कफ प्रधान वात प्रधान बीमारीयोंमें प्रारम्भसे ही इसका प्रयोग किया जाय तो बीमारीके बढ़ावको रोक देता है। कफ जनित अन्तिम अवस्था के समय भी यह अपना पूर्ण प्रभाव दिखाये बिगर नहीं रहता।

सूचना यदि ज्वर तीव्र हो, नेत्र लाल हो, पित्त जनित अन्य भी लक्षण प्रतीत हो तो इसका प्रयाग नहीं करना चाहिये। उस समय प्रयोग करनेसे रक्ताभिसरण क्रिया बढ़कर मस्तकमें रक्त चढ़ जाता है। इसके प्रयोगके समय पेशाबमें कमी मालूम दे अथवा ज्वर आ जाय तो शीघ्र ही बन्द करके मृत्रल औषधि दे देना चाहिये।

कालकूट रस

रुद्रसङ्ख्यं विषं चैव त्रिभागः सूत एव च।
गन्धकः पञ्चभागः स्याच्छिला स्याद्दतु भागिका॥
ताम्र भस्म चतुर्भाग मृतु भागञ्च टंकणम्।
तालकं रससंख्याकं वह्निमूलं तथैवच॥
त्रिकटो द्वादशश्चेया स्त्रिफला दश भागिका।
हिङ्गु नश्चन्द्रभागः स्याद्वचायाश्च तथैवच॥
एवं खल्वेच संस्थाप्य आर्द्रकं वह्निमूलकम्।
जम्बीरं लशुनञ्चैव शार्ङ्गेष्टार्कस्य मूलकम्॥
लाङ्गली स्वर्णमूलञ्च सिन्धु नागदलं तथा।
अङ्कोल शिग्रु मूलानि प्रत्येकं याम मात्रकम्॥

पञ्चकोल कषायेण पञ्चमूलेन मर्दयेत् ।
गुञ्जामात्र प्रमाणेन वटकान् कारयेत्ततः ॥
वटीमेकां प्रयुञ्जीत भृंगवेराम्भसायुताम् ।
सर्वज्वर हरोयोगः सन्निपात कुलान्तकः ॥
स्नानं कुर्यात् प्रयत्नेन श्रीखण्डलेप माचरेत् ।
दध्यन्नं दापयेत्पथ्यं खर्जूरादि फलान्यपि ।
ताम्बूल चर्वणं कूर्यात्क्रमादेवं समाचरेत् ।
कालकूट रसोनाम महेशेन प्रकाशितः

भावार्थ—शु० वत्सनाभ १ तोला, शु० पारद ३ तोला, शु० आमलासार गन्धक ५ तोला, शु० मैनशिल ६ तोला, ताम्र भस्म ४ तोला, शु० सुहागा ६ तोला, शु० हरताल ६ तोला, चित्रक मूलछाल ६ तो० त्रिकूट १२ तोला, त्रिफला १० तोला, शु० हींग १ तोला, वच १ तो० उपरोक्त द्रव्योंमेंसे कजली बनाकर काष्ठौषधियोंका कपड़ छानचूर्ण मिला देवे फिर अदरख रस, चित्रकमूल छालका काथ, जम्मीरीका स्वरस, लशुनस्वरस, काकजंघा स्वरस, आकमूल छाल स्वरस, कालिहरि स्वरस, धतूरमूल रस, बंगला पान स्वरस, अंकोमूलका स्वरस, सहिजनामूलका स्वरस, पञ्चकोल काथ, पञ्चमूल काथकी १-१ भावना देकर एक एक रत्तीकी गोलियां बनाकर छायामें सुखाकर रख छोड़े मात्रा १ रत्ती अदरख स्वरस मधुसे सर्व प्रकारके ज्वर विशेषकरके प्लेग रोगको तथा अन्य सन्निपातको नष्ट करनेमें अत्यन्त उपयोगी हैं।

उपयोग—यह रसायन अतितीक्ष्ण और उष्णवीर्य है। इसका प्रयोग खूब सम्हलके करना चाहिये। जब रोगीकी नाड़ी लुप्त प्राय हो गई हो याने स्पर्शमें हाथको ज्ञान न हो तो हृदयावसादक लक्षण प्रतीत होते हैं। तथा रक्त कहींसे न निकलता हो तभी इसका प्रयोग करना

चाहिये। इसके प्रयोगके बाद नाड़ीकी गति बहुत-ही शीघ्र बढ़ जाती है। इससे रक्तका दबाव भी बढ़ जाता है। अतः यदि इसके देनेके बाद आंखोंमें ललाई दिखालाई दी जावे तो फौरन बन्द कर देना चाहिये। यह कालकूट रस कफ प्रधान और वात संसर्गी सन्निपातमें दिया जाता है। इसके सेवनसे इस रोगमें बहुत ही अच्छा फायदा होता हैं। परन्तु अधिक मात्रामे उपयोग करनेसे हानिकी सम्भावना है। कफ प्रधान सन्निपातमें भी रोगीकी दोषकी अवस्था देखकर ही देना चाहिये। प्रायः अभिन्यासके जहां लक्षण दिखलाई दें वहां इसके प्रगोगसे अच्छा लाभ होता है। यह रस धनुर्वातकी भी अव्यर्थ औषधि है। इसके प्रयोगसे धनुर्वातको उत्पन्न करने वाले कीटाणुओंका नाश होता है। गर्भवती स्त्रीको कभी भी नहीं देना चाहिये।

* समाप्त *

शुद्धाशुद्ध-पत्रिका

पृष्ठम्	पंक्तिः	अशुद्धम्	शुद्धम्
२	६	प्रश्नेः	प्रश्नैः
,,	८	आयुवेद	आयुर्वेद
३	२	परिकीय	परकीय
४	२०	वस्तुमें	वस्तुए
६	६	श्वामनालिका	श्वास-नलिका
,,	११	गाली	गीली
७	१६	श्लेषमल	श्लेष्मल
८	११	भयादात्य	मदात्यय
१४	२४	कृष्णवाच	कृष्णवर्णश्च
१४	१५	आद्र	आर्द्र
१६	६	टम्प्रेचर	टेम्प्रेचर
१८	१३	दीघ	दीर्घ
२३	६	आयाज	आवाज
३१	१६	आतो	आतोमें
३२	६	श्राय	बांयें
३४	१	स्पश	स्पर्श
३५	४	प्रात्य	प्रेत्य
,,	५	भवीत	भवति
३६	४	सम्पुण	सम्पूर्ण
,,	६	मलिका आ	मलिका ओं
,,	१६	उत्तपादि	उत्तापादि

सूत्रम	पंक्तिः	अशुद्धम	शुद्धम
४७	१३	अध्यशपन	अध्यशन
४६	१	स्टेटिम	स्टेथिम
,,	१२	युवाबस्था	युवावस्था
५६	६	अणुविक्षण	अणुवीक्षण
५७	१	नोसादार	नोसादर
७१	२२	परियाप्त	पर्याप्त
७२	१५	टाइफाड्	टाइफायड्
७४	५	आणुवाक्षण	अणुवीक्षण
७७	१	मश्चीकरण	मच्चीकरण
७६	१५	वायू	वायु
,,	२१	अत्याधिक	अत्यधिक
८२	१५	जिवाणु	जीवाणु
६२	१८	ह्वाम	ह्वास
६४	१	द्व	द्रव
१०१	६	प्रथक	पृथक्
१०४	६	श्तन्द्रा	म्तन्द्रा
,,	७	मदस्तम्भा	मदस्तम्भो
१०४	११	निभ्रम	निर्भ्रम
,,	१२	स्रोत मम्पाकः	स्रोतसाम्पाक.
,,	१४	शृणुः	शृणु
१०५	२१	अवाज	आवाज
१०८	२३	विभ्रंस	विभ्रंशः
११०	३	बाक्	वाक्
		बिण्मूष्म्	विणमूत्र
१११	२२	प्रभुच्यते	प्रमुच्यते

सूत्रम	पंक्ति	अशुद्धम	शुद्धम
११२	६	यश्चात्	पश्चात्
११७	१०	आग्निमान्द्य	अग्निमान्द्य
,,	१८	एसिड	एसिड
१२१	१४	बृ सैन्धवाजि	बृ० सैन्धवादि
१२५	१	षादिकम	पादिकम
,,	६	मुस्रकम	मुस्रकम
१२६	१	मा रचेन	मरिचेन
,,	२	भर्दितम्	मर्दितम
,,	१८	ह्लोती हैं	होती हैं
१२७	११	पुनर्नवाणाम	पुनर्नवानाम
,,	१२	चूर्णिमिश्रं	चूर्णमिश्रम
,,	१६	विधातव्वा	विधातव्यां
१३०	१६	सिंह	सिंही
१३१	८	आर्द्र कस्य	आर्द्र कस्य
,,	११	मदुताल	मृदुस्ताल
,,	२०	वक्त्रः	वक्त्र
१३५	१८	पाचयेत	पाचयत्यपि
,,	२०	असम्वध	असम्बद्ध
१३६	८	संषज्ञ	संज्ञः
,,	७	मव्या	मन्या
,,	१८	लिद्यात	लिह्यात
१३७	२१	तृष्ठा	तृष्णा
,,	२२	इतको	इनको
१३८	१४	व्रजक्षार	वज्रक्षार
१३९	२२	व्ययोहयेत	व्यपोहयेत

सूत्रम्	पंक्ति	अशुद्धम्	शुद्धम्
१४१	६	धनाधनै:	महाधन:
१४१	८	रसमूर्च्छा	भ्रममूर्च्छा
"	१०	चन्द्रकलाप्रद:	चन्द्रकलारस:
१४२	११	यादव	यादवजो
१४३	१६	सुजानागढ़	सुजानगढ
१४४	८	ब्राह्मादि	ब्राह्मथादि
"	१०	आयाम काञ्जिक	आयाम काञ्जिक
१४८	१३	रसाभ्र	रसाभ्र
१४६	१	इहाब्य	इहाप्य
१५१	४	रम	रस
१५२	३	उपरीक्त	उपरोक्त
१५२	१७	उतका	उसका
१५३	३	तन्द्रऽतीव	तन्द्राऽतीव
१५७	१६	न्यूपोनियां	न्यूमोनियां
"	२२	मूच्छो	मूर्च्छा
"	५	वाताद्दि	वातादि
"	१२	इन्फुल एञ्जा	इन्फ्लुएञ्जा
"	१६	उपसग	उपसग
१५६	२६	बात बलास गेवा	बात बलासजेवा
१६०	४	वञ्चराज	वैद्यराज
१६१	१	प्रशान्त्यै:	प्रशान्तये
"	७	ददन्ति	ददति
"	६	दिप्ति	दीप्ति
"	१०	कुर्यान्	कुर्यात्
"	१२	तन्द्रि	तन्द्रा

सूत्रम	पंक्तिः	अशुद्धम	शुद्धम्
१६७	४	दीगयो	दीगई
१६६	६	यज्ञविधं	यश्चविधं
७२	१	च्छावास	श्वास
,,	१८	रसाध्याये	रसाध्यः
१७४	७	अग्निमन्द	अग्निमन्द
१७४	८	लीढ़ा	लीढ्वा
१७५	१३	कर	कर
५	७	बृहणम	बृंहणम
१७१	११	निहान्ति	निहन्ति
१७६	१२	निंहन्त्यसून	निहन्त्यसून्
,,	१४	प्रदुस्य	प्रदूस्य
१८०	२१	रोगस्वसृङ्	रोगेस्वसृङ
१८३	,,	हृयिङ्ग	हृपिङ्ग
१८७	१०	प्रस्करादि	पुष्करादि
१६०	५	कज्जलिकां	कञ्जलिकां
,,	७	सुन्हरकस्य	सुन्दरकस्य
१६१	११	कमाराणा	कुमाराणाम
१६४	४	पीडा	पीडां
१६४	४	वहन्ति	वदन्ति
१६४	३	श्रुति ह्वासा	श्रुति ह्रास
१६५	१३	पक्रमा	उपक्रमा
१६७	१४	सोथ	शोथ
१६६	१६	शुभ्ययाणांच	शुष्यमाणश्च
१६६	१५	अभ्यज्य	अभ्यज्य
१६६	५	अभ्यङ्ग	अभ्यङ्ग

सूत्रम	पंक्तिः	अशुद्धम	शुद्धम
"	२०	वेविचक्षण	वैवविचक्षण:
२००	१०	शोकयो	शाफयो
२०१	२३	ग्रधाणा	गृध्राणा
२०७	१८	शास्थोय	शास्त्रीय
२०७	२०	शुण्ठी	शुण्ठी
२०८	४	ग्टीवां	ग्रीवां
२०८	४	वंकृत	वंकृतौ
२१०	५	ममम्रो	ममम्रौ
"	६	श्वासौ	श्वासौ
"	१७	लंघानादिक	लंघनादिक
२१४	२६	वृ धमनी	बृ० धमनी
२२७	१६	औगधियां	औषधियां
२३३	१४	प्रत्यद्भत	अत्यद्भुत
२३७	१०	क्षणा	क्षणान्
२३८	५	शाध्यर्थिने	शुध्यर्थिने
२३८	१३	तन्द्री	तन्द्रा
"	२१	चूणि कृतं	चूर्णी कृतम
२४०	३	गुरुत्व	गुरुत्वं
२४१	१६	कारियेन दुटिका	कारियेद् गुटिका
"	१६	कर्पूर	कर्पूरं
२४६	२३	ज्वरति शय	ज्वराति शय
२५३	७	पुरुष्य:	पुष्प्य:
२५४	६	पूर्वाक्त	पूर्वोक्त
"	२	जोति कोषफले	जातिकोष फलं तथा
"	"	तदधतः	तदर्धकम्

सूत्रम	पंक्ति	अशुद्धम	शुद्धम
२५६	२०	प्रस्वप्रार्क	प्रस्वप्नार्कम्
२७०	२३	पीत	पीतं
२८०	१०	तृणपचरमूल	तृणपंचमूल
२८६	५	मगमद	मृगमद
२९५	५	स्वल्फ लवंगादि	स्वल्प लवंगादि
२९६	६	टेकण	टंकण
३०२	१०	एतदथ	एतदर्थं
३०३	४	व्यवसाय	व्यवस्था
३०५	११	नागर	नागर
३०६	२५	वीजज्ज	वीजश्च
३०६	२५	उत्तजना	उत्तेजना
३०६	४	दोषाश्च	दोषांच
३०७	८	निस्यिम्य	निष्पिस्य
३०७	३	धाराः	धोरान
३०८	२५	शात्रकृतान	शत्रुकृतान
३११	४	मर्दितम्	मोदितम
,,	८	ध्द्रवम	दध्र वम
,,	१५	नाशयत्याशु	नाशयत्याशु
३१२	६	उपामार्ग	अपामार्ग
,,	५	मदयेत	मर्दयेन
,,	११	ताम्बुली	ताम्बूली
३१४	१३	करोत्यामि	करोत्यमि
३१४	५	तलस्थ	तलस्थः
,,	५	भागः	भागाः
,,	६	ताम्बुली	ताम्बूली

सूत्रम	पंक्ति:	अशुद्धम	शुद्धम
,,	१२	मेधायु कान्तिजनः	मेधायुः कान्ति जननः
३१८	२	गुञ्जो	गुञ्जा
३२०	१०	कामशोक भवस्तथा-	कामशोक भवन्तथा
३२८	२०	बृदन्त्र	बृहदन्त्र
३२६	१२	पुनरार्तक	पुनरावर्त्तक
३३०	२४	षेडङ्ग	षडंग
,,	५	बृक्ष	वृक्षः
३३६	६	कुशाद्वयं	कुशाद्वयम
,,	,,	नर्वाविरित्युक्तः	तर्वादिरित्युक्तः
,,	१८	कमल लाल	कमल नाल
३३७	२२	मन्दाम्रिरपि	मन्दाग्नेरपि
	२१	श्लीपद	श्लीपदं
३३६	२	कुलिञ्ज	कुलिञ्ज
,,	३	रसज्ञा	रसज्ञान
,,	२२	त्वारिद	वारिद
३४०	,,	जड़ा	जडाम
३४१	३	दृषाद्रवेषु	दृषात् द्रवेषु
३४१	१	स्यागदण्डूषः	स्याद्‌गण्डुषः
,,	,,	रोषणर्श्वव	रापणाश्चेव
,,	,,	गण्डषे	गण्डूषे
३४३	४	रसस्वाद	रसा स्वाद
,,	,,	रोपणेस्वव	रोपणाश्चंव
३४३	१२	भिषग्भिः	भिषग्भिः
३४४	४	भाङ्गर्म	भारंभ्यः

सूत्रम्	पंक्ति	अशुद्धम्	शुद्धम्
,,	६	विडग	विडंग
,,	८	आएवधोरिष्ट	आरग्वधोऽरिष्ट
३४५	४	कठुका	कटुका
,,	१४	भाङ्गी	भार्ङ्गी
,,	१५	शिद्धं	सिद्धं
,,	,,	मोह	मोहः
३४५	१४	भाङ्गी	भारंगी
,,	,,	शिध्रं	सिद्धम्
३४५	१५	बृक	वृक
,,	१८	खिवाहट	खिंचाहट
,,	२४	मूर्च्छा जगत	मूर्च्छाऽन्तर्गत
३४६	३	मुधृत्य	मुदूधृत्य
,,	२१	प्रवाध	प्रवोध
३४८	४	बमन	वमन
३५०	४	भाक्षिप्यति	माक्षिप्याऽति
,,	६	बलं	बलम्
,,	,,	माक्षिताः	माश्रिताः
,,	६	सनास	सन्यास
,,	१४	पुरषो	पुरुषो
,,	१६	दुवलता	दुर्वलता
,,	,,	ब्राले	वाले
		गठीया	गठिया
३५१	६	विकसित	विकसित
,,	२२	संन्यस्त संज्ञाः	संन्यस्त संज्ञः
३५२	१८	शिरीषाधङ्जङ्जनम	शिरीषाघञ्जनम

सूत्रम्	पंक्ति	अशुद्धम	शुद्धम्
,,	१६	पबोधाय	प्रबोधाय
३५३	२	सर्वपम	सर्षपम्
,,	४	सैन्धव	सैन्धव
,,	११	मूद्व जत्रजा:	मूध्व जत्रुजा:
,,	१५	शुध्र दीनानि संज्ञाव	शुद्ध हीनाति संज्ञानि
,,	२१	स्तोतोम	स्त्रोतोंमें
		चता विकार	चेतो विकार
३५५		शेठी	शुण्ठी
३५६	३	कृमी	कृमि
३५७	८	वोला	बोला
३६०		शातोपचार:	शीतोपचार:
,,	२१	धृष्टवा	धृष्टवा
३६१	८	धर्मरीक्षतं	धर्मरक्षितम
३६२	३	विस्मत	विस्मृति
,,	१	विमर्घ	विमर्श
३७५	२५	बमन	वमन
,,	२६	तोरेणी	तोरोगी
३८१	२	चतुभुज	चतुभु ज
,,	३	गोक्षर	गोक्षुर
३८१	५	कांजीक	काञ्जिक
३८२	१५	कवीराज	कविराज
३८३	११	वक्ष्ययत्त	वक्ष्यन्ते
,,	१६	ताद्वादश	ताः द्वादश
,,	,,	सविषाषट	सविषा:षट
३८४	१	मूछी	मूर्च्छा

सूत्रम्	पंक्तिः	अशुद्धम्	शुद्धम
,,	२	आसाध्य	असाध्य
३६४	१	सबर्गासि	सर्वाशांसि
,,	१८	सत्यकृत्वाः	सप्तकृत्वः
३६५		सप्त	सप्त
३६६	६	शाताह्वा	शताह्वा
,,	७	शरी	शठी
३६७	१	शरारगम	शरीरगम
३६८	१	रसयनवर	रसायन वरं
,,	१६	भार्गी	भार्गी
	१६	इलायजी	इलायची
३६६	२	मुस्द	मुस्त
,,	७	मुदिम्	मुदितमेत
३६६	८	मनाषोभिः	मनीषिभिः
४००	११	गदयहम	गदापहम
४१४	५	हिगुङ्गा	हिगुङ्गा
,,	६	ससैन्धनम	ससैन्धवम
४१५	४	व्याष	व्योषं
,,	२३	मूक्ता षादं	मुक्तापादं
४१६	१	तद्गोलक	तद्गोलकं
,,	२	ऽयम	ऽयं
,,	३	निबृत्यर्थ	निबृत्यर्थ
११७	१६	श्रष्ठो	श्रेष्ठो
४१८	१२	अन्यापत्राः	अन्यापन्नाः
,,	२१	प्ररणास्थानं	प्रेरणास्थानम
,,	२३	याषयचित	यापयति

सूत्रम्	पंक्तिः	अशुद्धम	शुद्धम
"	"	तत्	तत्त्
"	२४	शिराभिँच प्रविशति	शिराभिरभि प्रविश्य
४२२	२५	ढूढ	ढूंढ़
४२३	१२	कर	करें
४२३	१४	बह्राकारियों	बह्लाकारियों
"	२३	कयाणु	कायाणु
४२४	२	बह्वव गरियो	गह्लगह्लरियों
४३६	२	हाती	होती
४२७	१७	क्रोधाधम	क्रोधाऽधर्मं
४३५	१५	कार्वोलिक एसिड	कार्बोलिक एसिड
४३६	२५	चण्डश्वरो	चण्डेश्वरो
४४०	६	प्रगोग	प्रयोग



॥ আমাদের প্রকাশিত অর্থ পুস্তক ॥

1. The Times Reader (Book III)—Roy & Singha
2. The Glories of Bengal—Niyogi & Chakravarty
3. হিন্দী মঞ্জরী (প্রথম ভাগ)—কনক সিংহ
4. হিন্দী মঞ্জরী (দ্বিতীয় ভাগ)—কনক সিংহ
5. হিন্দী ভারতী (প্রথম ভাগ)—কনক সিংহ
6. হিন্দী ভারতী (দ্বিতীয় ভাগ)—কনক সিংহ
7. সকবিতা—সত্যকিঙ্কর বন্দ্যোপাধ্যায়
8. সংস্কৃত-সুপাঠম্—হরিসাধন চক্রবর্তী
9. My Story Book—N. K. Mitra